CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चौखम्बा

श्रीनारदसंहिता

(श्रीनारदीय-ज्योतिष-संहिता)

हिन्दीटीकासहितम्

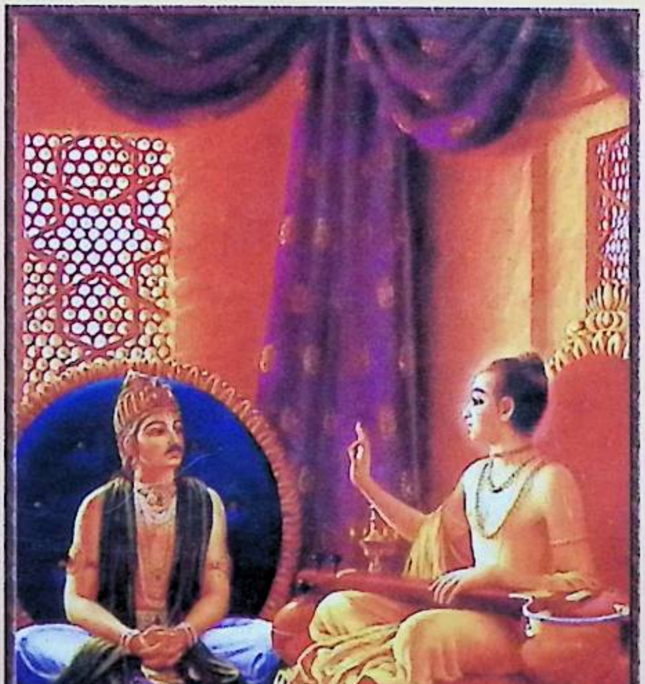

श्री अभय कात्यायन

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्रीनारदसंहिता

(श्रीनारदीय-ज्योतिष-संहिता)

श्री अभय कात्यायन

CHAUKHAMBA SANSKRIT PRATISHTHAN
4360/4, Ansari Road Darya Ganj,
New Delhi-110002
Ph. 011-42637180, 41530902
Email : info@chaukhambabooks.in

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

॥ श्रीः ॥
चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
543

श्रीनारदसंहिता

(श्रीनारदीय-ज्योतिष-संहिता)

हिन्दीटीकासहितम्

हिन्दी टीकाकार
श्री अभय कात्यायन

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

© सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी अंश का किसी भी रूप में पुनर्मुद्रण या किसी भी विधि (जैसे-इलेक्ट्रोनिक, यांत्रिक, फोटो-प्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग या कोई अन्य विधि) से प्रयोग या किसी ऐसे यंत्र में भंडारण, जिससे इसे पुनः प्राप्त किया जा सकता हो, प्रकाशक की पूर्वलिखित अनुमति के बिना नहीं किया जा सकता है।

श्रीनारदसंहिता–श्री अभय कात्यायन

प्रकाशक :

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
के 37/117 गोपाल मन्दिर लेन, पोस्ट बॉक्स न. 1129
वाराणसी 221001
दूरभाष : (0542) 2335263, 2335264
e-mail : csp_naveen@yahoo.co.in
website : www.chaukhamba.co.in

© **सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन**

संस्करण : 2022
₹ 650

वितरक :

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस

4697/2 ग्राउण्ड फ्लोर, गली न. 21-ए
अंसारी रोड़, दरियागंज
नई दिल्ली 110002
दूरभाष : (011) 23286537, (मो.) 09811104365
e-mail : chaukhambapublishinghouse@gmail.com

*

अन्य प्राप्तिस्थान :

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

38 यू. ए. बंगलो रोड़, जवाहर नगर
पोस्ट बॉक्स न. 2113
दिल्ली 110007

*

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)
पोस्ट बॉक्स न. 1069
वाराणसी 221001

मुद्रक :
ए.के. लिथोग्राफर, दिल्ली,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्राक्कथन

ज्योतिषशास्त्र के अठारह प्रवर्त्तक आचार्यों में देवर्षि नारदजी का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। श्रीनारदजी के द्वारा तीन स्कन्धों में ज्योतिषशास्त्र की रचना की गयी है। नारदीय पुराण में सिद्धान्त, संहिता तथा होरा—इन तीनों स्कन्धों का विवेचन प्राप्त होता है। परवर्ती संहिताग्रन्थों के रचनाकारों ने भी नारदजी के संहिता-ज्ञान का उपयोग अपने ग्रन्थों में किया है।

ज्योतिषशास्त्र का छः वेदाङ्गों में महत्त्वपूर्ण स्थान है, इसे वेद का नेत्र कहा गया है—'**वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिः शास्त्रमकल्मषम्।**' धर्म की सिद्धि के लिये पूर्वकाल में साक्षात् पितामह ब्रह्माजी ने इसका उपदेश अपने मानसपुत्र सनन्दनजी को दिया था। उस समय इसकी श्लोक संख्या चार लाख थी। सनन्दनजी ने नारदजीको इसका उपदेश दिया। नारदजीने लोक-कल्याण के लिये इसका संक्षेपण कर इसे गणित (सिद्धान्त), जातक (होरा) और संहिता—इन तीन भागों में विभाजित किया—

ज्यौतिषाङ्गं प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ब्रह्मणा पुरा।
यस्य विज्ञानमात्रेण धर्मसिद्धिर्भवेन्नृणाम्॥
त्रिस्कन्धं ज्यौतिषं शास्त्रं चतुर्लक्षमुदाहृतम्।
गणितं जातकं विप्र संहितास्कन्धसंज्ञितम्॥

(नारदपुराण)

संहिता स्कन्ध में ग्रहचार (ग्रहों की गति), वर्षलक्षण, तिथि, दिन, नक्षत्र, योग, करण, मुहूर्त, उपग्रह, सूर्य-संक्रान्ति, ग्रहगोचर, चन्द्रमा और तारा का बल, सम्पूर्ण लग्नों तथा ऋतु दर्शन का विचार, गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चूडाकरण, कर्णवेध, उपनयन, मौंजीबन्धन, क्षुरिकाबन्धन, समावर्तन, विवाह, प्रतिष्ठा, गृहलक्षण, यात्रा, गृहप्रवेश, तत्काल वृष्टिज्ञान, कर्म-वैलक्षण्य तथा उत्पात के लक्षण आदि अनेक उपयोगी विषय संक्षेप में वर्णित किये गये हैं—

संहिताशास्त्ररूपं च ग्रहचारोऽब्दलक्षणम्।
तिथिवासरनक्षत्रयोगतिथ्यर्धसंज्ञकाः ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मुहूर्तोपग्रहाः सूर्यसंक्रान्तिर्गोचरः क्रमात्।
चन्द्रताराबलं चैव सर्वलग्नार्तवाह्वयः॥
आधानपुंससीमन्तजातनामान्नभुक्तयः ।
चौलं कर्णच्छिदा मौञ्जी क्षुरिकाबन्धनं तथा॥
समावर्तनवैवाहप्रतिष्ठासद्मलक्षणम् ।
यात्रा प्रवेशनं सद्योवृष्टिः कर्मविलक्षणम्॥
उत्पातलक्षणं चैव सर्वं संक्षेपतो ब्रुवे।

(नारदपुराण)

नारदीय संहिता में कुल सैंतीस अध्याय हैं, जिनमें संहिता स्कन्ध के सभी आवश्यक विषयों का विवेचन किया गया है। अनेक वास्तुशास्त्रीय ग्रन्थों में भी नारदजी के उद्धरण मिलते हैं। ज्योतिष-ग्रन्थों की संस्कृत टीकाओं में भी नारदजी के वचनों को उद्धृत किया गया है, इससे नारदीय संहिता का महत्त्व स्वतः स्पष्ट हो जाता है। नारदजी बहुज्ञ तथा बहुश्रुत थे। वे भक्तिदर्शन के आचार्य, संगीत के पारगामी, पुराणेतिहासज्ञों में अग्रगण्य तथा वास्तुविदों में विशिष्ट थे।

ऐसी बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न देवर्षि नारदजी के ग्रन्थ 'नारदीय ज्योतिष संहिता' की सरल-सुबोध हिन्दी टीका को पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत किया गया है। साथ ही ग्रन्थ के अन्त में श्लोकानुक्रमणिका भी दी गयी है। मूल पाठ को संशोधित तथा सम्पादित किया गया है, फिर भी ग्रन्थ में मानव-स्वभाव अथवा यन्त्रादि के दोष से कहीं कुछ त्रुटि रहना सम्भव है, इसके लिये विद्वानों से क्षमायाचना के साथ ही इस ग्रन्थ को प्रस्तुत किया जा रहा है।

या वा मानवधर्मत्वाद् या वा मद् दृष्टिदोषतः।
मुद्रणादौ त्रुटिर्या वा संशोध्या सा महाशयैः॥

नारदजयन्ती
युगाब्द ५११०

विदुषामनुचर—
अभय कात्यायन

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषयानुक्रमणिका

विषय पृष्ठाङ्क | विषय पृष्ठाङ्क

प्रथमोऽध्यायः
शास्त्रोपनयनाध्यायः

मङ्गलाचरणम् १
हिन्दी टीकाकारकृत मंगलाचरण १
ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तक आचार्य १
तीनों संहिताओं के अनुसार ज्योतिः-शास्त्र-प्रवर्तकों के नामों की तुलना-त्मक तालिका २
त्रिस्कन्धात्मक ज्योतिःशास्त्र ३
ज्योतिःशास्त्र का वेदाङ्गत्व ३
वेदाङ्गों में प्रथम रचना एवं उपयोग ३
नारद द्वारा त्रिस्कन्ध ज्योतिषशास्त्र की रचना का कथन ३
नारदीयज्योतिषसंहिता में वर्णित विषयों की सूची ३
ज्योतिषी के आवश्यक गुण ४

द्वितीयोऽध्यायः
ग्रहचाराध्यायः

संवत्सर के राजा का निर्णय ५
वर्ष के अन्य अधिकारियों का निर्णय ६
सूर्य के राजा या मन्त्री या सस्येश होने का फल ६
चन्द्रमा के राजा/मन्त्री/सस्येश होने का फल ६
मंगल के राजा/मन्त्री/सस्येश होने का फल ६
बुध के राजा/मन्त्री/सस्येश होने का फल ६
गुरु के राजा या मन्त्री/सस्येश होने का फल ७
शुक्र के राजा या मन्त्री या सस्येश होने का फल ७
शनि के राजा/मन्त्री/सस्येश होने का फल ७
राजादि के बलाबल से होने वाले फल का फल ७

अथ सूर्यचारः

सूर्याचार में सूर्य में दृष्ट चिह्नों का फल ८
सूर्यबिम्बकी किरणों के रंग का फल ९
उदयास्तकाल में विभिन्न ऋतुओं में सूर्य के वर्ण का फल ९
इन्द्रधनुष के साथ सूर्य के वर्णों का फल १०
सूर्य की विभिन्न आकृतियों के फल ११

अथ चन्द्रचारः

चन्द्रचार में शृङ्गोन्नति का फल १२
कलहकारक शृंगोन्नति १३
चन्द्रमा के उत्तर+दक्षिण+सम चार का फल १३

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क
नक्षत्रों की अर्द्धादि संज्ञा	१३
अर्धादि संज्ञा प्रदर्शक चक्र	१४
सामान्य चन्द्र शृंगोन्नति का फल	१४
प्रथम चन्द्र की स्थूलता आदि का फल	१५
अथ भौमचारः	
उदयर्क्ष संख्या से बक्री का फल	१५
भौमादि पंचतारा ग्रहों से चन्द्र शृंगवेध का फल	१५
नक्षत्रों के नामों के अनुसार मंगल के उदित तथा वक्री होने का फल	१६
मंगल द्वारा नक्षत्रों के भेदन का फल	१७
अवृष्टिकारक योग	१७
उपरिलिखित सात नक्षत्रों के उत्तर-दक्षिण का फल	१७
अथ बुधचारः	
बुध के उदय में उत्पात अवश्यम्भावी	१८
विभिन्न नक्षत्रों में बुधोदय का फल	१९
नक्षत्रवश बुध की सात प्रकार की गतियाँ	१९
उदयास्त दिन संख्या के अनुसार प्राकृतादि गति के लक्षण	२०
ग्रन्थकार के मत से प्राकृतादि सप्तगतिप्रदर्शक चक्र	२२
देवल के मत से बुध की चार प्रकार की गतियों का चक्र	२२
मासानुसार बुधोदय का फल	२३
अथ गुरुचारः	
बार्हस्पत्यवर्षों के नामकरण	२३
विभिन्न नक्षत्रों में गोचर के गुरु उदय के अनुसार वर्ष नामकरण का चक्र	२३

विषय	पृष्ठाङ्क
कार्तिक वर्ष का फल	२४
मार्गशीर्ष वर्ष का फल	२५
पौषसंज्ञक वर्ष का फल	२५
माघसंज्ञक वर्ष का फल	२५
फाल्गुनाब्द का फल	२५
चैत्राब्द का फल	२५
वैशाख वर्ष का फल	२५
ज्येष्ठ नामक वर्ष का फल	२६
आषाढ़ वर्ष का फल	२६
श्रावणाब्द का फल	२६
भाद्रपदाब्द का फल	२६
अश्वयुज वर्ष का फल	२७
योगतारा के दक्षिणोत्तर में गुरु संचार का फल	२७
बृहस्पति के वर्ण का फल	२७
दिन में गुरु के दिखने का फल	२७
सम्वत्सर के अङ्गभूत नक्षत्रों का फल	२७
सम्वत्सर के अङ्गभूत नक्षत्रों के पीड़ित होने का फल	२७
मेषराशिगत जीव का फल	२८
वृषराशिगत गुरु का फल	२८
मिथुनराशिगत गुरु का फल	२८
कर्कराशिगत गुरु का फल	२८
सिंहराशिगत गुरु का फल	२९
कन्याराशिगत गुरु का फल	२९
तुलाराशिगत गुरु का फल	२९
वृश्चिकराशिगत गुरु का फल	२९
धनुराशिगत गुरु का फल	२९
मकरराशिगत गुरु का फल	२९
कुम्भराशिगत गुरु का फल	३०
मीनस्थ गुरु का फल	३०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क
अथ शुक्रचारः	
तीन मार्गों में शुक्र की नौ वीथियों के नाम	३०
शुक्र की नौ वीथियों का चक्र	३०
तीनों मार्गों के फल	३१
शुक्र के उदयास्त के फल	३१
अथ शनिचारः	
विक्षेप नक्षत्रों में शनि के भ्रमण का फल	३२
शनि के नराकार चक्र का फल	३२
शनि नराकार चक्र	३३
वक्री शनि का फल	३४
अथ राहुचारः	
राहु की पौराणिक उत्पत्ति	३४
ग्रह का कारण राहु	३४
षण्मासान्तर से ग्रहण के अधिपति	३५
ब्रह्मपर्व (ग्रहण) का फल	३५
चान्द्र तथा इन्द्र नामक ग्रहणों का फल	३५
कुबेर तथा वरुणसंज्ञक ग्रहणों के फल	३५
अग्नि तथा याम्यसंज्ञक ग्रहणों के फल	३६
असमय के ग्रहण का फल	३६
एक मास में दो ग्रहणों का फल	३६
ग्रस्तोदित तथा ग्रस्तास्त ग्रहण के फल	३६
पूर्वादि दिशाओं के ग्रासों का फल	३६
ग्रास तथा मोक्ष के भेदों की दुर्बोधता	३७
अथ केतुचारः	
केतु के उदयास्त से त्रिविध उत्पात	३७
अन्तरिक्ष उत्पात का कथन	३८
दिव्य तथा भौम उत्पातों का कथन	३८
केतु के फल देने की अवधि	३९
उत्पातों तथा केतुओं के अशुभ फल की तीव्रता	३९
शुभफलदायक केतु के लक्षण	३९
अशुभ केतु के लक्षण	३९
सूर्यपुत्र केतुओं का फल	३९
अग्निपुत्र केतुओं का फल	४०
यमपुत्र केतुओं तथा भौमपुत्र केतुओं के फल	४०
चन्द्रकेतु तथा ब्रह्मपुत्र केतुओं के फल	४०
शुक्रपुत्र के लक्षण	४१
शनिपुत्र और गुरुपुत्र केतुओं के फल	४१
बुधपुत्र तथा भौमपुत्र केतुओं के फल	४१
विश्वरूप तथा पापपुत्र केतुओं के लक्षण एवं फल	४१
नक्षत्रकेतु तथा कङ्ककेतु के फल	४१
उदयस्थान के अनुसार केतु का फल	४२
कुमुदकेतु के फल तथा आवर्तकेतु के फल	४२
सम्वर्त्तकेतु के फल	४२

तृतीयोऽध्यायः
सम्वत्सराध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क
नौ प्रकार के कालमान	४३
मानव व्यवहार में उपयोगी पाँच प्रकार के कालमान	४३
सौर तथा सावनमान का उपयोग	४४
नाक्षत्र-चान्द्र तथा गुरुमान का उपयोग	४४
मासों के भेद	४४

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क
गुरुमान तथा साठ संवत्सर	४६
साठ सम्वत्सरों के नाम	४६
साठ सम्वत्सरों के स्वामी, देवताओं के युग स्वामी तथा वर्षेश	४७
साठ सम्वत्सरों के युगेश-वर्षेश तथा विंशतिका स्वामी-द्योतक चक्र	४८
१. प्रभव सम्वत्सर का फल	४९
२. विभव सम्वत्सर का फल	४९
३. शुक्ल सम्वत्सर का फल	४९
४. प्रमोद सम्वत्सर का फल	४९
५. प्रजापति सम्वत्सर का फल	४९
६. अङ्गिरा सम्वत्सर का फल	४९
७. श्रीमुख सम्वत्सर का फल	५०
८. भाव सम्वत्सर का फल	५०
९. युवा सम्वत्सर का फल	५०
१०. धाता सम्वत्सर का फल	५०
११. ईश्वर सम्वत्सर का फल	५०
१२. बहुधान्य सम्वत्सर का फल	५१
१३. प्रमाथी सम्वत्सर का फल	५१
१४. विक्रम सम्वत्सर का फल	५१
१५. वृष सम्वत्सर का फल	५१
१६. चित्रभानु सम्वत्सर का फल	५१
१७. सुभानु सम्वत्सर का फल	५१
१८. तारण सम्वत्सर का फल	५२
१९. पार्थिव सम्वत्सर का फल	५२
२०. व्यय सम्वत्सर का फल	५२
२१. सर्वजित् सम्वत्सर का फल	५२
२२. सर्वधारी सम्वत्सर का फल	५२
२३. विरोधी सम्वत्सर का फल	५२
२४. विकृति सम्वत्सर का फल	५३
२५. खर सम्वत्सर का फल	५३
२६. नन्दन सम्वत्सर का फल	५३
२७. विजय सम्वत्सर का फल	५३
२८. जय सम्वत्सर का फल	५३
२९. मन्मथ सम्वत्सर का फल	५४
३०. दुर्मुख सम्वत्सर का फल	५४
३१. हेमलम्ब सम्वत्सर का फल	५४
३२. विलम्ब सम्वत्सर का फल	५४
३३. विकारी सम्वत्सर का फल	५४
३४. शार्वरी सम्वत्सर का फल	५४
३५. प्लव सम्वत्सर का फल	५५
३६. शुभकृत् सम्वत्सर का फल	५५
३७. शोभन सम्वत्सर का फल	५५
३८. क्रोधी सम्वत्सर का फल	५५
३९. विश्वावसु सम्वत्सर का फल	५५
४०. पराभव सम्वत्सर का फल	५५
४१. प्लवङ्ग सम्वत्सर का फल	५६
४२. कीलक सम्वत्सर का फल	५६
४३. सौम्य सम्वत्सर का फल	५६
४४. साधारण सम्वत्सर का फल	५६
४५. विरोधकृत् सम्वत्सर का फल	५६
४६. परिधावी सम्वत्सर का फल	५६
४७. प्रमादी सम्वत्सर का फल	५७
४८. आनन्द सम्वत्सर का फल	५७
४९. राक्षस सम्वत्सर का फल	५७
५०. अनल सम्वत्सर का फल	५७
५१. पिङ्गल सम्वत्सर का फल	५८
५२. कालयुक्त सम्वत्सर का फल	५८
५३. सिद्धार्थी सम्वत्सर का फल	५८
५४. रौद्र सम्वत्सर का फल	५८
५५. दुर्मति सम्वत्सर का फल	५८
५६. दुन्दुभि सम्वत्सर का फल	५८
५७. रुधिरोद्गारी सम्वत्सर का फल	५९
५८. रक्ताक्षि सम्वत्सर का फल	५९

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
५९. क्रोधन सम्वत्सर का फल	५९	ऋतुओं के मासों का कथन तथा मासों के भेद	६०
६०. क्षय सम्वत्सर का फल	५९	अमान्तमासों के वैदिक नाम	६१
सम्वत्सर के वर्ष में फलविचार की विधि	५९	नक्षत्रों के अनुसार पौर्णिमान्तमासों के नाम	६१
अयनों का कथन	६०	अयन ऋतु तथा मासादि का चक्र	६२
उत्तरायणादि में करणीय कर्म	६०	चान्द्रमास के पक्षों का कथन	६३
अयनों के अनुसार ऋतुओं का कथन	६०		

चतुर्थोऽध्यायः
तिथ्याध्यायः

तिथि स्वामियों का कथन	६४	पक्षरन्ध्र तिथियों की त्याज्य घटियों का चक्र	६९
तिथियों की नन्दादि संज्ञा तथा पक्ष भेद से उनका फल	६४	अमा-नवमी एवं विषघटी की त्याज्यता	६९
प्रतिपदा में करणीय कृत्य	६५	वसिष्ठसंहिता के अनुसार तिथि विषघटियों का चक्र	६९
द्वितीया तिथि में करणीय कृत्य	६५	दन्तधावन (दतुवन) में निषिद्ध तिथियाँ	६९
तृतीया तिथि में करणीय कृत्य	६५	कार्यविशेष में वर्जित तिथियाँ	६९
चतुर्थी तिथि एवं नवमी-चतुर्दशी के कृत्य	६५	तैलाभ्यङ्ग में निषिद्ध तिथ्यादि	७०
पंचमी तिथि में करणीय कृत्य	६५	आँवले से स्नान का निषेध	७०
षष्ठी तिथि में करणीय कृत्य	६५	पूर्णिमा एवं अमावास्या के भेद	७०
सप्तमी तिथि में करणीय कृत्य	६६	युगादि तिथियाँ	७१
अष्टमी तिथि के कृत्य	६६	मन्वादि तिथियों का कथन	७२
दशमी तिथि के कृत्य	६६	श्राद्ध में पुण्यदायक गजच्छायायोग	७२
एकादशी तिथि के कृत्य	६६	शुभकर्म में क्षयतिथि एवं वृद्धतिथि का निषेध	७३
द्वादशी तिथि के कृत्य	६६	अखण्डा तथा खण्डा तिथियों की परिभाषा	७३
त्रयोदशी तिथि के कृत्य	६७	क्षणतिथि का कथन	७३
चतुर्दशी के विशिष्ट कृत्य	६७	तिथ्यंश (क्षणतिथि बोधक चक्र)	७४
पूर्णिमा तिथि के कृत्य	६७		
अमावास्या तिथि के कृत्य	६७		
पक्षरन्ध्र तिथियाँ	६८		

पञ्चमोऽध्यायः
वारलक्षणाध्यायः

रविवार में विहित कार्य	७५	मंगलवार में विहित कर्म	७५
सोमवार में विहित कर्म	७५	बुधवार में विहित कर्म	७५

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
गुरुवार में विहित कर्म	७५	शुभ एवं क्रूर वारों के कार्य	७९
शुक्रवार में विहित कार्य	७६	ग्रहों के वर्णानुसार कार्य की प्रशस्तता	७९
शनिवार में विहित कर्म	७६	वारों में प्रहरानुसार कुलिक योग	८०
वारों का प्रभाव	७८	कुलिक, यमघण्ट तथा अर्धप्रहर (वारवेला) प्रदर्शन चक्र	८०
सात वारों में तैलाभ्यंग का फल एवं वार प्रवृत्ति का समय	७८	कालहोरा का कथन	८०
लंकोदय से वार प्रवृत्ति	७९	प्रति वार को काल-होरा-प्रदर्शक चक्र	८१
बालप्रद एवं बलहीन ग्रह के वार का फल	७९		

षष्ठोऽध्यायः
नक्षत्रफलाध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
नक्षत्रों के स्वामी	८२	शतभिषा में विहित कृत्य	८६
अश्विनी नक्षत्र में करणीय कृत्य	८२	रेवती में विहित कृत्य	८६
भरणी नक्षत्र में करणीय कृत्य	८२	अधोमुख नक्षत्र तथा उनके कार्य	८७
कृत्तिका नक्षत्र के कार्य	८३	तिर्यङ्मुखनक्षत्र तथा उनके कृत्य	८७
रोहिणी नक्षत्र में विहित कृत्य	८३	ऊर्ध्वमुखनक्षत्र तथा उनके कृत्य	८८
मृगशिरा में विहित कर्म	८३	नक्षत्रों की स्थिरादि सात संज्ञाएँ	८८
आर्द्रा में विहित कृत्य	८३	कर्णवेध में उपयोगी नक्षत्र	८९
पुनर्वसु में विहित कृत्य	८३	गजकर्म (भारीवाहन) के नक्षत्र	८९
पुष्य नक्षत्र में विहित कर्म	८४	अश्वकर्म के नक्षत्र	८९
आश्लेषा के कृत्य	८४	पशुकर्म के नक्षत्र	८९
मघा के कृत्य	८४	हलप्रवाह के नक्षत्र	८९
तीनों पूर्वा के कृत्य	८४	हल-चक्र का विचार	९०
तीनों उत्तरा के कृत्य	८४	हलचक्र (सूर्य नक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गणना)	९०
हस्त नक्षत्र के कृत्य	८५	बीजोप्ति के लिये शुभ नक्षत्र	९०
चित्रा नक्षत्र के कृत्य	८५	बीजोप्ति चक्र का विचार	९०
स्वाति नक्षत्र के कृत्य	८५	बीजोप्ति चक्र (राहुनक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गणना)	९१
विशाखा में विहित कृत्य	८५	रोगीस्नानमुहूर्त्त	९१
अनुराधा में विहित कृत्य	८५	नृत्यारम्भमुहूर्त्त	९१
ज्येष्ठा में विहित कृत्य	८५	युञ्जा विचार	९१
मूल में विहित कृत्य	८६	युञ्जा चक्र	९२
श्रवण नक्षत्र में विहित कृत्य	८६		
धनिष्ठा में विहित कृत्य	८६		

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
नक्षत्रों की जघन्यादि संज्ञा	९२	पुष्य नक्षत्र का विशेष फल	९३
जघन्यादि नक्षत्रों में सप्रथम चन्द्र दर्शन का फल	९२	नक्षत्रों के ताराओं का कथन	९३
राजयात्रा	९२	नक्षत्रों के योग तारा	९४
त्रिपुष्कर एवं द्विपुष्कर योग का कथन एवं फल	९३	नक्षत्रों से वृक्षोत्पत्ति	९४
		नक्षत्रों के स्वामी—तारा एवं वृक्षादि की तालिका	९६

सप्तमोऽध्यायः

योगलक्षणाध्यायः

विष्कम्भादि सत्ताइस योगों का कथन	९८	सूक्ष्म योगों का कथन	१००
सूर्य+चन्द्र स्पष्ट के योग से विष्कम्भादि योग ज्ञात करने की सारिणी	९८	प्रत्येक योग में सूक्ष्म योग (क्षण योग=अन्तर्योग	१०१
योगों के स्वामी	९९	प्रदर्शक-चक्र	१०२
त्याज्य योगों का कथन	९९	एकार्गल (खार्जूर योग) का कथन्	१०३
त्याज्य योगों की तालिका	१००	खार्जूर चक्र	१०३
		अभिजिद् गणना की वर्जना	१०४

अष्टमोऽध्यायः

करणाध्यायः

विष्कम्भादि सत्ताइस योगों का कथन	१०५	करणों के स्वामियों का चक्र	१०६
करणों के स्वामी	१०५	भद्रा विभाग का चक्र	१०६
करणों का शुभाशुभत्व	१०५	स्थिर करणों का शुभाशुभत्व	१०६
भद्रा के शुभाशुभत्व का विशेष विचार	१०५		

नवमोऽध्यायः

मुहूर्ताध्यायः

दिन के मुहूर्तों का कथन	१०७	वारों में वर्जित मुहूर्तों का चक्र	१०८
रात्रि के पन्द्रह मुहूर्त	१०७	दोषसंघविनाशक रवियोग	१०८
वारानुसार अशुभ मुहूर्तों का कथन	१०७	दैनिक चन्द्रनक्षत्र	१०८

दशमोऽध्यायः

नैमित्तिक योगाध्यायः

भूकम्पादि योगों की गणना	११०	क्रकच योग प्रदर्शक चक्र	१११
भूकम्पादि योग चक्र	११०	सम्वर्तक योग	१११
क्रकच योग	११०	आनन्दादि अट्ठाईस योगों का कथन	१११

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क
आनन्दादि योगों को जानने की विधि	१११
आनन्दादि योगों के जानने का चक्र	१११
सिद्धियोग का कथन	११३
मृत्युयोगा (मृत्युदा तिथियाँ)	११३
सिद्धिदा तिथियाँ (सिद्धयोग)	११३
तिथिदग्धयोग (पङ्गुयोग)	११३
नक्षत्रजन्य दग्धयोग (ग्रहों के जन्मनक्षत्र)	११४
उत्पातादि चार योग	११४
उत्पातादि योगचतुष्टय का चक्र	११४
दुष्ट योगों का परिहार	११५

एकादशोऽध्यायः
संक्रान्तिविचाराध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क
संक्रान्तियों का नामकरण	११६
वारानुसार सूर्यसंक्रमण से संक्रान्ति के नामों का चक्र	११६
घोरा आदि नाम की संक्रान्तियों का फल	११६
संक्रान्ति का दिवारात्रि विभागानुसार फल	११६
मेष संक्रान्ति का विशेष फल	११७
ग्यारह करणों के अनुसार संक्रान्ति वाहन का विचार	११७
करणानुसार संक्रान्ति के वाहनों का चक्र	११७
मतान्तर से संक्रान्ति वाहन का विचार	११८
संक्रान्ति के आयुध	११८
संक्रान्ति की स्थिति	११८
संक्रान्ति के अन्न	११८
संक्रान्ति से प्रभावित वस्तुएँ	११८
करणों के अनुसार संक्रान्ति के वाहनादि का प्रदर्शक चक्र (विस्तार से)	११९
नक्षत्रों की अन्धाक्षादि संज्ञाएँ	१२०
नक्षत्रों की अन्धाक्षादि संज्ञा का चक्र	१२०
संक्रान्ति की विष्णुपदी तथा षडशीति संज्ञा	१२०
अयन संक्रान्ति तथा विषुव संक्रान्ति	१२०
दिवारात्रि विभागानुसार संक्रान्ति का पुण्यकाल	१२१
संध्याकाल की परिभाषा	१२१
षडशीतिमुखी का पुण्यकाल	१२१
चन्द्रानुसार संक्रान्ति का फल	१२१
ग्रहण के नक्षत्र से गणना विधि	१२२
संक्रान्ति या ग्रहणर्क्ष से जन्मनक्षत्र का फलकथन	१२२
अशुभ फल की शान्ति का उपाय	१२२
तारा-चन्द्र एवं सूर्य के बल का तारतम्य	१२३

द्वादशोऽध्यायः
गोचराध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क
सूर्य के शुभस्थान तथा विद्ध स्थान	१२४
सूर्य के शुभ एवं वेधस्थानों का चक्र	१२४
चन्द्र के शुभ एवं वेधस्थान	१२४
शनि एवं मंगल के शुभ एवं वेधस्थान	१२४
बुध के वेधस्थान	१२५
गुरु के शुभ एवं वेधस्थान	१२५
शुक्र के शुभ एवं वेधस्थान	१२५

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क
वेध का फल	१२६
वामवेध का विचार	१२६
द्विविध वेधों का विचार न करने का फल	१२७
गोचर में ग्रहों की दृष्टि का फल	१२७
नीचराशिगत तथा अस्तङ्गत ग्रह का फल	१२७
अशुभ ग्रहों की शान्ति का कथन	१२७
ग्रहों के रत्न	१२८
नवग्रहों के रत्नों की तालिका	१२८

त्रयोदशोऽध्यायः
चन्द्रताराबलाध्यायः

चन्द्रबल एवं ताराबल का विचार	१२९
शुक्लपक्ष में चन्द्रबल का कथन	१२९
ताराओं का कथन	१३०
ताराओं के नाम का चक्र	१३०
अशुभ तारा एवं उनकी शान्ति	१३०
अशुभ तारा में दान का चक्र	१३१
चन्द्र की द्वादश अवस्थाएँ	१३१

चतुर्दशोऽध्यायः
सर्वलग्नाध्यायः

मेषलग्न में करणीय का योग	१३२
वृषलग्न में करणीय कर्म	१३२
मिथुनलग्न में करणीय कर्म	१३२
कर्कलग्न में करणीय कृत्य	१३२
सिंहलग्न में करणीय कार्य	१३३
कन्यालग्न में करणीय कार्य	१३३
तुलालग्न में करणीय कार्य	१३३
वृश्चिकलग्न में करणीय कार्य	१३३
धनुलग्न में करणीय कर्म	१३३
मकरलग्न में करणीय कर्म	१३४
कुम्भलग्न में करणीय कर्म	१३४
मीनलग्न में करणीय कर्म	१३४
शुभराशियाँ (लग्नें) तथा पापराशियाँ	१३४
शुभ एवं पापग्रह	१३४
राशियों के साथ ग्रहफल में विशेषता	१३५
चन्द्रमा का विशेष फल	१३५
लग्न का विशेष फल	१३५
कर्त्ता के लिये लग्नबल का विचार	१३६
चन्द्रबल का विचार	१३६
लग्न नवांश का महत्त्व	१३६
सर्वगुणयुक्त लग्न का प्रभाव	१३६

पञ्चदशोऽध्यायः
प्रथमार्त्तवाध्यायः

प्रथम रजोदर्शन	१३८
आद्य रजोदर्शन में वारों का फल	१३८
प्रथम रजोदर्शन में सत्ताईस नक्षत्रों के अलग-अलग फल	
अश्विनी में प्रथम रजोदर्शन का फल	१३८
भरणी में प्रथमार्त्तवा का फल	१३८
कृत्तिका में प्रथमार्त्तवा का फल	१३९
रोहिणी में प्रथमार्त्तवा का फल	१३९
मृगशिरा में प्रथमार्त्तवा का फल	१३९
आर्द्रा में प्रथमार्त्तवा का फल	१३९
पुनर्वसु में प्रथमार्त्तवा का फल	१३९

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
पुष्यनक्षत्र में प्रथम रजोदर्शन का फल	१४०	पूर्वाषाढ़ा में प्रथमार्त्तवा का फल	१४२
आश्लेषा में प्रथम रजोदर्शन का फल	१४०	उत्तराषाढ़ा में प्रथमार्त्तवा का फल	१४२
मघा में प्रथमार्त्तवा का फल	१४०	श्रवण में प्रथमार्त्तवा का फल	१४२
पूर्वाफाल्गुनी में प्रथमार्त्तवा का फल	१४०	धनिष्ठा में प्रथमार्त्तवा का फल	१४२
उत्तराफाल्गुनी में प्रथमात्तेका का फल	१४०	शतभिषा में प्रथमार्त्तवा का फल	१४२
हस्तनक्षत्र में प्रथमार्त्तवा का फल	१४१	पूर्वा भाद्रपदा में प्रथमार्त्तवा का फल	१४३
चित्रा में प्रथमार्त्तवा का फल	१४१	उत्तरा भाद्रपदा में प्रथमार्त्तवा का फल	१४३
स्वाति में प्रथमार्त्तवा का फल	१४१	रेवती में प्रथमार्त्तवा का फल	१४३
विशाखा में प्रथमार्त्तवा का फल	१४१	प्रथमार्त्तवकाल में शुभ लग्नराशियाँ	१४३
अनुराधा में प्रथमार्त्तवा का फल	१४१	प्रथमार्त्तव में अन्य निषिद्धकाल	१४३
ज्येष्ठा में प्रथमार्त्तवा का फल	१४१	निन्द्य योग में प्रथमार्त्तव की शान्ति-हेतु उपाय	१४४
मूल में प्रथमार्त्तवा का फल	१४१	शान्ति की अनिवार्यता	१४४

षोडशोऽध्यायः
आधानाध्यायः

प्रथम चार दिन तक रजस्वला की अस्पृश्यता	१४५	प्रथम चार दिन तक रजस्वला की अस्पृश्यता	१४५
		गर्भाधानविधि	१४६

सप्तदशोऽध्यायः
पुंसवनाध्यायः

पुंसवन का समय	१४८		

अष्टादशोऽध्यायः
सीमन्तोन्नयनाध्यायः

सीमन्तोन्नयन संस्कार का समय	१५०	त्याज्य तत्त्व तथा लग्नशुद्धि	१५०

एकोनविंशतितमोऽध्यायः
जातकर्माध्यायः

जातकर्मविधि	१५२		

विंशोऽध्यायः
नामकरणाध्यायः

कुलानुसार नामकरण	१५४	नामकरण का समय	१५४

एकविंशोऽध्यायः
अन्नप्राशनाध्यायः

अन्नप्राशन के समय शिशु की वय	१५८	अन्नप्राशनार्थ शुभ तिथियाँ तथा वार	१५८

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क
अन्नप्राशन में शुभ नक्षत्र तथा लग्नशुद्धि	१६३
अन्नप्राशन में ६।८।१२ भावों में चन्द्र का निषेध	१६४

द्वाविंशोऽध्यायः

चौलाध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क
चौलकर्म हेतु शिशु की वयस	१६१
शिशु की माता के गर्भिणी होने पर चूडाकर्म का निषेध	१६१
चौलकर्म में शुभ काल एवं तिथि-वार	१६१
मुण्डन में नक्षत्रशुद्धि	१६१
चौलकर्म में लग्नशुद्धि	१६२
नित्य के क्षौरकर्म में अन्य विधि-निषेध	१६८

त्रयोविंशोऽध्यायः

मङ्गलाङ्कुरार्पणाध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क
माङ्गलिक अङ्कुरार्पण का समय (जवारे बोने का समय)	१६४
अङ्कुर सिद्ध करने की विधि (जवारे बोना)	१६४

चतुर्विंशोऽध्यायः

उपनयनाध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क
उपनयन योग्य वय	१६५
ब्राह्मणों के लिये पाँचवाँ वर्ष विशेष निपुणतादायक	१६५
निर्बल गुरु की शान्ति का कथन	१६५
वेदाधिपों का कथन	१६५
यज्ञोपवीत के लिये द्विज वर्णों के अनुकूल ऋतुएँ	१६६
माघादि पञ्चमासों का उपनयन में फल	१६६
यज्ञोपवीत में शुभ एवं त्याज्य तिथियाँ	१६६
यज्ञोपवीत में शुभ नक्षत्र	१६६
जन्म-नक्षत्र से कर्मसंघातादि नक्षत्रों की त्याज्यता	१६७
जन्म नक्षत्रों के अनुसार शुभकर्म में त्याज्य नाड़ी नक्षत्रों का चक्र	१६७
यज्ञोपवीत में प्रशस्त वार	१६८
दैव-मानुष-पितृकर्मों के लिये दिन के तीन भाग	१६८
शाखेश ग्रह के नीच शत्रुगत होने का फल	१६८
वेदाधिपतियों के उच्चादि स्थिति का सुफल	१६८
उपनयन में दुर्लभ योग	१६९
उपनयन में चन्द्रमा का फल	१६९
उपनयन में लग्नशुद्धि	१६९
शुभ राशिलग्न तथा शुभनवांश	१७०
उपनयन लग्न में अनुकूल ग्रह-स्थिति	१७०
उपनयन लग्न की विशिष्ट ग्रह-स्थिति के साथ उत्पातों का फल	१७०
गलग्रहसंज्ञक तिथियों की वर्जना	१७१

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क

पञ्चविंशोऽध्यायः

छुरिकाबन्धनाध्यायः

छुरिकाबन्धन में शुभमासादि	१७२	खड्गलक्षण जानने की दूसरी विधि	१७३
छुरिकाबन्धन में लग्नशुद्धि	१७२	छुरिका या खड्ग में व्रण या भंश होने का फल	१७४
छुरिकाबन्धन विधि	१७२		
ब्रह्मोक्त खड्गलक्षण	१७२		

षड्विंशोऽध्यायः

समावर्तनाध्यायः

समावर्तन हेतु कालशुद्धि	१७५	समावर्तन में प्रशस्त नक्षत्रादि	१७५

सप्तविंशतितमोऽध्यायः

विवाहाध्यायः

गृहस्थाश्रम का महत्त्व तथा शुभलग्न का प्रभाव	१७७	विवाह में गुर्वादित्य का निषेध	१८१
दैवज्ञ के समीप जाकर विवाह-प्रश्न पूछने की विधि	१७७	गुरु-शुक्र के बालत्व एवं वृद्धत्व का कथन	१८१
विवाह-प्रश्न लग्न का फल (वरकन्या की मृत्यु के योग)	१७७	देवशयन का विवाहादि में निषेध	१८१
कन्या के मृतवत्सा एवं व्यभि-चारिणी होने के योग	१७८	जन्ममासादि का निषेध	१८१
प्रश्नलग्न के शुभ योग	१७८	त्रिज्येष्ठ निषेध	१८२
कन्यावरणमुहूर्त	१७९	उत्पात-ग्रहण-मासान्तादि दोषों की विवाह में वर्जना	१८२
कन्यावरणविधि	१७९	विवाहहेतु शुभ नक्षत्र	१८२
वाग्दानयोग्य कन्या के गुण तथा वर के गुण	१७९	विवाह में वरकन्या हेतु गुरु-सूर्य का बल	१८३
वाग्दान के पूर्व कन्या द्वारा शची-पूजन	१७९	अष्टक वर्ग बल की श्रेष्ठता	१८३
इन्द्राणी की प्रार्थना	१८०	वर-कन्या के लिये विवाह में अन्य बलों का कथन	१८३
विवाह हेतु सम-विषम वर्षों का फल	१८०	तिथ्यादि के बलों का तारतम्य	१८३
विवाहार्थ शुभ एवं मध्यम मास	१८०	षड्वर्गों का कथन	१८४
आर्द्रादि दश नक्षत्रों के सूर्य में विवाह का निषेध	१८१	शुद्ध होरा चक्र (विश्व पंचांग के अनुसार)	१८४
		शुद्ध द्रेष्काण चक्र (विश्व पंचांग के अनुसार)	१८५
		नवमांश चक्र	१८५

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क
द्वादशांश चक्र	१८५
शुद्ध त्रिंशांश चक्र (विश्व पंचांग के मत से)	१८६
विवाह में शुभ लग्न राशियाँ	१८७
विवाह में जामित्र तथा इक्कीस दोषों की वर्जना	१८७
उदयास्त शुद्धिदोष	१८८
सङ्क्रान्ति दोष	१८८
राशि स्वामी	१८८
भृगुषष्ठाह्वय दोष	१८९
अष्टम भौम दोष	१८९
तिथिगण्डान्त दोष	१८९
लग्नगण्डान्त	१८९
नक्षत्रगण्डान्त	१८९
त्रिविध गण्डान्त की त्याज्यता	१९०
कर्त्तरी दोष	१९०
लग्नदोष	१९०
चन्द्र संग्रहदोष तथा उसका फल	१९०
शुभ एवं पापग्रहों की युति की विशेषता	१९१
अष्टम लग्न-राशि दोष	१९१
द्वादशराशिदोष	१९१
जन्मलग्न एवं जन्मराशि से उपचय में लग्न शुभता	१९२
विषघटीदोष	१९२
विवाह में निन्दित मुहूर्तों की त्याज्यता	१९३
वार दोषों की त्याज्यता	१९३
एकार्गल (खार्जूर) दोष	१९३
ग्रहण एवं उत्पातयुक्त नक्षत्र का निषेध	१९४
क्रूरग्रहविद्ध सम्पूर्ण नक्षत्र का निषेध	१९४
शुभ ग्रह द्वारा विद्ध नक्षत्र का चरण मात्र त्याज्य	१९४
विवाह में शुभाशुभ नवांश	१९४
व्यतीपात तथा वैधृति का निषेध	१९४
उत्पातदोषयुक्त नक्षत्र दिन का त्याग	१९५
केन्द्रस्थित शुभग्रह की दोषनाशक क्षमता	१९५
पञ्चशलाका वेध का कथन	१९५
लत्ता दोष	१९६
दोषों की स्थान भेद से वर्जना	१९६
गुण एवं दोषों के मध्य शुभकाल का चयन	१९७
समय की माप के लिये जल-घटी यन्त्र का निर्माण	१९७
जलघटी यन्त्र के प्रयोग की विधि	१९८
घटिका यन्त्र को जल में छोड़ने का मन्त्र	१९८
विवाहवेदी एवं मण्डप का निर्माण	१९९
विवाह लग्न-कुण्डली में ग्रहों की शुभता	१९९
नीचादिगत ग्रहों की फल देने में असमर्थता	२००
शुभ ग्रहों की लग्न में शुभ फल देने की सामर्थ्य	२००
शुभ ग्रहों की केन्द्रों में दोष नाश की सामर्थ्य	२००
लग्नगत गुरु की शुभता का पुनः कथन	२०१
त्रिकोणस्थ शुक्र ग्रहों द्वारा दोष नाश	२०१
एकादशस्त्र चन्द्रमा एवं सूर्य की दोषनाशक शक्ति	२०१
केन्द्रस्थ गुरु से प्राकृतिक उत्पातों से उत्पन्न दोषों का नाश	२०१

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
बलवान् गुरु-शुक्र से दोषनाश का पुनः कथन	२०२	त्रिनाडी ज्ञान का चक्र (चतुष्पाद नक्षत्रों में)	२०९
वर्गोत्तम लग्न का फल	२०२	चतुर्नाडी (चतुः पर्व गणना) चक्र	२०९
उच्चस्थ केन्द्री गुरु का विशेष फल	२०२	पञ्चपर्वगणना (पंचनाडी) चक्र	२०९
अष्टकूटों की शुभता का फल	२०३	विवाहों के आठ भेद	२१०
वर-कन्या के एक राशि एवं एक नक्षत्र दोष का कथन	२०३	गन्धर्वादि चार प्रकार के विवाहों के लक्षण तथा निन्द्यता	२१०
स्त्री दूर दोष का कथन	२०३	अभिजित् मुहूर्त तथा गोधूलि लग्न की प्रशंसा	२११
गण मेलापक	२०३	एक महान् दोष से गुणसमूह का नाश	२११
राशिकूट का कथन (भकूट)	२०४	एक समय में सहोदर बहिन-भाई के विवाह का निषेध	२१२
अशुभ राशिकूट प्रदर्शक चक्र	२०५	सहोदर कन्याओं के विवाह का छह मास के भीतर निषेध	२१२
राशियों के शुभ सम्बन्धों का प्रदर्शक चक्र	२०५	प्रत्युद्वाहादि का निषेध (सांठ सगाई का निषेध)	२१२
ग्रह मैत्री	२०६	एक साथ दो मंगल कार्यों का निषेध	२१२
ग्रहों की मैत्री का चक्र	२०६	गण्डान्त में जन्म का फल	२१२
योनिकूट का कथन	२०६	कालगणना का कथन	२१३
योनि प्रदर्शक चक्र	२०८	दैवज्ञ द्वारा शङ्कु साधन	२१४
वर्ण कूट	२०८	वधूप्रवेशमुहूर्त	२१४
नाडी कूट विचार	२०८	समवर्षादि में वधूप्रवेश का निषेध	२१४
देशभेद से त्रिनाडी-चतुर्नाडी तथा पंचनाडी का विचार	२०९		

अष्टविंशतितमोऽध्यायः

प्रतिष्ठाध्यायः

देवप्रतिष्ठा में शुभ काल एवं तिथियाँ	२१६	प्रतिष्ठामुहूर्त के लग्न में ग्रहों का फल	२१८
प्रतिष्ठा में शुभवार एवं नक्षत्र	२१७	लग्न में गुणाधिक्य की प्रशंसा	२१९
प्रतिष्ठाहेतु शुभ लग्न एवं नवांश	२१७	प्रतिष्ठा के दोषों का फल	२२०
लग्न में ग्रहों का फल	२१८		

नवविंशोऽध्यायः

वास्तुविधानाध्यायः

गृहनिर्माणस्थल की भूमिपरीक्षा	२२१	स्वाद एवं प्लव द्वारा भूमि की परीक्षा	२२२
ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिये शुभ गन्ध एवं वर्ण	२२२	भूमि के गन्ध-वर्ण-रस द्वारा उपयोग का चक्र	२२२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क
भूमि के प्लव (जलबहाव) के फल का चक्र	२२२
भूमि की गर्त्तपरीक्षा	२२२
दिक्साधन	२२३
घर के चारों ओर के आठ भाग दो मुखों में द्वारों के फल	२२४
ब्रह्मस्थान में निर्माणकार्य का निषेध तथा पिशाचांशों का त्याग	२२६
इक्यासी पद के आयताकार वास्तु का चक्र	२२७
वृत्ताकार वास्तु में ब्रह्मस्थानादि	२२८
८१ पद का त्रिभुजवास्तु	२२९
वास्तु में मर्म एवं शिरा का ज्ञान	२३०
गृहनिर्माण में प्रशस्त मास	२३०
सङ्क्रान्तियुक्त मासों का ग्रहण	२३०
गृह-निर्माण में मासानुसार फल-प्रदर्शक-चक्र	२३१
दिशाओं में वर्ग तथा वर्गेश	२३१
वर्ग-वर्गेश एवं उनकी दिशा का ज्ञापक चक्र	२३१
काकिणी विचार	२३२
ग्राम एवं व्यक्ति की काकिणी का चक्र	२३२
व्यक्ति के वर्गानुसार ग्राम या नगर में वासयोग्य दिशा का चक्र	२३२
काकिणी विचार का स्पष्टीकरण	२३४
क्षेत्रफल तथा आय का विचार	२३५
आठ आयों के शेषानुसार नाम	२३५
ब्राह्मणादि वर्णों के लिये शुभ आय	२३५
ध्वजादि आयों के सामान्य फल	२३५
व्यक्ति एवं वासस्थान की राशियों का मेलापक	२३५
नाम के प्रथमाक्षर पर आधारित वास्तुशास्त्रीय अवकहडा चक्र	२३७
श्रीनारदजी के मत से व्यक्ति एवं वासस्थान की राशि से मेलापक देखने का चक्र	२३८
नाम नक्षत्रों से साध्य साधक के धन-ऋण का ज्ञान	२३९
वास्तुभूमि के षट्पदार्थों का ज्ञान	२३९
वार एवं अंश का फल	२४०
अथ दैर्घ्यविस्तारघातरूपपिण्डवशे-नायादिबोधकचक्रम्	२४०
क्षेत्रफल के आधार पर शुभ आयादि बोधक चक्र	२४१
क्षेत्रफल के आधार पर शुभ आयादि बोधक चक्र	२४२
क्षेत्रफल के आधार पर शुभ आयादि बोधक चक्र	२४३
वत्स (वास्तुमुख) विचार	२४५
घर की नींव लगाने की विधि	२४५
शङ्कुरोपण का स्थान	२४६
शङ्कु की ब्राह्मणादि वर्णों के लिये माप	२४७
शङ्कु के लिये शुभ काष्ठ	२४७
शङ्कु का आकार-प्रकार	२४७
शङ्कु के रोपणार्थ शुभमुहूर्त	२४८
ग्रहों के भेद	२४९
षोडश ग्रहों के नाम	२५१
मुख्य गृह से उपकरण गृहों की दिशा का कथन	२५६
गृह के समीप एवं सामने निन्दित वृक्ष	२६१
घर के दक्षिण-पश्चिम भाग में वृक्षों का विशेष निषेध	२६१

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
गृह में स्तम्भों की संख्या का कथन	२६२	ईशानादि कोणों में समीप देवता	२६८
गृह का उत्सेध (ऊँचाई) कथन	२६२	मध्य केन्द्र में ब्रह्मा तथा उसके बाह्य देवों के नाम	२६९
गृहच्छाद् के आठ प्रकार के मान	२६२	एकपदिक देवों का कथन	२६९
चारो वर्णों के लिये मानों की ग्राह्यता	२६३	विंशति द्विपदिक देवों का कथन	२६९
ध्वजादि आयों का अलग-अलग घरों में उपयोग	२६५	चार त्रिपद देवों का कथन	२७०
वास्तुपूजाविधि तथा वास्तुमण्डल का निर्माण	२६६	पूजनविधि	२७०
बाहर की ओर से ३२ देवताओं के नाम	२६७	वास्तुपुरुष की प्रार्थना का मन्त्र	२७०
		दक्षिणादान	२७०
		वास्तुपूजा का फल	२७१
		अथ गृहवास्तुचक्रम् पूजनार्थम्	२७४
		प्रवेश के अयोग्य गृह	२७५

त्रिंशोऽध्यायः

यात्राध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
यात्रा-मुहूर्त की अनिवार्यता	२७६	लग्नकुण्डली के दोषों का परिहार	२८४
यात्रा में निषिद्ध तिथियाँ	२७६	पञ्चक विचार	२८४
यात्रा में शुभ नक्षत्र एवं चन्द्रमा	२७६	शत्रुनाशक योग	२८५
दिशाशूल	२७६	सभी प्रकार की यात्रा में अशुभ लग्न एवं नवांश	२८६
नक्षत्रशूल तथा सर्वदिग्गमन नक्षत्र	२७८	जलराशि लग्नों में करने योग्य कार्य	२८६
दिन द्वारा नक्षत्र एवं परिघ दण्ड का कथन	२७८	लग्नादि द्वादश भावों के नाम	२८६
कोणों की यात्रा में निर्देश तथा चन्द्रवास	२७९	यात्रालग्नकुण्डली में ग्रहों का शुभाशुभत्व	२८७
यात्रा में दिग् राशियाँ	२७९	यात्रा में अभिजित् मुहूर्त का उपयोग	२८७
यात्रा में ललाट योग का विचार	२८०	यात्रा में अन्य विचित्र शुभ योग	२८७
यात्रालग्न में विलोमग्रह की वर्जना	२८२	यात्रार्थ योग-अधियोग तथा योगाधियोगों का कथन	२८८
युद्धयात्रा में अयन की अनुकूलता	२८२	जयलक्ष्मीयोग	२८८
सम्मुख शुक्र का निषेध	२८३	शलभाग्नियोग	२८८
सम्मुख शुक्र परिहार	२८३	लाक्षेवलीयते योग	२८८
शुक्र के नीचादि राशि का फल तथा परिहार	२८३	यममन्दिरयोग	२८९
यात्रा की लग्नकुण्डली में शुक्र की अशुभता	२८४		

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
पूतनायोग	२८९	वार दोहद	२९३
अभिसारिकायोग	२८९	नक्षत्र दोहद	२९३
अस्थिरा रिपुवाहिनीयोग	२८९	यात्राविधि	२९४
शत्रुमेदिनी प्राप्तियोग	२८९	दिगीश्वरपूजन	२९४
जययोग	२९०	पूर्व के दिक्पाल इन्द्र की पूजा	२९४
पुनः जययोग	२९०	अग्निकोण के दिक्पाल अग्नि की पूजा	२९५
शत्रुनाशयोग	२९०	दक्षिण के दिक्पाल यम की पूजा	२९५
अरिनाशयोग	२९०	नैर्ऋत्य के दिक्पाल निर्ऋति की पूजा	२९५
रिपुनाशयोग	२९०	पश्चिम के दिक्पाल वरुण की पूजा	२९५
शत्रुदहनयोग	२९१	वायव्य के दिक्पाल वायु की पूजा	२९५
रिपुसर्वनाश योग	२९१	उत्तर के दिक्पाल कुबेर की पूजा	२९५
यात्रालग्न में वर्गोत्तम शुक्र का फल	२९१	ईशानके दिक्पाल शिव की पूजा	२९५
पुनः रिपुनाशयोग	२९१	पूजा में ध्यान हेतु दिक्पालों के स्वरूप का प्रदर्शक चक्र	२९६
गरुडभुजङ्गयोग	२९१	प्रस्थानविधि	२९६
भागीरथी पापयोग	२९२	यात्रा के स्थगन की परिस्थितियाँ	२९७
शत्रुयोषाश्रुविन्दुयोग	२९२	यात्रा-समय शुभाशुभ शकुन	२९७
विजयादशमी का मुहूर्त	२९२	अपशकुन दिखने पर यात्री का कर्त्तव्य	२९९
यात्रा में मनोबल का महत्त्व	२९२	यात्रा के समय छींक का फल	२९९
यात्राहेतु प्रतिबन्ध	२९२	विजयी राजा का कर्त्तव्य	२९९
यात्रा के समय अपशकुन	२९३		
यात्रा में दिग्दोहद	२९३		

एकत्रिंशोऽध्यायः
प्रवेशाध्यायः

नववास्तुप्रवेश	३००	गृहप्रवेश में विहित नक्षत्र एवं लग्नादि	३००
युद्धयात्रा की निवृत्ति पर राजा का राजधानी में प्रवेश	३००	गृहप्रवेशविधि	३०१
गृहप्रवेश में मास-विचार	३००		

द्वात्रिंशोऽध्यायः
वर्षाप्रश्नाध्यायः

अतिवृष्टियोग	३०३	शुक्र एवं शनि से चन्द्र के समसप्तक का फल	३०३
पाप दृष्ट चन्द्र तथा शुक्र का फल	३०३		

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क
बुध-शुक्र की युति का फल	३०३
शुक्र के वर्षाकारक नक्षत्र	३०४
सूर्य से आगे-पीछे ग्रहों का फल	३०४
शुक्र के चार एवं आर्द्रार्क का फल	३०४
आर्द्राप्रवेश का फल	३०४
पूर्वाषाढ़ के सूर्य में बादल होने का फल	३०५
रेवती नक्षत्र के सूर्य में वर्षा होने का फल	३०५
कर्क-सिंह-कन्या सङ्क्रमण के समय बादलों का फल	३०५
उत्तराभाद्र के सूर्य से भरणी के सूर्यों तक वर्षा एवं बादल का फल	३०५
गुरु-शुक्र के सम सप्तक का फल	३०५
सूर्य-चन्द्र के मण्डल के साथ मेढक बोलने का फल	३०६
वर्षाकारक प्राकृतिक लक्षण	३०६

त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः
कूर्मविभागाध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क
कूर्म के नौ मण्डलों का कथन	३०७
१. कूर्म में नाभिमण्डल के देश	३०७
२-३. मुखमण्डल तथा दक्षिण बाहुमण्डल के देश	३०८
४-५. कूर्म में दक्षिणपाद मण्डल के देश	३०८
६-७. पुच्छ एवं वामपाद मण्डल के देश	३०८
८-९. वामपार्श्व एवं वामबाहु के देश	३०८
कृत्तिकादि तीन-तीन नक्षत्रों के नौ विभाग	३०८

चतुःत्रिंशत्तमोऽध्यायः
उत्पाताध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क
उत्पातों के लक्षण में मूर्ति के विकार	३११
अन्तरिक्ष एवं भूमि-सम्बन्धी उत्पात	३११
चतुष्पाद-सम्बन्धी उत्पात	३१२
प्रतिसूर्यादि उत्पात	३१२
पक्षियों-सम्बन्धी उत्पात	३१२
उत्पातों का सामान्य फल	३१२
सभी उत्पातों की सामान्य शान्ति-हेतु हवन	३१३
होमार्थ आहुतियों की संख्या	३१३
होम की दिनावधि	३१३
साङ्गतासिद्धि	३१४

पञ्चत्रिंशत्तमोऽध्यायः
शान्त्यध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क
त्रिविध उत्पातों का कथन	३१६
काकमैथुन देखने का फल	३१६
काकमैथुनदर्शनजन्य अशुभ फल की शान्ति के उपाय	३१७
होमविधि	३१७
आचार्य को गोदान तथा स्वर्णादि दान	३१७
ऋत्विजों को दक्षिणा तथा ब्राह्मण भोजन	३१८
शरीर पर छिपकली गिरने तथा गिरगिट के चढ़ने का फल	३१८

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क
शरीर के विभिन्न अंगों पर पल्ली पतन तथा सरट प्ररोहण का शुभा-शुभ फल	३१८
सरट तथा स्त्रियों में विपरीत फल	३१९
अशुभ फल होने पर शान्तिकर्म आवश्यक	३१९
पल्लीपतन में शान्ति विधान	३२०
घर में बाज या गृद्ध्र के प्रविष्ट होने का फल	३२०
श्येन शान्ति विधि	३२१
पिंगलापक्षी-मधुमक्खी तथा वाल्मीकिजन्य उत्पात	३२२
शिथिली जनन उत्पात की शान्ति	३२३
इन्द्रलुप्तशान्ति	३२४
अश्वशान्ति हेतु अनुकूल समय	३२६
मण्डप-निर्माण	३२६
वेदी-निर्माण	३२७
आचार्यादि का वरण	३२७
सूर्यपुत्र रेवन्त का ध्यान	३२८
रेवन्त की प्रार्थना	३२८
रेवन्त का पूजन	३२८
पञ्चगणों की पूजा	३२८
चतुर्वेदपूजा	३२८
कलशस्थापन	३२९
चारोंद्वारों पर चार ऋत्विजों का पूजन	३२९
अग्निस्थापन	३२९
होम मन्त्र एवं आहुति संख्या	३२९
होम की दिनावधि	३२९
जपादि कथन	३३०
हुतशेष से जयन्त को बलिदान	३३०
दक्षिणादान	३३०
विधिपूर्वक अश्वशान्ति कराने का फल	३३०

षट्त्रिंशतमोऽध्यायः

मिश्रकाध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क
उल्का पिण्डों का वर्णन	३३२
पाँचों प्रकार की उल्का के फल देने का समय	३३३
फल की मात्रा का कथन	३३३
अशनि का लक्षण	३३३
विद्युत् का लक्षण	३३४
धिष्ण्या के लक्षण	३३४
तारा के लक्षण	३३४
उल्का के लक्षण एवं विविध आकार	३३५
सूर्य-चन्द्र के उदय में पूर्वी क्षितिघ्न की उल्का का फल	३३६
उल्का के पुच्छ भाग की दिशा का फल	३३७
राजाओं के लिये शुभफलदायक उल्का	३३७
सन्ध्यादि समय के उल्कापात का फल	३३७
उल्का से हत नक्षत्रों का फल	३३८
स्थानानुसार उल्कापात का फल	३३८
आकारादि के अनुसार उल्कापात का फल	३३९
सूर्य एवं चन्द्रमा के परिवेष (मण्डलों) का कथन	३४१
परिवेषों के विभिन्न रंग	३४१
विभिन्न आकार-प्रकार एवं वर्णों के परिवेष का फल	३४२
परिवेषगत शनि का फल	३४२
परिवेषगत मंगलादि का फल	३४३
परिवेषगत राहु-केतु के फल	३४३
परिवेषगत दो तथा तीन ग्रहों का फल	३४३

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क
परिवेषगत चार-पाँच ग्रहों का फल	३४३
परिवेषगत वक्रीग्रह का फल	३४४
दो या अधिक नक्षत्रों के परिवेष का फल	३४४
प्रतिपदादि चार तिथियों में परिवेष का फल	३४४
पञ्चमी आदि तिथियों के परिवेष का फल	३४५
परिवेष में रेखा के अनुसार शुभाशुभ फल	३४५
इन्द्रधनुष के लक्षण	३४६
वायु एवं अभ्र के विघट्टित होने का कारण	३४६
विविध प्रकार के इन्द्रधनुष के फल	३४६
गन्धर्व नगर का फल	३४७
प्रतिसूर्य का फल	३४८
निर्घात का फल (बिजली गिरने का फल)	३४९
दिग्दाह के फल	३५०
रजो लक्षण एवं फल	३५१
काले रंग की आँधी तथा सूर्योदय समय की आँधी का फल	३५१
सूर्योदय से सूर्यास्त तक दिन संख्यानुसार रजो व्याप्ति का फल	३५१
सूर्यास्त से पूरी रात भर आँधी छायी रहने पर रात्रि की संख्यानुसार फल	३५१
भूकम्प का कारण	३५२
दिन-रात में प्रहर-क्रम से भूकम्प का फल	३५२
वायव्यमण्डल के नक्षत्रों में भूकम्प का फल	३५२
अग्निमण्डल में भूकम्प का फल	३५३
वासवमण्डल के भूकम्प का फल	३५३
वारुणमण्डल के नक्षत्रों का फल	३५३
भूकम्पादि के फल की अवधि	३५३
क्षयाधिमास का कथन	३५४
ग्रहों के प्रभाव की भूमियों का कथन	३५४
तैलाभ्यङ्गपूर्वक स्नान के पर्व	३५४
जयन्तीयोग	३५५
ज्येष्ठा-पूजन	३५५
शिवरात्रि व्रत तथा विभिन्न व्रतों में तिथि की ग्राह्यता	३५५
स्कन्दपञ्चमी	३५९
नागपञ्चमी	३५९
गणेशचतुर्थीव्रत	३५९
सूर्यसप्तमी	३६०
वैशाख मास के दान	३६०
दुर्गानवमी	३६०
कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा को वृषोत्सर्ग का फल	३६०
मास शून्य राशियाँ तथा लग्नें	३६०
तिथि शून्य (दग्ध) लग्नें	३६०
मासशून्य तिथियाँ	३६१
मासशून्य राशियों का चक्र	३६१
तिथिशून्य लग्नों का चक्र	३६२
मासशून्य तिथियों का चक्र	३६२

सप्तत्रिंशत्तमोऽध्यायः
श्राद्धलक्षणाध्यायः

विषय	पृष्ठाङ्क
शवदाहमुहूर्त	३६३
सपिण्डीकरण श्राद्ध का समय	३६४
एकोद्दिष्ट श्राद्ध का समय	२६४
पिण्डदान में निषिद्ध काल	३६४

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठाङ्क
साधारण श्राद्ध हेतु निषिद्ध तिथ्यादि	३६४
एकोद्दिष्ट श्राद्ध में निषिद्ध काल	३६४
सकृन्महालय श्राद्ध में मुहूर्त का विचार नहीं	३६४
महालय में एक बार श्राद्ध अति आवश्यक	३६५
चतुर्दशी की विशेषता तथा नन्दा की वर्जना	३६५
महालय (कनागत) में द्वितीया-तृतीया तथा चतुर्थी का फल	३६५
आनन्द श्राद्ध योग	३६५
महालय में सप्तमी-अष्टमी तथा नवमी में श्राद्ध का फल	३६६
पितृकल्याण श्राद्धयोग	३६६
पितृकल्याणयोग के श्राद्ध का फल	३६६
अमृतसंज्ञक योग	३६६
द्वादशी श्राद्ध का फल	३६६
त्रयोदशी एवं चतुर्दशी का श्राद्ध में निषेध	३६६
गजच्छायायोग का फल	३६७
श्राद्धकर्म में अमावास्या का फल	३६७
नक्षत्र श्राद्ध का फल	३६७
टीकाकारकृत देशकालादि वर्णन	३६७
परिशिष्ट	
संहिता ज्योतिष में कुण्डली के द्वादशभावों से विचारणीय विषय	३६९
राष्ट्रीय ज्योतिष में ग्रहों का प्रभाव	३७१
देश एवं प्रदेश की राशियों का निर्धारण	३७२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

॥ श्रीः ॥

नारदमहामुनिप्रणीता

श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता
(नारदसंहिता)

प्रथमोऽध्यायः

शास्त्रोपनयनाध्यायः

मङ्गलाचरणम्

अणोरणुतरः साक्षादीश्वरो महतो महान्।
आत्मागुहायां निहितो जन्तोर्जयत्यतीन्द्रियः॥ १॥

जो परमेश्वर 'अणोरणीयान्' (अणु से भी सूक्ष्म) तथा 'महतो महीयान्' (महान् से भी महान्) होकर प्रत्येक जीवमात्र की आत्मगुहा में (आत्मरूप से) विराजमान हैं तथा जिन्हें चक्षु इत्यादि इन्द्रियों से नहीं जाना जा सकता है, उनकी जय हो॥ १॥

हिन्दी टीकाकारकृत मङ्गलाचरण

गणनाथं नमस्कृत्य विश्वेशसहितं मुदा।
देवीं सरस्वतीञ्चैव भास्करञ्च समण्डलम्॥ १॥
दैवज्ञानाम्प्रबोधाय हिन्दीटीकाऽभयामिमाम्।
संहिता नारदीयायाः अभयकात्यायनोऽहम्॥ २॥

ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तक आचार्य

ब्रह्मा सूर्यो वसिष्ठोऽत्रिर्मनुः पौलस्त्यलोमशौ।
मरीचिरङ्गिरा व्यासो नारदः शौनको भृगुः॥ २॥
च्यवनो यवनो गर्गः कश्यपश्च पराशरः।
अष्टादशैते गम्भीरा ज्योतिःशास्त्रप्रवर्तकाः॥ ३॥

१. ब्रह्माजी, २. सूर्य, ३. वसिष्ठ, ४. अत्रि, ५. मनु, ६. पौलस्त्य, ७. लोमश, ८. मरीचि, ९. अङ्गिरा, १०. व्यास, ११. नारद, १२. शौनक, १३. भृगु, १४. च्यवन, १५. यवन, १६. गर्ग, १७. कश्यप तथा १८. पराशर—ये अठारह गम्भीर ज्योतिष-शास्त्र के प्रवर्तक आचार्य हैं॥ २-३॥

विमर्श—मुद्रित प्रतियों में द्वितीय श्लोक में 'ब्रह्माचार्यो' यह पाठ है, जो अशुद्ध है। यहाँ 'ब्रह्मासूर्यो' यही पाठ समीचीन है अन्यथा अठारह के स्थान पर केवल सत्रह आचार्य होते हैं और आचार्य नामक किसी प्रवर्तक का नाम ग्रन्थों में उपलब्ध नहीं है। जबकि सूर्य का नाम सर्वत्र मिलता है। अन्य संहिताओं में इनके नाम इस प्रकार हैं—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'सूर्यः पितामहो व्यासो वसिष्ठोऽत्रिः पराशरः।
कश्यपो नारदो गर्गो मरीचिर्मनुरङ्गिरा॥
लोमशः पौलिशश्चैव च्यवनो यवनो भृगुः।
शौनकोऽष्टादशश्चैते ज्योतिःशास्त्रप्रवर्तकाः॥'

—काश्यपसंहिता

'विश्वसृङ् नारदो व्यासो वसिष्ठोऽत्रिः पराशरः।
लोमशो यवनः सूर्यश्च्यवनः कश्यपो भृगुः॥
पुलस्त्यो मनुराचार्यः पौलिशः शौनकोऽङ्गिराः।
गर्गो मरीचिरित्येते ज्ञेया ज्योतिःप्रवर्तकाः॥'

—पराशरसंहिता

यहाँ पराशर में पुलस्त्य तथा पौलिश दो अलग-अलग नाम मिलते हैं, जिससे ज्योतिषशास्त्रप्रवर्तक आचार्यों की संज्ञा अठारह के स्थान पर उन्नीस हो जाती है। मुझे लगता है पराशरसंहिता का पाठ भ्रष्ट है, इसमें प्रतिलिपिकार ने भूल कर दी है और पराशर के दूसरे श्लोक का शुद्ध पाठ इस प्रकार होना चाहिये—

'पुलस्त्यो मनुराचार्यो अङ्गिराशौनकस्तथा।
गर्गो मरीचिरित्येते ज्ञेया ज्योतिःशास्त्रप्रवर्तकाः॥'

क्योंकि पौलस्त्य तथा पौलिश ये एक ही व्यक्ति के नाम के दो पाठान्तर मात्र हैं, ये दो अलग-अलग व्यक्ति नहीं हो सकते हैं। नीचे तीनों संहिताओं के ज्योतिःशास्त्र-प्रवर्तकों के तुलनात्मक नामों की तालिका स्पष्टता हेतु प्रदर्शित की जा रही है—

तीनों संहिताओं के अनुसार ज्योतिःशास्त्र-प्रवर्तकों के नामों की तुलनात्मक तालिका

क्रमांक	नारदीयसंहिता में नाम	काश्यपसंहिता में नाम तथा क्रम	पराशरसंहिता में नाम तथा क्रम
१	ब्रह्मा	पितामह—२	विश्वसृङ्—१
२	सूर्य	सूर्य—१	सूर्य—९
३	वसिष्ठ	वसिष्ठ—४	वसिष्ठ—४
४	अत्रि	अत्रि—५	अत्रि—५
५	मनु	मनु—११	मनुराचार्य—१४
६	पौलस्त्य	पौलिश—१४ (पुलस्त्य)	पुलस्त्य (पौलिश)—१३
७	लोमश	लोमश—१३	लोमश (रोमश)—७
८	मरीचि	मरीचि—१०	मरीचि—१८
९	अङ्गिरा	अङ्गिरा—१२	अङ्गिरा—१५
१०	व्यास	व्यास—३	व्यास—३
११	नारद	नारद—८	नारद—२
१२	शौनक	शौनक—१८	शौनक—१६
१३	भृगु	भृगु—१७	भृगु—१२
१४	च्यवन	च्यवन—१५	च्यवन—१०
१५	यवन (ऋषि)	यवन (ऋषि)—१६	यवन (ऋषि)—८
१६	गर्ग	गर्ग—९	गर्ग—१७
१७	कश्यप	कश्यप—७	कश्यप—११
१८	पराशर	पराशर—६	पराशर—६

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रिस्कन्धात्मक ज्योतिःशास्त्र

सिद्धान्तसंहिताहोरारूपं स्कन्धत्रयात्मकम्।
वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिःशास्त्रमनुत्तमम्॥ ४॥

यह वेद के निर्मल चक्षुस्वरूप ज्योतिःशास्त्र है, जो १. सिद्धान्त (खगोलशास्त्र), २. संहिता (अनेक विषयों का संकलन) तथा ३. होरा (जातक तथा प्रश्न आदि) इन तीन स्कन्धों में वर्णित है॥ ४॥

ज्योतिःशास्त्र का वेदाङ्गत्व

अस्य शास्त्रस्य सम्बन्धो वेदाङ्गमिति कथ्यते।
अभिधेयञ्च जगतः शुभाशुभनिरूपणम्॥ ५॥

यह शास्त्र जगत् के शुभाशुभ जानने के लिये है, अतः इसका सम्बन्ध वेदों से होने से इस ज्योतिःशास्त्र को वेदाङ्ग कहा जाता है॥ ५॥

वेदाङ्गों में प्रथम रचना एवं उपयोग

यज्ञाध्ययनसंक्रान्तिग्रहषोडशकर्मणाम् ।
प्रयोजनञ्च विज्ञेयं तत्तत् कालविनिर्णयात्॥ ६॥
विनैतदखिलं श्रौतस्मार्त्तं कर्म न सिध्यति।
तस्माज्जगद्धितायेदं ब्रह्मणा रचितं पुरा॥ ७॥

यज्ञारम्भ, विद्यारम्भ, अध्ययनारम्भ, संक्रान्तिज्ञान, ग्रहों का गणित, सोलह संस्कार, इन सबके लिये उपयुक्त काल (मुहूर्त) का निर्णय तात्कालिक रूप से इसी शास्त्र द्वारा होता है॥ ६॥

बिना ज्योतिषशास्त्र के सभी प्रकार के श्रौत, स्मार्त आदि कर्म सफल नहीं हो पाते हैं, इसीलिये संसार के कल्याण के लिये ब्रह्माजी ने इस वेदाङ्गरूप ज्योतिःशास्त्र की रचना प्राचीन काल में की थी॥ ७॥

नारद द्वारा त्रिस्कन्ध ज्योतिषशास्त्र की रचना का कथन

तं विलोक्य तत्सूनुर्नारदो मुनिसत्तमः।
उक्त्वा स्कन्धद्वयं पूर्वं लोकानां हितकाम्यया॥ ८॥
वक्ष्ये शुभाऽशुभफलज्ञप्तये देहधारिणाम्।
स्कन्धो शास्त्रे संहिता व्यवहारप्रसिद्धये॥ ९॥

ब्रह्माजी द्वारा निर्मित उस त्रिस्कन्धात्मक ज्योतिःशास्त्र का अध्ययनकर उनके पुत्र नारद ने प्रथम (सिद्धान्त तथा होरास्कन्ध) के ग्रन्थ रचे, फिर पीछे से संहिता स्कन्ध भी मनुष्यों को पृथिवी के शुभाशुभ फल हेतु रच दिया॥ ८-९॥

नारदीयज्योतिषसंहिता में वर्णित विषयों की सूची

संज्ञा ह्युक्ताः समस्ताश्च सम्यग् ज्ञात्वा पृथक् पृथक्।
शास्त्रोपनयनाध्यायो ग्रहचारोऽब्दलक्षणम्॥ १०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तिथिर्वारश्च नक्षत्रं योगं तिथ्यर्धसंज्ञकम्।
मुहूर्तोपग्रहोऽर्कस्य संक्रान्तिर्गोचरस्तथा॥ ११॥
चन्द्रताराबलाध्यायः सर्वलग्नार्त्तवाह्वयः।
आधानपुंससीमन्तो जातनामन्नभुक्तयः॥ १२॥
चौलाङ्कुरार्पणं मौञ्जी छुरिकाबन्धनं क्रमात्।
समावर्तनवैवाहप्रतिष्ठा सद्मलक्षणम्॥ १३॥
यात्राप्रवेशनं सद्यो वृष्टिकूर्मविलक्षणम्।
उत्पातलक्षणं शान्तिमिश्रकं श्राद्धलक्षणम्॥ १४॥
सप्तत्रिंशद्भिरध्यायैः नारदीयाख्यसंहिता।
य इमां पठते भक्त्या स दैवज्ञो हि दैववित्॥ १५॥

इस संहिता में शास्त्रोपनयन, ग्रहचार, संवत्सरों के फल, तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण, मुहूर्त, उपग्रहादि, सूर्यसंक्रमण, ग्रहगोचर, चन्द्रतारा का बल, द्वादशलग्न, ऋतु, रजस्वला, आधान, पुंसवन, सीमन्त, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चौलकर्म, अंकुरार्पण, मौञ्जीबन्धन, छुरिकाबन्धन—ये सब क्रम से कहकर फिर समावर्तन, वैवाह प्रतिष्ठा, वास्तुकर्म, यात्रा, यात्रा के उपरान्त प्रवेश, सद्योवृष्टि, कूर्मलक्षण, उत्पात, शान्तिकर्म, मिश्रकाध्याय तथा श्राद्ध लक्षण ये सैंतीस अध्याय इस नारदीय संहिता में कहे गये हैं। जो दैवज्ञ इस ग्रन्थ को भक्तिपूर्वक पढ़ता है, वह भविष्य फल कथन करने में तथा भाग्य बताने में सफल होता है॥ १०-१५॥

विमर्श—श्लोक १५ के अनुसार अध्याय संख्या ३७ बतायी है, परन्तु मुम्बई से प्रकाशित संस्करण में कुल ५५ अध्याय हैं अर्थात् अध्यायों की संख्या डेढ़ गुनी है। इससे पता चलता है कि मूल संहिता में बहुत भाग लुप्त हुआ है तथा बहुत कुछ जोड़ा गया है। प्रक्षिप्तांशों का उल्लेख आगे प्रसंगानुसार किया जावेगा। मुगलकाल में विधर्मियों द्वारा भारत के प्राचीन वाङ्मय को गम्भीर क्षति पहुँचायी गयी है। लाखों पाण्डुलिपियाँ जल में, अग्नि में तथा वायु में नष्ट कर दी गयी हैं।

ज्योतिषी के आवश्यक गुण

त्रिस्कन्धो दर्शनीयः श्रौतस्मार्तक्रियापरः।
निर्दाम्भिकः सत्यवादी दैवज्ञो दैववित्स्थिरः॥ १६॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां शास्त्रोपनयनाध्यायो प्रथमः॥ १॥

ज्योतिषी को ज्योतिष के तीनों स्कन्धों (सिद्धान्त-संहिता तथा होरा) का ज्ञाता होना चाहिये। वह आकर्षक व्यक्तित्ववाला, श्रौतस्मार्तक्रियापरायण, दम्भरहित, सत्यवादी तथा धैर्यवान् होना चाहिये॥ १६॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के प्रथम शास्त्रोपनयनाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दीटीका पूर्ण हुई॥ १॥

●

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

द्वितीयोऽध्यायः

ग्रहचाराध्यायः

संवत्सर के राजा का निर्णय

चैत्राद्येष्वपि मासेषु मेषाद्याः सङ्क्रमाः क्रमात्।
चैत्रादितिथिवारेशस्तस्याब्दस्य त्वधीश्वरः॥ १॥

चैत्र शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के दिन सूर्योदय के समय में जो वार हो, उस वार का स्वामीग्रह वर्ष का राजा कहा जाता है॥ १॥

विमर्श—अमावस्या तथा प्रतिपदा तिथियों की क्षय तथा वृद्धि से कई बार सम्वत्सर का राजा निर्णय करने में समस्या उत्पन्न होती है, उसके लिये ज्योतिष के ग्रन्थों में अनेक व्यवस्थाएँ दी हैं, वे इस प्रकार हैं—

१. कल्पलता का मत—'संवत्सरस्य चान्तस्य कुहू भवति यद्दिने।
अपरो वासरो योऽसौ सोऽयं राजा विनिर्दिशेत्॥'

अर्थात् पिछले सम्वत्सर की समाप्ति के दिन जो वार हो, उससे अगले दिन जो वार हो, उसी का स्वामी सम्वत्सर का राजा होता है।

२. रत्नावली का मत—'चैत्र शुक्लप्रतिपदि यो वारोऽर्कोदये स वर्षेशः।
उदय द्वितये पूर्वो नोदय युगलेऽपि पूर्वःस्यात्॥'

अर्थात् चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को सूर्योदय के समय जो वार हो, वही वारेश राजा होता है। यदि प्रतिपदा तिथि की वृद्धि हो जाय, तो पूर्व दिन का स्वामी राजा होता है। यदि तिथि क्षय हो तो भी पूर्ववार का स्वामी ही राजा होता है।

३. गर्गसंहिता का मत—'अमा प्रतिपदोः सन्धिर्मध्याह्नात् पूर्वतो यदि।
तदा तद् दिन यो राजा परतंश्चेत् परो भवेत्॥'

अर्थात् यदि अमावस्या तथा प्रतिपदा की सन्धि मध्याह्न से पूर्व ही हो जाय, अर्थात् मध्याह्न से पूर्व ही अमावस्या समाप्त हो जाय, तो उसी दिन का स्वामी राजा होता है, यदि मध्याह्न के उपरान्त अमावस्या तथा प्रतिपदा की सन्धि हो, तो अगले दिन का जो स्वामी होता है, वह ग्रह राजा होता है।

४. अन्य मत— 'काम्बोजखार्जूरकिरातसिन्धुदेशेषु बिल्वेष्वपि दर्दुरेषु।
किंस्तुघ्नमध्याह्नगतेऽब्दपः स्यात् अन्येषु सूर्योदयगोदिनेशः॥'

अर्थात् काम्बोज (हिन्दुकुश पर्वत पर बलख एवं गिलगित के मध्य का भाग), खार्जूर (बलूचिस्तान), किरात (लद्दाख), सिन्धु, बिल्वप्रदेश, दर्दुर (पाक अधिकृत कश्मीर) इन प्रदेशों में जिस दिन मध्याह्न के समय में किंस्तुघ्नकरण हो, उसी दिन जो वार हो, उसका स्वामी राजा होता है तथा अन्यत्र सूर्योदयकालिक वारेश राजा माना जाता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वर्ष के अन्य अधिकारियों का निर्णय

मेषसंक्रान्तिवारेशो भवेत्सोऽपि चमूपतिः।
कर्कटस्य तु वारेशो सस्येशस्तत्फलं ततः॥ २॥
तुलासंक्रान्तिवारेशो रसानामधिपः कुर्यात्।
मकराधिपतिः साक्षान्नीरसस्यपतिः क्रमात्॥ ३॥

१. मेष संक्रान्ति के दिन जो वार होता है, उसका स्वामी चमूपति (सेनापति) चुना जाता है। २. कर्क संक्रान्ति के दिन जो वार होता है, वह सस्येश (फसलों का स्वामी) होता है। ३. तुला संक्रान्ति के दिन जो वार होता है, उसका स्वामी रसेश होता है। तथा ४. मकर संक्रान्ति के दिन जो वार होता है, वह ग्रह नीरसेश (रसहीन पदार्थों का स्वामी) माना जाता है॥ २-३॥

सूर्य के राजा या मन्त्री या सस्येश होने का फल

अब्देश्वरो चमूपो वा सस्येशो वा दिवाकरः।
तस्मिन्नब्दे नृपक्रोधः स्वल्पसस्यार्धवृष्टिकृत्॥ ४॥

यदि सूर्य वर्ष का राजा या मन्त्री या सस्येश हो, तो उस वर्ष (चान्द्रवर्ष) में राजनेताओं में तनाव रहता है, खेती में उपज थोड़ी होती है। अन्न महँगा तथा वर्षा अधिक होती है॥ ४॥

चन्द्रमा के राजा/मन्त्री/सस्येश होने का फल

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वा निशाकरः।
तस्मिन्नब्दे करोति क्ष्मां पूर्णा शालिफलेक्षुभिः॥ ५॥

यदि चन्द्रमा वर्ष का राजा/मन्त्री/सस्येश हो, तो उस वर्ष पृथ्वी पर दोनों फसलें अच्छी होती हैं। पृथ्वी फलों, ईख (मेवा आदि) से परिपूर्ण हो जाती है॥ ५॥

मंगल के राजा/मन्त्री/सस्येश होने का फल

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वा महीसुतः।
तस्मिन्नब्दे चौरवह्निर्वृष्टिक्षुद्भयकृत्सदा॥ ६॥

यदि मंगल राजा/मन्त्री/सस्येश हो, तो उस वर्ष चोरों, डाकुओं का आतंक अधिक रहता है। उस वर्ष भुखमरी फैलती है॥ ६॥

बुध के राजा/मन्त्री/सस्येश होने का फल

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वा शशाङ्कजः।
अल्पवायुं स्वल्पवृष्टिं करोति नृपविग्रहम्॥ ७॥

जिस वर्ष का राजा/मन्त्री/सस्येश बुध होता है, उस वर्ष आँधी इत्यादि नहीं आती है, वर्षा कम होती है तथा राजनेताओं में कलह होता है॥ ७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गुरु के राजा या मन्त्री/सस्येश होने का फल

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वा सुरार्चितः।
करोत्यनुत्तमां धात्रीं यज्ञधान्यार्थवृष्टिभिः॥ ८॥

जिस वर्ष गुरु के पास राजा/प्रधानमन्त्री/सस्येश का अधिकार होता है, उस वर्ष धन-धान्य की प्रचुरता तथा वर्षा की पर्याप्तता होती है॥ ८॥

शुक्र के राजा या मन्त्री या सस्येश होने का फल

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वा भृगोः सुतः।
करोति सर्वां सम्पूर्णां धात्रीं शालि फलेक्षुभिः॥ ९॥

जिस वर्ष राजा/प्रधानमन्त्री/सस्येश का अधिकार शुक्र के पास हो, उस वर्ष सम्पूर्ण पृथिवी (भारतदेश) अनाज, फल तथा ईख (शाक-सब्जी आदि भी) से परिपूर्ण रहती है॥ ९॥

शनि के राजा/मन्त्री/सस्येश होने का फल

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वार्कनन्दनः।
अन्तकश्चौरवह्न्यम्बुधान्यभूपभयप्रदः ॥ १०॥

जिस वर्ष राजा/प्रधानमन्त्री/खाद्यमन्त्री (सस्येश) शनि होता है, उस वर्ष दुर्भिक्ष (अकाल) पड़ता है तथा जनता को चोरों, अग्नि, जल (बाढ़) तथा शासन से कष्ट प्राप्त होता है॥ १०॥

विमर्श—यहाँ राजा शब्द से राष्ट्रपति, मन्त्री शब्द से प्रधानमन्त्री तथा सेनापति (प्रतिरक्षा एवं गृहमन्त्री) समझना चाहिये तथा सस्येश का अर्थ खाद्यमन्त्री समझना चाहिये (उसी के पास कृषि मन्त्रालय भी होता है)। इस प्रकार ज्योतिषशास्त्र के अनुसार ईश्वरीय व्यवस्था में बिना किसी धाँधली के श्लोक २-३ के अनुसार मेदिनी शासन या चुनाव सम्पन्न होता रहता है।

राजादि के बलाबल से होनेवाले फल का फल

ज्ञात्वा बलाबलं सम्यक् वदेत् फलनिरूपणम्।

ऊपर जो राजा आदि के ग्रहों के फल दिये गये हैं, उनमें ग्रहों के बली-निर्बल होने के आधार पर उनका न्यूनाधिक फल कहना चाहिये। यदि राजा आदि पद पर आसीन ग्रह उस वर्ष पूर्ण बलवान् हो तो अपना पूर्णफल देता है। यदि वह मध्य बली हो, तो मध्यम फल होता है तथा अल्पबली होने पर अल्प फल मिलता है, निर्बल होने पर बिलकुल फल नहीं होता है॥ १०½॥

विमर्श—यदि ऊपर कथित तीनों अधिकार एक ही ग्रह के पास हों अथवा दो अधिकार हों तो उसी ग्रह का फल वर्ष में अधिक होता है, अन्यथा यदि राजा निर्बल हो तथा मन्त्री ग्रह बली हो अथवा सस्येश बली हो, तो उसी सर्वाधिक बलीग्रह का फल उस वर्ष अधिक होता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अथ सूर्यचारः

सूर्यचार में सूर्य में दृष्ट चिह्नों का फल

दण्डाकारेऽर्क वेधे वा ध्वांक्षाकारेऽथ कीलके॥ ११॥
दृष्टेऽर्कमण्डले व्याधिर्भीतिश्चौरार्थनाशनम्।
छत्रध्वजपताकाद्यैराकारैस्तिमिरैर्घनैः ॥ १२॥
रविमण्डलगैर्धूमैः स्फुल्लिंगैर्जननाशनम्।

जिस वर्ष सूर्य के ब्रिम्ब (Solar disc) में दण्ड का आकार, कौवे की आकृति, अथवा कीले की आकृति दृष्टिगोचर हो, तो उस वर्ष रोग फैलते हैं, भय होता है, जनता का धन तथा सार्वजनिक सम्पत्ति का चोरों द्वारा हरण किया जाता है।

जिस वर्ष सूर्यबिम्ब में छत्र (छाता), ध्वज, पताका आदि के अन्धकारयुक्त आकार (Dark) दिखलायी पड़ें अथवा सूर्यबिम्ब में से धूम (Smoke) निकलता दिखायी दे अथवा चिनगारियाँ निकलती दिखें, तो उस वर्ष महामारी, युद्ध अथवा प्राकृतिक आपदाओं से मनुष्यों की संख्या में कमी आती है॥ ११-१२$\frac{१}{२}$ ॥

विमर्श--ऊपर जो वर्णन है, वह सूर्यकलंकों (Sun spot) के सम्बन्ध में है। प्राचीन आचार्यों को इन सूर्यकलंकों का ज्ञान था। आज से दो सहस्राब्दी पूर्व वराहमिहिर ने इन्हें तामस कीलक आदि कहा है तथा इनसे होनेवाले भौतिक प्रभाव का भी वर्णन किया है—

'तामसकीलकसंज्ञा राहुसुताः केतवस्त्र्युस्त्रिशत्।
वर्णस्थानाकारैस्तान् दृष्ट्वार्के फलं वदेत्॥'

—बृहत्संहिता ३। ७

'यस्मिन् यस्मिन् देशे दर्शनमायान्ति सूर्यविम्बस्थाः।
तस्मिन् तस्मिन् व्यसनं महीपतीनां परिज्ञेयम्॥
क्षुत्प्रमिलानशरीरा मुनयोऽप्युत्सृष्टधर्मसच्चरिताः।
निर्मांस बालहस्ताः कृच्छ्रेणायान्ति परदेशम्॥'

—बृहत्संहिता ३। १२-१३॥

'दण्डे नरेन्द्रमृत्युर्व्याधिभयं स्यात् कबन्धसंस्थाने।
ध्वाङ्क्षे च तस्करभयं दुर्भिक्षं कीलकेऽर्कस्थे॥'

—बृहत्संहिता ३। १७

वराहमिहिर के तामस एवं कीलकों को आधुनिक खगोलशास्त्री Umbra तथा Pen umbra कहते हैं—

'Sunspot—A disturbance of the solar surface, which appears as a relatively dark centre (Umbra) surrounded by a less dark area (Pen umbra); spots occur generally in groups, are relatively short lived and with few exceptions are found in regions between 30° N and 30° S latitude. Their frequency shows a marked period of about 11 year

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(the sunspot cycle). They have intense magnetic fields and are sometimes associated with magnetic storms on the earth.'

—Chambers Dictionary of Science and Technology

सूर्यबिम्ब की किरणों के रंग का फल

सितरक्तैः पीतकृष्णैस्तैर्मिश्रैर्विप्रपूर्वकान् ॥ १३ ॥
हन्ति द्वित्रिचतुर्भिर्वा राज्ञोऽन्य जनसंक्षयः ।
ऊर्ध्वैर्भानुकरैस्ताम्रैर्नाशं याति स भूपतिः ॥ १४ ॥
पीतैर्नृपसुतः श्वेतैः पुरोधाश्चित्रितैर्जनाः ।
धूम्रैर्नृपः पिशङ्गैश्च जलदोऽधोमुखैस्तथा ॥ १५ ॥

१. यदि सूर्य की स्फुल्लिंग श्वेतवर्ण की हो (कलंकों के समय) तो ब्राह्मणों (बुद्धिजीवियों) का नाश होता है (उनकी क्षति होती है)।

२. कलंकों के समय सूर्य किरण लाल रंग की हो, तो क्षत्रियों (सेना एवं पुलिस आदि) की क्षति होती है।

३. यदि पीले रंग की किरणें उस समय दृष्टिगोचर हो, तो वैश्यों (व्यापारियों) को हानि उठानी पड़ती है।

४. यदि उक्त किरणें गहरे रंग की हों, तो शूद्रों (शिल्पकारों एवं श्रमिकों) की क्षति होती है।

५. यदि मिश्रित रंग की किरणें हो, तो शासक वर्ग को क्षति भुगतनी पड़ती है।

६. अन्य प्रकार के दुष्ट चिह्न सूर्यबिम्ब पर दिखाई दें, तो साधारण जनता को कष्ट होता है।

७. यदि उक्त सूर्य की किरणें ताम्रवर्ण की हों, तथा ऊपर आकाश में प्रसारित हों तो शासक को हानि उठानी पड़ती है।

८. यदि पीतवर्ण हो तो प्रजाहानि होती है।

९. श्वेतवर्ण हो तो राजपुरोहित (न्यायपालिका एवं विधिकपरामर्श-दाता=अटौर्नी जनरल आदि) को हानि होती है।

१०. चित्रित वर्ण से प्रजानाश, धूम्र वर्ण अथवा पिशंक (Pink colour) वर्ण की किरणें बादलों में नीचे झाँकती हों तो भी मुख्य शासक की हानि उस प्रदेश में होती है, जहाँ ये दिखती हैं ॥ १३-१५ ॥

उदयास्तकाल में विभिन्न ऋतुओं में सूर्य के वर्ण का फल

उदयास्तमये काले स्वास्थ्यं तैः पाण्डुसन्निभैः ।
भास्करस्ताम्रसङ्काशः शिशिरे कपिलोऽपि वा ॥ १६ ॥
कुङ्कुमाभौ वसन्ततौं कापिलो वा प्रशस्यते ।
अपाण्डुरः स्वर्णवर्णो ग्रीष्मे चित्रो जलागमे ॥ १७ ॥
पद्मोदराभः शरदि हेमन्ते लोहितच्छविः ।
वसन्ते प्रावृषि ग्रीष्मे रोगाणां वृष्टिभीतिकृत् ॥ १८ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. यदि सूर्योदय अथवा सूर्यास्त के समय सूर्य का रंग शिशिर ऋतु में पाण्डुवर्ण (श्वेत+पीत मिश्रित) हो तो लोगों का स्वास्थ्यकारक तथा शुभ फलदायक होता है। यदि ताम्रवर्ण अथवा कपिलवर्ण का हो तो भी शुभ होता है।

२. वसन्त ऋतु में केसरिया रंग का सूर्य सूर्योदय या सूर्यास्त के समय दृष्टिगोचर हो अथवा कपिलवर्ण का दिखायी दे तो उसका अच्छा फल होता है।

३. यदि ग्रीष्म ऋतु में उदयास्तकाल में सूर्य सुनहरे रंग का हो तो अच्छा फल देता है।

४. यदि वर्षा ऋतु में विचित्र रंगों का सूर्य सूर्योदय तथा सूर्यास्तकाल में हो तो शुभ होता है।

५. यदि शरद ऋतु में सूर्योदयास्तकालीन सूर्य का वर्ण पद्मोदराभ (कमल के बीच की कर्णिका जैसा) रंग का हो तो शुभ फल करता है।

६. यदि हेमन्त ऋतु में कमल केसर के रंग का सूर्य हो तो शुभ होता है।

परन्तु वसन्तु ऋतु—प्रावृट् ऋतु तथा ग्रीष्म ऋतु में पद्मोदराभ वर्ण का सूर्य सूर्योदय तथा सूर्याम्तकाल में दिखे तो रोगभय तथा अतिवृष्टि का भय होता है॥ १६-१८॥

विमर्श—उपलब्ध नारदसंहिता में श्लोक १८ में 'हेमन्ते प्रावृषि ग्रीष्मे' पाठ अशुद्ध है; क्योंकि उसका अर्थ उसी श्लोक के पूर्वार्ध के विरुद्ध हो जाता है, अतः मैंने 'वसन्ते प्रावृषि ग्रीष्मे' यह समीचीन पाठ रखा है।

प्रावृष् अथवा प्रावृट् ऋतु दक्षिण भारत में होती है, वहाँ हेमन्त नहीं होती है। यह वर्षा तथा ग्रीष्म ऋतु के मध्य में होती है। सुश्रुतसंहिता (आयुर्वेद) में इसका उल्लेख है। वराहमिहिर भी प्रावृट् का उल्लेख करते हैं—

'ताम्रः कपिलो वार्कः शिशिरे हरिकुङ्कुमच्छवि मधौ।
अपाण्डुकनकवर्णो ग्रीष्मे वर्षासु शुक्लश्च॥
शरदि कमलोदराभो हेमन्ते रुधिरसन्निभः शस्तः।
प्रावृट् काले स्निग्धः सर्वर्तुनिभोऽपि शुभदायी॥'

—बृहत्संहिता २। २३-२४

'शिशिरे ताम्रसङ्काशः कपिलो वापि भास्करः।
वसन्ते कुङ्कुमप्रख्यो हरितो वापि शस्यते॥
ग्रीष्मे कनकवैदूर्य सर्वरूपो जलागमे।
शस्तः शरदि पद्माभो हेमन्ते लोहितप्रभः॥'

—गर्गज्योतिषसंहिता

इन्द्रधनुष के साथ सूर्य के वर्णों का फल

पीताभः कृष्णवर्णोऽपि लोहितस्तु यथाक्रमात्।
इन्द्रचापार्धमूर्तिः चेद् भानुर्भूपविरोधकृत्॥ १९॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मयूरपत्रसङ्काशो द्वादशाब्दं न वर्षति।
शशरक्तनिभे भानौ संग्रामो ह्यचिराद् भवेत्॥ २०॥
चन्द्रस्य सदृशो यत्र चान्यं राजानमादिशेत्।
अर्के श्यामे कीटभयं भस्माभे शस्त्रतो भयम्॥ २१॥

यदि इन्द्र धनुष के साथ सूर्य का रंग पीताभ, कृष्ण तथा लाल हो अर्थात् इन तीन रंगों का इन्द्रधनुष दृष्टिगोचर हो तो राजाओं में युद्ध (राजनीतिज्ञों में संघर्ष) होता है॥ १९॥

यदि इन्द्रधनुष के साथ सूर्य मयूर-पंख के रंग का दिखे तो बारह वर्ष तक अनावृष्टि रहती है। यदि इन्द्रधनुष एवं सूर्य लाल रंग का हो तो शीघ्र ही युद्ध होता है॥ २०॥

यदि चन्द्रमा के समान रंगवाला सूर्य तथा इन्द्रधनुष दिखे तो सत्ता-परिवर्तन होता है। कृष्णवर्णाभ इन्द्रधनुष एवं सूर्य सर्पादि विषाक्त जन्तुओं से भय उत्पन्न होने के सूचक हैं। भस्म-जैसा वर्ण होने पर शस्त्रभय होता है॥ २१॥

सूर्य की विभिन्न आकृतियों के फल

छिद्रेऽर्कमण्डले दृष्टे तदा राजविनाशनम्।
घटाकृतिः क्षुद् भयकृत्पुरहा तोरणाकृतिः॥ २२॥
छत्राकृतिर्देशहन्ता खण्डभानुर्नृपान्तकृत्॥ २३॥
उदयास्तसमये भानोर्विद्युदुल्काऽशनिर्यदि।
तदा नृपवधो ज्ञेयस्त्वथवा राजविग्रहः॥ २४॥
पक्षं पक्षार्धमर्केन्दू परिविष्टावहर्निशम्।
राजानमन्यं कुरुतो लोहितावुदयास्तगौ॥ २५॥
उदयास्तसमये भानुराच्छिन्नः शस्त्रसन्निभैः।
घनैर्युद्धं खरोष्ट्राद्यैः पापरूपैर्भयप्रदः॥ २६॥
ऋतुकालानुरूपोऽर्कः सौम्यमूर्तिः शुभावहः।
रविचारमिदं सम्यग् ज्ञातव्यं तत्त्ववेदिभिः॥ २७॥

१. यदि सूर्य के बिम्ब में छिद्र दिखायी पड़े तो राजनीतिज्ञों का पतन होता है।

२. यदि घड़े के आकार के दर्शन सूर्यबिम्ब में हों तो अकाल की स्थिति आती है।

३. यदि सूर्यबिम्ब में तोरण (मेहराब=Arch) की आकृति दिखलायी पड़े तो नगर (राजधानी अथवा मुख्य कार्यालयोंवाले नगर) में सत्ता-परिवर्तन होता है॥ २२॥

४. सूर्यबिम्ब में छत्र की आकृति दिखना उस देश-प्रदेश के लिये अशुभ होता है।

५. यदि खण्डित सूर्य के दर्शन हों तो उस देश-प्रदेश के शासक का अन्त होता है॥ २३॥

६. यदि सूर्य के उदयकाल में अथवा अस्तकाल में कोई उल्कापात हो अथवा बिजली गिरे तो शासक की हानि होती है अथवा राजनैतिक संकट उत्पन्न हो जाता है॥ २४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

७. यदि एक पक्ष तक अथवा एक सप्ताह तक सूर्य तथा चन्द्रमा दोनों गोल घेरे में परिवेष्टित रहें, तो सत्ता-परिवर्तन होता है।

८. यदि उदयास्तकाल में सूर्य तथा चन्द्रमा दोनों ही लाल रंग के दिखाई पड़ें, तो राज्य में संकट आता है। इसी प्रकार उदयास्त समय में सूर्य चन्द्रमा को शस्त्रों के आकार वाले बादल यदि आच्छादित करें, तो घोरयुद्ध होता है।

९. यदि उस समय गधा तथा ऊँट के आकार के बादलों से सूर्य एवं चन्द्रमा आच्छादित हो जायँ, तो जनता में भय उत्पन्न होता है॥

१०. यदि ऋतु के अनुसार सूर्य स्वच्छ तथा सुन्दर हो, तो शुभफल होता है। इस प्रकार यह सूर्यचार का फल विद्वानों को जानना चाहिये॥ २५-२७॥

विमर्श—सूर्य के उदयास्तकाल में उल्कापात को पराशर ने भी अशुभ कहा है, उससे शासक का नाश होता है। यथा—

'उदयास्तसमये भानुमुल्का हत्वात्समुत्थिता।
प्रज्वलन्ती तदा राजा क्षिप्रं शस्त्रेण वध्यते॥'

—पाराशरसंहिता

श्लोक २४ में उल्का, अशनि तथा विद्युत् इन तीन शब्दों का प्रयोग हुआ है, ये तीनों उल्का के ही भेद हैं। अन्य संहिताओं में उल्काओं के पाँच भेद कहे गये हैं, जिन्हें आगे के ४३वें अध्याय में देखें।

अथ चन्द्रचारः

चन्द्रचार में शृङ्गोन्नति का फल

याम्यशृङ्गोन्नतश्चन्द्रोऽशुभदो मीनमेषयोः।
सौम्यशृङ्गोन्नतः श्रेष्ठो नृयुग्मकरयोस्तथा॥ २८॥
समोक्षघटयोः कर्कसिंहयोः शरसन्निभः।
चापकीटभयोः स्थूलः शूलवत्तौलिकन्ययोः॥ २९॥

१. यदि शुक्लपक्ष का प्रथम चन्द्रमा सायंकाल में उदित होते समय उत्तरी दिशा में ऊँचा हो, तथा चन्द्रमा मीन या मेष राशि में हो, तो अशुभ फल करता है। किन्तु मीन-मेष का चन्द्र दक्षिणी शृंग में ऊँचा हो, तो शुभफल करता है।

२. यदि मिथुन तथा मकर के चन्द्रमा में उत्तर दिशा में शृंगोन्नति हो, तो शुभफल करता है।

३. यदि वृष एवं कुम्भ के चन्द्र के दोनों शृंग समान हों, तो शुभफल होता है।

४. कर्क-सिंह के शृंग बाणाकार होने पर शुभ होते हैं।

५. वृश्चिक-धनु के चन्द्र के शृंग स्थूलाकार होने पर शुभ होते हैं।

६. तुला एवं कन्या के चन्द्र के शृंग शूलाकार होने पर शुभ होते हैं॥ २८-२९॥

विमर्श—चैत्रशुक्ल में जो प्रथम चन्द्रमा उदित होता है, वह पतला हँसिये के समान होता है, उसके ऊँचे-ऊँचे दोनों किनारे उसके शृंग (सींग) कहलाते हैं।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कलहकारक शृंगोन्नति

विपरीतोदितश्चन्द्रो दुर्भिक्षकलहप्रदः।
यथोक्तोऽभ्युदितश्चेन्दुः प्रतिमासं सुभिक्षकृत्॥ ३०॥

ऊपर कहे अनुसार यदि चन्द्रमा उदित होता है, तो उस चान्द्रमास में सुभिक्ष (सुकाल) रहता है। किन्तु यदि उसकी शृंगोन्नति विपरीत हो, तो दुर्भिक्ष (अकाल) तथा कलह होता है॥ ३०॥

चन्द्रमा के उत्तर+दक्षिण+सम चार का फल

आषाढाद्वयमूलेन्द्रधिष्ण्यानां याम्यगः शशिः।
अग्निप्रदस्तोयचरवनसर्पविनाशकृत् ॥ ३१॥
विशाखामैत्रयोर्याम्यपार्श्वगः पापकृत्सदा।
मध्यगः पितृदैवत्ये द्विदैवत्ये शुभोत्तरे॥ ३२॥
सम्प्राप्य पौष्णभाद् रौद्रात् षट्ऋक्षाणि शशी शुभः।
मध्यगो द्वादशर्क्षाणि अतीत्य नववासवात्॥ ३३॥

१. यदि पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा इन दोनों नक्षत्रों पर स्थित चन्द्र दक्षिण दिशा की ओर से गमन करे, तो उसका फल अग्निभय होता है तथा जलचरजीव (मछली, कछुआ आदि) एवं जंगली सरीसृपों (wild reptiles) का नाश होता है॥ ३१॥

२. यदि विशाखा, अनुराधा इनके दक्षिण पार्श्व से चन्द्रमा चल रहा हो, तो सदैव अशुभफल करता है।

३. यदि चन्द्रमा मघा नक्षत्र के मध्य से निकलता हो, तो शुभफल करता है।

४. विशाखा पर यदि चन्द्रमा उत्तर की ओर से गमन करे, तो शुभफल करता है॥ ३२॥

५. यदि रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी तथा मृगशिरा—इन छह नक्षत्रों पर चन्द्रमा का संचार सब ओर से शुभ होता है।

६. आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा इन बारह नक्षत्रों पर मध्य से निकलनेवाला चन्द्रमा शुभफल करता है।

७. वासव (धनिष्ठा) के बीतने के उपरान्त चन्द्रमा शेष नौ नक्षत्रों पर भी मध्यमचारी शुभफल करता है॥ ३३॥

नक्षत्रों की अर्द्धादि संज्ञा

यमेन्द्रार्द्राहितोयेशा मरुतश्चार्द्धतारकाः।
ध्रुवादिति द्विदैवाः स्युरध्यर्धाश्च पराः समाः॥ ३४॥

१. भरणी, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, शतभिषा तथा स्वाति—ये छह नक्षत्र अर्धसंज्ञक (अधिया) होते हैं।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

२. रोहिणी, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, पुनर्वसु तथा विशाखा—ये नक्षत्र अध्यर्ध (ड्योढ़े) संज्ञक होते हैं।

३. शेष बचे नक्षत्र=अश्विनी, पुष्य, हस्त, धनिष्ठा, श्रवण, कृत्तिका, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, मूल, मृगशिरा, रेवती, अनुराधा तथा चित्रा—ये पन्द्रह नक्षत्र सम कहलाते हैं॥ ३४॥

विमर्श—इन तीन प्रकार की संज्ञाओं में सूर्य की संक्रान्ति प्रारम्भ होने का फल ग्रन्थान्तरों में इस प्रकार कहा है। यदि अर्धसंज्ञक में प्रथम चन्द्रदर्शन हो अथवा संक्रान्ति लगे तो अन्न महँगा होता है। यदि अध्यर्धसंज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति अथवा चन्द्रदर्शन हो, तो अन्नादि सस्ते रहते हैं। यदि समसंज्ञक नक्षत्रों में चन्द्रदर्शन अथवा संक्रान्ति हो, तो अन्नादि का भाव सम होता है।

अर्धादि संज्ञाप्रदर्शक चक्र

अर्ध	सम	अध्यर्ध	नक्षत्र संज्ञा	
भरणी आर्द्रा श्लेषा स्वाति ज्येष्ठा शतभिषा	रेवती, अश्विनी, मृगशिरा, चित्रा, पुष्य, हस्त, कृत्तिका, श्रवण, धनिष्ठा, मघा, मूल, अनुराधा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाषाढ़ा	रोहिणी पुनर्वसु तीनों उत्तरा विशाखा	नक्षत्रों के नाम	
जघन्य अधिया	सम	बृहत् ड्योढ़ा	संज्ञाओं के पर्याय	
३०	६०	४५	मुहूर्त काल	
६ अंश	१३ अंश	१९ अंश	अंश	अंशात्मक
३५ कला	१० कला	४५ कला	कला	मान
१७ विकला	३५ विकला	५२ विकला	विकला	प्रत्येक नक्षत्र का

सामान्य चन्द्रश्रृंगोन्नति का फल

याम्यं श‍ृङ्गोन्नता श्रेष्ठः सौम्याः श‍ृङ्गोन्नतः शुभः।
शुक्ले पिपीलिकाकारे हानिर्वृद्धिर्यथाक्रमात्॥ ३५॥

१. यदि दक्षिण दिशा में श्रृंगोन्नति हो, तो अश्रेष्ठ (अशुभ) तथा उत्तर की श्रृंगोन्नति श्रेष्ठ शुभ होती है। २. यदि चन्द्रमा मध्य में पतला हो, तो हानिकारक होता है तथा मोटा हो तो वृद्धिकारक जानना चाहिये॥ ३५॥

विमर्श—मेघमहोदय में कहा है—

'ज्येष्ठस्यान्ते प्रतिपदि सूर्यस्यास्तं विलोकयेत्।
द्वितीयां वीक्षते चन्द्रो गतमुत्तरदक्षिणम्॥
सुभिक्षमुत्तरदिशि विपरीतन्तु दक्षिणे।
तत्साम्यं मध्यमे वर्षं ज्येष्ठान्ते तद्वदेव हि॥'

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रथम चन्द्र की स्थूलता आदि का फल

सुभिक्षकृद् विशालेन्दुः विशालोऽर्घवनाशनः।
अधोमुखे शस्त्रभयं कलहो दण्डसन्निभे॥ ३६॥

शुक्लपक्ष का प्रथम चन्द्रमा सुभिक्षकारक होता है। यदि कृश (पतला) चन्द्रमा उदित हो, तो दुर्भिक्षकारक होता है। यदि चन्द्रमा अधोमुख उदित हो, तो भयकारक होता है। यदि दण्डाकार चन्द्रमा हो, तो प्रजा में कलह होता है॥ ३६॥

उत्तर शृंगोन्नति	दक्षिण शृंगोन्नति	मध्य में स्थूल	मध्य में कृश	दण्डाकार
चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र	चन्द्र

भौमादि पंचतारा ग्रहों से चन्द्र शृंगवेध का फल

कुजाद्यैर्निहिते शृङ्गे मण्डले वा यथाक्रमात्।
क्षेमार्धवृष्टिनृपतिर्जनानां नाशकृच्छशी॥ ३७॥

१. यदि शुक्ल पक्ष की द्वितीया का चन्द्रमण्डल का शृंग मंगल के द्वारा वेधित हो, तो क्षेमनाशक होता है। २. यदि बुध के द्वारा वेधित हो, तो महँगाई बढ़ाता है। ३. यदि गुरु के द्वारा वेधित हो, तो वर्षा का नाशक होता है। ४. यदि शुक्र द्वारा वेधित हो, तो शासक का नाश तथा ५. शनि द्वारा वेधित होने पर प्रजा का नाशक होता है॥ ३७॥

विमर्श—तात्पर्य यह है कि द्वितीया के चन्द्रोदय के समय में भौमादि पंचतारा ग्रहों में से किसी के द्वारा भी चन्द्रमण्डल का वेध अशुभ करता है। मेघ महोदय के अनुसार चन्द्र के दाहिने शृंग के समीप भीतर को पंचतारा ग्रहों का संचार अशुभ होता है—

'पञ्चतारा ग्रहा यत्र योगं कुर्वन्ति दक्षिणे।
भौमे च राजमारीः स्याज्जन्मारिश्च भार्गवे॥'

अथ भौमचारः

उदयर्क्ष संख्या से वक्री का फल

सप्ताष्टनवमर्क्षेषु स्वोदयाद् वक्रिते कुजे।
तद्वक्रमुष्णं तस्मिन् स्यात् प्रजापीडाग्निसंभवः॥ ३८॥
दशमैकादशे ऋक्षे द्वादशे वा प्रतीपगे।
वक्रमल्पसुखं तस्मिंस्तस्य वृष्टिविनाशनम्॥ ३९॥
कुजे त्रयोदशे ऋक्षे वक्रिते वा चतुर्दशे।
व्यालाख्य वक्रं तस्मिन्सस्यवृद्धिरहेर्भयम्॥ ४०॥
पञ्चदशे षोडशर्क्षे तद्वक्रं रुधिराननम्।
सुभिक्षकृद् भयं रोगान्करोति यदि भूमिजः॥ ४१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अष्टादशे सप्तदशे तदासिमुसलं स्मृतम्।
दस्युभिर्धनहान्यादि तस्मिन् भौमे प्रतीपगे॥ ४२॥

जिस नक्षत्र में मंगल का उदय हो, उससे ७वें, ८वें तथा ९वें नक्षत्रों पर यदि मंगल वक्री हो, तो जनता को कष्ट तथा अग्निकाण्ड से दुर्घटना होती है। यह सब तब तक होता रहता है, जब तक मंगल उस नक्षत्र पर रहता है॥ ३८॥

यदि अपने उदय नक्षत्र से १०वें, ११वें या १२वें नक्षत्र पर मंगल वक्री हो, तो जनता में अल्पसुख होता है तथा वर्षा की हानि होती है अर्थात् उतने समय तक अवर्षण रहता है॥ ३९॥

यदि अपने उदय नक्षत्र से मंगल १३-१४वें नक्षत्रों में जाकर वक्री हो, तो कृषि-फसल में वृद्धि, किन्तु सर्पों से भय होता है॥ ४०॥

यदि जिस नक्षत्र में मंगल उदित हो, उससे १५वें या १६वें नक्षत्र पर वक्री हो, तो उसकी 'रुधिराननवक्री' यह संज्ञा होती है। इस स्थिति में सुभिक्ष (सुकाल) होता है, किन्तु भय तथा रोग से पीड़ा होती है॥ ४१॥

यदि १८वें या १७वें नक्षत्र पर जाकर मंगल (उदित नक्षत्र से गिनती करने पर) वक्री होता है, तो यह 'असिमुसल' मंगल कहा जाता है। इसमें चोरी, डकैती तथा जल आदि की घटनाएँ अधिकता के साथ घटित होती हैं॥ ४२॥

नक्षत्रों के नामों के अनुसार मंगल के उदित तथा वक्री होने का फल

फाल्गुन्योरुदितो भौमो वैश्वदेवे प्रतीपगः।
अस्तगश्चतुरास्यर्क्षे लोकत्रयविनाशकृत्॥ ४३॥
उदितः श्रवणे पुष्ये वक्रतो नृपहानिदः।
यद् दिग्भ्योऽभ्युदितो भौमस्तद् दिग्भूपभयप्रदः॥ ४४॥
मघामध्यगतो भौमस्तत्रैव च प्रतीपगः।
अवृष्टिशस्त्रभयदः पाण्ड्यदेशाधिपान्तकृत्॥ ४५॥

यदि पूर्वा फाल्गुनी अथवा उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र पर मंगल का उदय हो तथा उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में पहुँचने पर वह वक्री हो जाय तो त्रिलोकी का नाश होता है अर्थात् सम्पूर्ण संसार में अशुभकर एवं असुखकर घटनाएँ घटती हैं॥ ४३॥

यदि मंगल श्रवण नक्षत्र में उदित होकर पुष्य में वक्री हो जाय तो शासक के लिये हानिप्रद होता है; ऐसा मंगल जिस दिशा में उदित होता है। उसी दिशा के राज्य के प्रमुख शासक के लिये अरिष्टप्रद होता है॥ ४४॥

यदि मंगल मघा नक्षत्र में उदित होकर फिर उसी में (मघा में ही) वक्री हो जाय, तो वर्षा का अभाव होता है, गृहयुद्ध की स्थिति बनती है तथा पाण्ड्य देश अर्थात् तमिलनाडु आदि में सरकार गिर जाती है अथवा संवैधानिक या राजनैतिक संकट उत्पन्न होता है॥ ४५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मंगल द्वारा नक्षत्रों के भेदन का फल

पितृद्विदैवधातॄणां भिद्यन्ते योगतारकाः।
दुर्भिक्षं मरणं रोगं करोति यदि भूमिजः॥ ४६॥

यदि मंगल मघा, विशाखा तथा रोहिणी नक्षत्रों में गोचर में भ्रमण करते हुए इनके योग ताराओं का भेदन करे अर्थात् इन नक्षत्रों के मध्य से गमन करे तो दुर्भिक्ष-मरण तथा रोग उत्पन्न होता है॥ ४६॥

विमर्श—वराहमिहिर ने इसी अभिप्राय को इस प्रकार व्यक्त किया है—

'भित्त्वा मघां विन्दन्भौमः करोति दुर्भिक्षम्।
मरणं करोति घोरं यदि भित्त्वा रोहिणीं याति॥'

—वृ० सं० ६।९

विशेष—ऊपर श्लोक ३८ से ४२ तक नारदजी ने केवल अन्तिम दो श्लोकों में वक्री मंगल की विशेष संज्ञाएँ दी हैं किन्तु श्रीवराहमिहिर ने (१) उदय नक्षत्र से ७-८-९वें नक्षत्र में वक्री मंगल को उष्ण मुख तथा (२) १०-११-१२वें नक्षत्र में वक्री मंगल को अश्रुमुख, इसी प्रकार (३) १३-१४वें नक्षत्रों में वक्री मंगल को व्यालमुख कहा है; शेष (४) १५-१६वें नक्षत्रों में वक्री मंगल को रुधिरानन तथा (५) १७ एवं १८वें नक्षत्र में वक्री मंगल को असिमुसल संज्ञा प्रदान की है। ग्रन्थान्तर में मंगल के पाँच मुख बताते हुए कहा है—

'उष्णमश्रुमुखं व्यालं रुधिराननमेव च।
निस्त्रिंशं मुशलञ्चेति पञ्चवक्त्राणि भूसुते॥'

अवृष्टिकारक योग

त्रिषूत्तराषु रोहिण्यां नैर्ऋत्ये श्रवणेन्द्रभे।
अवृष्टिदश्चरन्भौमे रोहिणी दक्षिणे स्थितः॥ ४७॥

यदि उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरा भाद्रपदा, रोहिणी, मूल, श्रवण तथा ज्येष्ठा में से किसी नक्षत्र पर संचार हो तो वर्षा का अवरोध होता है। यदि मंगल का संचार रोहिणी नक्षत्र की दक्षिण की ओर से हो तो विशेषकर अवृष्टि होती है॥ ४७॥

उपरिलिखित सात नक्षत्रों के उत्तर-दक्षिण का फल

भूमिजः सर्वधिष्ण्यानां उदग्गामी शुभप्रदः।
याम्यगोऽनिष्टफलदो भेदे भेदकरो नृणाम्॥ ४८॥

उपरिलिखित उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, मूल, श्रवण तथा ज्येष्ठा के उत्तर में मंगल का संचार शुभफलकारक होता है तथा इन सात नक्षत्रों के दक्षिण में भौम का संचार गृहयुद्ध की स्थिति बनाता है। जनता में लड़ाई-झगड़े बढ़ जाते हैं॥ ४८॥

विमर्श—इसी बात को वराह ने निम्न शब्दों में व्यक्त किया है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'प्राजापत्ये श्रवणे मूले त्रिषु चोत्तरेषु शाक्रे च।
विचरन् घननिवहानामुपघातकरः क्ष्मा तनयः॥'

विशेष—ऊपर श्लोक सैंतालीस में नारदीयज्योतिषसंहिता के मूल पाठ में (द्वितीय चरण में) 'श्रवणेन्दु भे' पाठ है जो कि अशुद्ध है वहाँ शुद्ध पाठ 'श्रवणेन्द्रभे' है; क्योंकि वराहमिहिर ने भी शाक्र (इन्द्र) नक्षत्र अर्थात् ज्येष्ठा का ग्रहण किया है।

अथ बुधचारः

बुध के उदय में उत्पात अवश्यम्भावी

विनोत्पातेन शशिजः कदाचिन्नोदयं व्रजेत्।
अनावृष्ट्यग्निभयकृदनर्थं नृपविग्रहम्॥ ४९॥

जब भी बुध का उदय होता है तो कोई-न-कोई प्राकृतिक उत्पात अवश्य होता है। कभी उसके उदय होने से अनावृष्टि (कभी अवृष्टि भी), कभी अग्निभय तथा कभी अनर्थकारी गृहयुद्ध अथवा राजनैतिक उथल-पुथल होती है॥ ४९॥

विमर्श—बुध जब भी उदित होता है तो मौसम, राजनीति एवं समाज में आवश्यक रूप से हलचल उत्पन्न होती है। यदि वर्षा ऋतु में बुध का उदय हो जाय तो अवर्षण की स्थिति बन जाती है। यदि सूखा पड़ रहा हो, तो बुधोदय से वर्षा हो जाती है। यदि भय उत्पन्न हो तो बुधोदय होते ही भय दूर हो जाता है। तात्पर्य यह है कि बुध का उदय स्थिति को उलट देता है। इस बात को वृद्धगर्ग ने सुस्पष्टता से कहा है—

'अवर्षे कुरुते वर्षं वर्षे वर्षं न गच्छति।
भये च कुरुते क्षेमं सर्वत्र प्रतिलोमगः॥'

विभिन्न संहिताओं में इसी का समर्थन मिलता है तथा अनुभव में भी यही देखने में आया है—

नोत्पातपरित्यक्तः कदाचिदपि चन्द्रजो व्रजत्युदयम्।
जलदहनपवनभयकृद् धान्यार्घक्षयविवृद्ध्यै॥ १॥

—वृ० संहिता

'उदयं याति शशिसुतो नोत्पातविवर्जितः कदाचिदपि।
पवनाग्निसलिलभयदो धान्यार्घवृद्धिक्षयकृद वा॥'

—समाससंहिता

'नाकस्माद्दर्शनं याति विनोत्पातेन सोमजः।
भयवातातपहिमैरर्घवृद्धिक्षयादिभिः ॥'

—काश्यपसंहिता

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विभिन्न नक्षत्रों में बुधोदय का फल

वसुश्रवणविश्वेन्दुधातृभेषु चरन्बुधः।
भिन्नत्ति यदि तत्तारामवृष्टिव्याधिभीतिकृत्॥५०॥
आर्द्रादिपितृभान्तेषु दृश्यते यदि चन्द्रजः।
तदा दुर्भिक्षकलहो रोगाणां वृद्धिभीतिकृत्॥५१॥
हस्तादि रसतारासु विचरन्निन्दुनन्दनः।
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं कुरुते पशुनाशनम्॥५२॥
अहिर्बुध्न्यार्यमाग्नेययमभेषु चरन्यदि।
धातुक्षयञ्च जन्तूनां करोति शशिनन्दनः॥५३॥
दस्रवारुणनैर्ऋत्यरेवतीषु चरन्बुधः।
भिषक्तुरगवाणिज्यवृत्तीनां नाशकस्तदा॥५४॥
पूर्वात्रये चरन् सौम्यो योगतारां भिनत्ति यत्।
क्षुच्छस्त्रामय चौरेभ्यो भयदः प्राणिनस्तदा॥५५॥

जब बुध उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी तथा मृगशिरा नक्षत्रों के ताराओं का भेदन करता है तब अवृष्टि तथा रोगभय उत्पन्न होता है॥५०॥

यदि आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा तथा मघा—इन छः नक्षत्रों के ताराओं का भेदन उदित बुध करता है तो दुर्भिक्ष, कलह, रोगों की वृद्धि तथा भय (आतंक) होता है॥५१॥

यदि हस्तादि छः नक्षत्रों अर्थात् हस्त-चित्रा-स्वाति-विशाखा-अनुराधा तथा ज्येष्ठा ताराओं में बुध उदित होता है तब जनता में क्षेम, सुभिक्ष तथा आरोग्य तो होता है परन्तु पशुओं (एवं वाहनों) की हानि होती है॥५२॥

यदि उत्तरा भाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, कृत्तिका तथा भरणी—इन चार नक्षत्रों में बुध का उदय हो तो मनुष्यों एवं पशुओं के शरीर दुबले हो जाते हैं॥५३॥

जब अश्विनी, शतभिषा, मूल, रेवती—इन नक्षत्रों में बुध का संचार हो तो चिकित्सकों, अश्वों (वाहनों) तथा व्यापारियों को कष्ट होता है॥५४॥

जब पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा तथा पूर्वाभाद्रपद—इन नक्षत्रों में बुध का संचार होता है तथा इनके योग ताराओं का भेद करता है तब जनता में भुखमरी फैलती है तथा चोर-डाकू एवं लुटेरों का उपद्रव होता है तथा प्राणियों में भय होता है॥५५॥

नक्षत्रवश बुध की सात प्रकार की गतियाँ

याम्याग्निधातृवायव्यधिष्ण्येषु प्राकृता गतिः।
ईशेन्दुसार्प्येपि येषु ज्ञेया मिश्राह्वया गतिः॥५६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

संक्षिप्तादितिभाग्यार्यमेज्यधिष्ण्येषु या गतिः।
गतिस्तीक्ष्णाजचरणेऽहिर्बुध्न्येन्द्रार्द्राशिव पूषसु॥ ५७॥
योगान्तिकाम्बु विश्वाख्य मूलगस्येन्दुजस्य च।
घोरागतिर्हरित्वाष्ट्रवसुवारुणभेषु च॥ ५८॥
इन्द्राग्निमित्रमार्तण्डभेषु पापाह्वया गतिः॥ ५९॥

नक्षत्रों में उदय के अनुसार बुध की सात प्रकार की गतियाँ होती हैं—

१. प्राकृता गति—जब बुध भरणी, कृत्तिका, रोहिणी तथा स्वाति पर स्थित हो तब उसकी गति को 'प्राकृता' गति कहते हैं।

२. मिश्रा गति—जब बुध आर्द्रा, मृगशिरा, आश्लेषा तथा मघा—इन चार नक्षत्रों में हो तब उसकी गति 'मिश्रा' कही जाती है।

३. संक्षिप्ता गति—जब बुध पुनर्वसु, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी तथा पुष्य—इन चार नक्षत्रों में हो तो उसकी गति को 'संक्षिप्ता' कहते हैं।

४. तीक्ष्णा गति—जब बुध पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, ज्येष्ठा, रेवती तथा अश्विनी—इन पाँच नक्षत्रों पर हो तो 'तीक्ष्णा' गति होती है।

५. योगान्तिका गति—जब पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा तथा मूल पर बुध हो तब उसकी गति को 'योगान्तिका' गति कहते हैं।

६. घोरा गति—जब बुध श्रवण, धनिष्ठा. चित्रा, शतभिषा—इन नक्षत्रों पर हो तब उसकी गति को 'घोरा' कहते हैं।

७. पापा गति—जब विशाखा, अनुराधा तथा हस्त—इन नक्षत्रों पर बुध हो तो उसकी गति को 'पापा' कहते हैं॥ ५६—५९॥

उदयास्त दिन संख्या के अनुसार प्राकृतादि गति के लक्षण

प्राकृताद्यासु गतिषु ह्युदितोऽस्तमितोऽपि वा।
एतावन्ति दिनान्येव दृश्यस्तावन्न दृश्यगः॥ ६०॥
चत्वारिंशत्क्रमात् त्रिंशत् द्वाविंशद्विंशतिर्नव।
पञ्चदशैर्द्वादशभिर्दिवसैः शशिनन्दनः॥ ६१॥
प्राकृतायां गतो सस्यक्षेमारोग्यसुवृष्टिकृत्।
मिश्रसंक्षिप्तयोर्मध्येफलदोऽन्यास्वनिष्टदः ॥ ६२॥

प्राकृत आदि सात गतियों में जितने दिनों तक बुध उदित अथवा अस्त रहता है, वह यहाँ बताया जा रहा है॥ ६०॥

१. प्राकृता नाम गति में स्थित बुध यदि उदित हो तो निरन्तर चालीस दिनों तक उदित बना रहता है, किन्तु यदि अस्त हो तो चालीस दिनों तक अस्त रहता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

२. मिश्रा नामक गति में तीस दिनों तक बुध उदित अथवा अस्त बना रहता है।

३. संक्षिप्ता गति में बुध बाईस दिन तक उदित/अस्त रहता है।

४. तीक्ष्णा गति में बीस दिनों तक बुध उदित अथवा अस्त बना रहता है।

५. योगान्तिका नामक गति में बुध नौ दिनों तक उदित किंवा अस्त रहता है।

६. घोरा नामक गति में पन्द्रह दिवस तक बुध का उदय अथवा अस्त रहता है।

७. 'पापा' नामक गति में ग्यारह दिनों तक बुध का उदयास्त चलता है॥ ६१॥

गतियों के फल—प्राकृता गति में कृषि की उन्नति होती है मिश्रा तथा संक्षिप्ता गतियों में शुभ फल होता है। अन्य गतियों में अशुभफल होता है॥ ६२॥

विमर्श—आचार्य वराहमिहिर ने देवल के मत से बुध की १. ऋज्वी, २. अतिवक्रा, ३. वक्रा तथा ४. विकला—ये चार प्रकार की गतियाँ लिखी हैं उनके मत से ऋज्वी गति तीस दिन तक, अतिवक्रा गति चौबीस दिन तक, वक्रा गति बारह दिन तक तथा विकला गति छः दिन तक चलती है। यथा—

'ऋज्व्यतिवक्रा विकला च मतेन देवलस्यैताः।
पञ्चचतुर्द्व्यैकाहा ऋज्व्यादीनां षडभ्यस्ताः॥'

—बृ० सं० ७। १५

वृद्धगर्ग ने इन चारों प्रकार की गतियों की व्याख्या इस प्रकार की है—

१. ऋज्वी गति—जब बुध सीधा निर्विकार होकर आगे की ओर बढ़ता हुआ प्रदक्षिणा करता है, तब उसकी गति को ऋज्वी कहा जाता है।

२. वक्रा गति—पंच ताराग्रह जब पीछे की ओर को अपनी कक्षा में उल्टे चलते हुए प्रतीत होते हैं, तब उसे वक्रा गति कहा जाता है।

३. अतिवक्रा—जब वक्रागति में अधिकता दिखती है, तब उसे अतिवक्रा कहते हैं।

४. विकला गति—जब पंचतारा ग्रह चलते हुए अपने मार्ग में इधर-उधर (दायें-बायें) भटककर चलते हुए प्रतीत होते हैं, तब उसे विकला गति कहते हैं। जैसा कि कहा गया है—

ऋजुर्गच्छति चेन्मार्गमविकारं प्रदक्षिणम्।
ग्रहो यस्मात्तु तस्मात्सा ऋज्वीगतिरुच्यते॥ १॥
कुर्वन्ति वक्रं वक्रायां यस्मान्नित्यं महाग्रहाः।
अङ्गारकप्रभृतयस्तस्माद् वक्रेति सा गतिः॥ २।
वक्राद् भूयो महावक्रमनुकुर्वन्ति चेद् ग्रहाः।
अनेनैवानुमानेन सातिवक्रोच्यते गतिः॥ ३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विस्खलन्ति यथा चारान् मार्गादस्तमयोदयात्।
गतेस्तस्माद्धि विकला सा गतिः परिकीर्तिता॥ ४॥

देवल ने इन चारों प्रकार की गतियों की अवधि तथा फल निम्न श्लोकों में दिया है—

दिनानि त्रिंशदुदितस्तिष्ठेद्यदि च सोमजः।
ऋज्वीगतिश्च विज्ञेया प्रजानां हितकारिणी॥ १॥

चतुर्विंशद् दिनान्येवं यदि तिष्ठेच्च सोमजः।
अतिवक्रागतिर्ज्ञेया दुर्भिक्षगतिलक्षणा॥ २॥

अहनिद्वादश यदा बुधस्तिष्ठेत्तथोद्गतः।
वक्रागतिः सा विज्ञेया शस्त्रसम्भ्रमकारिणी॥ ३॥

षड्दिनादि यदातिष्ठेदुद्गतः सोमनन्दनः।
विकला सा गतिर्ज्ञेया भयरोगविवर्धिनी॥ ४॥

एवमस्तमये सर्वं गतिजं सोमजस्य तु।
भावाभावाय लोकानां फलं वाच्यं शुभाशुभम्॥ ५॥

ग्रन्थकार के मत से प्राकृतादि सप्तगतिप्रदर्शक चक्र

१-प्राकृता	२-मिश्रा	३-संक्षिप्ता	४-तीक्ष्णा	५-योगान्तिका	६-घोरा	७-पापा	सप्तगतियाँ
भरणी	आर्द्रा	पुनर्वसु	पू०भा०	मूल	चित्रा	विशाखा	बुध की स्थिति के नक्षत्र
कृत्तिका	मृगशिरा	पू०फा०	उ०भा०	पूर्वाषाढ़ा	श्रवण	अनुराधा	
रोहिणी	श्लेषा	उ०फा०	ज्येष्ठा	उत्तराषाढ़ा	धनिष्ठा	हस्त	
स्वाती	मघा	पुष्य	रेवती		शतभिषा		
			आश्विनी				
४०	३०	२२	२०	९	१५	११	उदयास्त दिन नारद के मत से
४०	३०	२२	१८	९	१५	११	वराह के मत से
४०	३०	२२	१८	९	१५	११	वृद्धगर्ग का मत
४०	३०		१८	९	१५	११	कश्यप का मत
कृषिवृद्धि	कुशल	आरोग्य	अशुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ	नारद के मत से फल

देवल के मत से बुध की चार प्रकार की गतियों का चक्र

१-ऋज्वी	२-वक्रा	३-अतिवक्रा	४-विकला	गतियाँ
३०	१२	२४	६	दिन संख्या
प्रजाहित	शस्त्रभय	दुर्भिक्ष	भय एवं रोगकारक	फल

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मासानुसार बुधोदय का फल

वैशाखे श्रावणे पौषे आषाढ़ेऽप्युदितो बुधः।
जनानां पापफलदस्त्वितरेषु शुभप्रदः॥ ६३॥
इषोर्जमासयोः शस्त्रदुर्भिक्षाग्निभयप्रदः।
उदितश्चन्द्रजः श्रेष्ठो रजतस्फटिकोपमः॥ ६४॥

यदि वैशाख, श्रावण, पौष अथवा आषाढ़ में बुध का उदय हो तो मनुष्यों को अशुभफल तथा देवों, राक्षसों आदि को शुभफल होता है, अन्य प्राणी भी सुखी रहते हैं॥ ६३॥

यदि कार्तिक-क्वार—इन मासों में बुध का उदय हो तो अशुभफल होता है। यदि उदित होते समय बुध का वर्ण चाँदी-जैसा चमकदार हो तो शुभफल करता है॥ ६४॥

अथ गुरुचारः

बार्हस्पत्यवर्षों के नामकरण

द्वीभाऊर्जादिमासाः स्युः पञ्चान्त्यैकादशास्त्रिभाः।
यद् धिष्ण्याभ्युदितो जीवस्तन्नक्षत्राह्ववत्सरः॥ ६५॥

बृहस्पति नक्षत्र में उदित होता है, उसके अनुसार, वर्ष का नामकरण किया जाता है उसे बार्हस्पत्य वर्ष कहते हैं। कृत्तिकादि दो-दो नक्षत्रों के अनुसार वर्ष के नौ मासों का नामकरण होता है तथा पञ्चम, एकादश तथा द्वादश मासों में तीन-तीन नक्षत्र को ग्रहणकर मासों का नामकरण हुआ है, उसी के अनुरूप उस वर्ष का नामकरण किया जाता है॥ ६५॥

स्पष्टीकरण—१. जिस वर्ष गुरु का उदय कृत्तिका तथा रोहिणी—इन दो नक्षत्रों में संचार करते हुए होता है, उस वर्ष का नाम कार्तिक होता है। २. जिस वर्ष मृगशिरा या आर्द्रा में संचार करते हुए गुरु उदित होता है, उस वर्ष को मार्गशीर्ष वर्ष कहते हैं। ३. जिस वर्ष पुनर्वसु तथा पुष्य नक्षत्रों के गोचर भ्रमण में गुरु उदित हो, उस बार्हस्पत्य वर्ष का नाम पौष होता है। ४. आश्लेषा या मघा में गोचर के बृहस्पति का उदय होने पर उस वर्ष का नाम माघ रखा जाता है। ५. पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी तथा हस्त में से किसी नक्षत्र में गोचर में गुरु उदित हो, तब वर्ष का नामकरण फाल्गुन होता है।

विभिन्न नक्षत्रों में गोचर के गुरु उदय के अनुसार वर्ष नामकरण का चक्र

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	कार्तिकादि वर्ष क्रमांक
कृ. रोहि.	मृग. आर्द्रा	पुन. पुष्य	श्लेषा मघा	पू.फा. उ.फा. हस्त	चित्रा स्वाति	विशा. अनु.	ज्ये. मूल.	पू.षा. उ.षा.	श्रवण धनि.	शत. पू.भा. उ.भा.	रेवती अश्वि. भरणी	नक्षत्र जिसमें संचार करते हुए बृहस्पति उदित हो
कार्तिक वर्ष	मार्गशीर्ष वर्ष	पौष वर्ष	माघ वर्ष	फाल्गुन वर्ष	चैत्र वर्ष	वैशाख वर्ष	ज्येष्ठ वर्ष	आषाढ़ वर्ष	श्रावण वर्ष	भाद्रपद वर्ष	आश्विन वर्ष	बार्हस्पत्य वर्ष अथवा गौरव वर्ष का नाम

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—बार्हस्पत्य वर्ष के नामकरण के सम्बन्ध में प्राचीन ऋषि एवं मनुष्य आचार्यों ने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किये हैं—

'प्रवासान्ते सहर्क्षेण तूदितो युगपच्चरेत्।
तस्मात्कालादृक्षापूर्वो गुरोरब्दः प्रवर्त्तते॥
युगानि द्वादशाब्दानि तत्र तानि बृहस्पतेः।
तत्र सावनसौराभ्यां सावनाब्दो निरुच्यते॥
एवं आश्वयुजश्चैव चैत्रं चैव बृहस्पतिः।
संवत्सरं नाशयते सप्तत्यब्द शतेऽधिके॥' (गर्गाचार्य)

'संवत्सरे युगे चैव षष्ट्यब्देऽङ्गिरसः सुतः।
यन्नक्षत्रोदयं कुर्यात् तत्संज्ञं वत्सरं विदुः॥
प्रभवादीनामब्दानां प्रवृत्तिगुरोरुदयकालोदितः।
तयेव यतो गुरुरत्राबाधितत्वेन स्थितः॥
कार्तिकादिसमा ज्ञेया द्विनक्षत्रविचारिणा।
त्रिभं भाद्रपदे ज्ञेयं फाल्गुने श्रावणे तथा॥' (कश्यप)

'यत्रोत्तिष्ठति नक्षत्रे सह येन प्रवर्धते।
सम्वत्सरः स विज्ञेयस्तन्नक्षत्रविधायकः॥' (ऋषिपुत्र)

'नक्षत्रेण सहोदयमुपगच्छति येन देवपतिः मन्त्री।
तत्सञ्ज्ञं वक्तव्यं वर्षं मासक्रमेणैव॥
वर्षाणि कार्तिकादीन्याग्नेयाद् भद्वयानुयोगीनि।
क्रमशस्त्रिभं तु पञ्चममुपान्त्यमन्त्यञ्च यद्वर्षम्॥'
(बृहत्संहिता)

इस प्रकार वराहमिहिर ने पूर्णरूपेण श्रीनारदजी का ही अनुमोदन किया है तथा कश्यप भी इसी बात को स्पष्ट रूप से कहते हैं।

कार्तिक वर्ष का फल

पीडा स्यात्कार्तिके वर्षे रथगोऽग्न्युपजीविनाम्।
क्षुच्छस्त्राग्निभयं वृद्धिः पुष्पकौसुम्भजीविनाम्॥ ६६॥

कार्तिक वर्ष में रथजीवी (ट्रांसपोर्ट व्यवसायी), गोजीवी (डेरी एवं दुग्ध व्यवसायी) तथा अग्निजीवी (रसोइये, बेकरी के व्यसायी, होटल चलानेवाले, ईंट-भट्टा-चूना आदि का व्यवसाय करनेवाले, लोहार, स्वर्णकार, हलवाई आदि) लोगों को पीड़ा होती है। जनता में अग्निभय, शस्त्रभय तथा भुखमरी का भय होता है। किन्तु पुष्प-व्यवसायी, तेल-व्यवसायी (इत्र तथा गुलाबजल आदि के निर्माता एवं विक्रेता) आदि की उन्नति होती है॥ ६६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मार्गशीर्ष वर्ष का फल

अनावृष्टिः सौम्यवर्षे मृगाखुशलभाण्डजैः।
सर्वसस्यवधो व्याधिर्वैरं राज्ञां परस्परम्॥ ६७॥

सौम्य वर्ष (मार्गशीर्ष वर्ष) में जंगली पशुओं, चूहों, टिड्डों, पक्षियों आदि से खेती में हानि पहुँचती है। अनावृष्टि रहती है। पड़ोसी राज्यों, राष्ट्रों एवं जिलों आदि में परस्पर विग्रह होता है॥ ६७॥

पौषसंज्ञक वर्ष का फल

निवृत्तवैराः क्षितिपा जगदानन्दकारकाः।
पुष्टिकर्मरताः सर्वे पौषेऽब्देऽध्वरतत्पराः॥ ६८॥

पौषाब्द में शासकवर्ग में परस्पर सौमनस्य रहता है। जनता में शान्ति रहती है। लोग पुष्टिकर्म (उन्नति एवं विकास) में लगे रहकर विविध प्रकार के उद्यम तथा यज्ञादि में संलग्न रहते हैं॥ ६८॥

माघसंज्ञक वर्ष का फल

माघेऽब्दे सततं सर्वे पितृपूजनतत्पराः।
सुभिक्षं क्षेममारोग्यं वृष्टिः कर्षकसम्मता॥ ६९॥

माघसंज्ञक वर्ष में सभी जनता पितृपूजन (इतिहास के अध्ययन, शोध, वृद्धों के सम्मान, प्राचीन पूर्वजों के प्रति कृतज्ञताज्ञापन) में लगी रहती है। सुकाल, क्षेम, सुस्वास्थ्य तथा कृषि के अनुकूल सुवृष्टि होती है॥ ६९॥

फाल्गुनाब्द का फल

चौराश्च प्रबलाः स्त्रीणां दौर्भाग्यं स्वजनाः खलाः।
क्वचिद् वृष्टिः क्वचित्सस्यं क्वचिद् वृद्धिश्च फाल्गुने॥ ७०॥

फाल्गुन नामक वर्ष में चोर, डाकू, जेबकट आदि प्रबल होते हैं। निकट सम्बन्धियों द्वारा स्त्री जाति को पीड़ित किया जाता है। कहीं वर्षा, कहीं अच्छी फसल तथा कहीं पर अच्छी प्रगति होती है॥ ७०॥

चैत्राब्द का फल

चैत्रेऽब्दे मध्यमावृष्टिरुत्तमान्नं सुदुर्लभम्।
सस्यार्धवृष्ट्यः स्वल्पा राजानः क्षेमकारिणः॥ ७१॥

चैत्रसंज्ञक वर्ष में वर्षा मध्यम होती है तथा उत्तमान्न (गेहूँ-चावल) कम मात्रा में पैदा होता है. अन्न महँगा रहता है, परन्तु शासन की ओर से कल्याणकारी कार्य तथा राहतकार्य चलाये जाते हैं॥ ७१॥

वैशाख वर्ष का फल

वैशाखे धर्मनिरता राजानः सप्रजा भ्रशम्।
निष्पत्तिः सर्वसस्यानां अध्वरोद्युक्तचेतसाः॥ ७२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वैशाख नामक बार्हस्पत्य वर्ष में शासकगण एवं जनता धर्म एवं नीति के अनुसार चलते हैं। सभी प्रकार के खाद्यान्न उत्पन्न होते हैं तथा धार्मिक कार्य होते रहते हैं॥ ७२॥

ज्येष्ठ नामक वर्ष का फल

वृक्षगुल्मलतादीनां क्षेमं सस्यविनाशनम्।
ज्येष्ठेऽब्दे धर्मतत्त्वज्ञाः सन्नृपाः पीडिताःपरैः॥ ७३॥

ज्येष्ठाब्द में वृक्ष, झाड़ी, लता आदि की वृद्धि होती है। किन्तु फसल कमजोर होती है। इस वर्ष में धार्मिक लोग तथा ईमानदार शासकगण पीड़ित रहते हैं॥ ७३॥

आषाढ़ वर्ष का फल

क्वचिद् वृष्टिः क्वचित्सस्यं न तु सस्यं क्वचित् क्वचित्।
आषाढेऽब्दे क्षितीशाः स्युरन्योऽन्यै जयकांक्षिणः॥ ७४॥

आषाढ नामक वर्ष से राष्ट्रों एवं राज्याध्यक्षों में परस्पर विग्रह होता है, वे एक-दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयास करते हैं। कहीं वर्षा होती है, कहीं-कहीं नहीं होती है। इसी प्रकार कहीं-कहीं फसल उत्पन्न हो जाती है और कहीं-कहीं नहीं हो पाती है॥ ७४॥

श्रावणाब्द का फल

अनेकसस्सम्पूर्णा सुरार्चनसमाकुला।
पापपाखण्डहन्त्रीभूः श्रावणेऽब्दे विराजते॥ ७५॥

श्रावणाब्द में अनेक प्रकार के खाद्यान्न, फल आदि उत्पन्न होते हैं। जनता देवताओं के अर्चन में दत्तचित्त होकर लगती है तथा पाप एवं पाखण्ड का भण्डाफोड़ होता है॥ ७५॥

भाद्रपदाब्द का फल

पूर्वन्तु सस्यसम्पूर्तिर्नाशं यात्यपरं तु यत्।
मध्यं वृष्टिर्महत्सस्यं नृपाणां समरं महत्॥ ७६॥
अब्दे भाद्रपदे लोके क्षेमाक्षेमं क्वचित् क्वचित्।
धनधान्यसमृद्धिश्च सुभिक्षमतिवृष्टयः॥ ७७॥

भाद्रपद वर्ष में प्रथम फसल (सियारी या खरीफ) अच्छी होती है किन्तु द्वितीय फसल (उन्हारी अथवा रबी की फसल) नष्ट हो जाती है। कहीं-कहीं मध्यम वृष्टि होती है, वहाँ फसल अच्छी हो जाती है। शासक वर्ग में परस्पर विग्रह होता है। कहीं अतिवृष्टि या अवृष्टि भी होती है॥ ७६-७७॥

विमर्श—भाद्रपद वर्ष का फल विभिन्न विद्वानों के शब्दों में इस प्रकार है—

'प्रौष्ठपात्सस्यजननो नाशयत्यपरञ्च यत्।
करोति च क्वचित्क्षेमं क्वचिदक्षेमकारकः॥'
(गर्गाचार्य)

'भाद्रपदे वल्लीजं निष्पत्तिं याति पूर्वस्यं च।
न भवत्यपरं सस्यं क्वचित्सुभिक्षं क्वचिद् भयम्॥'
(वराहमिहिर)

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अश्वयुज वर्ष का फल

सुवृष्टिः सर्वसस्यानि फलितानि भवन्ति च।
भवन्त्याश्वयुजे वर्षे सन्तुष्टाः सर्वजन्तवः॥ ७८॥

आश्विनसंज्ञक वर्ष में उत्तम वर्षा तथा उत्तम फसल होती है। साथ ही सभी प्राणी (मनुष्य, पशु, पक्षी आदि) सुखी तथा सन्तुष्ट रहते हैं॥ ७८॥

योगतारा के दक्षिणोत्तर में गुरु संचार का फल

सौम्यभागे चरन् भानां क्षेमारोग्यसुभिक्षकृत्।
विपरीतं गुरोर्याम्ये मध्ये च प्रतिमध्यमम्॥ ७९॥

जब गोचर में गुरु का संचार नक्षत्र के योगतारा के उत्तर की ओर से होता है, तो क्षेम, आरोग्य तथा सुभिक्ष होता है। किन्तु दक्षिण दिशा से गोचर भ्रमण होने पर विपरीत फल होता है। यदि नक्षत्रपुंज के मध्य से गुरु का गमन (Transit) हो, तो मिश्रित फल होता है॥ ७९॥

बृहस्पति के वर्ण का फल

पीताग्निश्यामहरितरक्तवर्णोऽङ्गिराः क्रमात्।
व्याध्यग्निरणचौरास्त्रभयकृत् प्राणिनां सदा॥ ८०॥

यदि बृहस्पति का विम्ब पीतवर्ण हो तो व्याधि होती है, यदि अग्नि के समान वर्ण हो तो अग्निकाण्ड की घटनाएँ घटती हैं। यदि आकाश में बृहस्पति की द्युति श्यामवर्ण हो तो आतंकी घटना होती है। यदि हरितवर्ण का गुरु आकाश में दिखे तो चोरों का भय होता है तथा रक्तवर्ण से शस्त्रभय होता है॥ ८०॥

दिन में गुरु के दिखने का फल

अनावृष्टिर्धूम्रनिभः करोति सुरपूजितः।
दिवादृष्टो नृपवधस्त्वथवा राज्यनाशनम्॥ ८१॥

१. यदि धूमवर्ण का गुरु (रात्रि में) दिखे तो अनावृष्टिकारक होता है। २. किन्तु यदि गुरु के दर्शन दिन में हों तो राज्य का नाश होता है॥ ८१॥

सम्वत्सर के अङ्गभूत नक्षत्रों का फल

सम्वत्सरशरीरः स्यात् कृत्तिकारोहिणी उभे।
नाभिस्त्वाषाढद्वितयमार्द्राहृत्कुसुमं मघा॥ ८२॥

१. कृत्तिका तथा रोहिणी—ये दो नक्षत्र सम्वत्सर के शरीर हैं। २. पूर्वाषाढ़ा तथा उत्तराषाढ़ा दोनों सम्वत्सर की नाभि हैं। ३. आर्द्रा सम्वत्सर का हृदय है तथा ४. मघा सम्वत्सर का पुष्प (प्रजनन तंत्र) है॥ ८२॥

सम्वत्सर के अङ्गभूत नक्षत्रों के पीड़ित होने का फल

दुर्भिक्षाग्निमहद्भीतिः शरीरे क्रूरपीडिते।
नाभ्यान्तु क्षुद् भयं पुष्ये सम्यक् मूलफलक्षयम्॥ ८३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हृदये सस्यनिधनं शुभं स्यात् पीडितः शुभैः॥ ८४॥

१. जब शरीर के नक्षत्र (कृत्तिका-रोहिणी) किसी क्रूरग्रह से पीड़ित हों तो दुर्भिक्ष, अग्निभय आदि होता है। २. जब नाभि के नक्षत्र (अर्थात् पू०षा०-उ०षा०) पीड़ित हों तो भुखमरी फैलती है। ३. जब पुष्य का नक्षत्र (मघा)पीड़ित हो तो पुष्प, फल, कन्दमूल आदि की फसल नष्ट होती है। ४. जब सम्वत्सर का हृदय (आर्द्रा) नक्षत्र क्रूरग्रह से पीड़ित होता है, तब फसलों की हानि होती है॥ ८३-८४॥

मेषराशिगत जीव का फल

मेषराशिगते जीवेत्वीतिर्मेषविनाशनम्।
सस्यवृद्धिः प्रजारोग्यं वृष्टिः कर्षकसम्मता॥ ८५॥

जब गुरु मेषराशि में भ्रमण कर रहा हो तब सात प्रकार की ईतियों से भय होता है। भेड़ों-बकरियों का नाश होता है। फसल खूब होती है, लोगों का स्वास्थ्य उत्तम रहता है तथा कृषि के लिये लाभकारी वर्षा होती रहती है॥ ८५॥

विमर्श—१. अतिवृष्टि, २. अनावृष्टि, ३. चूहों की अधिकता, ४. शलभ (टिड्डी आदि की वृद्धि), ५. शुकों की वृद्धि, ६. स्वचक्र (गृहयुद्ध) तथा ७. परचक्र (दूसरे राष्ट्र द्वारा स्वराष्ट्र का राजनैतिक, आर्थिक एवं धार्मिक शोषण एवं दमन)—ये सात प्रकार की ईतियाँ शास्त्रों में वर्णित हैं—

'अतिवृष्टि अनावृष्टिः मूषकः शलभः शुकः।
स्वचक्रं परचक्रञ्च सप्त ईतयः स्मृताः॥'

वृषराशिगत गुरु का फल

वृषराशिगते जीवे शिशुस्त्रीपशुपालनाम्।
मध्यावृष्टिः सस्यहानिर्नृपाणां समरं महत्॥ ८६॥

जब वृषराशि में बृहस्पति होता है तब शिशुपालन, स्त्रीकल्याण तथा पशुधन विकास में प्रगति होती है। वृष्टि मध्यम होती है, खेती की हानि तथा राजनायकों में विग्रह होता है॥ ८६॥

मिथुनराशिगत गुरु का फल

जनानां भीतिरीतिश्च नृपाणां दारुणं रणम्।
विप्रपीडा मध्यवृष्टिः सस्यवृद्धिस्तृतीयभे॥ ८७॥

मिथुन के गुरु में जनता में भ्रम, राजनेताओं में भयंकर विवाद तथा बुद्धिजीवियों को पीड़ा होती है। वर्षा मध्यम मात्रा में होती है तथा फसलें अच्छी होती हैं॥ ८७॥

कर्कराशिगत गुरु का फल

प्रभूतपयसो गावः सुजनाः सुखिनः स्त्रियः।
मदोद्धताः कर्किणीज्ये सस्यवृद्धियुता धरा॥ ८८॥

कर्क राशि के गुरु में गाय-भैंसें अधिक दूध देती हैं, सज्जन सुखी होते हैं तथा स्त्रियाँ कामोन्मत्त होती हैं। खेतों में फसल लहलहाती है॥ ८८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सिंहराशिगत गुरु का फल

सिंहराशिगते जीवे निःस्वा भूसुरसत्तमाः।
अतिवृष्टिर्व्यालभयं नृपा युद्धे लयं ययुः॥ ८९॥

जब सिंह राशि में गोचर का गुरु संचार करता है तो उस वर्ष ब्राह्मण धनहीन हो जाते हैं (धार्मिक कार्य कम होते हैं)। वर्षा अधिक होती है। सर्पादि जीवों (Reptiles) का भय होता है तथा राजा लोग परस्पर लड़कर नाश को प्राप्त हो जाते हैं॥ ८९॥

कन्याराशिगत गुरु का फल

जीवे कन्यागते वृष्टिः हृष्टाः स्वस्थाः क्षितीश्वराः।
महोत्सुकाः क्षितिसुराः स्वस्थाः स्युर्निखिला जनाः॥ ९०॥

कन्या राशि का गुरु होने पर वर्षा अच्छी होती है, शासक वर्ग स्वस्थ तथा प्रसन्न रहते हैं। ब्राह्मण वर्ग उत्सुक रहता है तथा सम्पूर्ण जनता प्रसन्न रहती है॥ ९०॥

तुलाराशिगत गुरु का फल

जीवे तुलागते सर्वं धातुमूलातुलं जगत्।
तथापि धात्री सम्पूर्णा धनधान्यसुवृष्टिभिः॥ ९१॥

तुला के गुरु में पृथ्वी पर खनिजादि धातुओं, कन्दमूल, फल आदि की प्रचुरता होती है तथा पृथ्वी पर अच्छी वर्षा होने के कारण धनधान्य आदि प्रचुरता से उत्पन्न होते हैं॥ ९१॥

वृश्चिकराशिगत गुरु का फल

मदोद्धतानां भूपानां युद्धे जनपदक्षयः।
अतुष्टाः वृष्टिरत्युग्रं डामरं कीटगे गुरौ॥ ९२॥

वृश्चिक राशि के गुरु में मदोद्धत शासक वर्ग अपने अहंकार के कारण लड़ता-झगड़ता रहता है। जिससे जनता में असन्तोष होता है, वर्षा अधिक होती है तथा अत्युग्र युद्ध होता है॥ ९२॥

धनुराशिगत गुरु का फल

जीवे चापगते भीतिरीतिर्भूपभयं महत्।
अतुष्टा वृष्टिरत्युग्रा पीडानिःस्वाः क्षितीश्वराः॥ ९३॥

धनुराशि के गुरु में ईति-भीति से जनता त्रस्त होती है। शासक वर्ग की कठोरता से जनता को पीड़ा, वृष्टि की अधिकता होती है तथा राजकीय कोष में न्यूनता रहती है॥ ९३॥

मकरराशिगत गुरु का फल

अशत्रवो जना धात्री पूर्णा सस्यार्धवृष्टिभिः।
वीतरोगभयाः सर्वे मकरस्थे सुरार्चिते॥ ९४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मकर राशि के गुरु में जनता में सौहार्द्र रहता है, धान्य सस्ते होते हैं। जनता स्वस्थ तथा भयरहित होती है तथा लोग सुख-चैन से रहते हैं॥ ९४॥

कुम्भराशिगत गुरु का फल

सुरस्पर्द्धिजना धात्री फलपुष्पाऽथ वृष्टिभिः।
सम्पूर्णा कुम्भगे जीवे वीतरोगयुता धरा॥ ९५॥

कुम्भ के गुरु में मनुष्य देवताओं से स्पर्द्धा करते हैं। पृथ्वी पर फल, पुष्प तथा वृष्टि की प्रचुरता होती है। पृथ्वी पर लोग स्वस्थ तथा प्रसन्न रहते हैं॥ ९५॥

मीनस्थ गुरु का फल

धान्यार्धवृष्टिसम्पूर्णा क्वचिद् रोगः क्वचिद् भयम्।
न्यायमार्गरता भूपाः सर्वे मीनस्थिते गुरौ॥ ९६॥

मीन के गुरु में धान्य सस्ता, वृष्टि अधिक, न्याय-व्यवस्था में उन्नति तथा कहीं पर रोग और कहीं पर भय होता है॥ ९६॥

अथ शुक्रचारः

सौम्यमध्ययाम्येषु मार्गेषु त्रि-त्रिवीथयः।
शुक्रस्य दस्रभाद्यैश्च पर्यायैश्च त्रिभिस्त्रिभिः॥ ९७॥

शुक्र की उत्तरवीथी, मध्य दक्षिण मार्गों में तीन-तीन वीथियाँ हैं, जिन्हें अश्विनी आदि तीन-तीन नक्षत्रों पर शुक्र के संचार से माना जाता है॥ ९७॥

तीन मार्गों में शुक्र की नौ वीथियों के नाम

नागेभैरावताश्चैव वृषभो गोजरद्गवाः।
मृगाजदहनाख्याः स्युर्याम्यान्ता वीथयो नव॥ ९८॥

१. नाग, २. गज, ३. ऐरावत—ये तीन उत्तरमार्ग की वीथियाँ हैं। ४. वृष, ५. गो, ६. जरद्गव—ये तीन मध्यवीथियाँ हैं। ७. मृग, ८. अज, एवं ९. दहन—ये दक्षिणमार्ग की तीन वीथियाँ हैं। इस प्रकार कुल नौ वीथियाँ हैं॥ ९८॥

शुक्र की नौ वीथियों का चक्र

१. उत्तरमार्ग			२. मध्यमार्ग			३. दक्षिणमार्ग			शुक्र के मार्ग
नाग वीथी	गज वीथी	ऐरावत वीथी	वृष वीथी	गो वीथी	जरद्गव वीथी	मृग वीथी	अज वीथी	दहन वीथी	शुक्र की वीथियों के नाम
अश्विनी भरणी कृत्तिका	रोहिणी मृगशिरा आर्द्रा	पुनर्वसु पुष्य श्लेषा	मघा पू.फा. उ.फा.	हस्त चित्रा स्वाति	विशाखा अनुराधा ज्येष्ठा	मूल पू.षा. उ.षा.	श्रवण धनिष्ठा शतभिषा	पू.भा. उ.भा. रेवती	वीथी के नक्षत्र
खेती की वृद्धि, अन्न सस्ता			मध्यम उपज, समभाव			अन्न की कमी, महँगाई			शुक्र संचार का फल

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—यहाँ पर देवल तथा महर्षि कश्यप के मत से शुक्र की वीथियों का यही अश्विन्यादि क्रम से विभाग मान्य किया गया है। गर्गाचार्य ने पूर्णतः भिन्न प्रकार से इन नौ वीथियों को माना है। जिसका समर्थन वराहमिहिर ने किया है।

तीनों मार्गों के फल

सौम्यमार्गेषु तिसृषु चरन् वीथिषु भार्गवः।
धान्यार्धवृष्टिसस्यानां परिपूर्तिं करोति सः॥ ९९॥
मध्यमार्गेषु तिसृषु करोत्येषां तु मध्यमः।
याम्यमार्गेषु तिसृषु तेषामेवाधमं फलम्॥ १००॥

१. जब शुक्र उत्तरी मार्ग की तीनों वीथियों में संचार करता है, तब वह धान्यों को सस्ता करता है, वर्षा अच्छी होती है तथा फसलें परिपुष्ट होती हैं। २. जब शुक्र मध्य मार्ग की तीनों वीथियों में भ्रमण करता है, तो मध्यम मात्रा में वृष्टि तथा अन्न का उत्पादन होता है और अनाज के भावों में भी अधिक उतार-चढ़ाव नहीं होता है। ३. दक्षिण मार्ग की तीनों वीथियों में भ्रमण करने पर अन्न का उत्पादन कम होने से भाव महँगे होते हैं॥ ९९-१००॥

शुक्र के उदयास्त के फल

पूर्वस्यां दिशि जलदः शुभकृत् पितृपञ्चके।
स्वातित्रये पश्चिमायां सम्यक् शुक्रो तथा विधिः॥ १०१॥
विपरीते त्वनावृष्टिर्वृष्टिकृत् बुधसंयुतः।
कृष्णाष्टम्यां चतुर्दश्याममावास्यां यदा सितः॥ १०२॥
उदयास्तमयं याति तदा जलमयी क्षितिः।
मिथः सप्तम राशिस्थौ पश्चात् प्राग्वीथिसंयुतौ॥ १०३॥
गुरुशुक्रावनावृष्टिर्दुर्भिक्षमरणप्रदौ।
कुजज्ञजीवरविजाः शुक्रस्याग्रेसरा यदा॥ १०४॥
युद्धातिवायुदुर्भिक्षं जलनाशकरा तदा।
कृष्णारक्तस्तनुः शुक्रो यवनानां विनाशकृत्॥ १०५॥

१. यदि शुक्र मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त तथा चित्रा—इन पाँच नक्षत्रों में स्थित होकर पूर्व दिशा में उदित हो, तो शुभफल करता है। अस्त का भी यही फल होता है। (वराहमिहिर ने इन पाँच नक्षत्रों का मण्डल तृतीय मण्डल कहा है तथा फल अशुभ कहा है)।

२. यदि शुक्र स्वाति-विशाखा तथा अनुराधा—इन तीन नक्षत्रों में उदित हो, तो भी शुभफल करता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

३. यदि मघादि पाँच नक्षत्रों में शुक्र का उदय पश्चिम दिशा में हो, तो अनावृष्टि-कारक होता है तथा स्वात्यादि तीन नक्षत्रों का शुक्र पूर्व में उदित हो, तो भी अनावृष्टि होती है।

४. किन्तु यदि शुक्र के साथ बुध भी उदित हो, तो वृष्टि अवश्य होती है।

५. यदि कृष्ण पक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी तथा अमावस्या इन तिथियों में शुक्रोदय हो अथवा अस्त हो,तो पृथ्वी जल से पूर्ण हो जाती है।

६. यदि गुरु-शुक्र दोनों में समसप्तक हो तथा वे प्राग्वीथि तथा पश्चिमवीथि पर संस्थित हों, तब वर्षा का अभाव होकर दुर्भिक्ष तथा महामारी फैलती है।

७. यदि शुक्र के आगे मंगल, बुध, गुरु तथा शनि स्थित हों, तब युद्ध-आतङ्क तथा लड़ाई-झगड़े होते हैं। आँधी-तूफान आते हैं, दुर्भिक्ष तथा अनावृष्टि होती है।

८. यदि शुक्र का रंग लाल या काला हो,तो यवनों को हानि होती है।

विमर्श—वराहमिहिर ने शुक्र के विभिन्न वर्णों के फल निम्न प्रकार दिये हैं—

'शिखि भयमनलाभे शस्त्रकोपश्च रक्ते,
कनकनिकषगौरे व्याधयो दैत्यपूज्ये।
हरितकपिलरूपे श्वासकासप्रकोपः,
पतति न सलिलं खाद् भस्म रूक्षा सिताभे॥'

अथ शनिचारः

विक्षेप नक्षत्रों में शनि के भ्रमण का फल

श्रवणानिलहस्तार्द्रा भरणी भाग्यभेषु च।
चरन् शनैश्चरो नृणां सुभिक्षारोग्यसस्यकृत्॥ १०६॥
जलेश सार्वमाहेन्द्र नक्षत्रेषु सुभिक्षकृत्।
क्षुच्छस्त्रावृष्टिदो मूलेऽहिर्बुध्न्यान् पुमयोर्भयम्॥ १०७॥

१. जब शनि श्रवण, स्वाति, हस्त, आर्द्रा, भरणी तथा पूर्वाफाल्गुनी इन नक्षत्रों में भ्रमण करता है, तब सुभिक्ष, आरोग्य तथा अन्न की वृद्धि करता है॥ १०६॥

२. जब शनि शतभिषा, आश्लेषा, ज्येष्ठा—इनमें से किसी नक्षत्र पर हो तो सुभिक्ष होता है।

३. मूल नक्षत्र का शनि, अकाल, आतङ्कवाद, तथा अनावृष्टि को करता है।

४. उत्तराभाद्रपदा तथा रेवती का शनि जनता में व्याकुलता तथा भय देता है॥ १०७॥

शनि के नराकार चक्र का फल

मूर्ध्नि चैकं मुखे त्रीणि गुह्ये द्वे नयने द्वयम्।
हृदये पञ्च ऋक्षाणि वामहस्ते चतुष्टयम्॥ १०८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वामपादे तथा त्रीणि देया त्रीणि च दक्षिणे।
दक्षहस्ते च चत्वारि जन्मभाद्रविजः स्थितः॥ १०९॥
रोगो लाभस्तथा हानिर्लाभः सौख्यञ्च बन्धनम्।
आयासं चेष्टयात्रा च ह्यर्थलाभः क्रमात्फलम्॥ ११०॥

शनि को मनुष्य के आकार में कल्पितकर जन्मनक्षत्र से गिनकर शनि नक्षत्र (शनि जिस नक्षत्र पर हो, उस नक्षत्र तक) गणना करें। शिर में एक (प्रथम) नक्षत्र न्यस्त करें। फिर मुख में तीन (२-३-४) नक्षत्र, फिर गुह्य में दो नक्षत्र, नेत्रों में दो नक्षत्र, हृदय में पाँच नक्षत्र, वामहस्त में चार, वामपाद में तीन नक्षत्र, दक्षिण पाद में तीन नक्षत्र, दक्षिण हाथ में चार नक्षत्र—इस प्रकार न्यास करें॥ १०८-१०९॥

अब शनि का नक्षत्र जिस अंग में पड़े, उसके अनुसार फल इस प्रकार होता है—१. शिर पर रोगकारक, २. मुख में लाभ, ३. गुह्य में हानि, ४. नेत्रों में लाभ, ५. हृदय में सौख्य, ६. वामहस्त में बन्धन, ७. वामपाद में आयास (परिश्रम की अधिकता), ८. दक्षिणपाद में इच्छित यात्रा, तथा ९. दाहिने हाथ में अर्थलाभ—यह फल होता है॥ ११०॥

उदाहरण—मान लीजिये किसी व्यक्ति का जन्मनक्षत्र अश्विनी है तथा शनि पूर्वाफाल्गुनी में है, तो अश्विनी को शिर में रखकर क्रमशः गणना करने पर पूर्वाफाल्गुनी ११वाँ नक्षत्र हुआ, तो यह हृदय के पाँच नक्षत्रों में पड़ा, जिसका फल सौख्यकारक हुआ।

शनि नराकार चक्र

जन्मनक्षत्र १ शिर	२ मुख	३ गुह्ये	४ नेत्र	५ हृदय	६ वामहस्त	७ वामपाद	८ दक्षिणपाद	९ दक्षिणहस्त	शनि का अंग
एक	तीन	दो	दो	पाँच	चार	तीन	तीन	चार	अंग में न्यस्त नक्षत्रों की संख्या
पहला	दूसरा तीसरा चौथा	पाँचवाँ छठा	सातवाँ आठवाँ	नौवाँ, दसवाँ ग्यारहवाँ बारहवाँ तेरहवाँ	चौदहवाँ पन्द्रहवाँ सोलहवाँ सत्रहवाँ	अठारहवाँ उन्नीसवाँ बीसवाँ	इक्कीसवाँ बाईसवाँ तेईसवाँ	चौबीसवाँ पच्चीसवाँ छब्बीसवाँ सत्ताईसवाँ	अंग में न्यस्त नक्षत्रों की क्रमगणना
रोगकारक	लाभप्रद	हानिप्रद	लाभप्रद	सुखप्रद	बन्धनकर	दुःखप्रद	अभीष्ट यात्रा	अर्थलाभ	जन्मनक्षत्र से शनिस्थित नक्षत्र का फल

वक्री शनि का फल

वक्रकृद्रविजस्येह तद्वक्रफलमीदृशम्।
करोत्येवं समः साम्यं शीघ्रगो व्युत्क्रमात्फलम्॥ १११॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वक्री शनि का फल वक्री अर्थात् अशुभ होता है, समगति का शनि समफल करता है तथा शीघ्रगति शनि का फल शुभ होता है ॥ १११ ॥

अथ राहुचारः

राहु की पौराणिक उत्पत्ति

अमृतास्वादनाद्राहुः शिरश्छिन्नोऽपि सोऽमृतः।
विष्णुना तेन चक्रेण तथापि ग्रहताङ्गतः ॥ ११२ ॥

देवताओं के मध्य में कपटपूर्वक बैठकर अमृतपान कर लेने से राहु का शिर श्रीविष्णु भगवान् द्वारा काट दिये जाने पर भी वह अमर हो गया और सौर मण्डल में ग्रह हो गया ॥ ११२ ॥

ग्रह का कारण राहु

वरेण धातुरर्केन्दू ग्रसते सर्वपर्वणि।
विक्षेपावनतेर्वशाद् राहुर्दूरं गतस्तयोः ॥ ११३ ॥
षण्मासवृद्ध्या ग्रहणं शोधयेद्रविचन्द्रयोः।

ब्रह्माजी के वर के कारण राहु पर्व तिथियों अर्थात् अमावास्या में तथा पूर्णिमा में क्रमशः सूर्य तथा चन्द्रमा को ग्रसता है, परन्तु विक्षेप के कारण वह प्रत्येक पर्व पर ग्रहण का निर्माण नहीं कर पाता तथा उनसे दूर रहता है अर्थात् सूर्य-चन्द्र से राहु का शर दूर रहता है। अतः छह मास के अन्तर से ही वह सूर्य-चन्द्र को ग्रसने में सफल होता है, तभी ग्रहण हो पाता है ॥ ११३-११३½ ॥

विमर्श—ग्रहण के कारण में श्रीवराहमिहिर ने राहु को कारण न मानकर सर्वप्रथम वैज्ञानिक ढंग से ग्रहण के कारण की व्याख्या की है। उनके अनुसार 'अपने ग्रहण में चन्द्रमा पृथ्वी की छाया में प्रवेश करता है तथा वही चन्द्रमा सूर्यविम्ब में प्रविष्ट होकर सूर्यग्रहण करता है।' इसलिये चन्द्रग्रहण का स्पर्श पश्चिम भाग से तथा सूर्यग्रहण का स्पर्श पूर्व भाग से कभी नहीं होता है—

'भूच्छायां स्वग्रहणे भास्करमर्कग्रहे प्रविशतीन्दुः।
प्रग्रहणमतः पश्चान्नैन्दोर्भानोश्च पूर्वार्द्धात् ॥' —बृहत्संहिता

यही बात आचार्य ब्रह्मगुप्त ने भी कही है—

'भूच्छायेन्दुं चन्द्रः सूर्यं छादयति मानयोगार्द्धात्।
विक्षेपो यद्यूनः शुक्लेतर पञ्चदशयन्ते ॥' —ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त

आचार्य वराहमिहिर कहते हैं कि 'दिव्य दृष्टिवाले प्राचीन आचार्यों ने इस प्रकार ग्रहण (उपराग) का कारण बताया है।' अतः ग्रहण में राहु को कारण न मानने से ज्योतिषशास्त्र (विज्ञान) की मर्यादा की रक्षा होती है—

'एवमुपरागकारणमिदं दिव्यदृग्भिराचार्यैः।
राहुरकारणमस्मिन्युक्तः शास्त्रसद्भावः ॥' (बृ०सं०)

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसी प्रकार महान् वैज्ञानिक श्रीब्रह्मगुप्त भी स्पष्ट शब्दों में घोषणा करते हैं—

'यदि राहुः प्राग्भागादिन्दुं छादयति किं तथा नार्कम् ?
स्थित्यर्धं महदिन्दोर्यथा तथा किं न सूर्यस्य॥
किं प्रतिविम्बं सूर्योराहुश्चान्यो यतो रविग्रहणे ?
ग्राह्यान्यत्वं न ततो राहुकृतं ग्रहणमर्केन्दोः॥'

—ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त

परन्तु श्रीवराहमिहिराचार्य ने चन्द्र की दक्षिण तथा उत्तर दिशा को गति (शर) का कारण आकाशस्थ राहु-केतु नामक काल्पनिक विन्दुओं को माना है। इस प्रकार पौराणिक मत से सामंजस्य हो जाता है—

'तस्मिन्काले सान्निध्यमस्य तेनोपचर्यते राहुः।
याम्योत्तरा शशिगतिर्गणितेऽप्युपचर्यते तेन॥'

—बृहत्संहिता ५। १५

षण्मासान्तर से ग्रहण के अधिपति

पर्वेशाः स्युस्तथा सप्तदेवाः कल्पादितः क्रमात्॥ ११४॥
ब्रह्मेन्द्विन्द्रधनाधीशवरुणाग्नियमाह्वयाः ।

कल्प के आरम्भ से प्रति छह मास के अन्तर पर जो ग्रहण होते हैं, उस अवधि में क्रमशः—१. ब्रह्मा, २. चन्द्र, ३. इन्द्र, ४. कुबेर, ५. वरुण, ६. अग्नि तथा ७. यम—ये सात अधिपति (स्वामी या देवता) हुआ करते हैं॥ ११४-११४½ ॥

ब्राह्मपर्व (ग्रहण) का फल

पशुसस्यद्विजातीनां वृद्धिर्ब्राह्मे च पर्वणि॥ ११५॥

१. जिस ग्रहण के स्वामी ब्रह्मा होते हैं, उस ग्रहण में पशुओं की वृद्धि, कृषि की उन्नति, ब्राह्मणों एवं बुद्धिजीवियों को सुख तथा सफलता मिलती है॥ ११५॥

चान्द्र तथा इन्द्र नामक ग्रहणों का फल

तद्वदेव फलं सौम्ये बुधपीडा च पर्वणि।
विरोधो भूभुजां दुःखमैन्द्रे सस्यविनाशनम्॥ ११६॥

२. चन्द्र नामक पर्व में खेती तथा पशुपालन में उन्नति होती है, जो जन्म से ब्राह्मण होते हैं। उनकी भी उन्नति होती है, परन्तु देवताओं एवं विद्वानों को पीड़ा होती है।

३. ऐन्द्र नामक ग्रहण में राजनीतिज्ञों एवं शासकों में विरोध होता है, अतः वे दुःखी होते हैं तथा कृषि की हानि होती है॥ ११६॥

कुबेर तथा वरुणसंज्ञक ग्रहणों के फल

अर्थेशानामर्थहानिः कौबेरे धान्यवर्धनम्।
नृपाणामशिवं क्षेममितरेषां तु वारुणे॥ ११७॥

४. कौबेर पर्व में धनवान् लोगों को धन की हानि होती है, परन्तु जनता सुखी-समृद्ध होती है तथा सुभिक्ष होता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

५. वरुण पर्व में राजाओं को कष्ट परन्तु अन्य लोगों को सुख प्राप्त होता है ॥ ११७ ॥

अग्नि तथा याम्यसंज्ञक ग्रहणों के फल

प्रवर्षणं सस्यवृद्धिः क्षेमं हौताशपर्वणि।
अनावृष्टिः सस्यहानिर्दुर्भिक्षं याम्यपर्वणि ॥ ११८ ॥

६. अग्नि नामक पर्व में फसल अच्छी होती है तथा जनता सुखी रहती है।

७. याम्य पर्व में अनावृष्टि होती है। फसलों की हानि होने से अकाल पड़ता है ॥ ११८ ॥

असमय के ग्रहण का फल

वेलाहीने यस्य हानिर्नृपाणां दारुणं रणम्।
अतिवेले पुष्पहानिर्भयं सस्यविनाशनम् ॥ ११९ ॥

१. छह मास से पहले होनेवाले पर्व को वेलाहीन पर्व कहते हैं, जब पाँच या साढ़े पाँच मास के अन्तराल से ग्रहण हो, तो सस्य की हानि तथा शासकों में दारुण युद्ध होता है।

२. जब अतिवेला (साढ़े छह मास या सात मास के अन्तर पर) में ग्रहण होता है तो पुष्पों की हानि, जनता में भय तथा फसलों का नाश होता है ॥ ११९ ॥

एक मास में दो ग्रहणों का फल

एकस्मिन्नेव मासे तु चन्द्रार्कग्रहणं यदा।
विरोधं धरणीशानामर्थवृष्टिविनाशनम् ॥ १२० ॥

जब एक ही मास में पन्द्रह दिनों के अन्तर से सूर्य तथा चन्द्रमा दोनों के ग्रहण हों, तो राजाओं में वैर, धनहानि तथा वर्षा की हानि होती है ॥ १२० ॥

ग्रस्तोदित तथा ग्रस्तास्त ग्रहण के फल

ग्रस्तोदितवाऽस्तमितौ नृपधान्यविनाशदौ।
सर्वग्रस्ताविनेन्दूभौ क्षुद् वाय्वग्निभयप्रदौ ॥ १२१ ॥

१. यदि ग्रस्तोदित (ग्रहण लगा हुआ चन्द्रमा या सूर्य उदित हो) ग्रहण हो तो शासक वर्ग तथा फसल की हानि होती है तथैव ग्रस्तास्त ग्रहण का भी यही फल होता है।

२. यदि खग्रास ग्रहण हो (पूर्णग्रहण) तो दुर्भिक्ष तथा आँधी-तूफान आदि का भय होता है ॥ १२१ ॥

पूर्वादि दिशाओं के ग्रासों का फल

द्विजादींश्च क्रमाद् हन्ति राहुर्दृष्टो दिगादितः।
दशैव ग्रासभेदाः स्युर्मोक्षभेदास्तथा दश ॥ १२२ ॥

पूर्व आदि चार दिशाओं में से जिस दिशा में (देशभेद से) ग्रहण का ग्रास दिखे, उसी दिशा की ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र—इन जातियों का नाश होता है। ग्रास के दस भेद होते हैं तथा मोक्ष के भी दस ही भेद होते हैं ॥ १२२ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ग्रास तथा मोक्ष के भेदों की दुर्बोधता

न शक्या लक्षितुं देवैः किं पुनः प्राकृतैर्जनैः।
आनीय खेटान् सिद्धान्तात्तेषां चारं विचिन्तयेत्॥ १२३॥
शभाशुभाप्तेः कालस्य ग्रहचारो हि कारणम्।
तस्मादन्वेषणीयं तत्कालज्ञानाय धीमता॥ १२४॥

ऊपर कथित ग्रास एवं मोक्ष के भेदों को देवता भी नहीं जान पाते हैं, अतः मनुष्यों की तो सामर्थ्य ही क्या है; अतः सिद्धान्त ग्रन्थों से ग्रह स्पष्ट करके उन भेदों का फल विचार करना चाहिये॥ १२३॥

ग्रहों के संचार से ही संसार में शुभाशुभ फल होता है। अतः बुद्धिमान् मनुष्यों को ग्रहगति का ज्ञान अवश्य ही कर लेना चाहिये॥ १२४॥

विमर्श—बृहत्संहिता में ग्रास के दश भेदों के नाम बताते हुए कहा है—

'सव्यापसव्यलेहग्रसननिरोधावमर्दनारोहाः ।
आघ्रातं मध्यतमस्तमोऽन्त्य इति ते दशग्रासाः।'

अर्थात् १. सव्य, २. अपसव्य, ३. लेह, ४. ग्रसन, ५. निरोध, ६. अवमर्दन, ७. आरोह, ८. आघ्रात, ९. मध्यतम तथा १०. तमोऽन्त्य—ये सूर्य तथा चन्द्रमा के दस ग्रास होते हैं। वहाँ इनके फल विस्तार से हैं, किन्तु कश्यपसंहिता में इन दस ग्रासों के संक्षिप्त फल इस प्रकार दिये हैं—

'सव्यगे तु सुभिक्षं स्यादपसव्ये तु तस्कराः।
`लीढे प्रजा प्रहृष्टाः स्युर्ग्रसनं लोकनाशनम्॥
निरोधे जनहर्षः स्यादारोहे नृपसंक्षयः।
आमर्दित चापमर्दे स्वयं क्षुभ्यन्ति पार्थिवा॥
स्वच्छं वर्णप्रदेशं यदाघ्रातं तद् विघातयेत्।
मध्ये तमसि सन्दृष्टे पीडयेन्मध्यदेशजान्॥
दृष्टे तमसि पर्यन्ते सस्यानामीतिजं फलम्॥'

विशेष—सूर्य एवं चन्द्रमा के ग्रहण होते हैं, परन्तु जब मंगल, बुध, गुरु, शुक्र तथा शनिग्रह भी एक-दूसरे को आच्छादित करते हैं, तो उसे ग्रहण न कहकर ग्रस्तयुति अथवा विधान कहा जाता है। इन ग्रस्तयुतियों का उल्लेख मार्तण्ड पञ्चाङ्ग (कुराली) जैसे आधुनिक खगोलशास्त्र पोषक पञ्चाङ्गों में किया जाता है। इनके ग्रस्त होने के फल वराहमिहिर ने बृहत्संहिता में लिखे हैं।

अथ केतुचारः

केतु के उदयास्त से त्रिविध उत्पात

उत्पातरूपाः केतूनामुदयास्तमया नृणाम्।
दिव्यान्तरिक्षा भौमास्ते शुभाशुभफलप्रदाः॥ १२५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आकाश में केतुओं (पुच्छलतारा आदि) के उदयास्त के कारण १. दिव्य, २. अन्तरिक्ष तथा ३. भौम—ये तीन प्रकार के उत्पात उत्पन्न होकर मनुष्यों को शुभाशुभ फल देते हैं॥ १२५॥

अन्तरिक्ष उत्पात का कथन

यज्ञध्वजास्त्रभवनरथवृक्षगजोपमाः ।
स्तम्भशूलगदाकारा अन्तरिक्षाः प्रकीर्तिताः॥ १२६॥

यज्ञ की ध्वजा, अस्त्र, मन्दिर, रथ, वृक्ष, गज, स्तम्भ, शूल (बर्छी तथा त्रिशूल), गदा आदि के जो आकार आकाश में दृष्टिगोचर हों, वे सब अन्तरिक्ष उत्पात कहलाते हैं॥ १२६॥

विमर्श—गार्ग ऋषि ने तथा वराह ने उल्का, निर्घात, विकृत वायु, सूर्य-चन्द्र का परिवेष, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष आदि को अन्तरिक्ष के उत्पात कहा है। यथा—

'वायुअभ्रसन्ध्यादि दाहपरिवेषतमांसि च।
खपुरं चेन्द्रचापञ्च तद् विन्द्यादन्तरिक्षजम्॥'
—गर्गसंहिता

'गन्धर्वपुरपुरन्दरचापादि यदान्तरिक्षञ्च तत्'
—बृहत्संहिता

दिव्य तथा भौम उत्पातों का कथन

नक्षत्रसंस्थिता दिव्याः भौमा ये भूमिसंस्थिताः।
एकोऽप्यमित्ररूपाः स्याज्जन्तूनामशुभाय वै॥ १२७॥

जो उत्पात ग्रह-नक्षत्रों में होते हैं, उनको दिव्य उत्पात कहा जाता है तथा जो भूमि पर होते हैं, उनको भौम उत्पात कहते हैं। इन तीनों प्रकार के उत्पातों में यदि एक भी हो, तो वह हानि करता है तथा शत्रु की भाँति अशुभफल देता है॥ १२७॥

विमर्श—गर्गाचार्य के अनुसार पुच्छलतारों (केतुओं) का स्पर्श ग्रह, नक्षत्र, सूर्य आदि के केन्द्र (समीप) से होता है, तब उसे दिव्य उत्पात कहा है। यथा—

'स्वर्भानुकेतुनक्षत्रग्रहताराार्ककेन्द्रजम् ।
दिवि चोत्पद्यते यच्च तद् दिव्यमिति कीर्तितम्॥'

जब पृथ्वी पर चल वस्तुएँ स्थिर तथा स्थिर वस्तुएँ चल देखने में आयें, तब उनको भौम उत्पात कहा जाता है। जैसे देव-प्रतिमाओं का चलना, रोना, बोलना, हँसना, दूध पीना आदि। भौम उत्पातों का फल सीमित प्रदेश या देश में होता है।

'भूमावुत्पद्यते यच्च स्थावरं वाऽथ जङ्गमम्।
तदेवादेशजं भौममुत्पातं परिकीर्तितम्॥'
—गर्गसंहिता

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'भौमं चरस्थिर भवं तच्छान्तिभिराहर्त समुपैति।'
—बृहत्संहिता

केतु के फल देने की अवधि

यावन्तो दिवसाः केतुर्दृश्यते विविधात्मकः।
तावन्मासैः फलं वाच्यं मासैश्चैवतु वत्सराः॥ १२८॥

१. धूमकेतु (comet) जितने दिनों तक उदित होकर दिखायी देता रहता है, उसका फल उतने ही महीनों तक होता है।

२. किन्तु जब धूमकेतु महीनों तक आकाश में दृष्टिगोचर बना रहता है,तो वह उतने ही वर्षों तक अशुभफल करता है॥ १२८॥

उत्पातों तथा केतुओं के अशुभ फल की तीव्रता

ये दिव्याः केतवस्तेऽपि शश्वत्तीव्रफलप्रदाः।
अन्तरिक्षा मध्यफला भौमा मन्दफलप्रदाः॥ १२९॥

जो उत्पात दिव्य में होते हैं, वे तीव्र फल देते हैं। जो उत्पात अन्तरिक्षजन्य होते हैं, वे मध्यम फल देते हैं तथा भूमि पर होनेवाले उत्पात मन्दफल देते हैं॥ १२९॥

शुभफलदायक केतु के लक्षण

ह्रस्वः स्निग्धः सुप्रसन्नः श्वेतकेतुः सुभिक्षकृत्।
क्षिप्रास्तमयं याति दीर्घकेतुः सुवृष्टिकृत्॥ १३०॥

१. ह्रस्व केतु—छोटा या स्निग्ध, स्वच्छ तथा श्वेत पूँछवाला केतु सुभिक्षकारक होता है।

२. दीर्घ केतु—जो उपरि कथित प्रकार का केतु दीर्घ हो, परन्तु शीघ्र ही अस्त हो जाय, तो वह केतु भी शुभ तथा सुवृष्टिकारक हो जाता है॥ १३०॥

अशुभ केतु के लक्षण

अनिष्टदो धूमकेतुः शक्रचापस्य सन्निभः।
द्वित्रिचतुः शूलरूपः स च राज्यान्तकृत्तदा॥ १३१॥

धूमकेतु (धुएँ जैसा) या इन्द्रधनुष के समान सतरंगा केतु अशुभफल करता है। इसी प्रकार जो केतु द्विशूल अथवा त्रिशूल अथवा चतुश्शूल की आकृति का हो, तो राष्ट्र की हानि करता है॥ १३१॥

सूर्यपुत्र केतुओं का फल

मणिहारसुवर्णाभा दीप्तिमन्तोऽर्कसूनवः।
केतवोऽभ्युदिताः पूर्वापरयोर्नृपघातकाः॥ १३२॥

जो केतु मणि, हार, तथा सुवर्ण, जैसी कान्तिवाले होकर उदित होते हैं, वे सूर्यपुत्र केतु कहलाते हैं। ये पहले के तथा उदय के उपरान्त के शासकों को नष्ट करते हैं (पद से हटा देते हैं)॥ १३२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—वराहमिहिराचार्य ने इन केतुओं को पच्चीस प्रकार का बताया है। ये पूर्व दिशा तथा पश्चिम दिशा में उदित होते हैं। इनके सम्बन्ध में महर्षि गर्ग कहते हैं—

'शुद्धस्फटिकसंकाशमृणालरजतप्रभाः ।
मुक्ताहारसुवर्णाभाः सशिखा पञ्चविंशतिः॥
किरणाख्याः रवेः पुत्रा दृश्यन्ते प्राग्दिशिस्थिताः।
तथा चापरभागस्या नृपतेर्भयदाश्च ते॥'

अग्निपुत्र केतुओं का फल

बन्धूकविम्बक्षतजशुकतुण्डाग्निसन्निभाः ।
हुताशनप्रदास्तेऽपि केतवश्चाग्निसूनवः॥ १३३॥

जो केतु गुलदुपहरिया के फूल-जैसे रंग के अथवा रक्तवर्ण अथवा तोते की चोंच जैसे हरितवर्ण ये अग्नि के समान केतु अग्नि के पुत्र होते हैं तथा अग्निकाण्ड की घटनाओं का भय देते हैं॥ १३३॥

यमपुत्र केतुओं तथा भौमपुत्र केतुओं के फल

व्याधिप्रदा मृत्युसुता वक्रास्ते कृष्णकेतवः।
भूसुता जलतैलाभा वर्त्तुलाः क्षुद्भयप्रदाः॥ १३४॥

१. जो केतु वक्र तथा काले होते हैं, वे यम के पुत्र होते हैं। वे रोगकर तथा मृत्युप्रदायक होते हैं॥

२. जो केतु जल एवं तैल के रंग के गोल होते हैं, वे भौमपुत्र केतु कहलाते हैं तथा भुखमरी फैलाते हैं॥ १३४॥

चन्द्रकेतु तथा ब्रह्मपुत्र केतुओं के फल

क्षेमः सुभिक्षदाः श्वेताः केतवः सोमसूनवः।
पितामहात्मजः केतुस्त्रिवर्णास्त्रिशिखान्विताः॥ १३५॥
ब्रह्मदण्डाह्वयः केतुः प्रजानामन्तकृत्सदा।

१. श्वेतवर्ण के केतु (चन्द्रकिरण के समान) चन्द्रपुत्र केतु होते हैं, वे संसार में सुभिक्ष उत्पन्न करते हैं।

२. जो केतु तीन रंगों के तथा तीन शिलाओं वाले होते हैं, वे ब्रह्माजी के पुत्र होते हैं। इसी को ब्रह्मदण्ड केतु कहते हैं। इनके उदय से सदैव प्रजा का नाश होता है॥ १३५-१३५½॥

विमर्श—इसकी संख्या केवल एक ही होती है जैसा कि कहा गया है—

'एको ब्रह्मसुतः क्रूरस्त्रिवर्णत्रिशिखान्वितः।
सर्वस्वाशासु दृश्यः स्याद् ब्रह्मदण्डः क्षयावहः॥'

यह ब्रह्मदण्डकेतु किसी भी दिशा में उदित हो सकता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शुक्रपुत्र के लक्षण

ऐशान्यां भार्गवसुताः श्वेतरूपास्त्वनिष्टदाः ॥ १३६ ॥

श्वेत वर्णवाले शुक्र के पुत्र केतु ईशान दिशा में उदित होकर अनिष्ट फल देते हैं ॥ १३६ ॥

शनिपुत्र और गुरुपुत्र केतुओं के फल

अनिष्टदाः पङ्गुसुताः द्विशिखा कनकाह्वयाः ।
विकचाख्या गुरुसुतानेष्टा याम्यस्थिता अपि ॥ १३७ ॥

१. शनि के पुत्र द्विशिख केतु होते हैं, उनका वर्ण सुनहरा होता है, वे अनिष्टकारक होते हैं।

२. विकच नामक केतु गुरु के पुत्र होते हैं, जो दक्षिण दिशा में उदित होने पर नेष्ट फल देते हैं ॥ १३७ ॥

बुधपुत्र तथा भौमपुत्र केतुओं के फल

सूक्ष्माः शुक्ला बुधसुता घोराश्चौरभयप्रदाः ।
कुजात्मजाः कुङ्कुमाख्या रक्ताः शूलास्त्वनिष्टदाः ॥ १३८ ॥

१. बुध के पुत्र शुक्लकेतु श्वेत वर्ण तथा सूक्ष्म होते हैं, उनके उदय से संसार में घोर भय उत्पन्न होता है।

२. कुंकुम नामक केतु मंगल के पुत्र होते हैं, वे लाल रंग के शूलाकार होते हैं तथा अनिष्ट फल करते हैं ॥ १३९ ॥

विश्वरूप तथा पापपुत्र केतुओं के लक्षण एवं फल

अग्निजा विश्वरूपाख्या अग्निवर्णाः शुभप्रदाः ।
अरुणाः श्यामलाकाराः पापपुत्राश्च पापदाः ॥ १३९ ॥

१. विश्वरूप नाम केतु अग्नि के समान वर्ण वाले होते हैं उनका फल शुभ होता है।

२. लाल रंग के श्यामला आभा से युक्त पापपुत्र केतु अशुभ फल देते हैं तथा पाप की वृद्धि करते हैं ॥ १३९ ॥

नक्षत्रकेतु तथा कङ्ककेतु के फल

शक्रजा ऋक्षसदृशाः केतवः शुभदायकाः ।
कङ्काख्या वरुणजाः श्वेताः कष्टाः वंशलतोपमाः ॥ १४० ॥

१. इन्द्र से उत्पन्न नक्षत्रपुंज के समान केतु नक्षत्रकेतु, इन्द्रकेतु अथवा शक्रकेतु होता है, ऐसे केतु के उदित होने पर शुभफल होता है।

२. वरुण के पुत्र केतुओं को कंककेतु कहते हैं, ये बाँस की लता की भाँति दृष्टिगोचर होते हैं। ये केतु श्वेत वर्ण के तथा कष्टप्रद अशुभफल देते हैं ॥ १४० ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उदयस्थान के अनुसार केतु का फल

कृत्तिकासु समुद्भूतो धूमकेतुः प्रजान्तकृत्॥ १४१॥
प्रासादशैलवृक्षेषु जातो राज्ञां विनाशकृत्॥ १४२॥

१. यदि कृत्तिका नक्षत्रपुंज के समीप में केतु का उदय हो तो वह जनता का नाश करता है॥ १४१॥

२. यदि केतु किसी पर्वत, ऊँचे भवन, वृक्ष आदि के ऊपर दृष्टिगोचर हो तो राजाओं का विनाश करता है॥ १४२॥

कुमुदकेतु तथा आवर्तकेतु के फल

सुभिक्षकृत्कुमुदाख्यः केतुः कुमुदसन्निभः।
आवर्तकेतुः शुभदः श्वेतश्चावर्त्तसन्निभः॥ १४३॥

१. कुमुद नामक केतु कमल के सदृश आकारवाला होता है, यह सुभिक्ष करता है, अतः शुभफलदायक है।

२. आवर्त नामक केतु श्वेत वर्ण के आवर्त-सा दिखता है, अतः यह भी शुभफल करता है॥ १४३॥

सम्वर्त्तकेतु के फल

सम्वर्त्तकेतुः सन्ध्यायां त्रिशिरा नेष्टदारुणः।
श्यावरूक्ष ताम्रार्चिः रौद्रफलप्रदायकाः॥ १४४॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां ग्रहचाराध्यायो द्वितीयः॥ २॥

सम्वर्त्त नामक यह केतु सन्ध्याओं के समय उदित होता है। यह नेष्ट, दारुण तथा रौद्रफल देता है। इसका वर्ण श्याव, अरुण, ताम्र तथा रूखा होता है॥ १४४॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के द्वितीय ग्रहचाराध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ २॥

●

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तृतीयोऽध्यायः

सम्वत्सराध्यायः

नौ प्रकार के कालमान

ब्राह्मं दैवं मानुषञ्च पित्र्यं सौरञ्च सावनम्।
चान्द्रमार्क्षं गुरोर्मानमिति मानानि वै नव॥ १॥

१. ब्राह्ममान, २. दैवमान, ३. मानुष (मानवमान), ४. पित्र्यमान, ५. सौरमान, ६. सावनमान, ७. चान्द्रमान, ८. नाक्षत्रमान तथा ९. गुरुमान—ये नौ प्रकार के कालमान हैं॥ १॥

विमर्श—'मीयते अनेन इति मानम्' अर्थात् जिससे मापा जाता है, उसको (उन इकाइयों को) मान कहते हैं तथा काल (समय) की माप के जो एकक (Units) होते हैं, उन्हें कालमान कहते हैं। सूर्यसिद्धान्त के अनुसार काल दो प्रकार का होता है। एक वह होता है, जो लोकों का अन्त (संहार) करता है। यह अखण्ड होता है, अतः इसका माप नहीं हो सकता है। दूसरा काल कलनात्मक होता है अर्थात् उसका कलन (Calculation) किया जाता है। यह दूसरे प्रकार का काल खण्डकाल है, यह स्थूल तथा सूक्ष्म है, परन्तु प्रथम प्रकार का अखण्ड होता है, अतः वह सूक्ष्म से परे होता है।

मानव व्यवहार में उपयोगी पाँच प्रकार के कालमान

एषां तु नवमानानां व्यवहारोऽत्र पञ्चभिः।
तेषां पृथक्पृथक् कार्यं वक्ष्यते व्यवहारतः॥ २॥

ऊपर वर्णित नौ प्रकार के कालमानों में से (प्रथम चार प्रकारों को छोड़कर) पाँच प्रकार के कालमानों (सौर, सावन, चान्द्र, नाक्षत्र तथा गुरुमान) इनके उपयोगों को आगे पृथक्-पृथक् वर्णित किया जा रहा है॥ २॥

विमर्श—ब्राह्ममान, दैवमान, मनुमान तथा पित्र्यमान का उपयोग कम होता है; क्योंकि इनकी इकाइयाँ बहुत बड़ी हैं। चौबीस सेकेण्ड के बराबर का समय एक पल होता है, ऐसे साठ पल के बराबर एक घटी (२४ मिनट) होती है। साठ घटी का एक अहोरात्र होता है। मनुष्यलोक (पृथ्वी) के एक वर्ष के बराबर देवताओं का अहोरात्र होता है। देवताओं के ३६० अहोरात्र के बराबर एक दिव्य वर्ष होता है। यह दिव्यमान अथवा दैवमान है। दिव्यमान के बारह सहस्र वर्षों में चतुर्युग (सतयुग+त्रेता+द्वापर+कलियुग) का समय बीतता है। इस प्रकार चारों युगों में पृथ्वी के तैंतालीस लाख बीस सहस्र (४३,२०,०००) वर्ष व्यतीत होते हैं। चतुर्युग के ही समय को महायुग भी कहते हैं। ऐसे एकहत्तर महायुगों का एक मन्वन्तर होता है। मन्वन्तरों की गणना को ही प्राजापत्य अथवा मानवमान कहा जाता है। चौदह

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्वन्तरों के बराबर का समय कल्प कहा जाता है। इस प्रकार कल्प में एक सहस्र महायुग होते हैं। यह कल्प का समय ब्रह्माजी का एक दिन होता है तथा इतना ही उनकी रात्रि होती है। ब्रह्मा की आयु इस मान के हिसाब से एक सौ वर्ष होती है। इसी को ब्राह्ममान अथवा पितामहमान कहा जाता है।

चान्द्रमान से जो तीस तिथियाँ होती है, वह चान्द्रमास होता है। यह पितरों का एक दिन होता है अर्थात् एक अहोरात्र होता है। इस प्रकार कृष्णपक्ष की अष्टमी से पितरों का दिन प्रारम्भ होता है तब अमावस्या पर पितरों का मध्याह्न तथा शुक्लपक्ष की अष्टमी पर पितरों का दिन समाप्त होकर रात्रि आरम्भ हो जाती है फिर पूर्णिमा पर उनकी मध्य रात्रि होती है फिर कृष्णपक्ष की सप्तमी पर रात्रि समाप्त हो जाती है, यही पितृमान है। जैसा कि कहा गया है—

'त्रिंशता तिथिभिर्मासश्चान्द्रः पित्रमहः स्मृतम्।
निशामासपक्षान्तौ तयोर्मध्ये विभागतः॥'

—सूर्यसिद्धान्त १४।१४

सौर तथा सावनमान का उपयोग

**ग्रहणं निखिलं कार्यं गृह्यते सौरमानतः।
विधेर्विधानं स्त्रीगर्भं सावने नैव गृह्यते॥ ३॥**

१. ग्रहण (व्रतादि का अनुष्ठान) के सम्पूर्ण कार्य, ग्रहण का गणितादि—ये सब सौरमान से होते हैं।

२. किसी कार्य का विधान, स्त्री का गर्भ—इन सबको सावनमान से गिनते हैं॥ ३॥

नाक्षत्र-चान्द्र तथा गुरुमान का उपयोग

**प्रवर्षणं मेघगर्भो नाक्षत्रेण प्रगृह्यते।
यात्रोद्वाहव्रतक्षौरतिथिवर्षादिनिर्णयः ॥ ४॥
पर्ववास्तूपवासादि कृत्स्नं चान्द्रेण गृह्यते।
गृह्यते गुरुमानेन प्रभवाद्यब्दलक्षणम्॥ ५॥**

३. वर्षाकाल, मेघ का गर्भ—इनकी गणना नाक्षत्रमान से होती है। ४. यात्रा, विवाह, व्रत, क्षौर कर्म, तिथि वर्षादि का निर्णय, पार्वण श्राद्ध, वास्तुकर्म, उपवास आदि का निर्णय, व्रतनियमादि—ये सब चान्द्रमान से किये जाते हैं (परन्तु विवाह में मास ग्रहण सौरमान का होता है)। ५. गुरुमान से प्रभवादि साठ सम्वत्सरों का ग्रहण करते हैं॥ ४-५॥

मासों के भेद

**भचक्रगतिरार्क्षं स्यात्सावनं त्रिंशता दिनैः।
सौरं संक्रमणं प्रोक्तं चान्द्रं प्रतिपदादिकम्॥ ६॥**

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. (चान्द्र) नक्षत्रों की गति के अनुसार जो एक मास का समय होता है वह नाक्षत्र मास कहलाता है। २. तीस दिन का मास सावन मास कहा जाता है। ३. एक सूर्य संक्रान्ति से दूसरी सूर्य संक्रान्ति के मध्य का समय सौर मास होता है तथा ४. प्रतिपदा आदि तीस तिथियों का एक चान्द्र मास होता है॥ ६॥

विमर्श—इन चारों प्रकार के मासों का स्पष्टीकरण अति आवश्यक होने से दिया जा रहा है—

नाक्षत्रमास—जितने समय तक चन्द्रमा एक नक्षत्र में (१३°। २०′) रहता है, उतना समय नाक्षत्र दिन (अहोरात्र) होता है, अतः अभिजित् सहित अट्ठाईस नक्षत्र जितने समय में अश्विनी से लेकर रेवती पर्यन्त भोग लिये जाते हैं उतने समय का एक मास मानकर नाक्षत्र मास कहलाता है। यह लगभग साढ़े सत्ताईस सावन दिनों का होता है। इस प्रकार एक सावन वर्ष में इसकी तेरह आवृत्तियाँ हो जाती हैं, परन्तु इन मासों का नाम पूर्णिमा के नक्षत्र के अनुसार होता है।

सावनमास—इसमें पूरे तीस दिन का मास तथा तीन सौ साठ दिन (अहोरात्र) का दिन गिना जाता है। इस मान में घट-बढ़ नहीं होती है। यह लोक-व्यवहार में सरलता के लिये है। पारसी लोग इसका उपयोग करते हैं।

सौरमास—यह सायन तथा निरयण भेद से दो प्रकार का होता है। निरयण गणना से सूर्य जब तक एक राशि में रहता है तब तक का समय निरयण सौरमास होता है। निरयण संक्रान्ति का प्रत्येक अंश सौर दिन संज्ञक होता है। इन मासों के नाम मेष, वृष आदि अथवा वैशाखादि होते हैं। इसी प्रकार से सायनगणना से सूर्य राशि का एक अंश सायन सौर दिन तथा सम्पूर्ण राशि में सूर्य का स्थितिकाल सायन सौरमास होता है। सायन सौरमासों के नाम मेषादि तथा चैत्रादि होते हैं, तथैव सायन तथा निरयण सौर वर्ष भी होते हैं। ध्यान रहे अंग्रेजी महीने जनवरी इत्यादि सौर मास हैं।

चान्द्रमास—इसमें चन्द्रमा सूर्य से १२ अंश (बारह अंश) के अन्तर पर क्रम से प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा अथवा अमावास्या तक तीस तिथियों का मास बनता है, जिसमें लगभग २९$\frac{१}{२}$ (साढ़े उनतीस) दिन का समय होता है। चान्द्रमास के चार भेद होते हैं। जैसा कि आर्ष्टिषेण ने कहा है—

'दर्शान्ते वैदिको मासो राकान्तः स्मार्त उच्यते।
पौराणो हरिघस्रान्तः श्रौत उत्पत्तिपूर्वकः॥'

—बृहद् दैवज्ञरंजन

(क) वैदिक चान्द्रमास—इसकी गणना शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से लेकर दर्श (अमावास्या) पर्यन्त की जाती है। इसका उपयोग असम, बंगाल, उड़ीसा, आन्ध्र-प्रदेश, तमिलनाडु, केरल, कर्णाटक, गोवा तथा महाराष्ट्र में होता है। इसे अमान्त चान्द्रमास भी कहते हैं। पंचांगनिर्माण इसी वैदिक चान्द्रमास गणना के आधार पर होता है। इसमें शुक्लपक्ष पहले तथा कृष्णपक्ष पश्चात् आता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(ख) स्मार्त चान्द्रमास—कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से प्रारम्भ करके शुक्लपक्ष की पूर्णिमापर्यन्त गिना जानेवाला मास स्मार्तमास कहलाता है। इसमें कृष्णपक्ष पहले तथा शुक्लपक्ष बाद में आता है। इसका उपयोग हिन्दीभाषी क्षेत्रों के पंचांगों एवं जनता में होता है। स्मृतियों के अनुसार इसका उपयोग होने से इसे स्मार्तमास कहते हैं।

(ग) पौराणिक चान्द्रमास—इसकी गणना किसी भी पक्ष की द्वादशी से आरम्भ कर उसी पक्ष की अगले मास की एकादशीपर्यन्त होती है। इसमें पक्षों एवं मासों की पूर्णता एकादशी की समाप्ति पर होती है।

(घ) श्रौत चान्द्रमास—चन्द्रमा की उत्पत्ति अर्थात् शुक्लपक्ष के प्रथम चन्द्रदर्शन (Newmoon) से प्रारम्भ होनेवाला चान्द्रमास श्रौत चान्द्रमास कहलाता है। इसका उपयोग इस्लामी कैलेण्डर में किया जाता है। मुसलमानों के त्यौहार इसी के अनुसार मनाये जाते हैं। इस प्रकार संसार भर के कैलेण्डर भारतीय पंचांग से ही लिये गये हैं, यह भलीभाँति सिद्ध हो रहा है।

गुरुमान तथा साठ संवत्सर

तत्तन्मासैर्द्वादशभिस्तत्तदब्दो भवेतत्तः।
गुरुचारेण सम्भूताः षष्ट्यब्दाः प्रभवादयः॥ ७॥

बृहस्पति के एक राशि में रहते हुए उसकी नक्षत्रस्थिति के अनुसार जो वर्ष होता है, उसे गुरु वर्ष या जैव वर्ष या बार्हस्पत्य वर्ष कहते हैं, उसमें बारह मास होते हैं। प्रत्येक जैव वर्ष में प्रभवादि साठ संवत्सर होते हैं॥ ७॥

साठ सम्वत्सरों के नाम

प्रभवः विभवः शुक्लो प्रमोदोऽथ प्रजापतिः।
अङ्गिराः श्रीमुखो भावो युवा धाता तथेश्वरः॥ ८॥
बहुधान्यः प्रमाथी च विक्रमो वृषसंज्ञकः।
चित्रभानुः सुभानुश्च तारणः पार्थिवो व्ययः॥ ९॥
सर्वजित् सर्वधारी च विरोधी विकृतः खरः।
नन्दनो विजयश्चैव जयो मन्मथदुर्मुखौ॥ १०॥
हेमलम्बो विलम्बश्च विकारी शार्वरीप्लवः।
शुभकृच्छोभनः क्रोधी विश्वावसुपराभवौ॥ ११॥
प्लवङ्गः कीलकः सौम्यः साधारणो विरोधकृत्।
परिधावी प्रमादी च आनन्दो राक्षसोऽनलः॥ १२॥
पिङ्गलः कालयुक्तश्च सिद्धार्थी रौद्रदुर्मतीः।
दुन्दुभी रुधिरोद्गारी रक्ताक्षी क्रोधनो क्षयः॥ १३॥
युगं स्यात्पञ्चभिर्वर्षैर्युगानि द्वादशैव ते।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. प्रभव, २. विभव, ३. शुक्ल, ४. प्रमोद, ५. प्रजापति, ६. अङ्गिरा, ७. श्रीमुख, ८. भाव, ९. युवा, १०. धाता, ११. ईश्वर, १२. बहुधान्य, १३. प्रमाथी, १४. विक्रम, १५. वृष, १६. चित्रभानु, १७. सुभानु, १८. तारण, १९. पार्थिव तथा २०. व्यय (ये ब्रह्मविंशति के बीस सम्वत्सर हैं) ॥ ८-९ ॥

२१. सर्वजित्, २२. सर्वधरी, २३. विरोधी, २४. विकृत, २५. खर, २६. नन्दन, २७. विजय, २८. जय, २९. मन्मथ, ३०. दुर्मुख, ३१. हेमलम्ब, ३२. विलम्ब, ३३. विकारी, ३४. शार्वरी, ३५. प्लव, ३६. शुभकृत्, ३७. शोभन, ३८. क्रोधी, ३९. विश्वावसु तथा ४०. पराभव (ये विष्णुविंशति के बीस सम्वत्सर हैं) ॥ १०-११ ॥

४१. प्लवङ्ग, ४२. कीलक, ४३. सौम्य, ४४. साधारण, ४५. विरोधकृत्, ४६. परिधावी, ४७. प्रमादी, ४८. आनन्द, ४९. राक्षस, ५०. अनल, ५१. पिङ्गल, ५२. कालयुक्त, ५३. सिद्धार्थी, ५४. रौद्र, ५५. दुर्मती, ५६. दुन्दुभि, ५७. रुधिरोद्गारी, ५८. रक्ताक्षी, ५९. क्रोधन तथा ६०. क्षय (ये रुद्रविंशति के बीस सम्वत्सर हैं) ॥ १२-१३ ॥

इन साठ वर्षों के चक्र में पाँच वर्षों का एक युग होता है, जिसमें पंचवर्षात्मक युग के बारह सम्वत्सर (५×१२=६०) होते हैं ॥ १३$\frac{१}{२}$ ॥

विमर्श—चीन के फलित ज्योतिष में भी साठ वर्षों का चक्र मान्य है, परन्तु वहाँ बारह वर्षों के पाँच युग होते हैं तथा ६१ वें वर्ष को विशेष नाम दिया जाता है। इस प्रकार भारत की इस व्यवस्था को प्राचीन चीन के मेदिनी ज्योतिष में भी अपनाया गया है।

साठ सम्वत्सरों के स्वामी, देवताओं के युग स्वामी तथा वर्षेश

तेषामीशाः क्रमाज्ज्ञेया विष्णुर्देवपुरोहितः ॥ १४ ॥
पुरन्दरो लोहितश्च त्वष्टाहिर्बुध्न्यसंज्ञकः।
पितरश्च ततो विश्वे शशीन्द्राग्नीभगोऽश्विनौ ॥ १५ ॥
युगस्य पञ्च वर्षेशा वह्नीनेन्द्वब्जजेश्वराः।
तेषां फलानि प्रोच्यन्ते वत्सराणां पृथक् पृथक् ॥ १६ ॥

ऊपर कहे गये बारह युगों के स्वामी देवता अर्थात् युगेशों के नाम इस प्रकार हैं—

१. विष्णु, २. बृहस्पति, ३. इन्द्र, ४. लोहित (मंगल), ५. त्वष्टा, ६. अहिर्बुध्न्य, ७. पितर, ८. विश्वेदेवा, ९. चन्द्र, १०. इन्द्राग्नि, ११. भग तथा १२. अश्विनीकुमार ॥ १४-१५ ॥

चूँकि प्रत्येक युग पंचवर्षात्मक होता है, अतः उसमें प्रत्येक वर्ष के स्वामी देवता अर्थात् वर्षेश क्रमशः १. अग्नि, २. सूर्य, ३. चन्द्रमा, ४. ब्रह्मा तथा ५. शिव होते हैं।

अब आगे के श्लोकों में विभवादि साठ सम्वत्सरों के अलग-अलग फलों को लिखा जा रहा है ॥ १६ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

साठ सम्वत्सरों के युगेश-वर्षेश तथा विंशतिका-स्वामी द्योतक चक्र

सम्वत्सर का नाम	द्वादशवर्षीय युग के स्वामी (युगेश)	युगान्तर्गत वर्ष के स्वामी (वर्षेश)	विंशतिका के स्वामी	सम्वत्सर का नाम	द्वादशवर्षीय युग के स्वामी (युगेश)	युगान्तर्गत वर्ष के स्वामी (वर्षेश)	विंशतिका के स्वामी
१. प्रभव	विष्णु	अग्नि	ब्रह्मविंशतिका (१–२०)	३१. हेमलम्बी	पितर	अग्नि	विष्णुविंशतिका (३१–४०)
२. विभव	विष्णु	सूर्य		३२. विलम्बी	पितर	सूर्य	
३. शुक्ल	विष्णु	चन्द्रमा		३३. विकारी	पितर	चन्द्र	
४. प्रमोद	विष्णु	ब्रह्मा		३४. शर्वरी	पितर	ब्रह्मा	
५. प्रजापति	विष्णु	शिव		३५. प्लव	पितर	शिव	
६. अङ्गिरा	बृहस्पति	अग्नि		३६. शुभकृत्	विश्वेदेवा	अग्नि	
७. श्रीमुख	बृहस्पति	सूर्य		३७. शोभन	विश्वेदेवा	सूर्य	
८. भाव	बृहस्पति	चन्द्र		३८. क्रोधी	विश्वेदेवा	चन्द्र	
९. युवा	बृहस्पति	ब्रह्मा		३९. विश्वावसु	विश्वेदेवा	ब्रह्मा	
१०. धाता	बृहस्पति	शिव		४०. पराभव	विश्वेदेवा	शिव	
११. ईश्वर	इन्द्र	अग्नि		४१. प्लवङ्ग	शशि	अग्नि	रुद्रविंशतिका (४१–६०)
१२. बहुधान्य	इन्द्र	सूर्य		४२. कीलक	शशि	सूर्य	
१३. प्रमाथी	इन्द्र	चन्द्र		४३. सौम्य	शशि	चन्द्र	
१४. विक्रम	इन्द्र	ब्रह्मा		४४. साधारण	शशि	ब्रह्मा	
१५. वृष	इन्द्र	शिव		४५. विरोधकृत्	शशि	शिव	
१६. चित्रभानु	भौम	अग्नि		४६. परिधावी	इन्द्राग्नि	अग्नि	
१७. सुभानु	भौम	सूर्य		४७. प्रमादी	इन्द्राग्नि	सूर्य	
१८. तारण	भौम	चन्द्र		४८. आनन्द	इन्द्राग्नि	चन्द्र	
१९. पार्थिव	भौम	ब्रह्मा		४९. राक्षस	इन्द्राग्नि	ब्रह्मा	
२०. व्यय	भौम	शिव		५०. अनल	इन्द्राग्नि	शिव	
२१. सर्वजित्	त्वष्टा	अग्नि	विष्णुविंशतिका (२१–३०)	५१. पिङ्गल	भग	अग्नि	
२२. सर्वधारी	त्वष्टा	सूर्य		५२. कालयुक्त	भग	चन्द्र	
२३. विरोधी	त्वष्टा	चन्द्र		५३. सिद्धार्थी	भग	सूर्य	
२४. विकृति	त्वष्टा	ब्रह्मा		५४. रौद्र	भग	ब्रह्मा	
२५. खर	त्वष्टा	शिव		५५. दुर्मति	भग	शिव	
२६. नन्दन	अहिर्बुध्न्य	अग्नि		५६. दुन्दुभि	अश्विनी कु०	अग्नि	
२७. विजय	अहिर्बुध्न्य	सूर्य		५७. रुधिरोद्गारी	अश्विनी कु०	सूर्य	
२८. जय	अहिर्बुध्न्य	चन्द्र		५८. रक्ताक्षी	अश्विनी कु०	चन्द्र	
२९. मन्मथ	अहिर्बुध्न्य	ब्रह्मा		५९. क्रोधन	अश्विनी कु०	ब्रह्मा	
३०. दुर्मुख	अहिर्बुध्न्य	शिव		६०. क्षय	अश्विनी कु०	शिव	

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. प्रभव सम्वत्सर का फल

क्वचिद् वृद्धिः क्वचिद् हानिः क्वचिद् भीतिः क्वचिद् गदः।
तथापि मोदते लोकः प्रभवाब्दे विमत्सरः॥ १७॥

प्रभव नामक सम्वत्सर में कहीं कृषि-उद्योग तथा स्वास्थ्य आदि की उन्नति होती है तथा कहीं इनकी हानि होती है, कहीं भय तथा कहीं रोग होता है। परन्तु सामान्य रूप से जनता आपस में सद्भाव के साथ प्रसन्न रहती है॥ १७॥

२. विभव सम्वत्सर का फल

आन्वीक्षिकीसु निरताः सप्रजाः स्युः क्षितीश्वराः।
कर्षकाभिमता वृष्टिर्विभवाब्दे विवैरिणः॥ १८॥

विभव नामक सम्वत्सर में जनता एवं शासक वर्ग राजनीति तथा विधि-व्यवस्था में अधिक रुचि लेते हैं। समाज में सौमनस्य रहता है तथा कृषि के योग्य वर्षा हो जाती है॥ १८॥

३. शुक्ल सम्वत्सर का फल

सकलत्रात्मजाच्छश्वल्लालयन्त्यबला जनाः।
अमरस्पर्द्धिनः शुक्ले वत्सरे विगतारयः॥ १९॥

शुक्ल नामक सम्वत्सर में लोगों के पारिवारिक एवं घरेलू जीवन के आनन्द में वृद्धि होती है। जनता देवताओं के समान आनन्दित होती है। शत्रुओं का अभाव हो जाता है॥ १९॥

४. प्रमोद सम्वत्सर का फल

अतिव्याध्यर्दिताः लोकाः क्षितीशाः कलहोत्सुकाः।
प्रमोदाब्दे प्रमोदन्ते तथापि निखिला जनाः॥ २०॥

यद्यपि प्रमोद वर्ष में लोग रोगों से परिश्रान्त रहते हैं तथा राष्ट्रों एवं राज्यों में कलह रहता है, परन्तु इतने पर भी सभी लोग प्रसन्न रहते हैं॥ २०॥

५. प्रजापति सम्वत्सर का फल

क्लेशः क्वचिन्न प्रेक्ष्यन्ते स्वजनानामनामयः।
एवं वै मोदते लोका प्रजापति शरद् युतः॥ २१॥

प्रजापति नामक सम्वत्सर में जनता को कोई कष्ट नहीं होता है। परिवारों में सौमनस्य रहता है तथा लोग आनन्दित होकर रहते हैं। कहीं भी क्लेश देखने में नहीं आता है॥ २१॥

६. अङ्गिरा सम्वत्सर का फल

अतिथिस्वजनैस्सार्धमन्नं वो भुज्यते मधु।
पेपीयन्ते कामिनीभिरङ्गिराऽब्दे निरन्तरम्॥ २२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जिस वर्ष अङ्गिरा नामक सम्वत्सर होता है, उस वर्ष लोग घरों में अतिथियों एवं रिश्तेदारों के साथ मधुर एवं पौष्टिक भोजन करते हैं। स्त्रियाँ भी अपने पतियों के साथ वर्षभर आनन्दपूर्वक दाम्पत्य-सुख भोगती हैं॥ २२॥

७. श्रीमुख सम्वत्सर का फल

श्रीमुखेऽब्दे दुग्धपूर्णा गोकर्णवलयेव भूः।
सस्यपीतावरावारि गावस्तुङ्गपयोधराः॥ २३॥

श्रीमुख नामक वर्ष में गायें एवं भैंसें खूब दूध देती हैं। गायों की संख्या बढ़ती है। कृषि योग्य वर्षा होने से अन्न का उत्पादन बढ़ता है तथा चारे की अधिकता एवं पौष्टिकता के कारण दूध की अधिकता होती है॥ २३॥

८. भाव सम्वत्सर का फल

स्युर्भूभुजो प्रभाभाजः प्रभञ्जनभुजः परे।
भावाब्दे भूसुरग्रामभ्रमणं लोभतः सदा॥ २४॥

'भाव' सम्वत्सर में राजनीतिज्ञों एवं शासकों का वर्चस्व बढ़ता है। राष्ट्र के शत्रुओं एवं आपराधिक तत्त्वों का दमन होता है। ब्राह्मणवर्ग धन के लोभ के लिये गाँवों एवं नगरों में अर्थार्जन हेतु भ्रमण करता है॥ २४॥

९. युवा सम्वत्सर का फल

सदाऽजस्त्रं रमयति युवाब्दे युवतीजनः।
युवानो निखिला लोकाः क्षितिश्चापि फलोत्कटा॥ २५॥

'युवा' नामक अब्द में युवती स्त्रियाँ कामभोगों में अधिक लीन रहती हैं। पुरुषों में यौवन का उन्माद प्रकट होता है तथा पृथ्वी पर फल एवं मेवा अधिकता से उत्पन्न होते हैं॥ २५॥

१०. धाता सम्वत्सर का फल

धात्री धात्रीवलोकानामभया च फलप्रदा।
धात्राब्दे धरणीनाथाः परस्परजयोत्सुकाः॥ २६॥

'धाता' नामक सम्वत्सर में पृथ्वी जनता को माता के समान सुख देती है। लोग भयमुक्त होकर रहते हैं। फल अधिक मात्रा में उपजते हैं तथा राजनीतिज्ञों एवं शासकवर्ग में परस्पर कलह होता है॥ २६॥

११. ईश्वर सम्वत्सर का फल

ईश्वराब्दे स्थिराः क्ष्मेशा जगदानन्दनी मही।
अध्वरे निरता विप्राः स्वस्वमार्गे रताः परे॥ २७॥

ईश्वर नामक अब्द में राजनैतिक स्थिरता रहती है। जनता प्रसन्न रहती है, ब्राह्मणजन यज्ञ-यागादि में निरत रहते हैं तथा शेष लोग भी अपने कार्यों को निष्ठापूर्वक करते रहते हैं॥ २७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१२. बहुधान्य सम्वत्सर का फल

बहुधान्ये च बहुभिर्धान्यैः पूर्णाखिला धरा।
प्रभूतपयसो गावो राजानः स्युर्विवैरिणः॥ २८॥

जिस वर्ष बहुधान्य नामक सम्वत्सर होता है, उस वर्ष खेतों में अन्न का उत्पादन प्रचुर मात्रा में होता है। गायें-भैंसें बहुत दूध देती हैं, जिससे दुग्धव्यवसायियों को भी लाभ होता है तथा शासकवर्ग में मतभेद नहीं रहते हैं॥ २८॥

१३. प्रमाथी सम्वत्सर का फल

बलाहका न मुञ्चन्ति कुत्रचित् प्रचुरं पयः।
प्रमाथ्यब्दे वीतरागास्तथापि निखिला जनाः॥ २९॥

प्रमाथी नामक वर्ष में कहीं पर मेघ नहीं बरसते हैं। तो कहीं-कहीं खूब वर्षा होती है। इतना होने से जनता में परस्पर वैर-विरोध होता रहता है॥ २९॥

१४. विक्रम सम्वत्सर का फल

प्रवहन्ति जलं स्वच्छं स्रवन्ति प्रचुरं पयः।
विक्रमाब्देऽखिलाः क्ष्मेशा विक्रमाक्रान्तभूमयः॥ ३०॥

विक्रम नामक अब्द में मेघ प्रचुर मात्रा में निर्मल जल की वर्षा करते हैं। राजनैतिक लोग तथा शासक वर्ग अपनी स्थिति सुदृढ़ करने का प्रयास करते हैं॥ ३०॥

१५. वृष सम्वत्सर का फल

विविधैरन्नपानाद्यैः हृष्टपुष्टाङ्गचेतसः।
मदोन्मत्ताऽखिला लोका वृषाब्दे वृषसन्निभाः॥ ३१॥

वृष नामक वर्ष में जनता पौष्टिक आहार-विहार से पुष्ट तथा बलशाली हो जाती है, लोग साँड़ों की भाँति मदोन्मत्त हो जाते हैं॥ ३१॥

१६. चित्रभानु सम्वत्सर का फल

विचित्रा वसुधा चित्रपुष्पवृष्टिफलादिभिः।
चित्रभानुशरद्येषा भाति चित्राङ्गना यथा॥ ३२॥

चित्रभानु नामक सम्वत्सर में पृथ्वी पर अनेक प्रजातियों के फल-फूल प्रचुरता के साथ उत्पन्न होते हैं। पृथ्वी सुन्दरी स्त्री की भाँति सुशोभित होती है॥ ३२॥

१७. सुभानु सम्वत्सर का फल

नन्दन्तीह जनाः सर्वे भूमिर्भूरिफलान्विता।
सुभानुवत्सरे भूमिर्भीमभूपालविग्रहा॥ ३३॥

सुभानु नामक सम्वत्सर में जनता प्रसन्न रहती है, भूमि पर फलों का उत्पादन अधिक होता है तथा राजनेताओं एवं शासकवर्ग में विग्रह होता है॥ ३३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१८. तारण सम्वत्सर का फल

प्रतरन्त्युडुपोपायैः सरितोऽर्थाय सन्ततम्।
तारणाब्दे त्वतुलिता अर्थवन्तो हि जन्तवः॥ ३४॥

तारण नामक वर्ष में जलमार्ग से आवागमन तथा यातायात अधिक होता है तथा जनता आर्थिक दृष्टि से समृद्ध होती है॥ ३४॥

१९. पार्थिव सम्वत्सर का फल

पतन्ति करकोपेताः पयोधारा निरन्तरम्।
पापादपेत मनसः पार्थिवाब्दे तु पार्थिवाः॥ ३५॥

पार्थिव सम्वत्सर में ओलों के साथ निरन्तर वर्षा होती है। शासकवर्ग भ्रष्टाचार तथा अन्याय से बचने का प्रयास करता है और अच्छा प्रशासन देने के लिये तत्पर रहता है॥ ३५॥

२०. व्यय सम्वत्सर का फल

दीप्यते वसुधा वीरभटवारणवाजिभिः।
व्यपेतव्याधयः सर्वे व्ययाब्दे तु व्ययान्विताः॥ ३६॥

व्यय नामक वर्ष में जनता में साहस का संचार होता है। केन्द्र एवं राज्यों के प्रतिरक्षा-आन्तरिक सुरक्षा-पुलिस-होमगार्ड आदि में संख्या एवं बजट की वृद्धि होती है। स्वास्थ्य विभाग की योजनाओं के कारण संक्रामक रोगों का प्रकोप नहीं होता है तथा शासकीय एवं निजी क्षेत्र के बजट में वृद्धि होती है॥ ३६॥

२१. सर्वजित् सम्वत्सर का फल

गीर्वाणपूर्वगीर्वाणान् गर्वनिर्भरचेतसः।
सर्वजिद्वत्सरे सर्व उर्वीशान् हन्ति भूमिपान्॥ ३७॥

जिस वर्ष सर्वजित् नामक सम्वत्सर होता है, उस वर्ष देवता लोगों (गीर्वाण) तथा पूर्वगीर्वाण (दैत्य लोगों) एवं मनुष्य राजाओं में संघर्ष होता है॥ ३७॥

२२. सर्वधारी सम्वत्सर का फल

सर्वधारीवत्सरेऽस्मिन् जगदानन्दिनी धरा।
प्रशान्तवैरा राजानः प्रजापालनतत्पराः॥ ३८॥

सर्वधारी नामक सम्वत्सर में भूमण्डल पर सर्वत्र आनन्द-मंगल रहता है। राजाओं (राजनेताओं एवं शासकों) में आपस में सौमनस्य रहता है तथा वे प्रजापालन (लोक-कल्याणकारी योजनाओं के क्रियान्वयन) में संलग्न रहते हैं॥ ३८॥

२३. विरोधी सम्वत्सर का फल

विरोधं सततं कुर्वन्त्यन्योऽन्यं क्षितिपाः प्रजाः।
विरोधिवत्सरे भूमिर्भूरिवारिधरैर्वृताः॥ ३९॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विरोधी नामक सम्वत्सर में शासक एवं शासितों में परस्पर विरोध होता है (अर्थात् हड़ताल, आन्दोलन, सत्याग्रह, धरना आदि होते हैं तथा उनका क्रूरता-पूर्वक दमन होता है)। इस वर्ष पृथ्वी पर बादल खूब घुमड़ते हैं (तथा वृष्टि भी होती है)॥ ३९॥

२४. विकृति सम्वत्सर का फल

विकृतिः प्रकृतिं यान्ति प्रकृतिं विकृतिं तथा।
तथापि मोदते लोकस्तस्मिन् विकृतवत्सरे॥ ४०॥

विकृत् (विकृति) नामक सम्वत्सर में विकृति (समाज एवं राष्ट्रविरोधी लोग) जन सम्मानित होते हैं। तथा प्रकृतिजन (राष्ट्रभक्त एवं सज्जन) अपमानित होते हैं। साधारण लोग प्रसन्न रहते हैं। (खाद्य पदार्थ अचार, मुरब्बे, तुलसी वृक्ष आदि में कीड़े पड़ जाते हैं)॥ ४०॥

२५. खर सम्वत्सर का फल

खराब्दे सततं सम्यग्बध्यन्ते पशवः प्रजाः।
राजानो विलयं यान्ति परस्परविरोधतः॥ ४१॥

खर नामक वर्ष में जनता एवं पशु-पक्षियों आदि का विपुल संहार होता है तथा राजा लोग (राजनेता) परस्पर उलझकर नष्ट होते हैं॥ ४१॥

२६. नन्दन सम्वत्सर का फल

आनन्ददा धराजस्त्रं प्रजाभ्यः फलसञ्चयैः।
नन्दनाब्दे स्वहानिः स्यात्कोशधान्यविनाशकृत्॥ ४२॥

नन्दन नामक वत्सर में पृथ्वी पर निरन्तर आनन्द बना रहता है। फल आदि पदार्थों के संचय से प्रजा सुखी रहती है, परन्तु स्वर्ण-रजत एवं कोश (जमा धन) की हानि होती है॥ ४२॥

२७. विजय सम्वत्सर का फल

नश्यते वारिधाराभिः पूर्वकृष्यखिलं फलम्।
राजभिश्चापरं सर्वं विजयाब्दे जयेप्सुभिः॥ ४३॥

विजयाब्द में अतिवृष्टि के कारण खरीफ फसल नष्ट होती है तथा दूसरी फसल राजा आदि के आक्रमण (अथवा अन्य कारणों से) नष्ट हो जाती है॥ ४३॥

२८. जय सम्वत्सर का फल

शैलोद्यानवनाराम फलैरतुलिता मही।
जेगीयते वेणुनादैर्जयाब्दे च महाजलम्॥ ४४॥

जय नामक वत्सर में पर्वत, उद्यान, वन, उपवन आदि फल-पुष्पादि से लदे रहते हैं। जनता में चैन की वंशी बजती है तथा प्रचुर वर्षा होती है॥ ४४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

२९. मन्मथ सम्वत्सर का फल

मन्मथाब्देऽखिला लोकास्तत्केलिपरलोलुपाः।
शालीक्षुयवगोधूमैर्नयनाभिनवा धरा॥ ४५॥

मन्मथाब्द में सभी लोग कामुक चेष्टाओं एवं मनोरंजन में लगे रहते हैं तथा पराये धन–दारादि के प्रति लोलुप रहते हैं। धान, ईख, जौ, गेहूँ आदि से पृथ्वी सुशोभित रहती है॥ ४५॥

३०. दुर्मुख सम्वत्सर का फल

दुर्मुखाब्देऽग्नि रोगाः स्युः प्रचुरान्नं तथा पयः।
राजानः सप्रजास्तुष्टा निःस्वाश्च द्विजसत्तमा॥ ४६॥

दुर्मुख सम्वत्सर में अग्निभय, रोग आदि का प्रकोप रहता है, परन्तु अन्नपान एवं दूध की अधिकता से जनता प्रसन्न तथा ब्राह्मण लोग धनहीन रहते हैं॥ ४६॥

३१. हेमलम्ब सम्वत्सर का फल

हेमलम्बे नृपाः सर्वे परस्परविरोधिनः।
प्रजापीडात्वनर्घत्वं तथापि सुखिनो जनाः॥ ४७॥

हेमलम्ब नामक सम्वत्सर में राजनेताओं में परस्पर विरोध रहता है। यद्यपि अन्नादि की महँगाई से जनता में कुछ असन्तोष रहता है, परन्तु फिर भी सुख–शान्ति वनी रहती है॥ ४७॥

३२. विलम्ब सम्वत्सर का फल

विलम्बवत्सरे राजविग्रहो भूरिवृष्टयः।
आतङ्कपीडिता लोकाः प्रभूतं चापरं फलम्॥ ४८॥

विलम्ब वत्सर में राजविग्रह, अतिवृष्टि तथा आतङ्क आदि से जनता पीड़ित रहती है। इसी प्रकार की अन्य समस्याओं से भी प्रजा पीड़ित रहती है॥ ४८॥

३३. विकारी सम्वत्सर का फल

विकारिणो विकार्यब्दे पित्तरोगादिभिर्नराः।
मेघो वर्षति सम्पूर्णं समुद्रवसनक्षितौ॥ ४९॥

'विकारी' नामक वत्सर में जनता में पित्तजन्य रोगों का प्रकोप रहता है। समुद्र सहित सम्पूर्ण पृथ्वी पर उत्तम वर्षा होती है॥ ४९॥

३४. शार्वरी सम्वत्सर का फल

शार्वरी वत्सरे सर्वसस्यवृद्धिरनुत्तमा।
चलिताचलसंकाशैः पयोदैरावृतं नभः॥ ५०॥

'शार्वरी' नामक सम्वत्सर में सभी प्रकार की फसल अनुपम प्रकार से उत्पन्न होती है तथा पर्वतों–जैसे मेघ आकाश को सुशोभित करते हैं॥ ५०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

३५. प्लव सम्वत्सर का फल

दीप्यन्ते सततं भूपाः प्लवाब्दे प्लवगाः जनाः।
राजते पृथिवी सर्वा सततं विविधोत्सवैः॥५१॥

प्लव नामक वर्ष में राजा लोग तथा प्रजा दोनों ही प्रसन्न रहते हैं, परन्तु बाढ़ के कारण लोगों को नौकाओं का उपयोग अधिक करना पड़ता है। पृथ्वी पर अनेक प्रकार के उत्सवों की धूम रहती है॥५१॥

३६. शुभकृत् सम्वत्सर का फल

शुभकृद्वत्सरे सर्वसस्यानामतिवृद्धयः।
नृपाणां स्नेहमन्योऽन्यं प्रजानाञ्च परस्परम्॥५२॥

शुभकृत् नामक वत्सर में सभी प्रकार के खाद्यान्नों की अच्छी पैदावार होती है। राजनेताओं एवं जनता में परस्पर सौहार्द्र रहता है॥५२॥

३७. शोभन सम्वत्सर का फल

शोभनाख्ये हायने तु शोभनं भूरिवर्त्तते।
नृपाश्चैवात्र निर्वैराः सर्वसम्पद्युता धरा॥५३॥

शोभन नामक वर्ष में सभी प्रकार की शुभता रहती है। राजनेताओं में सौहार्द्र रहता है तथा पृथ्वी सर्वसम्पत्ति से युक्त रहती है॥५३॥

३८. क्रोधी सम्वत्सर का फल

क्रोध्यब्दे सततं रोगाः सर्वसस्य समृद्धयः।
दम्पत्योर्वैरमन्योऽन्यं प्रजानाञ्च परस्परम्॥५४॥

क्रोधी नामक वत्सर में जनता में रोग फैलते हैं। सभी प्रकार के अनाज खूब उत्पन्न होते हैं। पति-पत्नी तथा जनता में परस्पर अनबन तथा वैर-भाव बढ़ता है॥५४॥

३९. विश्वावसु सम्वत्सर का फल

शश्वद् विश्वावसावब्दे मध्यसस्यार्धवृष्टयः।
प्रचुराश्चौररोगाश्च नृपा लोभाभिभूतयः॥५५॥

विश्वावसु नामक सम्वत्सर में खेती की उपज मध्यम रहती है, वर्षा भी मध्यम होती है तथा जीवनोपयोगी वस्तुओं के भाव महँगे रहते हैं। चौरभय तथा रोगभय के साथ जनता पर करों का बोझ बढ़ता है॥५५॥

४०. पराभव सम्वत्सर का फल

पराभवाब्दे राजानः प्राप्नुवन्ति पराभवम्।
आमयः क्षुद्रधान्यानि प्रभूतानि सुवृष्टयः॥५६॥

पराभव नामक सम्वत्सर में राजा लोगों (राजनेताओं) का पराभव होता है। रोग फैलते हैं तथा मोटे अनाजों की पैदावार अच्छी होती है। वर्षा भी अच्छी होती है॥५६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

४१. प्लवङ्ग सम्वत्सर का फल

प्लवङ्गाब्दे सस्यहानिः चौररोगार्दिता जनाः।
मध्यवृष्टिः क्षितीशानां विरोधश्च परस्परम्॥ ५७॥

प्लवङ्ग नामक सम्वत्सर में फसलों की हानि होती है तथा जनता में चोर एवं रोगों से पीड़ा होती है। वर्षा मध्यम होती है तथा जनता में द्वेष उत्पन्न होता है॥ ५७॥

४२. कीलक सम्वत्सर का फल

प्रचुराः पित्तरोगास्युर्मध्या वृष्टिरहेर्भयम्।
कीलकाब्दे त्वीतिभयं प्रजाक्षोभः परस्परम्॥ ५८॥

कीलक नामक वर्ष में पित्तजन्य रोगों की अधिकता रहती है तथा वर्षा मध्यम होती है। सात प्रकार की ईतियों का भय होता है तथा जनता में विग्रह उत्पन्न होता है॥ ५८॥

४३. सौम्य सम्वत्सर का फल

प्रचुरा शैत्यरोगाः स्युर्मध्या वृष्टिरहेर्भयम्।
सौम्याब्दे चैव सततं शान्तवैरा क्षितीश्वराः॥ ५९॥

सौम्य नामक वर्ष में शीतजन्य रोग (कफरोग) अधिक होते हैं। वर्षा मध्यम होती है तथा राजनयिकों में मैत्रीभाव रहता है। सर्पादि जीवों का भय रहता है॥ ५९॥

४४. साधारण वत्सर का फल

साधारणेऽब्दे राजानः सुखिनो गतमत्सराः।
प्रजाश्च पशवः सर्वे वृष्टिः कर्षकसम्मता॥ ६०॥

साधारण नामक सम्वत्सर में शासकवर्ग सुखी रहता है तथा सावधानी से अपना कर्त्तव्यपालन करता है। जनता भी अपने कर्त्तव्यपालन में तत्पर रहती है। खेती एवं पशुपालन के लिये उचित वर्षा होती है॥ ६०॥

४५. विरोधकृत् सम्वत्सर का फल

विरोधकृद् वत्सरे तु परस्परविरोधिनः।
राजानो मध्यमा वृष्टिः प्रजा स्वस्था निरन्तरम्॥ ६१॥

विरोधकृत् नामक सम्वत्सर में शासकवर्ग में परस्पर द्वेष रहता है। उस वर्ष वर्षा मध्यम होती है तथा जनता सुखी एवं स्वस्थ रहती है॥ ६१॥

४६. परिधावी सम्वत्सर का फल

अनर्घ्यामयरोगेभ्यो भीतिरीतिनिरन्तरम्।
परिधावीवत्सरे तु नृणां वृष्टिस्तु मध्यमा॥ ६२॥

परिधावी नामक वर्ष में महँगाई, रोग, तथा सप्त ईतियों (अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूषक, शलभ, शुक, स्वचक्र तथा परचक्र) से प्रजा भयग्रस्त एवं त्रस्त रहती है। वर्षा मध्यम होती है॥ ६२॥

विमर्श—'परिधावी' का अर्थ होता है व्यर्थ की भाग-दौड़, इस संवत्सर में लोगों में भगदड़-सी मची रहती है तथा बेचैनी एवं व्यग्रता रहती है। जैसा कि श्री मेघविजय गणि ने कहा है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'भूपाहवो महारोगो मध्य सस्यार्घवृष्टयः।
दुःखिनो जन्तवः सर्वे वत्सरे परिधाविने॥' (वर्षप्रबोध)

४७. प्रमादी सम्वत्सर का फल

नृपसंक्षोभमत्युग्रं प्रजापीडा त्वनर्घता।
तथापि दुःखमाप्नोति प्रमादीवत्सरे जनाः॥ ६३॥

प्रमादी (प्रमाथी) नामक सम्वत्सर में राजा लोगों में अत्यन्त उग्रक्षोभ उत्पन्न होता है तथा महर्घता (महँगाई) से जनता त्रस्त रहती है। सभी लोग दुःखी रहते हैं॥ ६३॥

विमर्श—इस सम्वत्सर को मेघविजयगणि ने 'प्रमाथी' नाम दिया है और लिखा है—

'प्रमाथीवत्सरे तत्र मध्यसस्यार्घवृष्टयः।
प्रजा कथंचिद् जीवन्ति समात्सर्या क्षितीश्वराः॥'

—वर्षप्रबोध १। १। ६०

४८. आनन्द सम्वत्सर का फल

आनन्दवत्सरे सर्वे जन्तवः पशवस्सदा।
आनन्दयन्ति चान्योऽन्यमन्यथा तु क्वचित् क्वचित्॥ ६४॥

आनन्द नामक सम्वत्सर में सभी जन्तु (मनुष्य, पशु-पक्षी आदि) आनन्दित रहते हैं। थोड़ा-बहुत दुःख भी रहता है॥ ६४॥

४९. राक्षस सम्वत्सर का फल

प्रजायां मध्यमसुखं तदधीशाहवोन्वहम्।
निष्क्रिया राक्षसाब्दे तु राक्षसा इव जन्तवः॥ ६५॥

राक्षस नामक सम्वत्सर में प्रजा में मध्यम सुख रहता है। उसके नेता लोग आपस में झगड़ते रहते हैं। प्राणियों का आचरण राक्षसों-जैसा रहता है॥ ६५॥

विमर्श—राक्षसों का कार्य दूसरों के माल को हड़पकर मौज-मस्ती करना होता है। जनता में यही प्रवृत्ति पनपती है।

'स्वस्वकार्ये रताः सर्वे मध्यसस्यार्घवृष्टयः।
राक्षसाब्देऽखिला लोका राक्षसा इव निष्क्रियः॥'

—(वर्षप्रबोध १। १। ६२)

५०. अनल सम्वत्सर का फल

अनलाब्देऽनलभयं मध्यवृष्टिरनर्घता।
नृपाः संक्षोभसम्भूता भूरिभीकरभूमिपाः॥ ६६॥

अनल वत्सर में अग्निकाण्ड की घटनाएँ होती हैं। वर्षा मध्यम होती है तथा महँगाई बढ़ती है। राजाओं में संक्षोभ रहता है तथा उनमें (राजनेताओं में) भयंकर विरोध रहता है॥ ६६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

५१. पिङ्गल सम्वत्सर का फल

पिङ्गलाब्दे तु सततं दिक्पूरितघनस्वनम्।
राजानः स्वभुजाक्रान्ता भुञ्जते क्ष्मामनुत्तमाम्॥ ६७॥

पिङ्गल नामक सम्वत्सर में सब दिशाओं में मेघ की गर्जना एवं वृष्टि होती रहती है। राजनेताओं की स्थिति सुदृढ़ रहती है॥ ६७॥

५२. कालयुक्त सम्वत्सर का फल

अतिवृष्टिः कालयुक्ते वत्सरे सुखिनो जनाः।
सततं सर्वसस्यानि सम्पूर्णाश्च तथा द्रुमाः॥ ६८॥

कालयुक्त नामक सम्वत्सर में वर्षा अधिक होती है तथा लोग सुखी रहते हैं। सभी प्रकार की फसल उत्पन्न होती है, अनेक प्रकार के वृक्ष भी खूब बढ़ते तथा फलते-फूलते हैं॥ ६८॥

५३. सिद्धार्थी सम्वत्सर का फल

सिद्धार्थीवत्सरे भूपाश्चान्योऽन्यं स्नेहकांक्षिणः।
सम्पूर्णसस्यां वसुधां दुदुहुर्गां यथा तथा॥ ६९॥

सिद्धार्थी नामक वर्ष में अन्तरराज्यीय (Inter state) तथा अन्तरराष्ट्रीय (International) सम्बन्धों में सौमनस्य रहता है। पृथ्वी पर सभी प्रकार के खाद्य पदार्थों की उत्पत्ति होती है। विकास के लिये संसाधनों की वृद्धि होती है। विश्व में अनेक प्रकार की वैज्ञानिक प्रगति होती है॥ ६९॥

५४. रौद्र सम्वत्सर का फल

अन्योऽन्यं नृपसंक्षोभं चौरव्याघ्रादिभिर्भयम्।
मध्यवृष्टिरनर्घत्वं रौद्राब्दे नैव गुर्जरे॥ ७०॥

रौद्र नामक सम्वत्सर में राजनैतिक तनाव बढ़ता है, चोर, डाकू तथा आतङ्कियों का भय उत्पन्न होता है। वर्षा सम होती है तथा महँगाई बढ़ती है, परन्तु गुजरात में शान्ति एवं सुख-चैन रहता है॥ ७०॥

५५. दुर्मति सम्वत्सर का फल

दुर्मत्यब्दे दुर्मतयो भवन्त्यखिलभूमिपाः।
तथापि सुखिनो लोकाः संग्रामे निर्जितारयः॥ ७१॥

दुर्मति नामक सम्वत्सर वर्ष में राजनेताओं की बुद्धि विकृत हो जाती है, परन्तु इतने पर भी जनता सुखी रहती है तथा देश (भारत) की सेना एवं पुलिस देशभक्ति एवं वीरतापूर्वक देश के शत्रुओं का नाश करती है॥ ७१॥

५६. दुन्दुभि सम्वत्सर का फल

सर्वसस्यैश्च सम्पूर्णा धात्री दुन्दुभिवत्सरे।
राजभिः पाल्यते पूर्वदेशेश्वरविनाशनम्॥ ७२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दुन्दुभि नामक सम्वत्सर में पृथ्वी सभी धान्यों से परिपूर्ण होती है। शासन-व्यवस्था चाक-चौबन्द रहती है, परन्तु पूर्वदेश (म्यामार, थाईदेश, इण्डोनेशिया) आदि में शासन पलट जाता है॥ ७२॥

५७. रुधिरोद्गारी सम्वत्सर का फल

आहवे निहताः सर्वे भूपा रोगैस्तथा जनाः।
तथापि तत्र जीवन्ति रुधिरोद्गारि वत्सरे॥ ७३॥

रुधिरोद्गारी नामक सम्वत्सर में राजनेता परस्पर लड़-झगड़कर नष्ट होते हैं, तथा उनके स्थान पर नवीन नेतृत्व आता है। जनता में महामारी आदि के कारण हानि होती है तथा येनकेन प्रकारेण कुशल-क्षेम की प्राप्ति रहती है॥ ७३॥

५८. रक्ताक्षि सम्वत्सर का फल

रक्ताक्षिवत्सरे सस्यवृद्धिर्वृष्टिरनुत्तमा।
प्रेक्षन्ते सर्वदाऽन्योऽन्यं राजानो रक्तलोचनाः॥ ७४॥

रक्ताक्षि नामक वर्ष में कृषि-उत्पादन खूब होता है, अति उत्तम वर्षा होती है। अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों में बिगाड़ आता है, एक राष्ट्र दूसरे को सन्देह एवं शत्रुता की दृष्टि से देखता है॥ ७४॥

५९. क्रोधन सम्वत्सर का फल

क्रोधनाब्दे मध्यवृष्टिः पूर्वसस्यं न तु क्वचित्।
सम्पूर्णमितरत्सस्यं सर्वे क्रोधपरा जनाः॥ ७५॥

क्रोधन नामक सम्वत्सर में वर्षा सम होती है, पहली फसल नहीं होती। परन्तु दूसरी फसल बढ़िया होती है, जनता में क्रोध बढ़ता है॥ ७५॥

६०. क्षय सम्वत्सर का फल

कार्पासगुडतैलेक्षुमधुसस्यविनाशनम्।
क्षीयमाणश्चापि नराः जीवन्ति क्षयवत्सरे॥ ७६॥

क्षय सम्वत्सर में कपास, ईख, गुड़ (शक्कर भी) मधु आदि को प्रदान करनेवाली फसल का नाश होता है। मनुष्य शरीर से दुर्बल हो जाते हैं, परन्तु जीवित बने रहते हैं॥ ७६॥

सम्वत्सर के वर्ष में फलविचार की विधि

आद्यब्देशचमूनाथ सस्यपाणां बलाबलम्।
तत्कालग्रहचारं च सम्यग् ज्ञात्वा फलं वदेत्॥ ७७॥

वर्ष भर के फलाफल के विचार के लिये सर्वप्रथम—१. वर्ष के राजा के अनुसार फलाफल विचार करें। २. फिर वर्ष के सेनापति के अनुसार फल का विचार करें। ३. फिर सस्यपति के अनुसार फल देखें तथा सबसे अन्त में ४. वर्ष भर में गोचर

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

में ग्रहों का जो संचार होता है, उसके अनुसार फल कहना चाहिये। प्रथम तीन प्रकार के ग्रहों में जो सर्वाधिक बली हो, उसका फल अधिक होता है॥ ७७॥

अयनों का कथन

सौम्यायनं मासषट्कं मृगाद्यं भानुभुक्तितः।
अहः सुराणां तद्रात्रिः कर्काद्यं दक्षिणायनम्॥ ७८॥

१. मकरादि छह राशियों (मकर, कुम्भ, मीन, मेष, वृष तथा मिथुन) पर जब तक सूर्य रहता है तब तक उत्तरायण होता है, यह छह सौर मास का समय देवताओं का दिन कहलाता है।

२. जब तक सूर्य कर्कादि छह राशियों (कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक तथा धनु) पर रहता है। तब तक दक्षिणायन कहलाता है। इसे देवताओं की रात्रि कहते हैं (इस प्रकार एक सौर वर्ष के बराबर देवताओं का एक अहोरात्र होता है, इसे ही दिव्य दिन कहते हैं)॥ ७८॥

विमर्श—यह अयन सायन तथा निरयण भेद से दो प्रकार का होता है। ऋतुओं का विचार सायन से तथा विवाहादि फल का विचार निरयण सूर्य के अनुसार किया जाता है।

उत्तरायणादि में करणीय कर्म

गृहप्रवेशवैवाह प्रतिष्ठा मौञ्जिबन्धनम्।
यज्ञादिमङ्गलं कर्म कर्त्तव्यं चोत्तरायणे।
याम्यायनेऽशुभं कर्म मासप्राधान्यमेव च॥ ७९॥

जब सूर्य निरयण उत्तरायण हो, तब गृह-प्रवेश, विवाह, प्रतिष्ठा, मौञ्जीबन्धन (यज्ञोपवीत भी), यज्ञादि मंगल कार्य करना चाहिये। दक्षिणायन में अशुभ कर्म सामान्यतः करना चाहिये। इसके अतिरिक्त अपवाद स्वरूप जिस मास में जो कर्म लिखा हो, उसे करें॥ ७९॥

अयनों के अनुसार ऋतुओं का कथन

क्रमाच्छिशिरवासन्तग्रीष्मास्युश्चोत्तरायणे।
वर्षाशरच्च हेमन्त ऋतवो दक्षिणायने॥ ८०॥

१. जब तक सूर्य उत्तरायण में रहता है, तब तक शिशिर, वसन्त तथा ग्रीष्म—ये तीन ऋतुएँ होती हैं।

२. जब तक सूर्य दक्षिणायन में रहता है, तब तक वर्षा, शरद् तथा हेमन्त—ये तीन ऋतुएँ होती हैं॥ ८०॥

ऋतुओं के मासों का कथन तथा मासों के भेद

माघादिमासौ द्वौ द्वौ च ऋतवः शिशिरादयः।
चान्द्रो दर्शावधिः सौरः सङ्क्रान्त्या सावनो दिनैः॥ ८१॥
त्रिंशद्भिश्चन्द्रभगणो मासो नाक्षत्रसंज्ञकः।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. माघ-फाल्गुन—इन दो मासों की शिशिर ऋतु होती है। चैत्र तथा वैशाख मासों में वसन्त ऋतु होती है। ज्येष्ठ तथा आषाढ़ इन सायन सौर मासों में ग्रीष्म ऋतु होती है। श्रावण तथा भाद्रपद में वर्षाऋतु होती है। आश्विन तथा कार्तिक में शरद् ऋतु होती है। मार्गशीर्ष (अग्रहायण) तथा पौष मास में हेमन्त ऋतु होती है।

२. चान्द्रमास—शुक्ल प्रतिपदा से अमावास्या पर्यन्त की अवधि का चान्द्रमास होता है (ज्योतिष की गणना इसी के अनुसार होती है, अतः इसे मुख्यमान का चान्द्रमास अथवा अमान्त मास कहते हैं। दक्षिण भारत तथा बंगाल आदि में इसी प्रकार के चान्द्रमास का प्रचलन है; परन्तु हिन्दीभाषी क्षेत्र में पौर्णिमान्त मास का प्रचलन है। यह गौण चान्द्रमास कहलाता है)।

३. सौरमास—जब तक सूर्य एक राशि में रहता है तब तक की अवधि सौरमास कहलाती है। यह संक्रान्तियों से चलता है॥ ८१॥

४. सावनमास—इसमें तिथियों की घट-बढ़ नहीं होती है तथा यह किसी भी दिन से लेकर तीस दिनों का होता है।

५. नाक्षत्रमास—जितने समय में चन्द्रमा अभिजित् सहित २८ नक्षत्रों अथवा मेषादि द्वादश राशियों में भ्रमण करता है, उतनी अवधि का नाक्षत्रमास होता है॥ ८१$\frac{१}{२}$ ॥

अमान्तमासों के वैदिक नाम

मधुश्च माधवः शुक्रः शुचिश्चापि नभाह्वयः॥ ८२॥
नभस्य इष ऊर्जश्च सहाख्यश्च सहस्यकः।
तपस्तपस्यः क्रमशश्चैत्रादीनां तु संज्ञकाः॥ ८३॥

ऊपर वर्णित अमान्त मासों के चैत्रादि क्रम से १. मधु, २. माधव, ३. शुक्र, ४. शुचि, ५. नभ, ६. नभस्य, ७. इष, ८. ऊर्ज, ९. सह, १०. सहस्य, ११. तप तथा १२. तपस्य—ये बारह (वैदिक) नाम होते हैं॥ ८२-८३॥

नक्षत्रों के अनुसार पौर्णिमान्तमासों के नाम

यस्मिन् मासे पौर्णमासी येन धिष्ण्येन संयुता।
तन्नक्षत्राह्वयो मासः पौर्णमासी तथाह्वया॥ ८४॥

जिस मास में पूर्णिमा जिस नक्षत्र से संयुक्त होती है, उसके अनुसार (पौर्णिमान्त) मासों का नामकरण किया गया है। जैसे—१. चित्रा=चैत्र, २. विशाखा=वैशाख, ३. ज्येष्ठा=ज्येष्ठ, ४. आषाढ़ा=आषाढ़, ५. श्रवण=श्रावण, ६. भाद्रपदा=भाद्रपद, ७. अश्विनी=आश्विन, ८. कृत्तिका=कार्तिक, ९. मृगशिरा=मार्गशीर्ष (अग्रहायण), १०. पुष्य=पौष, ११. मघा=माघ तथा १२. फाल्गुनी=फाल्गुन॥ ८४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—वेदों में इन पूर्ववर्णित अमान्तमासों को मधु-माधव आदि नाम दिया गया था। वृहद् दैवज्ञरंजन में १८वें प्रकरण के ८वें श्लोक में चान्द्रमास के चार भेद बताये गये हैं—

'दर्शान्ते वैदिको मासो राकान्तः स्मार्त उच्यते।
पौराणो हरिघस्रान्तः श्रौत उत्पत्तिपूर्वकः॥'

अर्थात् अमावस्या पर समाप्त होनेवाला मास १. वैदिकमास कहलाता है। पूर्णिमा पर जिस चान्द्रमास की समाप्ति होती है वह २. स्मार्त चान्द्रमास कहा जाता है। जिस मास की समाप्ति (शुक्लपक्ष की) एकादशी पर होती है वह ३. पौराणिक चान्द्रमास होता है तथा जो मास शुक्लपक्ष के प्रथम चन्द्र-दर्शन (चन्द्रमा की उत्पत्ति) से प्रारम्भ होकर अगले मासके नवीन चन्द्र-दर्शन के पूर्व समाप्त होता है, वह ४. श्रौत चान्द्रमास कहलाता है। यह चौथे प्रकार का चान्द्रमास मुसलमानों में प्रचलित है। लगभग चौदह सौ वर्ष पूर्व अरब में भी भारतीय पद्धति का पंचांग प्रचलित था और उनके महीने ऋतुओं के साथ सम्बद्ध रहते थे। इसके प्रमाण 'कुरआन शरीफ' में मिलते हैं। तब उनका मधुरम् (महुरम्=मुहर्रम्=मधुमास) सदैव चैत्र के महीने में ही होता था तथा हज का महीना सदैव फाल्गुन मास (शिवरात्रि के अवसर पर) होता था। तब चान्द्रमासों और सौरमासों से समन्वय के लिये अधिक मास=मलमास की व्यवस्था थी। अरबी भाषा में मलमास को कुविश्वः (कबीसा) कहते थे। 'कुविश्वसः' संस्कृत शब्द है जिसका अर्थ है कु=बुरा+विश्वः=तेरह की संख्या। अर्थात् जब तेरहवाँ महीना चान्द्र वर्ष में आता है तब उसे कुविश्वः अथवा कुविश्व मास कहते हैं। जो अर्थ कुविश्वः का है वह अर्थ 'मलमास' या 'मलिम्लुच' का भी होता है। उस कुविश्वः का अपभ्रंश अरबी भाषा में 'कबीसा' हो गया।

अयन ऋतु तथा मासादि का चक्र

उत्तरायण			दक्षिणायन			अयन
शिशिर	वसन्त	ग्रीष्म	वर्षा	शरद	हेमन्त	ऋतुएँ
माघ फाल्गुन	चैत्र वैशाख	ज्येष्ठ आषाढ़	श्रावण भाद्रपद	आश्विन कार्तिक	मार्गशीर्ष (अग्रहायण) पौष	ऋतु के मास (सौर)
मकर कुम्भ	मीन मेष	वृष मिथुन	कर्क सिंह	कन्या तुला	वृश्चिक धनु	ऋतु की सूर्य संक्रान्ति
तप तपस्य	मधु माधव	शुक्र शुचि	नभ नभस्य	इष ऊर्ज	सह सहस्य	वैदिक मास
भुवनस्यपति अधिपति	वाज प्रसव	अपिज क्रतु	वसु अहर्पति	मुग्ध वैनशिन	आन्त्य भौवन	यजुर्वेद (१८।२८) के अनुसार मास

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चान्द्रमास के पक्षों का कथन

तत्पक्षौ दैवपैत्राख्यौ शुक्लकृष्णौ च तावुभौ।
शुभाशुभे कर्मणि च प्रशस्तौ भवतः सदा॥ ८५॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां सम्वत्सराध्यायः तृतीयः॥ ३॥

प्रत्येक चान्द्रमास के दो पक्ष होते हैं, जिनमें शुक्लपक्ष को देवपक्ष तथा कृष्णपक्ष को पैत्रपक्ष कहते हैं। शुक्लपक्ष में शुभ कार्य तथा कृष्णपक्ष में अशुभ कार्य प्रशस्त होते हैं॥ ८५॥

विमर्श—शुक्लपक्ष को सितदल तथा कृष्णपक्ष को असितदल भी लिखा जाता है। सामान्यतः अमावस्या के उपरान्त होनेवाली प्रतिपदा (पड़वा) से प्रारम्भकर पूर्णिमा की समाप्तिपर्यन्त शुक्लपक्ष होता है तथा पूर्णिमा के उपरान्त की प्रतिपदा से अमावास्यापर्यन्त कृष्णपक्ष कहलाता है। यही सिद्धान्त व्यवहार में प्रचलित है और भारत के सभी पंचांगों में प्रयुक्त होता है। परन्तु वृहद् दैवज्ञरंजन ने अपने २१वें प्रकरण में दो अन्य मतों का भी उल्लेख किया है, जिनमें एक मत से शुक्लपक्ष की पंचमी से अगली चतुर्थी तक शुक्लपक्ष तथा तदुपरान्त कृष्णपक्ष होता है। दूसरे मत से शुक्लाष्टमी से पन्द्रह चान्द्र तिथि में शुक्लपक्ष तथा शेष में कृष्णपक्ष होता है, परन्तु यह बात केवल चन्द्रबल की दृष्टि से मान्य है, व्यवहार की दृष्टि से नहीं। यथा—

'पूर्वापरौ मासदलं हि पक्षौ पूर्वापरौ तौ सितनीलसंज्ञौ।
पूर्वस्तु देवस्त्वपरस्तु पैत्र्यः केचित्तु कृष्णे सित पञ्चमीतः॥
कृष्णाष्टमीदलादूर्ध्वं यावच्छुक्लाष्टमी भवेत्।
तावत्क्षीणशशी ज्ञेयः सम्पूर्णस्तदनन्तरम्॥'

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के तृतीय सम्वत्सराध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चतुर्थोऽध्याय:

तिथ्याध्याय:

तिथि स्वामियों का कथन

वह्निर्विरिञ्चिर्गिरिजागणेशः फणी विशाखो दिनकृन्महेशः।
दुर्गान्तको विश्वहरिस्मरश्च शर्वः शशी चेति पुराणदृष्टः॥ १॥
अमायाः पितरः प्रोक्तास्तिथीनामधिपः क्रमात्॥ २॥

१. अग्नि, २. ब्रह्मा, ३. गौरी, ४. गणेश, ५. सर्प, ६. कार्तिकेय, ७. सूर्य, ८. शिव, ९. दुर्गा, १०. यम, ११. विश्वेदेवा, १२. हरि, १३. कामदेव, १४. शिव तथा १५. चन्द्रमा—ये क्रमश: प्रतिपदादि पन्द्रह तिथियों के अधिपति (देवता=स्वामी) होते हैं तथा अमावास्या तिथि के स्वामी प्राचीन ऋषियों ने पितरों को कहा है॥ १-२॥

तिथियों की नन्दादि संज्ञा तथा पक्ष भेद से उनका फल

तिथीनामपराः संज्ञाः कथ्यन्ते ता यथाक्रमात्।
नन्दा भद्रा जया रिक्ता पूर्णाश्च क्रमतो भवेत्॥ ३॥
पर्यायत्वेन विज्ञेया नेष्टमध्येष्टदाः सिते।
कृष्णपक्षेऽपीष्टमध्यनेष्टदाः क्रमशः सदा॥ ४॥

अब तिथियों की दूसरे प्रकार से भी प्रतिपदा से जो संज्ञा होती है, उसे कहते हैं। प्रतिपदादि सम्पूर्ण तिथियों की क्रमानुसार—१. नन्दा, २.भद्रा, ३. जया, ४. रिक्ता तथा ५. पूर्णा ये (पाँच) संज्ञाएँ होती हैं। शुक्लपक्ष में क्रमानुसार प्रारम्भ की पाँच तिथियाँ नेष्ट, फिर मध्य की पाँच तिथियाँ मध्यम तथा अन्त की पाँच तिथियों का फल शुभ होता है। कृष्णपक्ष में इसके विपरीत फल होता है अर्थात् कृष्णपक्ष में प्रारम्भ की पाँच तिथियाँ (प्रतिपदा से पञ्चमी तक) शुभ, फिर बीच की पाँच तिथियाँ मध्यम तथा अन्त की पाँच तिथियाँ अशुभ होती हैं॥ ३ ४॥

विमर्श—यहाँ तिथियों का दो प्रकार से शुभाशुभ फल कथित है—प्रथम नन्दादि संज्ञा में रिक्ता को छोड़कर शेष तिथियाँ शुभ होती हैं, अत: किसी भी पक्ष की रिक्ता तिथियाँ सामान्यत: शुभ कर्म में वर्जित हैं तथा द्वितीय प्रकार से कृष्णपक्ष की एकादशी से शुक्लपक्ष पंचमी तक की तिथियाँ क्षीण चन्द्र के कारण अशुभ होती हैं। शुक्ल षष्ठी से दशमी तक तथा कृष्ण षष्ठी से दशमी तक की पाँच-पाँच तिथियाँ सामान्य होती हैं तथा शुक्ला एकादशी से कृष्णा पंचमी तक की दश तिथियाँ शुभ फल देती हैं। इस प्रकार दोनों प्रकार से शुभाशुभ फल विचारना चाहिये॥ ३-४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रतिपदा में करणीय कृत्य

चित्रलेख्यासवक्षेत्र तैलशय्यासनादि यत्।
वृक्षच्छेदो गृहाश्माथ कर्म प्रतिपदीरितम्॥ ५॥

चित्रकला, आसवारिष्ट-निर्माण, औषधसिद्ध तैल-निर्माण तथा प्रयोग, नवीन शय्या (खाट-पलंग), आसन, वृक्ष काटना, घर के लिये पत्थर आदि लाना—ये सब कार्य प्रतिपदा तिथि में करने चाहिये॥ ५॥

द्वितीया तिथि में करणीय कृत्य

विवाह मौञ्जी यात्रा च सुरस्थापनभूषणम्।
गृहं पुष्ट्यखिलं कर्म द्वितीयायां विधीयते॥ ६॥

द्वितीया तिथि में विवाह, मौञ्जीबन्धन (कमर में मुञ्जमेखला बाँधना), जनेऊ, यात्रा, देव-प्रतिष्ठा, आभूषण बनवाना तथा पहनना, गृहनिर्माण, गृहप्रवेश तथा सम्पूर्ण पौष्टिक कर्म करना उचित है॥ ६॥

तृतीया तिथि में करणीय कृत्य

मौञ्जी प्रतिष्ठाश्च शिल्पविद्या निखिलमङ्गलम्।
अश्विभोष्ट्राम्बुयानोक्तं तृतीयायां विभूषणम्॥ ७॥

तृतीया तिथि में मौञ्जीबन्धन, देव-प्रतिष्ठा, शिल्पकार्य, विद्यारम्भ, सम्पूर्ण मंगलकार्य, घोड़े की सवारी, हाथी की सवारी, ऊँट की सवारी, जलयान तथा सभी प्रकार के वाहनों का प्रयोग करना शुभ है॥ ७॥

चतुर्थी तिथि एवं नवमी-चतुर्दशी के कृत्य

अथर्वविद्याशस्त्राग्निबन्धनोच्चाटनादिकम् ।
मारणाद्यखिलं कर्म रिक्तास्वेव विधीयते॥ ८॥

चतुर्थी-नवमी तथा चतुर्दशी तिथियों में अथर्व विद्या (तांत्रिक प्रयोग) शस्त्र प्रयोग, अग्निकर्म, बन्धन, मारण-मोहन-उच्चाटन आदि कर्म करना प्रशस्त होता है॥ ८॥

पंचमी तिथि में करणीय कृत्य

यानोपनयनोद्वाह ग्रहशान्तिक पौष्टिकम्।
चरस्थिराखिलं कर्म पञ्चम्यां मङ्गलोत्सवम्॥ ९॥

पंचमी तिथि में वाहन, उपनयन (जनेऊ), विवाह, ग्रहशान्ति, पौष्टिककर्म, चरकार्य, स्थिरकार्य तथा सभी प्रकार के मांगलिक कार्य एवं उत्सवादि करना शुभ है॥ ९॥

षष्ठी तिथि में करणीय कृत्य

पशुवास्तुमहीसेवा पण्याम्बु क्रयविक्रये।
भूषणं व्यवहारादिकर्म षष्ठ्यां विधीयते॥ १०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पशु से सम्बन्धित कर्म (बन्धन, बधिया करना, क्रय-विक्रय सिखाना, सवारी आदि), वास्तुकर्म, पृथ्वी से सम्बन्धित कर्म, व्यापार, दूकानदारी, जलकर्म, क्रय-विक्रय-आभूषण तथा व्यवहार षष्ठी तिथि में शुभ होते हैं॥ १०॥

सप्तमी तिथि में करणीय कृत्य

यानस्थापनवाहनादि राजसेवादिकर्म यत्।
विवाहवास्तुभूषाद्यं सप्तम्याञ्चोपनायनम्॥ ११॥

नवीन वाहन का प्रयोग, यात्रा, देवस्थापन, धनस्थापन, विधिस्थापन, पदस्थापन राजसेवा प्रारम्भ करना (निर्वाचन आदि के लिये आवेदन भरना), विवाह, वास्तुकर्म, नवीन वस्त्रों एवं आभूषणादि का निर्माण तथा धारण एवं उपनयन सप्तमी में प्रशस्त है॥ ११॥

अष्टमी तिथि के कृत्य

कृषिवाणिज्यधान्याश्मलोहसंग्रामभूषणम्।
शिवस्थापनखाताम्बुकर्माष्टम्यां विधीयते॥ १२॥

अष्टमी तिथि में खेती, वाणिज्य, अनाज का कार्य, पत्थर का कार्य, लोहे का कार्य, युद्ध, आभूषण-वस्त्रादि-निर्माण एवं धारण, शिवजी की स्थापना, खुदाई का काम, जलकर्म आदि प्रशस्त होते हैं॥ १२॥

दशमी तिथि के कृत्य

प्रासादस्थापनं यानमुद्वाहो व्रतबन्धनम्।
शान्तिपुष्ट्यादिकं कर्म दशम्यान्तु प्रशस्यते॥ १३॥

दशमी तिथि में देवालय, राजभवन आदि का निर्माण, देवादि की प्रतिष्ठा, यात्रा, विवाह, यज्ञोपवीत, शान्तिकर्म तथा सभी पौष्टिक कर्म प्रशस्त होते हैं॥ १३॥

एकादशी तिथि के कृत्य

व्रतोपवासवैवाह कृषिवाणिज्यभूषणम्।
शिल्पनृत्यं गृहकर्म एकादश्यां विचित्रकम्॥ १४॥

एकादशी तिथि में व्रत, उपवास, विवाह, कृषि, वाणिज्य, वस्त्राभूषण का निर्माण एवं धारण, शिल्पकर्म (सिलाई-कढ़ाई-रंगाई-पुताई आदि) नृत्य-नाटक आदिकर्म, गृहनिर्माण तथा विचित्र (मनोरंजक) कार्य करना चाहिये॥ १४॥

द्वादशी तिथि के कृत्य

चरस्थिराखिलं कर्म दानशान्तिकपौष्टिकम्।
यात्रान्नग्रहणं त्यक्त्वा द्वादश्यां निखिलं हितम्॥ १५॥

द्वादशी में चर-स्थिर-दान-शान्तिक-पौष्टिक, यात्रा तथा अन्नप्राशन को छोड़कर शेष सभी शुभकर्म करना हितकारी है॥ १५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—यहाँ कर्मों का निषेध है, परन्तु कौन से कार्य करें—यह नहीं कहा है। गर्गसंहिता में द्वादशी में मांगल्यकर्म, चूडाकर्म, उपनयन, क्रोठे में अन्न रखना, खजाना स्थापन करना, यश-प्रदायन कहा है, किन्तु ऋण ग्रहण करना वर्जित किया है—

'द्वादशीं तु यमामाह ध्रुवं विन्द्याद्यशस्करम्।
मङ्गल्यान्यत्र कुर्वीत चूडोपनयनानि च॥
कोष्ठागाराणि कुर्वीत निधानं च निधापयेत्।
ऋणञ्चात्र न गृहणीयादादित्यश्चात्र देवता॥'

त्रयोदशी तिथि के कृत्य

अग्न्याधानं प्रतिष्ठा च विवाहव्रतबन्धनम्।
निखिलं मङ्गलं यानं त्रयोदश्यां प्रशस्यते॥ १६॥

अग्निस्थापन (चूल्हा आदि), प्रतिष्ठा, विवाह, व्रतबन्ध—सभी मांगलिक कार्य तथा यात्राकार्य त्रयोदशी में प्रशस्त होते हैं॥ १६॥

चतुर्दशी के विशिष्ट कृत्य

बन्धनाग्निप्रदानोग्रघातव्रणरणक्रिया
शस्त्रास्त्रलोहकर्माणि चतुर्दश्यां विधीयते॥ १७॥

पशुओं एवं मनुष्यों का बन्धन, आग लगाना, उग्रकर्म, घातकर्म, व्रणकर्म (ऑपरेशन) युद्धकर्म, शस्त्र-संचालन तथा अस्त्र-संचालन—ये सब कार्य चतुर्दशी में करना चाहिये॥ १७॥

पूर्णिमा तिथि के कृत्य

तैलस्त्रीसङ्गमञ्चैव दन्तकाष्ठोपनायनम्।
सक्षौरं पौर्णमास्याञ्च विनान्यदखिलं हितम्॥ १८॥

पूर्णिमा तिथि में तेलमालिश, तेल पकाना, स्त्री-प्रसंग, दन्तधावन (मंजन-टूथपेष्ट आदि का नवीन उपयोग), यज्ञोपवीत, क्षौरकर्म इनको छोड़कर शेष कार्य शुभ होते हैं॥ १८॥

अमावास्या तिथि के कृत्य

पितृकर्मत्वमावास्यामेकं मुक्त्वा कदाचन।
न विदध्यात्प्रयत्नेन यत्किञ्चिन्मङ्गलादिकम्॥ १९॥

अमावास्या में तो एकमात्र कर्म पितृकर्म कहा गया है, अन्य कोई मंगल कार्य नहीं करना चाहिये॥ १९॥

विमर्श—पीछे दिये गये श्लोक संख्या ९ तथा १५ में पौष्टिक कर्मों का तथा श्लोक १३ में शान्तिकर्म तथा पौष्टिक कर्मों का उल्लेख है। इन कर्मों को जानने के लिये इन शब्दों का अर्थ समझ लेना आवश्यक है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पौष्टिक कर्म—जिस कर्म में दीर्घायु एवं शरीरपुष्टि हेतु होमादि कार्यों को किया जाता है अथवा परिवार, सन्तान आदि की दृष्टि से जो होम, पूजन एवं अनुष्ठानादि कर्म किये जाते हैं। वे सब पौष्टिक कर्म कहलाते हैं—

'पुष्टिर्धनजनादीनां वृद्धिरित्यभिधीयते।
तद् हेतुभूतं यत्कर्म पौष्टिकं तदिहोच्यते॥'
—(वाचस्पत्यम् पृ० ४४२४)

पौष्टिक कर्म को वृद्धि कर्म भी कहा जाता है, वृद्धि हेतु किया जानेवाला श्राद्ध **'वृद्धिश्राद्ध'** कहलाता है, अतः वृद्धिश्राद्ध भी पौष्टिक कर्म के अन्तर्गत ही होता है।

शान्तिक कर्म—इसे शान्तिकर्म भी कहते हैं। शान्तिक कर्मों में दुष्टग्रहों, उत्पातों, दुष्टयोगों, मूलादि दुष्ट नक्षत्रों के लिये कर्म (होम-जप आदि) करते हैं। मूलादि गण्डान्त नक्षत्रों की शान्ति तो उन्हीं नक्षत्रों में होती है, किन्तु अन्य प्रकार की शान्तियों के लिये शुभ तिथ्यादि का विचार किया जाता है। शान्ति प्रकाशादि ग्रन्थों में शान्ति का विधान वर्णित है। मत्स्यपुराण अध्याय २२८ में अठारह प्रकार की शान्तियों के नामों का उल्लेख है। उसमें दिव्य अन्तरिक्ष तथा भौम इन तीन प्रकार के उत्पातों के लिये इन शान्तियों की आवश्यकता विस्तार से वर्णित है, उनके नाम निम्न हैं—

१. अभया शान्ति, २. सौम्या शान्ति, ३. वैष्णवी शान्ति, ४. वैष्णवी शान्ति, ५. ब्राह्मी शान्ति, ६. रौद्री शान्ति, ७. वायवी शान्ति, ८. वारुणी शान्ति, ९. प्राजापत्य शान्ति, १०. त्वाष्ट्री शान्ति, ११. कौमारी शान्ति, १२. गान्धर्वी शान्ति, १३. आग्नेयी शान्ति, १४. आङ्गिरसी शान्ति, १५. नैर्ऋती शान्ति, १६. याम्या शान्ति, १७. कौबेरी शान्ति तथा १८. पार्थिवी शान्ति।

अग्निपुराण में भी उपरिवर्णित शान्तियों का उल्लेख करते हुए अमृता, अभया तथा सौम्या नामक शान्तियाँ उत्कृष्ट कही गयी हैं। आगे के अध्यायों में इस ग्रन्थ (नारदीयज्योतिषसंहिता) में भी कुछ शान्तियों का विवरण है।

पक्षरन्ध्र तिथियाँ

अष्टमी द्वादशी षष्ठी चतुर्थी च चतुर्दशी।
तिथयः पक्षरन्ध्राख्या दुष्टास्ता अतिनिन्दिताः॥ २०॥
चतुर्थमनुरन्ध्राङ्क तलसंज्ञास्तु नाडिकाः।
त्याज्या दुष्टासु तिथिषु पञ्चस्वेतासु सर्वदा॥ २१॥

अष्टमी, द्वादशी, षष्ठी, चतुर्थी, चतुर्दशी—ये पक्षरन्ध्र तिथियाँ होती हैं, ये शुभ-कार्य में वर्जित हैं। अतः इनकी आरम्भ की क्रमशः ४-१४-७-९-५ ये घटियाँ त्यागकर शुभकर्म करना चाहिये॥ २०-२१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पक्षरन्ध्र तिथियों की त्याज्य घटियों का चक्र

अष्टमी	द्वादशी	षष्ठी	चतुर्थी	चतुर्दशी	पक्षरन्ध्र तिथियाँ
४	१४	७	९	५	उनकी प्रारम्भ की त्याज्य घटी

अमा-नवमी एवं विषघटी की त्याज्यता

अमावास्या च नवमी त्यक्त्वा विषमसंज्ञिकाः।
तिथयस्ताः प्रशस्ताः स्युर्मध्यमा प्रतिपत्तथा॥ २२॥

ऊपर वर्णित पक्षरन्ध्र तिथियों के अतिरिक्त अमावास्या तथा नवमी विषम संज्ञक तिथियां भी त्याज्य हैं। प्रतिपदा मध्यम तथा शेष तिथि शुभकर्मों में प्रशस्त है॥ २२॥

विमर्श—यहाँ 'त्यक्त्वा विषमसंज्ञिकाः' वाक्यांश से तिथियों की विषघटी शुभकर्म में त्यागने का भी अर्थ प्रतिध्वनित होता है। वसिष्ठसंहिता में नवमी तिथि भी पक्षछिद्रा कही गयी है, साथ ही उसकी २५ घटियाँ त्याज्य कही गयी हैं। इतना ही नहीं वसिष्ठजी ने प्रतिपदादि तिथियों की भी कुछ निश्चित अन्तराल की चार घटी को विषघटी कहकर त्यागने को कहा है—

'चतुर्दशी चतुर्थी च अष्टमी नवमी तथा।
षष्ठी च द्वादशी चैव पक्षरन्ध्राह्वया इमे॥
क्रमादेता तिथिषु वर्जनीयाश्च नाडिका।
भूताष्टमनुतत्त्वांकदशशेषा सुशोभनाः॥'

'तिथीषु नागेन्द्रगिरीषु वारिधिर्गजाद्रिदिक्पावकविश्ववासवः।
मुनीभसंख्याप्रतिपत्तिथे क्रमात् परं विषं स्याद् घटिका चतुष्टयम्॥'

वसिष्ठसंहिता के अनुसार तिथि विषघटियों का चक्र

प्रतिपदा	द्वितीया	तृतीया	चतुर्थी	पंचमी	षष्ठी	सप्तमी	अष्टमी	नवमी	दशमी	एकादशी	द्वादशी	त्रयोदशी	चतुर्दशी	पञ्चदशी	प्रत्येक पक्ष की तिथियाँ
१५-१६-१७-१८	५-६-७-८	८-९-१०-११	१४-१५-१६-१७	७-८-९-१०	५-६-७-८	७-८-९-१०	८-९-१०-११	७-८-९-१०	१०-११-१२-१३	३-४-५-६	१३-१४-१५-१६	१४-१५-१६-१७	७-८-९-१०	८-९-१०-११	प्रत्येक तिथि की चार विषनाडिका

दन्तधावन (दतुवन) में निषिद्ध तिथियाँ

दर्शषष्ठ्यां प्रतिपदि द्वादश्यां प्रतिपर्वसु।
नवम्याञ्च न कुर्वीत कदाचिद् दन्तधावनम्॥ २३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अमावस्या, षष्ठी, प्रतिपदा, द्वादशी तथा पूर्णिमा—इन तिथियों तथा नवमी तिथि को दन्तधावन (दातौन, टूथब्रश) नहीं करना चाहिये॥ २३॥

विमर्श—भारतीय ज्योतिष एवं धर्मशास्त्र में इस व्यवस्था के निम्न कारण हैं—

१. पर्यावरण-सम्बन्धी कारण—प्रतिदिन वृक्षों की दातौन तोड़ने से वृक्षों का क्षय शीघ्रता से होता है, अतः वृक्षों एवं वनस्पतियों की रक्षा के लिये यह निषेध किया गया है। अतः इन तिथियों में जल के पर्याप्त कुल्ले करना चाहिये अथवा भस्म या मंजन अथवा शुद्ध मृत्तिका से दाँत स्वच्छ कर लेना चाहिये। यह दाँतों की स्वच्छता का विकल्प है।

२. स्वास्थ्य-सम्बन्धी कारण—प्रतिदिन दन्तधावन या ब्रश करने से मसूढ़ों (दन्तवेष्ट= Gums) में क्षोभ होता है तथा दाँतों की जड़ें निकल आती हैं, अतः बीच-बीच में कुछ दिनों दन्तधावन न करने की व्यवस्था वैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर आधारित है।

कार्यविशेष में वर्जित तिथियाँ

षष्ठ्यां तैलं तथाऽष्टम्यां मांसं क्षौरं तथा कले।
पूर्णिमादर्शयोर्नारीसेवनं परिवर्जयेत्॥ २४॥

षष्ठी तिथि को तेल एवं तेल में पके खाद्य पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिये। जो मांसाहारी हैं, उन्हें अष्टमी तिथिको मांसाहार नहीं करना चाहिये। चतुर्दशी तिथि को क्षौरकर्म (हजामत-मुण्डन) नहीं करना चाहिये तथा पूर्णिमा एवं अमावस्या को स्त्री-पुरुषों को मैथुन नहीं करना चाहिये॥ २४॥

तैलाभ्यङ्ग में निषिद्ध तिथ्यादि

व्यतीपाते च संक्रान्तौ एकादश्याञ्च पर्वसु।
अर्कभौमदिने षष्ठ्यां नाभ्यङ्गं न च वैधृतौ॥ २५॥

१. व्यतीपात एवं वैधृति योगों में तैल की मालिश वर्जित है।

२. जिस दिन सूर्य मेषादि बारह राशियों में से किसी भी राशि पर (मकर संक्रान्ति को छोड़कर) जब सूर्य का प्रवेश हो अर्थात् संक्रान्ति के दिन अभ्यंग (तैलमालिश) नहीं करना चाहिये।

३. इसी प्रकार पूर्णिमा, अमावास्या, एकादशी—इन तिथियों में भी तैलमालिश नहीं करें।

४. तैलाभ्यंग में रविवार एवं मंगलवार भी वर्जित है॥ २५॥

आँवले से स्नान का निषेध

यः करोति दशम्याञ्च स्नानमामलकैः सह।
पुत्रहानिर्भवेत्तस्य त्रयोदश्यां धनक्षयः॥ २६॥
अर्थपुत्रक्षयं तस्य द्वितीयायां न संशयः।
अमायाञ्च नवम्याञ्च सप्तम्याञ्च कुलक्षयः॥ २७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जो गृहस्थ व्यक्ति दशमी तिथि में शरीर में आँवले का चूर्ण लगाकर (अथवा साबुन लगाकर) स्नान करता है, उसे पुत्रहानि होती है। त्रयोदशी के दिन आँवलास्नान से धनक्षय होता है। द्वितीया तिथि में आमलकी के स्नानार्थ प्रयोग से धन एवं पुत्र दोनों की हानि होती है तथा अमावास्या, नवमी, एवं सप्तमी में आमलकपिष्टी से स्नान करना कुलक्षयकारक होता है॥ २६-२७॥

विमर्श—प्राचीन काल में लोग आँवले को पीसकर गीला करके उससे शरीर स्वच्छ करते थे। जैसे आज साबुन का प्रचलन है, उसी प्रकार प्राचीन काल में आँवले का था। प्रतिदिन आँवला या साबुन लगाना त्वचा के क्षार-अम्ल के सन्तुलन को नष्ट कर त्वचा रोग उत्पन्न करता है।

पूर्णिमा एवं अमावास्या के भेद

या पूर्णिमास्यनुमतिर्निशि चन्द्रवती यदा।
दिवा चन्द्रवती राका ह्यमावास्या तथा द्विधा॥ २८॥
सिनीवाली सेन्दुमती कुहूर्नेन्दुमती मता।

१. अनुमति पूर्णिमा—जिस दिन सूर्यास्त के उपरान्त पूर्णिमा का चन्द्र दिखता है अर्थात् चतुर्दशीविद्धा पूर्णिमा होती है, उसे 'अनुमति पूर्णिमा' कहते हैं।

२. राका पूर्णिमा—जिस दिन सूर्यास्त अथवा इसके पूर्व ही पूर्ण चन्द्र के दर्शन हों अर्थात् दिन में ही चतुर्दशी समाप्त होकर पूर्णिमा प्रारम्भ हो जाय, उसे 'राका' कहा जाता है।

पूर्णिमा की भाँति अमावास्या भी दो प्रकार की होती है।

१. सिनीवाली अमावस्या—जिस अमावस्या को थोड़ा-सा चन्द्रमा (प्रातःकाल के पूर्व) दिख जाता है, उसे सिनीवाली कहते हैं अर्थात् चतुर्दशीयुक्ता अमावस्या होती है।

२. कुहू अमावस्या—इसमें चन्द्रमा बिल्कुल नहीं दिखता है॥ २८-२८$\frac{१}{२}$॥

युगादि तिथियाँ

कार्तिके शुक्लनवमीत्वादिः कृतयुगस्य सा॥ २९॥
त्रेतादिर्माधवे शुक्ला तृतीया पुण्यसंज्ञिता।
कृष्णा पञ्चदशी माघे द्वापरादिरुदीरिता॥ ३०॥
कल्यादि स्यात्कृष्णपक्षे नभस्ये च त्रयोदशी।

१. सतयुग का आरम्भ—कार्तिक शुक्ल नवमी को सतयुग प्रारम्भ हुआ था, अक्षयनवमी तथा आँवलानवमी कहते हैं।

२. त्रेतायुग का आरम्भ—वैशाख शुक्ल तृतीया यह त्रेतायुग के आरम्भ की तिथि है (इसे अक्षयतृतीया=अखतीज कहते हैं)।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

३. द्वापर युग का आरम्भ—माघ कृष्ण अमावस्या द्वापर के आरम्भ की तिथि मानी जाती है।

४. कलियुग का आरम्भ—भाद्रकृष्ण त्रयोदशी कलियुग के आरम्भ की तिथि है। ये चारों युगादि तिथियाँ हैं॥ २९-३०½॥

मन्वादि तिथियों का कथन

द्वादश्यूर्जे शुक्लपक्षे नवम्याश्वयुजे सिते॥ ३१॥
चैत्रे भाद्रपदे चैव तृतीया शुक्ल संज्ञिता।
एकादशी सिता पौषेऽप्याषाढे दशमी सिता॥ ३२॥
माघे च सप्तमी शुक्ला नभस्येऽप्यसिताष्टमी।
श्रावणे मास्यमावास्या फाल्गुने मासि पूर्णिमा॥ ३३॥
आषाढ़े कार्तिके मासि चैत्रे ज्येष्ठे च पूर्णिमा।
मन्वादयः स्नानदानश्राद्धेष्वनन्त्यपुण्यदा॥ ३४॥

१. कार्तिक शुक्ल द्वादशी, २. आश्विन शुक्ल नवमी, ३. चैत्र शुक्ल तृतीया, ४. भाद्र शुक्ल तृतीया, ५. पौष शुक्ल एकादशी, ६. आषाढ़ शुक्ल दशमी, ७. माघ शुक्ल सप्तमी, ८. भाद्र कृष्ण अष्टमी, ९. श्रावण कृष्ण अमावस्या, १०. फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा, ११. आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा, १२. कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा, १३. चैत्र शुक्ल पूर्णिमा तथा १४. ज्येष्ठ शुक्ल पूर्णिमा—ये मन्वन्तरों के प्रारम्भ की तिथियाँ होने से मन्वादि कहलाती हैं। ये युगादि एवं मन्वादि तिथियाँ स्नान, दान, श्राद्ध आदि में अनन्त पुण्यदायक होती हैं॥ ३१-३४॥

श्राद्ध में पुण्यदायक गजच्छायायोग

भाद्रकृष्णे त्रयोदश्यां मघास्विन्दुः करे रविः।
गजच्छाया तदा ज्ञेया श्राद्धेऽत्यन्तफलप्रदा॥ ३५॥

भाद्रपद मास के कृष्णपक्ष की त्रयोदशी तिथि को जिस वर्ष मघा नक्षत्र पर चन्द्रमा स्थित हो तथा हस्त नक्षत्र पर सूर्य हों तब गजच्छाया योग बनता है, जो श्राद्धकर्म में पुण्यफलदायक योग माना जाता है॥ ३५॥

विमर्श—वायुपुराण में ग्रहणकाल को भी 'गजच्छायायोग' कहा गया है। यथा—

'सैंहिकेयो यदा सूर्यं ग्रसते पर्वसन्धिषु।
गजच्छाया तु सा प्रोक्ता तस्यां श्राद्धं प्रकल्पयेत्।
घृतेन भोजयेत् विप्रान् घृतं भूमौ समुत्सृजेत्॥'

बौधायन नारदसंहिता के ऊपर कथित श्लोक के अतिरिक्त भी गजच्छायायोग लिखते हैं—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'हंसे करस्थिते यातु अमावस्या करान्विता।
सा ज्ञेया कुञ्जरच्छाया इति बौधायनोऽब्रवीत्॥'

इस योग में भाद्रकृष्ण अमावस्या को सूर्य एवं चन्द्र दोनों ही हस्त नक्षत्र पर होते हैं।

शुभकर्म में क्षयतिथि एवं वृद्धतिथि का निषेध

एकस्मिन् वासरे तिस्त्रस्तिथयः स्युः क्षयातिथिः।
तिथिर्वारत्रयेष्वेका त्वधिकात्यन्तनिन्दिता॥ ३६॥

१. क्षयातिथि—जब एक ही वार में तीन तिथियाँ हों तो बीच की तिथि क्षय (अवम) अथवा क्षयातिथि कहलाती है।

२. वृद्धितिथि—जो तिथि तीन वारों को स्पर्श करती है, वह तिथि वृद्धितिथि अथवा त्रिद्युस्पर्शा कहलाती है।

ये दोनों प्रकार की तिथियाँ शुभकर्मों में निन्दित हैं॥ ३६॥

अखण्डा तथा खण्डा तिथियों की परिभाषा

सूर्यास्तमनपर्यन्तं यस्मिन् वारेऽपि या तिथिः।
विद्यते सात्वखण्डास्याद् ऊनाचेत् खण्डसंज्ञिता॥ ३७॥

१. अखण्डा तिथि—जिस वार में सूर्योदय से सूर्यास्तपर्यन्त एक ही तिथि (पंचांग में) हो वह अखण्डा तिथि कहलाती है।

२. खण्डा तिथि—पंचांग में जो तिथि सूर्यास्त के पूर्व ही समाप्त हो जाती है, वह खण्डा अथवा खण्डिता होती है॥ ३७॥

क्षणतिथि का कथन

तिथेः पञ्चदशो भागः क्रमात् प्रतिपदादयः।
क्षण संज्ञा तदर्धानि मुहूर्त्त कथितो बुधैः॥ ३८॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां तिथिलक्षणाध्यायः चतुर्थः॥ ४॥

प्रत्येक तिथि में उसी तिथि से आरम्भ करके तिथिमान का पन्द्रहवाँ भाग और सभी तिथियाँ क्षणतिथि के रूप में रहती हैं।

क्षणतिथि का आधा भाग मुहूर्त्तसंज्ञक होता है—ऐसा विद्वानों का मत है॥ ३८॥

विमर्श—जब हमें किसी तिथिविशेष की आवश्यकता हो और उस दिन वह तिथि प्राप्त न हो तब हमें वारहोरा की भाँति क्षणतिथि का उपयोग करना चाहिये। इस श्लोक के अनुसार शुक्ल प्रतिपदा को प्रारम्भ में तिथि भोग का पन्द्रहवाँ भाग (—) प्रतिपदा क्षणतिथि होती है, फिर पन्द्रहवें भाग में द्वितीया, फिर पन्द्रहवें भाग में तृतीया नामक क्षणतिथि रहेगी और अन्तिम पन्द्रहवें भाग में पूर्णिमा तिथि होगी। तथैव कृष्णपक्ष

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

की प्रतिपदा में प्रथम पन्द्रहवें भाग में प्रतिपदा—फिर द्वितीया—फिर तृतीया—फिर चतुर्थी—फिर पंचमी इसी क्रम से अन्तिम पन्द्रहवें भाग में अमावस्या नामक क्षणतिथि विद्यमान रहेगी। नारदसंहिता का यह उद्धरण बृहद् दैवज्ञरंजन में भी दिया गया है।

यहाँ क्षणतिथि जानने के लिये जिस प्रकार किसी नक्षत्र का सर्वक्ष (भभोग) निकालते हैं उसी प्रकार से सर्वतिथि (तिथिभोग) निकालकर उसमें पन्द्रह का भाग देकर क्षणतिथि का मान निश्चित करना चाहिये। तिथि के पन्द्रहवें भाग को 'तिथ्यंश' भी कहते हैं।

तिथ्यंश (क्षणतिथि बोधक चक्र)

अंश या भाग → / तिथियाँ ↓	प्रथमांश	द्वितीयांश	तृतीयांश	चतुर्थांश	पंचमांश	षष्ठांश	सप्तमांश	अष्टमांश	नवमांश	दशमांश	एकादशांश	द्वादशांश	त्रयोदशांश	चतुर्दशांश	पंचदशांश
प्रतिपदा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
द्वितीया	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१
तृतीया	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१	२
चतुर्थी	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१	२	३
पंचमी	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१	२	३	४
षष्ठी	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१	२	३	४	५
सप्तमी	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१	२	३	४	५	६
अष्टमी	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१	२	३	४	५	६	७
नवमी	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१	२	३	४	५	६	७	८
दशमी	१०	११	१२	१३	१४	१५	१	२	३	४	५	६	७	८	९
एकादशी	११	१२	१३	१४	१५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
द्वादशी	१२	१३	१४	१५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
त्रयोदशी	१३	१४	१५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
चतुर्दशी	१४	१५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
पूर्णिमा	१५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
अमावस्या	३०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४

विशेष—कृष्णपक्ष की तिथियों में क्षणतिथि जानने के लिये चतुर्दशी के उपरान्त अमावस्या समझना चाहिये।

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के चतुर्थ तिथ्याध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पञ्चमोऽध्यायः

वारलक्षणाध्यायः

रविवार में विहित कार्य

नृपाऽभिषेकमाङ्गल्य सेवायानास्त्रकर्म यत्।
औषधाहवधान्यादि विधेयं रविवासरे॥ १॥

रविवार के दिन राज्याभिषेक (शपथग्रहण, पदग्रहण), मंगलकार्य, सेवाकार्य, यात्रा, अस्त्रकर्म, औषधकर्म, युद्धकार्य तथा धान्यादि से सम्बन्धित कार्य करना चाहिये॥ १॥

सोमवार में विहित कर्म

शङ्खमुक्ताम्बुरजतवृक्षेक्षुस्त्रीविभूषणम् ।
पुष्पगीतक्रतुक्षीरकृषिकर्मेन्दुवासरे ॥ २॥

शंख, मोती, जल-सम्बन्धीकार्य (बर्फ जमाना, फ्रिज चालू करना, सिंचाई, नल, कूप आदि), वृक्षकार्य, इक्षुकार्य (गुड़-शक्कर आदि का निर्माण) वस्त्राभूषण, पुष्प, गीत, यज्ञ, दुग्धकार्य तथा कृषिकर्म ये सब सोमवार को करें॥२॥

मंगलवार में विहित कर्म

विषाग्निबन्धनस्तेयं सन्धिविग्रहमाहवे।
धात्वाकरप्रवालास्त्रकर्म भूमिजवासरे॥ ३॥

विषप्रयोग, अग्निकार्य, बन्धन (अपहरण आदि), चोरी, सन्धि-झगड़ा, युद्ध, खान-सम्बन्धी कार्य, प्रवाल, अस्त्र-शस्त्र आदि से सम्बन्धित कार्य मंगलवार को करना चाहिये॥ ३॥

बुधवार में विहित कर्म

नृत्यशिल्पकलागीतलिपिभूरससंग्रहम् ।
विवाहधातुसंग्रामकर्म सौम्यस्य वासरे॥ ४॥

नृत्यकर्म, शिल्पकार्य, कलाकार्य, गायन, लिपि (लेखन तथा चित्रकला आदि), पृथ्वी-सम्बन्धी कार्य, पृथ्वी के रसों का संग्रह, विवाह, धातुकर्म, युद्ध आदि—ये सब बुधवार को करना शुभ होता है॥ ४॥

गुरुवार में विहित कर्म

यज्ञपौष्टिकमाङ्गल्यस्वर्णवस्त्रादिभूषणम् ।
वृक्षगुल्मलतायानंकर्म दैवेज्य वासरे॥ ५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गुरुवार के दिन यज्ञकार्य, पौष्टिक कर्म, मंगलकार्य, स्वर्णादि के आभूषण, वस्त्र-भूषा के कार्य, वृक्षकर्म, गुल्म-लता-वनस्पति आदि से सम्बन्धित कार्य तथा यात्रा करना प्रशस्त है॥ ५॥

शुक्रवार में विहित कार्य

नृत्यगीतादिवादित्रस्वर्णस्त्रीरत्नविभूषणम्।
भूपण्योत्सवगोधान्यकर्म भार्गववासरे॥ ६॥

नृत्य, गायन, वादन, स्वर्ण-रजतादि संग्रह, स्त्रियों से सम्बन्धित कार्य (फैंसी वस्त्रादि, चित्रकारी, मेंहदी रचाना आदि), रत्नधारण, आभूषणोंका निर्माण तथा धारण करना, भूमि-सम्बन्धी कार्य, पण्य (दूकानदारी), उत्सव तथा धान्य-सम्बन्धी कार्य शुक्रवार को करना शुभ होता है॥ ६॥

शनिवार में विहित कर्म

त्रपुसीसायसोऽश्मास्त्र विषपापासवानृतम्।
स्थिरकर्माखिलं वास्तुसंग्रहं सौरिवासरे॥ ७॥

त्रपु (रांगा=बंग=Tin), सीसा (Lead), आयस (Iron), पत्थर, अस्त्र-शस्त्र, विषकर्म, पापकर्म, स्थिर कार्य तथा वास्तु-सम्बन्धी कार्य शनिवार के दिन करना शुभ होता है॥ ७॥

विमर्श—भारतीय ज्योतिष में वार (सप्ताह के सात दिन) प्रयोग की परम्परा विदेशों से ली गयी है—ऐसा विचार बहुत से पाश्चात्य-ज्ञान लव दुर्विदग्धजन प्रकट किया करते हैं। उनका यह मत हिरोडोट्स आदि के मत पर आधारित होता है। यद्यपि संस्कृत के प्राचीनतम ग्रन्थों में तथा महाभारत में सप्ताह के सातों दिनों के नामों का उल्लेख नहीं है—यह इस बात का प्रमाण नहीं हो सकता है कि प्राचीन भारतीयों को सप्ताह के दिनों के नामों का ज्ञान नहीं था। पुराणों में राजा प्रियव्रत की कथा आयी है जिसमें उल्लेख है कि उन्होंने पृथिवी को सात महाद्वीपों में विभाजित कर उनकी शासन व्यवस्था अपने सातों पुत्रों को अलग-अलग सौंप दी थी। पृथ्वी के शासन की केन्द्रीय सत्ता महाराज प्रियव्रत के हाथों में थी। उनके पुत्रों ने एक-एक दिन साप्ताहिक विश्राम के लिये अपने-अपने द्वीपों में निर्धारित किया था। 'अथर्ववेदीय ज्योतिष' जो कलियुग के प्रारम्भ से पूर्व का है, उसमें सातों वारों का वर्णन है। ऋग्वेद जैसे संसार के प्राचीनतम ग्रन्थ में 'वार' का पर्यायवाची शब्द वासर उल्लिखित है'—

'आदि प्रत्नस्य रेतसो ज्योतिष्पश्यन्ति वासरम्।
परो यदिध्यते दिवा॥ (ऋग्वेदसंहिता ८। ६। ३०)'

'आदित्यः सोमो भौमश्च तथा बुधबृहस्पतिः।
भार्गवः शनैश्चरश्चैव एते सप्तदिनाधिपाः॥'

(अथर्वज्योतिष ९३)

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शतपथ ब्राह्मण में शुक्र तथा वेन शब्दों का उल्लेख लैटिन भाषा में शुक्र को (Venus) कहते हैं जो कि संस्कृत वेनः (वेनस्) का ही परिवर्तित रूप मात्र है—

'इमां हैके शुक्रस्य पुरोरुचं कुर्वन्ति।
अयं वेनश्चोदयात् पृश्निगर्भा...इत्यादि॥'

(शतपथब्राह्मण ४।२।१)

महाराज प्रियव्रत की वह व्यवस्था संसार की विभिन्न जातियों में आज भी मान्य है, जिसके अनुसार अलग-अलग देश-जातियों के लोगों ने अलग-अलग वारों को पवित्र एवं विश्राम का दिन स्वीकार किया है—

१. रविवार—यह ईसाइयों के लिये पवित्र या विश्राम करने का दिन है।

२. सोमवार—यूनानी लोग सोमवार को पवित्र (छुट्टी का) दिन मानते थे।

३. मंगलवार—पारसी लोगों में मंगलवार को पवित्र दिन मानने की प्रथा अद्यावधि विद्यमान है।

४. बुधवार—प्राचीन असीरिया के लोग बुधवार को ही पवित्र दिन मानते थे।

५. गुरुवार—प्राचीन मिश्र-निवासियों में पवित्र दिन बृहस्पतिवार मान्य था।

६. शुक्रवार—मुसलमान शुक्रवार को पवित्र दिन मानते हैं, अनेक मुस्लिम देशों में वह विश्राम-दिवस है।

७. शनिवार—यहूदी लोगों में शनिवार पवित्र दिन है तथा इजराइल में इस दिन शासकीय अवकाश रहता है।

इस सम्बन्ध में श्रीपाण्डुरंग वामन काणे अपने 'धर्मशास्त्र का इतिहास (प्रथम भाग पृष्ठ ३२६) में लिखते हैं—'सप्ताह केवल मानवनिर्मित व्यवस्था है। इसके पीछे कोई ज्योतिष शास्त्रीय या प्राकृतिक योजना नहीं।' परन्तु भारतीय विद्वानों ने इसका सात ग्रहों के साथ तर्कसंगत पक्ष स्थापित किया है।'

वार का आरम्भ—१. भारतीय धर्मशास्त्र में दो सूर्योदयों के बीच की अवधि को वार माना है, इस प्रकार भारतीय पंचांगों में सूर्योदय से वार आरम्भ होता है। तात्पर्य यह है कि हिन्दूवार सूर्योदय से प्रारम्भ होता है। प्राचीन बेबीलोन तथा यूनान के निवासी भी दिन का आरम्भ सूर्योदय से मानते थे। भारतीय खगोल वैज्ञानिक श्रीवराहमिहिर ने लिखा है—'लङ्कार्धरात्रसमये दिनप्रवृत्तिं जगाद् आर्यभटः। भूयः स एव सूर्योदयात् प्रभृत्याह लंकायाम्। उदयो यो लङ्कायां सोऽस्तसमयः सिद्धपुरे। मध्याह्नो यमकोट्यां रोमकविषयेऽर्धरात्रः सः॥' (पञ्चसिद्धान्तिका १५।२०।२३)

अर्थात् लंका में जो सूर्योदय समय होता है उससे वार का आरम्भ होता है ठीक वही समय सिद्धपुर (इंका लोगों का निवासस्थान) में सूर्यास्त का होता है। उसी समय यमकोटि में मध्याह्न काल तथा रोमक देश में मध्य रात्रि का समय होता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

२. यहूदी लोगों ने दिन का (वार का) आरम्भ सूर्यास्त के समय से माना है। मुसलमान भी वार का आरम्भ सायंकाल से ही मानते हैं। इसका प्रमाण इबरानी बाइबल के 'बॅ-रेशीथ्' (उत्पत्ति=Genesiss) नामक प्रकरण में (१—५ तथा १।१३) में निम्न शब्दों में मिलता है—'वय्-यिक़रा अलोहीम् ला-ओर 'योम् व ल ख़ो श ख क़ारा 'लायला'। व-यही अरभ, व-यही भोक़र्: योम् अख़ाध्।' (अर्थात् ईश्वर ने प्रकाश को दिन तथा अन्धकार को रात्रि कहा। सन्ध्या हुई, प्रातः हुआ; आदि का एक दिन हुआ) 'व-यही-अरभ् व-यही भोक़र्: योम् शलीशी।' (अर्थात् सांझ हुई, भोर हुआ तीसरा दिन हुआ)।

यहाँ यह प्रमाण भुवनवाणी ट्रस्ट के संस्करण के अनुसार दिया गया है, इसमें मूल बाइबल हिब्रूभाषा में है। जिसमें सन्ध्या के लिये 'अरभ्', प्राण के लिये 'भोक़र', दिन के लिये 'योम्' तथा रात्रि के लिये 'लायला' शब्दों का प्रयोग हुआ है। यहाँ पाठक इतना तो समझ ही सकते हैं कि संस्कृत में रात्रि के लिये रजनी तथा रजनिका शब्द संस्कृत में प्रचलित है। जिनका अपभ्रंश रयणि-रैन-रैना तथा रयना आदि हैं। यहाँ 'र' के स्थान पर ल तथा म के स्थान पर भी ल होकर रजनी शब्द ही बिगड़कर 'ला-यला' (हिब्रू भाषा में) बन गया है। देववाणी संस्कृत के मूल शब्द इसी प्रकार घिसकर हिब्रू, अरामैक तथा अरबी आदि भाषाओं के शब्द बन गये हैं। संस्कृत ही विश्व की भाषाओं की जननी है। हिन्दी में प्रातः के लिये 'भोर' का प्रयोग होता है। भुरहार, भुरहारा, भुराटा आदि शब्द भी राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा हरियाणा के अनेक भागों में प्रचलित हैं। 'योम्' शब्द संस्कृत के 'यम' (सूर्य=दिन) का अपभ्रंश है, जिसे तिब्बती में 'ञिमा' कहते हैं।

३. आधुनिक समय में लोक-व्यवस्था के लिये अन्तरराष्ट्रीय जगत् में अर्धरात्रि से ही वार की प्रवृत्ति स्वीकार की गयी है, यह भारत में अंग्रेजों की गुलामी का चिह्न मात्र है।

वारों का प्रभाव

रविः स्थिरः चरश्चन्द्रः कुजः क्रूरो बुधोऽखिलः।
लघुरीज्यो मृदुःशुक्रो तीक्ष्णो दिनकरात्मजः॥ ८॥

रविवार स्थिरतादायक, चन्द्र चर स्वभाव का, मंगलवार क्रूर, बुधवार सर्वगुण-सम्पन्न, गुरुवार लघु, शुक्र मृदु तथा शनि तीक्ष्ण होता है॥ ८॥

सात वारों में तैलाभ्यंग का फल एवं वार प्रवृत्ति का समय

अभ्यक्तो भानुवारे यः स नरः क्लेशवान् भवेत्।
ऋक्षेशे कान्तिभाग् भौमे व्याधिः सौभाग्यमिन्दुजे॥ ९॥
जीवे नैस्त्वं सिते हानिर्मन्दे सर्वसमृद्धयः।
उदयादुदये वारो इति पूर्वविनिश्चितम्॥ १०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रविवार को तेल लगाने से क्लेश की प्राप्ति होती है। सोमवार को तैल मालिश कान्ति बढ़ाती है। मंगलवार को तैलाभ्यंग से व्याधि होती है। बुधवार को तेल लगाने से सौभाग्य बढ़ता है। गुरुवार को तैलाभ्यंग धनहानिकारक, शुक्रवार को हानिकारक तथा शनिवार को तेल लगाने से सभी प्रकार की समृद्धि होती है। वार का प्रारम्भ सूर्योदय से होता है, यह पूर्व से ही निश्चित है॥ ९-१०॥

लंकोदय से वार प्रवृत्ति

लङ्कोदयात् स्याद्वारादिस्तस्मादूर्ध्वमधोऽपि वा।
देशान्तरचरार्धाभिर्नाडीभिरपरो भवेत्॥ ११॥

वार-प्रवृत्ति भारत में लंकोदय के अनुसार होती है। उसके लिये अक्षांश एवं देशान्तर के समयानुसार प्रत्येक समय में कुछ पलों का अन्तर होता है॥ ११॥

विमर्श—आजकल भारत में मानक समय (I.S.T.) का प्रयोग होता है, तदनुसार प्रातःकाल किसी भी दिन जब घड़ी में ६बजकर २७ मिनट होते हैं। भारत में हर स्थान पर उसी समय आवश्यक रूप से लंकोदय होता है, उसी से होरा आदि की गणना करना सुविधाजनक है।

बालप्रद एवं बलहीन ग्रह के वार का फल

बलप्रदस्य खेटस्य वारे सिध्यति यत्कृतम्।
तत्कर्मबलहीनस्य दुःखेनापि न सिध्यति॥ १२॥

जो काम किया जाय, उसके लिये गोचर में सूर्यादि जिस ग्रह का बल आवश्यक हो, उस बल के होने पर यदि उस ग्रह के वार में उक्त कार्य किया जाय, तो उस कार्य में शीघ्र सफलता मिलती है। इसके विपरीत निर्बलग्रह के वार में कार्यारम्भ करने पर कठिनता से भी वह कार्य सिद्ध नहीं होता है।

विमर्श—विद्यारम्भ के लिये गुरुबल तथा बुध बल आवश्यक है, यदि इनका बल गोचर में प्राप्त हो, तो उनके वार में विद्यारम्भ शीघ्र तथा अच्छी सफलता देता है।

शुभ एवं क्रूर वारों के कार्य

बुधेन्दुजीवशुक्राणां वासराः सर्वकर्मसु।
सिद्धिदाः क्रूरवारेषु यदुक्तं कर्म सिध्यति॥ १३॥

बुधवार, सोमवार, गुरुवार तथा शुक्रवार सभी शुभ कर्मों के लिये प्रशस्त होते हैं। जबकि क्रूरवारों में प्रायः (मंगल-शनि में) क्रूर कार्य ही करना चाहिये। (यहाँ रविवार को मध्यम मानना चाहिये)॥ १३॥

ग्रहों के वर्णानुसार कार्य की प्रशस्तता

रक्तवर्णो रविश्चन्द्रो गौरो भौमस्तु लोहितः।
दूर्वावर्णो बुधो जीवः पीतः श्वेतस्तु भार्गवः॥ १४॥
कृष्णः शौरिः स्ववारेषु स्वस्व वर्णाः क्रिया शुभाः॥ १५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सूर्य का रक्तवर्ण, चन्द्र का गौरवर्ण, मंगल का लोहित वर्ण, बुध का दूब-जैसा हरा रंग, गुरु का पीत वर्ण, शुक्र का श्वेत वर्ण तथा शनि का कृष्ण वर्ण है, अत: रंग-सम्बन्धी कार्य तथा रंगीन वस्तुओं का उपयोग उनके वारों के अनुसार करना चाहिये ॥ १४-१५ ॥

वारों में प्रहरानुसार कुलिक योग

अद्रिबाणाब्धयस्तर्कतोयाकर धराधरा:।
बाणाग्निलोचनानि स्युर्वेदबाहु: शिलीमुखा: ॥ १६ ॥
लोकेन्दुवसवो नेत्र शैलाग्नीन्दु युगोरस्त:।
कुलिका यमघण्टाख्या अर्धप्रहरसंज्ञका: ॥ १७ ॥
प्रहरार्धप्रमाणास्ते विज्ञेया सूर्यवासरात्।

रविवार के दिन सातवें-पाँचवें-चौथे प्रहरों में, सोमवार के छठवें-चौथे तथा सातवें प्रहरों में, मंगलवार को पाँचवें-तीसरे-दूसरे प्रहरों में, बुधवार को चौथे-दूसरे-पाँचवें प्रहरों में, गुरुवारको तीसरे-पहले-आठवें प्रहरों में, शुक्रवार को दूसरे-सातवें-तीसरे प्रहरों में एवं शनिवार को पहले-चौथे-छठवें प्रहरों में क्रमश: कुलिक यमघण्ट तथा प्रहरार्ध (अर्धमान=वारवेला)—ये तीन योग होते हैं। ये योग मात्र आधे प्रहर के समय तक रहते हैं ॥ १६-१७½ ॥

विमर्श—इन तीनों प्रकार के दोषों का विचार केवल दिन में ही होता है, रात्रि में इनका विचार नहीं किया जाता है। दिनमान में ८ का भाग देने से एक अर्धप्रहर का मान ज्ञात हो जाता है। मान लो रविवार को इनका विचार करना है तो उस दिन सातवें अर्धयाम में कुलिक योग, पाँचवें अर्धयाम में यमकण्टक योग तथा चौथे अर्धयाम में अर्धप्रहर योग (वारवेला) होता है।

कुलिक, यमघण्ट तथा अर्धप्रहर (वारवेला) प्रदर्शन चक्र

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	वारों के नाम
७	६	५	४	३	२	१	कुलिक
५	४	३	२	१	७	४	यमघण्ट
४	७	२	५	८	३	६	अर्धप्रहर
८	८	६	१	४	७	२	कालवेला

कालहोरा का कथन

यस्मिन् वारे क्षणो वार इष्टस्तद्वासराधिप: ॥ १८ ॥
आद्यष्षष्ठो द्वितीयोऽस्मात्तस्मात्षष्ठस्तृतीयक:।
षष्ठषष्ठश्चैतरेषां कालहोराधिपा: स्मृता: ॥ १९ ॥
सार्धनाडीद्वयेनैवं दिवारात्रौ यथाक्रमात् ॥ २० ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यस्य खेटस्य यत्कर्म वारे प्रोक्तं विधीयते।
ग्रहस्य कर्मवारेऽपि तत्क्षणे तस्य सर्वदा॥ २१॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां वारलक्षणाध्यायः पञ्चमः ॥ ५ ॥

जिस वार के जिस क्षण में जिस वार की भी होरा आती है, तब उस वार का स्वामी वही ग्रह होता है, जिसकी कि वह होरा होती है। सूर्योदय से सर्वप्रथम एक घण्टे या ढाई घटी तक उसी वार की होरा होती है; फिर उससे छठे वार की, फिर उससे छठे वार की इस क्रम से एक बार में अन्य सभी वारों की होराएँ हो जाती हैं।

जिस ग्रह के वार में जो कार्य करना लिखा है, वह सभी कार्य उसके होरा में भी करना अभीष्ट होता है॥ १८-२१॥

प्रति वार को काल-होरा-प्रदर्शक चक्र

होरा घंटा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
होरा घटी	२॥	५	७॥	१०	१२॥	१५	१७॥	२०	२२॥	२५	२७॥	३०	३२॥	३५	३७॥	४०	४२॥	४५	४७॥	५०	५२॥	५५	५७॥	६०
सूर्य	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.
चन्द्र	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.
मंगल	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.
बुध	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.
गुरु	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.
शुक्र	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.
शनि	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.

इस प्रकार नारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के पंचम वारलक्षणाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

षष्ठोऽध्यायः

नक्षत्रफलाध्यायः

नक्षत्रों के स्वामी

नक्षत्रेशाः क्रमाद् दस्त्रयमवह्निपितामहाः।
चन्द्रेशादितिजीवाहि पितरो भगसंज्ञिताः॥ १॥
अर्यमार्कत्वष्ट्रमरुच्छक्राग्निमित्रवासवाः।
निर्ऋत्युदग् विश्वविधिगोविन्दवसुतोयपाः॥ २॥
ततोऽजपादऽहिर्बुध्न्यः पूषा चेति प्रकीर्तिताः।
अष्टाविंशति ऋक्षेशाः अभिजित्सहिता तथा॥ ३॥

१. अश्विनीकुमार, २. यम, ३. अग्नि, ४. पितामह, ५. चन्द्रमा, ६. रुद्र, ७. अदिति, ८. गुरु, ९. सर्प, १०. पितर, ११. भग, १२. अर्यमा, १३. सूर्य, १४. त्वष्टा, १५. वायु, १६. इन्द्राग्नि, १७. मित्र, १८. इन्द्र, १९. निर्ऋति, २०. आप, २१. विश्वेदेवा, २२. ब्रह्मा, २३. विष्णु, २४. वसु, २५. वरुण, २६. अजैकपाद, २७. अहिर्बुध्न्य तथा २८. पूषा इस प्रकार अभिजित्सहित ये अट्ठाइस नक्षत्रों के देवता कहे गये हैं॥ १-३॥

विमर्श—यद्यपि अभिजित् नक्षत्र की गणना चन्द्रस्पष्ट, विंशोत्तरी दशा आदि में न होने के कारण पंचांगों में उसका प्रारम्भ या समाप्तिकाल नहीं लिखा जाता है, परन्तु मुहूर्तशास्त्र, स्वरशास्त्र आदि में तथा सप्तशलाका आदि चक्रों में अभिजित् की गणना की जाती है। मध्यम मान से उत्तराषाढ़ा नक्षत्र की अन्तिम पन्द्रह घटी (चतुर्थ चरण) तथा श्रवण की प्रारम्भ की चार घटी मिलाकर लगभग १९ घटी मान अभिजित् नक्षत्र का होता है।

अश्विनी नक्षत्र में करणीय कृत्य

वस्त्रोपनयनक्षौरः सीमन्ताभरणक्रिया।
स्थापनाश्वादियानं च कृषिविद्यादयोऽश्विभे॥ ४॥

अश्विनी नक्षत्र में, वस्त्रकार्य (बुनना, सीना, पहिनना तथा धोना, रँगना आदि), यज्ञोपवीत, क्षौरकर्म, सीमन्त-संस्कार, आभूषण-निर्माण-धारण, प्रतिष्ठा, वाहन-प्रयोग, कृषि तथा विद्यारम्भ शुभ होते हैं॥ ४॥

भरणी नक्षत्र में करणीय कृत्य

वापीकूपतडागादिविषशस्त्रोग्रदारुणम्।
बिलप्रवेश गणितनिक्षेपा याम्यभे शुभाः॥ ५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भरणी नक्षत्र में कुआँ, बावड़ी, नलकूप, जलाशय, पानी की टंकी आदि के निर्माण एवं उपयोग-सम्बन्धी कार्य, विषप्रयोग, शस्त्रप्रयोग, दारुणकार्य, शत्रु आदि के गुप्त स्थानों (बिलों) में प्रवेश करना, गणित-सम्बन्धी कार्य, धन एवं अन्न आदि का भण्डारण करना शुभ होता है ॥ ५ ॥

कृत्तिका नक्षत्र के कार्य

अग्न्याधानास्त्रशस्त्रोग्रसन्धिविग्रहदारुणाः ।
सङ्ग्रामौषधवादित्रक्रियाः शस्ताश्च वह्निभे ॥ ६ ॥

अग्निस्थापन (चूल्हा, गैस, स्टोव, ईंट, भट्टा आदि में अग्नि डालना, यज्ञाग्नि, अखण्ड ज्योति आदि की स्थापना), अस्त्र-शस्त्र, उग्र कार्य, सन्धि, विग्रह, दारुण कार्य (ऊँट के नकेल डालना, बैल बधिया करना, आदि) युद्ध, औषध कार्य तथा बाजे बजाने एवं बनाने सम्बन्धी कार्य कृत्तिका में करने चाहिये ॥ ६ ॥

रोहिणी नक्षत्र में विहित कृत्य

सीमन्तोपनयनोद्वाहवस्त्रभूषा स्थिरक्रियाः ।
गजवास्त्वभिषेकाश्च प्रतिष्ठा ब्रह्मभे शुभाः ॥ ७ ॥

रोहिणी नक्षत्र में सीमन्त, उपनयन, विवाह, वस्त्राभूषण-निर्माण एवं धारण, स्थिर कार्य, हाथी, घोड़ा, मोटर साइकिल आदि वाहनों का प्रयोग तथा देवप्रतिष्ठा-सम्बन्धी कार्य करना शुभ होता है ॥ ७ ॥

मृगशिरा में विहित कर्म

प्रतिष्ठाभूषणोद्वाहसीमन्तोपनयक्रियाः ।
क्षौरवास्तुगजोष्ट्राश्च यात्रा शस्ता च चन्द्रभे ॥ ८ ॥

मृगशिरा नक्षत्र में देवादि की प्रतिष्ठा, आभूषणादि का निर्माण एवं धारण करना, विवाह, सीमन्त, यज्ञोपवीत, क्षौरकर्म, वास्तु (गृह-देवालयादि का निर्माण एवं प्रवेश) वाहनादि का प्रयोग तथा यात्रा इत्यादि कार्य शुभ होते हैं ॥ ८ ॥

आर्द्रा में विहित कृत्य

ध्वजतोरणसंग्रामप्राकारास्त्रक्रियाः शुभाः ।
सन्धिविग्रहवैतानरसाद्याः शिवभे शुभाः ॥ ९ ॥

आर्द्रा नक्षत्र में ध्वजारोपण, तोरण-निर्माण, तम्बू आदि का लगाना, युद्ध, परकोटा या चहारदीवारी आदि का निर्माण, अस्त्र-शस्त्र-निर्माण-क्रय एवं प्रयोग, सन्धि-विग्रह, इत्यादि क्रियाएँ शुभ होती हैं ॥ ९ ॥

पुनर्वसु में विहित कृत्य

प्रतिष्ठा यानसीमन्तवस्त्रवास्तूपनायनम् ।
क्षौरास्त्रकर्मादितिभे विधेयं धान्यभूषणम् ॥ १० ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुनर्वसु नक्षत्र में देव-प्रतिष्ठा, जलाशय-प्रतिष्ठा, आराम-प्रतिष्ठा, वाहन-निर्माण एवं प्रयोग, सीमन्त कर्म, वस्त्र-निर्माण, धारण, वास्तुकर्म, जनेऊ, मौंजीबन्धन, क्षौरकर्म, अनाज की कटाई, बुवाई, निराई, कणमर्दन, संग्रह तथा आभूषणादि से सम्बन्धित कार्य करना चाहिये॥ १०॥

पुष्य नक्षत्र में विहित कर्म

यात्रा प्रतिष्ठा सीमन्तव्रतबन्धप्रवेशनम्।
करग्रहं विना सर्वं कर्म देवेज्यभे शुभम्॥ ११॥

पुष्य नक्षत्र यात्रा, प्रतिष्ठा, सीमन्त, व्रतबन्ध, गृहप्रवेश आदि में शुभ है। इसके अतिरिक्त पुष्य में विवाह को छोड़कर शेष सभी शुभकार्य करना प्रशस्त माना गया है॥ ११॥

आश्लेषा के कृत्य

अनृतव्यसनद्यूतक्रोधाग्निविषदाहकम्।
विवादरसवाणिज्यं कर्म कद्रुजभे शुभम्॥ १२॥

झूठी साक्ष्य देना, बुरी आदत सीखना, जुआ, क्रोध, अग्निकर्म, विषकर्म, आग लगाना, झगड़ा-मुकदमा आदि करना, रसक्रिया (रसायन) तथा वाणिज्य-व्यापार आदिकर्म आश्लेषा में शुभ होते हैं॥ १२॥

मघा के कृत्य

कृषिवाणिज्यगोधान्यरणोपकरणादिकम्।
विवाहनृत्यगीताद्यं निखिलं कर्म पैत्रभे॥ १३॥

मघा नक्षत्र के स्वामी पितर हैं, उसमें खेती, व्यापार, पशुपालन, धान्यकर्म, युद्ध, अस्त्र-शस्त्र, उपकरण (औजार) (Instruments), विवाह, नृत्य, गीत, वादन आदि सभी कार्य करना शुभ है॥ १३॥

तीनों पूर्वा के कृत्य

विवादविषशस्त्राग्नि दारुणोग्राहवादिकम्।
पूर्वात्रयेऽखिलं कर्म कर्त्तव्यं मांसविक्रयम्॥ १४॥

त्रिपूर्वा (पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वा भाद्रपद) में विषप्रयोग, शस्त्र, अग्निकार्य, दारुणकर्म, उग्रकर्म, युद्ध-झगड़ा-मुकदमा (दीवानी, फौजदारी, माल आदि) तथा मांस-विक्रय इत्यादि कार्य करना उचित है॥ १४॥

तीनों उत्तरा के कृत्य

वस्त्राभिषेकलोहाश्म विवाहव्रतबन्धनम्।
प्रवेशस्थापनाश्वेभ वास्तुकर्मोत्तरात्रये॥ १५॥

त्रिउत्तरा (उ०फा०, उ०षा०, उ०भा०) में वस्त्रकर्म, अभिषेक, लौहकर्म, प्रस्तरकार्य, विवाह, जनेऊ, गृहप्रवेश, प्रतिष्ठा, हाथी-घोड़े, वाहनादि का प्रयोग तथा वास्तुकर्म शुभ होता है॥ १५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हस्त नक्षत्र के कृत्य

प्रतिष्ठोद्वाहसीमन्तयानवस्त्रोपनायनम् ।
क्षौरवासत्वाभिषेकाश्च भूषणं कर्मभानुभे॥ १६॥

देवादि की प्रतिष्ठा, विवाह, सीमन्त, यानारोहण, वस्त्रप्रयोग, जनेऊ, क्षौरकर्म, अभिषेक, तथा आभूषण धारण के कार्य हस्त नक्षत्र में करना चाहिए॥ १६॥

चित्रा नक्षत्र के कृत्य

प्रवेशवस्त्रसीमन्तप्रतिष्ठाव्रतबन्धनम् ।
त्वाष्ट्रभे वास्तुविद्या च क्षौरभूषणकर्म यत्॥ १७॥

प्रवेश (नूतन या जीर्ण गृह में प्रवेश, यात्रा के उपरान्त गृहप्रवेश), वस्त्र-निर्माण, वस्त्रधारण, सीमन्त, प्रतिष्ठा, व्रतबन्धन, वास्तुकर्म, विद्यारम्भ, क्षौरकर्म, तथा वस्त्राभूषण धारण करना—ये सब कर्म चित्रा में प्रशस्त हैं॥ १७॥

स्वाति नक्षत्र के कृत्य

प्रतिष्ठोपनयोद्वाहवस्त्रसीमन्तभूषणम् ।
प्रवेशाश्वेभकृष्यादि क्षौरकर्म समीरभे॥ १८॥

प्रतिष्ठाकार्य, जनेऊ, विवाह, वस्त्राभूषण, सीमन्तकर्म, गृहप्रवेशादि, हाथी, घोड़ा, वाहन आदि का प्रयोग, खेती-बागवानी-वृक्षारोपण तथा क्षौर कर्मादि स्वाति में करणीय होते हैं॥ १८॥

विशाखा में विहित कृत्य

वस्त्रभूषणवाणिज्य वस्तुधान्यादिसंग्रहः।
इन्द्राग्निभे नृत्यगीतशिल्पलोहाश्मलेखनम्॥ १९॥

विशाखा नक्षत्र के स्वामी इन्द्राग्नि हैं। इसमें वस्त्राभूषणों का निर्माण एवं धारण, वाणिज्य-विपणि वास्तुकर्म, धान्यादि संग्रह, नृत्य-गीत-वादन, शिल्पकर्म लौहकार्य, पत्थर का कार्य तथा लेखन आदि करना शुभ है॥ १९॥

अनुराधा में विहित कृत्य

प्रवेशस्थापनोद्वाहव्रतबन्धाष्ट मंगलाः।
वास्तुभूषणवस्त्राश्वा मैत्रभे सन्धिविग्रहाः॥ २०॥

प्रवेश, स्थापन, उद्वाह, व्रतबन्ध, अष्ट मंगल (ब्राह्मण, गौ, यज्ञ, स्वर्ण, घृत, सूर्य, जल तथा राजा आदि) का पूजन आदि, वास्तुकर्म, वस्त्राभूषण-निर्माण एवं धारण, अश्वादि वाहनों की सवारी करना, सन्धि एवं विग्रह आदि कर्म अनुराधा में प्रशस्त हैं॥ २०॥

ज्येष्ठा में विहित कृत्य

क्षौरास्त्रशस्त्रवाणिज्य गोमहिष्यम्बुकर्म यत्।
इन्द्रभे गीतवादित्रशिल्पलोहाश्मलेखनम्॥ २१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्षौरकर्म, शस्त्रकर्म, वाणिज्य, गोकर्म, महिषीकर्म, अम्बुकर्म, गायन, वादन, नर्तन, शिल्पकर्म, लोहा, पत्थर आदि का कार्य तथा लेखन एवं चित्रकारी ज्येष्ठा में शुभ होते हैं॥ २१॥

मूल में विहित कृत्य

विवाहकृषिवाणिज्यदारुणाह्व भेषजम्।
नैर्ऋते नृत्यशिल्पास्त्रशस्त्रलोहाश्मलेखनम्॥ २२॥

मूल नक्षत्र के स्वामी निर्ऋति (राक्षस) हैं, अतः इसमें विवाह, कृषि (बागवानी आदि), वाणिज्य-व्यापार, दारुण कर्म, युद्ध, औषधकर्म, नृत्यकर्म शिल्पकार्य, शस्त्रकर्म, लौहकर्म, अश्मकर्म तथा लेखनादि करना चाहिये।

श्रवण नक्षत्र में विहित कृत्य

प्रतिष्ठाक्षौरसीमन्तयानोपनयनौषधम् ।
पुराणैस्तु गृहारम्भो विष्णुभे च समीरितम्॥ २३॥

श्रवण नक्षत्र के देवता विष्णु हैं; इसमें प्रतिष्ठा, क्षौरकर्म, सीमन्त, यानारोहण, औषधसम्बन्धी कर्म, (निर्माण, प्रयोग, विक्रय आदि) तथा गृह-निर्माण करना आदि कार्य प्राचीन विद्वानों ने शुभ कहे हैं॥ २३॥

धनिष्ठा में विहित कृत्य

वस्त्रोपनयनं क्षौरं मौञ्जीबन्धनभेषजम्।
वसुभे वास्तुसीमन्तप्रवेशाश्च विभूषणम्॥ २४॥

धनिष्ठा में वस्त्रकार्य, जनेऊ, क्षौर, मौंजी बन्धन (मूँज की मेखला बाँधना) सीमन्त, भेषजकर्म, वास्तुकर्म, आभूषणधारण तथा गृहप्रवेश शुभ होता है॥ २४॥

शतभिषा में विहित कृत्य

प्रवेशस्थापनं क्षौरं मौञ्जीबन्धनभेषजम्।
अश्वारोहणसीमन्तवास्तुकर्म जलेशभे॥ २५॥

शतभिषा नक्षत्र के स्वामी वरुण हैं। इस नक्षत्र में गृहप्रवेश, यात्रोत्तरप्रवेश, स्थापन (देवता, मन्दिर, पद आदि की स्थापना) क्षौर, मौञ्जीकर्म, भेषजकर्म, अश्वारोहण, सीमन्तकर्म तथा वास्तुकर्म करना चाहिये॥ २५॥

रेवती में विहित कृत्य

विवाहव्रतबन्धाश्च प्रतिष्ठायानभूषणम्।
प्रवेशवस्त्रसीमन्तक्षौरभेषजमन्त्यभे ॥ २६॥

अन्तिम नक्षत्र रेवती में विवाह, व्रतबन्ध (जनेऊ), प्रतिष्ठा, वाहनप्रयोग, गृहप्रवेशादि, वस्त्राभूषण, क्षौर, भेषजकर्म आदि करना चाहिये॥ २६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—यहाँ इस अध्याय में तीनों पूर्वा तथा तीनों उत्तरा के कार्य एक साथ वर्णित हैं तथा अभिजित् नक्षत्र के कर्मों का भी स्वतन्त्र रूप से उल्लेख नहीं किया है। इस सम्बन्ध में बृहद् दैवज्ञरंजन में लिखा है—

'अभिजिद् ब्रह्मदैवत्यं त्रीणि ताराणि कारयेत्।
यात्रागारसमुद्दिश्य ब्रह्मणो वचनं यथा॥'

अधोमुख नक्षत्र तथा उनके कार्य

पूर्वात्रयाग्निमूलाहि द्विदैवत्यमघान्तकम्।
अधोमुखं तु नवकं भानां तत्र विधीयते॥ २७॥
बिलप्रवेशगणितभूतसाधनलेखनम्।
शिल्पकर्म लताकूपनिक्षेपोद्धारणादि यत्॥ २८॥

पूर्वा फा०, पू०षा०, पू०भा०, कृत्तिका, मूल, श्लेषा, विशाखा, मघा तथा भरणी—इन नौ नक्षत्रों का समूह (नवक) अधोमुख नक्षत्र नवक कहलाता है॥ २७॥

इन अधोमुख नक्षत्रों में शत्रु आदि के गुप्तस्थानों में प्रवेश, भूम्यागार, बंकर आदि में प्रवेश, गणितकार्य (लेखा-जोखा) भूतसाधन (भूत-प्रेत आदि की सिद्धि, प्रयोगशाला में सूक्ष्म जीवाणुओं पर प्रयोग आदि), लेखन, चित्रकारी, शिल्पकर्म, लता लगाना, कूपखनन, बैंक में खाता एवं लॉकर आदि में जमा करना इत्यादि कार्य करना चाहिये॥ २८॥

तिर्यङ्मुखनक्षत्र तथा उनके कृत्य

मित्रेन्दुत्वाष्ट्र हस्तार्द्रादितिभान्त्योऽश्ववायुभम्।
तिर्यङ्मुखाख्यं नवकं भानां तत्र विधीयते॥ २९॥
हलप्रवाहगमनं गन्त्री यन्त्रगजोष्ट्रकम्।
अजादिग्रहणञ्चैव हयकर्म यतस्ततः॥ ३०॥
खरगोरथनौयानं लुलायहयकर्म च।
शकटग्रहणञ्चैव तथा पश्वादिकर्म च॥ ३१॥

अनुराधा, मृगशिरा, चित्रा, हस्त, आर्द्रा, पुनर्वसु, रेवती, हस्त, अश्विनी—इन नौ नक्षत्रों का नवक तिर्यंमुख समूह कहलाता है। तिर्यक् का अर्थ तिरछा होता है। इसमें तिर्यक्कर्म जैसे कि हल चलाना, यात्रा, गंत्री (गाड़ी एवं इंजन-मोटर आदि) का प्रयोग, यन्त्र-प्रयोग, हाथी, घोड़ा, दुपहिया, चौपहिया तथा बहुपहिया वाहनों का प्रयोग, भेड़-बकरी आदि का पालना, रख-रखाव करना, घोड़ों का पालना, गधा, गाय, रथ, नौका आदि प्रयोग, लुलाय (भैंस पालना), कार आदि खरीदना तथा सभी प्रकार के पशुपालन-सम्बन्धी कार्य करना चाहिये॥ २९—३१॥

विमर्श—आधुनिक समय में जितने भी यन्त्र-मोटर-इंजन तथा मशीनरी हैं, उसका प्रारम्भ एवं प्रयोग इन्हीं तिर्यंमुख नक्षत्रों में उनकी शुभता के अनुसार करना चाहिये।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ऊर्ध्वमुखनक्षत्र तथा उनके कृत्य

ब्रह्मविष्णुमहेशार्य शततारावसूत्तराः।
ऊर्ध्वास्यं नवकं भानां प्रोक्तं चैव विधीयते॥ ३२॥
पुरहर्म्यगृहारामतोरणध्वजकर्म च।
प्रासादभित्तिकोद्यान प्राकाराश्चैव मण्डपम्॥ ३३॥

रोहिणी, श्रवण, आर्द्रा, पुष्य, शतभिषा, धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा तथा उत्तरा भाद्रपद—इन नौ नक्षत्रों के नवक को ऊर्ध्वमुखगण (ऊपर की ओर मुखवाले नक्षत्र) कहते हैं॥ ३२॥

इनमें, नगर एवं कालोनी का निर्माण आरम्भ करना, बहुमंजिला विशाल भवन, देवालय, धर्मस्थान आदि का निर्माण करना, आवास, उद्यान, घुड़साल, अश्वशाला, गैरिज आदि का निर्माण, परकोटा, तोरण आदि का निर्माण, तम्बू लगाना, दीवाल बनाना, मण्डपनिर्माण आदि कार्य शुभ होते हैं॥ ३३॥

विशेष—गृहनिर्माण में पंचक के दो नक्षत्र उत्तराभाद्र तथा रेवती शुभ होते हैं, अतः ये घर की नींव लगाने में तो प्रशस्त होते हैं, परन्तु छत आदि डालने में इन्हें त्यागना ही श्रेयस्कर होता है।

नक्षत्रों की स्थिरादि सात संज्ञाएँ

स्थिरं रोहिण्युत्तराभं क्षिप्रं सूर्याश्विपुष्यभम्।
साधारणं द्विदैवत्यं वह्निभं चरसंज्ञितम्॥ ३४॥
वस्वादित्यम्बुपस्वाती विष्णुभं मृदुसंज्ञितम्।
चित्रान्त्यमित्रशशिभमुग्रं पूर्वा मघान्तकम्॥ ३५॥
मूलेन्द्राहिभं तीक्ष्णं स्वनामसदृशं फलम्।
सप्तविधेषु कृत्येषु संज्ञा सप्तविधा स्मृता॥ ३६॥

१. रोहिणी, तीनों उत्तरा—ये स्थिर अथवा ध्रुवसंज्ञक होते हैं, इनमें स्थिर प्रकृति के कार्य करना चाहिये।

२. हस्त, अश्विनी तथा पुष्य—ये नक्षत्र लघुसंज्ञक अथवा क्षिप्रसंज्ञक होते हैं। इनमें शीघ्रता के लिये किये जानेवाले कार्य करें।

३. विशाखा कृत्तिकानक्षत्र साधारण अथवा मिश्रसंज्ञक होते हैं, ये चर एवं स्थिर दोनों प्रकार के कार्यों के लिये उपयोगी हैं।

४. धनिष्ठा, पुनर्वसु, शतभिषा, स्वाति, श्रवण—ये चरसंज्ञक अथवा चरसंज्ञक नक्षत्र होते हैं।

५. चित्रा, रेवती, अनुराधा, मृगशिरा—ये मृदु अथवा मैत्रसंज्ञक नक्षत्र होते हैं।

६. तीनों पूर्वा, मघा तथा भरणी—ये उग्र अथवा क्रूर होते हैं, इनमें उग्रकार्य किये जाते हैं।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

७. तीक्ष्ण एवं दारुण नक्षत्र—मूल, ज्येष्ठा आश्लेषा—ये तीन नक्षत्र तीक्ष्ण अथवा दारुण नक्षत्र कहलाते हैं।

इस प्रकार सात श्रेणियों में विभाजित—इन नक्षत्रों का चयन अपने अभीष्ट कार्य की प्रकृति के लिये कर लेना उचित है॥ ३४-३६॥

कर्णवेध में उपयोगी नक्षत्र

चित्रादित्याश्विविष्ण्वन्त्यरविमित्रवसूडुषु ।
समृगेषु कालानां कर्णवेधक्रिया हिता॥ ३७॥

चित्रा, पुनर्वसु, अश्विनी, श्रवण, रेवती, हस्त, अनुराधा, धनिष्ठा तथा मृगशिरा इन नक्षत्रों में शिशुओं का कर्णवेध करना (कान में बाली आदि पहिनाना) शुभ होता है॥ ३७॥

गजकर्म (भारीवाहन) के नक्षत्र

दस्त्रेन्द्वदिति तिष्येषु करादित्रित्रये तथा।
गजकर्माखिलं यत्तद् विधेयं स्थिरभेषु च॥ ३८॥

अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा तथा स्वाती—इन नक्षत्रों में गजकर्म (हाथी का पालना तथा भारी वाहन खरीदकर उनका उपयोग करना) शुभ है। स्थिर नक्षत्रों में विशेषकर रोडरोलर आदि का प्रयोग करना चाहिये॥ ३८॥

अश्वकर्म के नक्षत्र

सुदिने चरभे क्षिप्रे मृदुभे स्थिरभेषु च।
वाजिकर्माखिलं कर्म सूर्यवारे विशेषतः॥ ३९॥

शुभवार (सोमवार, बुध, गुरु, शुक्र) में चर नक्षत्रों, क्षिप्र नक्षत्रों, मृदु एवं स्थिर नक्षत्रों में तथा रविवार में घोड़े (मोटर साइकिल) आदि का लेना-सीखना आदि शुभ होता है॥ ३९॥

पशुकर्म के नक्षत्र

चित्रा श्रवणवैरिञ्चि त्र्युत्तराषु गमागमम्।
दर्शाष्टम्यां चतुर्दश्यां पशूनां न कदाचन॥ ४०॥

चित्रा, श्रवण, रोहिणी, उ०फा०, उ०षा०, उ०भा०—इन नक्षत्रों में पशुओं का लाना, ले जाना, क्रय-विक्रय एवं पालन आदि शुभ होता है। परन्तु उस दिन अष्टमी, चतुर्दशी तथा अमावास्या न होनी चाहिये, ये तीन तिथियाँ पशुकर्म में वर्जित कही गयी हैं॥ ४०॥

हलप्रवाह के नक्षत्र

मृदुध्रुवक्षिप्रचरविशाखापितृभेषु च।
हलप्रवाहं प्रथमं विदध्यान्मूलभे वृषैः॥ ४१॥

मृदु, ध्रुव, क्षिप्र, चर—इन नक्षत्रों में तथा विशाखा एवं मघा में प्रथम बार बैलों या ट्रैक्टर से खेत की जुताई करना शुभ होता है॥ ४१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हल-चक्र का विचार

हलादौ वृषनाशाय भत्रयं सूर्यभुक्तभात्।
अग्रे यच्चैव वैलक्ष्म्यै सौम्यं पार्श्वे च पञ्चमम्॥ ४२॥
शूलत्रयेऽपि नवकं मरणायान्यपञ्चकम्।
श्रियै पुच्छे त्रयं श्रेष्ठं स्याच्चक्रे लाङ्गले शुभम्॥ ४३॥

तत्कालीन सूर्यनक्षत्र से दिननक्षत्र तक गणना करे। आदि के तीन नक्षत्र बैलों (ट्रैक्टर के इंजन) के लिये हानिकर (नाशक) होते हैं। फिर हलाग्र के तीन नक्षत्र लक्ष्मीदायक, फिर पार्श्व के पाँच नक्षत्र शुभ फलदायक, फिर शूलत्रय पर नौ नक्षत्र मृत्युदायक, फिर अन्य पाँच नक्षत्र लक्ष्मीदायक तथा अन्त में पूँछ के ऊपर के तीन नक्षत्र श्रेष्ठ होते हैं॥ ४२-४३॥

विमर्श—सर्वप्रथम पूर्व में कथित नक्षत्रों को पंचांग में देखें, फिर उन नक्षत्रों के शुभाशुभ फल का विचार सूर्य नक्षत्र के अनुसार हलचक्र से देखें। इसमें अभिजित् सहित अट्ठाईस नक्षत्र गिनें।

हलचक्र (सूर्य नक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गणना)

आदि	हलाग्र	पार्श्व	शूलत्रय	अन्य	पुच्छ	**स्थान**
१-२-३	४-५-६	७-८-९- १०-११	१२-१३-१४ १५-१६-१७ १८-१९-२०	२१-२२-२३ २४-२५	२६-२७-२८	अट्ठाईस नक्षत्र
वृषभ नाश	लक्ष्मीप्रद	शुभ	मृत्युकर	लक्ष्मीदायक	शुभ	**फल**

बीजोप्ति के लिये शुभ नक्षत्र

मृदुध्रुवक्षिप्रभेषु पितृवायुवसूडुषु।
समूलभेषु बीजोप्तिरत्युत्कृष्टफलप्रदा॥ ४४॥

मृदु, ध्रुव, क्षिप्र इन नक्षत्रों तथा मघा एवं स्वाति नक्षत्रों एवं मूल नक्षत्र में बीज-बोने से सदैव उत्कृष्ट फल की प्राप्ति होती है॥ ४४॥

बीजोप्ति चक्र का विचार

भवेद् भत्रितयं मूर्ध्नि धान्यनाशाय राहुभात्।
गले त्रयं कज्जलाय वृद्ध्यै च द्वादशोदरे॥ ४५॥
निस्तण्डुलत्वं लाङ्गूले भचतुष्टयमीरितम्।
नाभौ वह्निः पञ्चकं यद् बीजोप्ताविति चिन्तयेत्॥ ४६॥

फिर उक्त नक्षत्रों में राहुनक्षत्र से दिन नक्षत्र तक इस चक्रानुसार शुभाशुभ का विचार करे। सर्वप्रथम राहुशीर्ष के तीन नक्षत्र धान्यनाशक होते हैं। फिर कण्ठ पर तीन नक्षत्र स्वल्प वर्षाकारक अथवा बीज को जलानेवाले होते हैं। फिर उदर पर बारह

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नक्षत्र धान्यवृद्धिकर होते हैं। फिर पूँछ पर चार नक्षत्र निस्तण्डुलत्वकारक होते हैं, फिर पाँच नक्षत्र नाभि पर होने से अग्निभय करते हैं॥ ४५-४६॥

बीजोप्ति चक्र (राहुनक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गणना)

मस्तक	कण्ठ	उदर	पूँछ	नाभि	स्थान
१-२-३	४-५-६	७ से १८ तक	१९ से २२ तक	२३ से २७ तक	नक्षत्र संख्या २७
धान्यनाश	कौवा खा जाये	धान्यवृद्धि	अल्प धान्य	अग्निभय	फल

रोगीस्नानमुहूर्त्त

स्थिरेष्वदितिसर्पान्त्यपितृमारुतभेषु च।
न कुर्याद् रोगयुक्तश्च स्नानं वारेन्दुशुक्रयोः॥ ४७॥

रोग से निवृत्त होने पर स्थिर नक्षत्र, पुनर्वसु, श्लेषा, रेवती, मघा तथा स्वाति—इन नक्षत्रों को छोड़कर तथा सोमवार-शुक्रवार—इन वारों को छोड़कर अन्य नक्षत्रों एवं अन्य वारों में स्नान करे॥ ४७॥

नृत्यारम्भमुहूर्त्त

उत्तरात्रयमित्रेन्द्र वसुवारुणभेषु च।
पुष्यार्कपौष्णधिष्ण्येषु नृत्यारम्भो प्रशस्यते॥ ४८॥

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरा भाद्रपद, अनुराधा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, शतभिषा, पुष्य, हस्त तथा रेवती—इन नक्षत्रों में नृत्य सीखना प्रारम्भ करना चाहिये॥ ४८॥

विमर्श—नाटक या फिल्म में अभिनय के लिये भी इन नक्षत्रों का उपयोग करना चाहिये।

युञ्जा विचार

पूर्वार्धयुञ्जि षट्कानि पौष्णभाद् रुद्रभाद् ततः।
मध्ययुञ्जि द्वादशर्क्षाणि इन्द्रभान्नवभानि च॥ ४९॥
परार्धयुञ्जि क्रमशः सम्प्रीतिर्दम्पतेर्मिथः।
युञ्जा भोगिनीकथिता नक्षत्राणां मनीषिभिः॥ ५०॥

रेवती से लेकर मृगशिरा तक छः नक्षत्र पूर्व युंजा अथवा आदि युंजा (युंजि) के होते हैं। फिर मध्य में आर्द्रा से लेकर अनुराधा तक बारह नक्षत्र मध्य युंजा कहे जाते हैं। फिर ज्येष्ठा से उत्तरा भाद्र तक के नौ नक्षत्र पर युंजा अथवा अन्त्ययुंजा के होते हैं। यदि मेलापक में वर-कन्या—दोनों के नक्षत्र एक ही युंजा में पड़ जायें तो दोनों में प्रेम रहता है॥ ४९-५०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

युञ्जा चक्र

पूर्व युंजा ६	मध्य युंजा १२	पर (अन्त्य युंजा ९)	युंजा
रेवती–अश्विनी भरणी, कृत्तिका रोहिणी, मृग०	आर्द्रा, पुन०, पुष्य, श्लेषा मघा, पू०फा०, उ०फा० हस्त, चित्रा, स्वाति, तथा अनुराधा	ज्येष्ठा, मूल, पू०षा०, उ०षा०, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा पूर्वा भाद्रपद, उत्तरा भाद्रपद	नक्षत्र
पूर्वभागे पतिः श्रेष्ठः	मध्यभागे द्वयोः सुमतिः	पर भागे कन्याः श्रेष्ठा	फल

नक्षत्रों की जघन्यादि संज्ञा

जघन्यास्तोयमार्द्रा पावनातङ्कतारकाः।
ध्रुवादिति द्विदैवत्यौ बृहत्तरा पराः समाः॥ ५१॥

१. जघन्यसंज्ञक नक्षत्र—आश्लेषा, शतभिषा, आर्द्रा, स्वाति, ज्येष्ठा तथा भरणी—ये छह नक्षत्र जघन्यसंज्ञक हैं।

२. रोहिणी, तीनों उत्तरा, विशाखा, पुनर्वसु—इन छह नक्षत्रों की बृहत्संज्ञा है।

३. शेष मृगशिरा, रेवती, अनुराधा, चित्रा, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, हस्त, कृत्तिका, श्रवण, धनिष्ठा, मघा, पू०फा०, पू०षा०, पू०भा० तथा मूल—इन सोलह नक्षत्रों की सम संज्ञा है॥ ५१॥

विमर्श—जघन्यसंज्ञक नक्षत्र केवल पन्द्रह मुहूर्तवाले होते हैं, जबकि बृहत्संज्ञक नक्षत्र पैंतालीस मुहूर्तवाले होते हैं। समसंज्ञक तीस मुहूर्तवाले होते हैं।

जघन्यादि नक्षत्रों में सप्रथम चन्द्र दर्शन का फल

क्रमादभ्युदिते चन्द्रे त्वनर्घार्घसमानि च॥ ५२॥

यदि किसी मास के शुक्ल पक्ष का प्रथम चन्द्रमा (प्रतिपक्ष के उपरान्त का चन्द्रदर्शन) जघन्य नक्षत्र में उदित है तो उस चान्द्रमास में अन्न के भाव महर्घ (महँगे) रहते हैं, यदि बृहत्संज्ञक नक्षत्र में वह चन्द्रोदय हो, तो उस मास में भाव मन्दा रहता है तथा समसंज्ञक नक्षत्रों में चन्द्रोदय होने पर भाव में समता रहती है॥ ५२॥

राजयात्रा

अश्व्यग्नीन्दुभैर्नैर्ऋत्यभाग्यभा त्वाष्ट्रत्र्युत्तरा।
पितृद्विदैवताख्यातास्ताराः स्युः कुलसंज्ञकाः॥ ५३॥
धातृज्येष्ठाऽदितिस्वाती पौष्णार्कहरिमित्रभः।
अजपातङ्क वस्वहि ताराश्चोपकुलाह्वयाः॥ ५४॥
शेषा कुलाकुलस्तारास्तासां मध्ये कुलोडुषु।
गम्यते यदि भूपालैः पराजयमवाप्यते॥ ५५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भेषूपकुलसंज्ञेषु जयं प्राप्नोति भूमिपः।
सन्धिर्भवेत्तयोः याम्यं तदा कुलकुलोडुषु॥५६॥

कुलसंज्ञकगण—अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिरा, मूल, पूर्वा फाल्गुनी, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, मघा, विशाखा—ये ११ नक्षत्रों का कुलगण हैं।

उपकुलगण—रोहिणी, ज्येष्ठा, पुनर्वसु, स्वाति, रेवती, हस्त, श्रवण, अनुराधा, पूर्वाभाद्र, भरणी, धनिष्ठा, आश्लेषा—ये १० नक्षत्र उपकुलगण के हैं।

कुलाकुलगण—शेष मूल, आर्द्रा, अभिजित् तथा शतभिषा—ये कुलाकुलगण संज्ञक नक्षत्र हैं।

यदि राजा या सेनापति युद्ध के लिये कुलसंज्ञक नक्षत्र में प्रस्थान करे तो पराजय होती है, यदि उपकुल (अकुल) संज्ञक नक्षत्र में गमन करे तो जीत होती है। किन्तु यदि कुलाकुलगण में यात्रा करे, तो सन्धि होती है॥५३-५६॥

त्रिपुष्कर एवं द्विपुष्कर योग का कथन एवं फल

अर्कार्किभौमवारे चेद् भद्रायां विषमांघ्रिभे।
त्रिपुष्करे त्रिगुणदं द्विगुणं यमलाङ्घ्रिभम्॥५७॥
दद्यात्तद् दोषनाशाय गोत्रयं मूल्यमेव वा।
त्रिपुष्करे द्वयं दद्यान्न दोषो ऋक्षमात्रतः॥५८॥

त्रिपुष्कर योग—जब रविवार, मंगलवार या शनिवार में से कोई वार हो, भद्रातिथि (२-७-१२) हो तथा विषमांघ्रि नक्षत्र (विशाखा, उ०फा०, पू०भा०. पुनर्वसु, कृत्तिका तथा उ०षा० नक्षत्र)—इन तीनों का योग हो तो त्रिपुष्कर योग होता है। यह तिगुना फल देता है।

द्विपुष्कर योग—जब रवि, मंगल, शनि के साथ भद्रा तिथि (२-७-१२) तथा समांघ्रि नक्षत्र (मृग, चित्रा, धनिष्ठा में से कोई भी) का एक साथ योग हो, तो द्विपुष्कर योग होता है, जो दुगना फल देते हैं॥५७॥

यदि त्रिपुष्कर योग में राजा यात्रा करे, तो उसकी शान्ति के लिये तीन गायों का तथा द्विपुष्कर पुष्य दोष की शान्ति के लिये दो गायों का दान करे अथवा मूल्य दे॥५८॥

पुष्य नक्षत्र का विशेष फल

पुष्यं पर कृतं हन्तुं शक्तोऽनिष्टं च यत्कृतम्।
दोषं परो न शक्तस्तु चन्द्रेप्यष्टमगेऽपि वा॥५९॥
क्रूरो विधुयुतो वापि पुष्यो यदि बलान्वितः।
विना शनिग्रहं सर्व मङ्गलेष्विष्टदः सदा॥६०॥

(ऊपर कथित योगों में यदि कोई कर्म हानि या लाभ का हो जाय तो उसका तिगुना तथा दुगना फल क्रमशः होता है)।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुष्य नक्षत्र में यदि (विवाह को छोड़कर) कोई यात्रादि शुभकर्म किया जाय तो वह तिथि आदि अन्य तत्त्वों के सभी दोषों को शान्त कर देता है। यदि पुष्य नक्षत्र में किसी कर्त्ता के लिये चन्द्रमा अष्टम भी हो तो भी दोषकारक नहीं होता है। चन्द्रमा के साथ यदि शनि को छोड़कर अन्य क्रूर ग्रह बैठा हो (सूर्य-मंगल-राहु-केतु में से कोई) तो उसके दोष को भी पुष्य नक्षत्र नष्ट कर देता है तथा सब प्रकार से शुभफल देने की सामर्थ्य रखता है॥ ५९-६०॥

विमर्श—जिस प्रकार पंचक में किये गये अथवा हुए शुभाशुभ कार्य का पाँच गुना फल होता है, उसी प्रकार त्रिपुष्कर में तिगुना तथा द्विपुष्कर में दुगना फल होता है। पंचक में केवल नक्षत्र मात्र ही फल देता है परन्तु त्रिपुष्कर-द्विपुष्कर योगों में तिथि वार, नक्षत्र तीनों का योग होता है, तभी योग बनते हैं।

नक्षत्रों के ताराओं का कथन

रामाग्नि ऋतु वाणाग्नि भूवेदाग्निशरेषवः।
नेत्रबाहुशरेंद्विन्दुवेदवह्न्यग्निशङ्कराः ॥ ६१ ॥
वेदवेदाग्निवह्न्यब्धि शतद्विद्विरदाः क्रमात्।
तारा संख्यास्तु विज्ञेया दस्त्रादीनां पृथक् पृथक् ॥ ६२ ॥

(प्रायः प्रत्येक नक्षत्र कुछ ताराओं का समूह होता है, परन्तु कुछ नक्षत्रों में केवल एक ही तारा होता है। यहाँ अश्विन्यादि २८ नक्षत्रों की तारा संख्या दी गयी है)।

अश्विनी आदि नक्षत्रों में क्रमशः तीन, तीन, छह, पाँच, तीन, एक, चार, तीन, पाँच, पाँच, दो, दो, पाँच, एक, एक, चार, तीन, तीन, ग्यारह, चार, चार, तीन, तीन, चार, एक सौ, दो, दो तथा बत्तीस तारे पृथक्-पृथक् होते हैं॥ ६१-६२॥

(स्पष्टता के लिये आगे नक्षत्रों की तालिका देखें)।

नक्षत्रों के योग तारा

या दृश्यते दीप्ततारा भगणे योगतारका॥ ६३॥

प्रत्येक नक्षत्र पुञ्ज में जो सर्वाधिक चमकीला होता है, वही उस नक्षत्र का योगतारा होता है। जिससे उस नक्षत्र को आकाश में पहिचाना जा सकता है॥ ६३॥

नक्षत्रों से वृक्षोत्पत्ति

वृषवृक्षोऽश्विभाद् याम्यधिष्ण्यात्पारूषकस्ततः।
उदुम्बरो ह्यग्निधिष्ण्यात् रोहिण्या जम्बुकस्तरुः॥ ६४॥
इन्दुभात्खदिरो जातः कलिवृक्षश्च रौद्रभात्।
सम्भूतो दितिभाद् वंशः पिप्पलः पुष्यसम्भवः॥ ६५॥
सर्पधिष्ण्यान्नागवृक्षो वटः पितृभसम्भवः।
पालाशो भाग्यजातश्च प्लक्षश्चार्यमसम्भवः॥ ६६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अरिष्टवृक्षो रविभाच्छ्रीवृक्षस्त्वाष्ट्रसम्भवः।
स्वास्त्यृक्षादर्जुनो वृक्षो द्विदैवात्तु विकङ्कतः॥ ६७॥
मित्रभाद्बकुलो जातो विष्टिः पौरन्दरर्क्षजः।
सर्जवृक्षो मूलभाच्च वञ्जुलो वारिधिष्ण्यजः॥ ६८॥
पनसो विश्वभाज्जातो ह्यर्कवृक्षस्तु विष्णुभात्।
वसुधिष्ण्याच्छमी जाता कदम्बो वारुणर्क्षजः॥ ६९॥
अजैकपाच्चूतवृक्षोऽहिर्बुध्न्यात् पिचुमन्दकः।
मधुवृक्षः पौष्णधिष्ण्यादेवं वृक्षं प्रपूजयेत्॥ ७०॥
अरियोनिभवो वृक्षो पीडनीयः प्रयत्नतः।
यस्मिञ्छनैश्चरो ऋक्षे तद् वृक्षो अर्च्यः प्रयत्नतः॥ ७१॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां नक्षत्रफलाध्यायः षष्ठः॥ ६॥

१. अश्विनी नक्षत्र से वृष (अडूसा) का वृक्ष उत्पन्न हुआ है।
२. भरणी नक्षत्र से परूषक (फालसा) का वृक्ष उत्पन्न हुआ है।
३. कृत्तिका नक्षत्र से उदुम्बर (ऊमर) के वृक्ष की उत्पत्ति हुई है।
४. रोहिणी से जम्बूवृक्ष (जामुन) उत्पन्न हुआ है।
५. मृगशिरा से खदिर (खैर=कत्था) का वृक्ष उत्पन्न हुआ है।
६. आर्द्रा से कलिवृक्ष (बहेड़ा) उत्पन्न हुआ है।
७. पुनर्वसु से बाँस वृक्ष की उत्पत्ति हुई है।
८. पुष्य नक्षत्र से पिप्पल की उत्पत्ति है।
९. आश्लेषा से नागवृक्ष (नागबला=गंगेरन) की उत्पत्ति मानी गयी है।
१०. मघा से वटवृक्ष की उत्पत्ति हुई है।
११. पूर्वा फाल्गुनी से पलाश की उत्पत्ति हुई है।
१२. उत्तरा फाल्गुनी से पाकर के वृक्ष की उत्पत्ति हुई है।
१३. हस्त से अरिष्ट वृक्ष (रीठा) की उत्पत्ति हुई है।
१४. चित्रा से श्रीवृक्ष (नारियल) की उत्पत्ति हुई है अथवा बेलफल की।
१५. स्वाति से अर्जुन वृक्ष उत्पन्न हुआ है।
१६. विशाखा से विकंकत वृक्ष (यज्ञीय पात्र बनते हैं) की उत्पत्ति हुई है।
१७. अनुराधा से बकुल (मौलसिरी) की उत्पत्ति हुई है।
१८. ज्येष्ठा से विष्टि वृक्ष (देवदारु) उत्पन्न हुआ है।
१९. मूल से सर्जवृक्ष (राल का पेड़) उत्पन्न हुआ है।
२०. पूर्वाषाढ़ा से वंजुल (जलवेत) की उत्पत्ति हुई है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

२१. उत्तराषाढ़ा से कटहल का पेड़ उत्पन्न हुआ है।

२२. श्रवण से अर्कवृक्ष (आक) उत्पन्न हुआ है।

२३. धनिष्ठा से शमी (छेंकुर) का जन्म हुआ है।

२४. शतभिषा से कदम्ब वृक्ष की उत्पत्ति है।

२५. पूर्वा भाद्रपद से आम्रवृक्ष उत्पन्न हुआ है।

२६. उत्तरा भाद्रपद से निम्बवृक्ष उत्पन्न हुआ है।

२७. रेवती से महुआ उत्पन्न हुआ है।

अपने जन्म नक्षत्र के अनुसार अपनी जो योनि अवकहड़ा चक्र में है, उसकी वैर योनि वाले वृक्ष के सम्पर्क से दूर रहना चाहिये तथा जन्मकुण्डली में शनि जिस नक्षत्र पर हो, उस नक्षत्र से सम्बन्धित जो वृक्ष है, उसे प्रयत्नपूर्वक पूजना चाहिये (इससे कल्याण होता है) ॥ ६३-७१ ॥

विमर्श—मान लीजिये किसी व्यक्ति का जन्म अश्विनी नक्षत्र में है तथा शनि आर्द्रा नक्षत्र में (जन्म-कुण्डली) में है, तो उसे सामान्यत: बहेड़े की पूजा करनी चाहिये। परन्तु गोचर में शनि अनिष्टकर हो, तो उस गोचर के शनि नक्षत्र से सम्बन्धित वृक्ष को पूजें।

नक्षत्रों के स्वामी—तारा एवं वृक्षादि की तालिका

नक्षत्र	स्वामी	तारा संख्या	आकार	जघन्यादि संज्ञा	नक्षत्र से उत्पन्न वृक्ष
१. अश्विनी	अश्विनीकुमार	३	अश्वमुख	सम	वासा (वृष)
२. भरणी	यमराज	३	योनि	जघन्य	फालसा (परूषक)
३. कृत्तिका	अग्नि	६	क्षुर	सम	गूलर (उदुम्बर)
४. रोहिणी	विधाता	५	शकट	बृहत्	जामुन (जम्बू)
५. मृगशिरा	चन्द्र	३	मृगशिर	सम	खदिर (खैर)
६. आर्द्रा	रुद्र	१	मणि	जघन्य	बहेड़ा (कलिवृक्ष)
७. पुनर्वसु	अदिति	४	घर	बृहत्	बाँस (वंश)
८. पुष्य	बृहस्पति	३	वाण	सम	पिप्पल (पीपल)
९. आश्लेषा	सर्प	५	चक्र	जघन्य	नागबला (गंगेरन)
१०. मघा	पितर	५	हँसिया	सम	वटवृक्ष
११. पूर्वा फाल्गुनी	भग	२	पर्यंक	सम	पलाश
१२. उत्तरा फाल्गुनी	अर्यमा	२	पर्यंक	बृहत्	प्लक्ष (पाकर)
१३. हस्त	सूर्य	५	हाथ	सम	रीठा (अरिष्ट)
१४. चित्रा	त्वष्टा	१	मणि	सम	नारियल या बेल
१५. स्वाति	वायु	१	मणि	जघन्य	अर्जुन
१६. विशाखा	इन्द्राग्नि	४	फण	बृहत्	विकंकत (कण्टाई)

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१७. अनुराधा	मित्र	३	बलिपिंड	सम	बकुल (मौलश्री)
१८. ज्येष्ठा	इन्द्र	३	कुण्डल	जघन्य	विष्ठि (देवदारु)
१९. मूल	निर्ऋति	११	बिच्छू का डंक	सम	सर्जवृक्ष (रालवृक्ष)
२०. पूर्वाषाढ़ा	आप	४	सिंहपुच्छ	सम	जलवेत
२१. उत्तराषाढ़ा	विश्वेदेवा	४	गजपृष्ठ	बृहत्	कटहल(पनस)
२२. अभिजित्	ब्रह्मा	३	तम्बू	सम	×
२३. श्रवण	विष्णु	३	कर्ण	सम	अर्कवृक्ष
२४. धनिष्ठा	वसु	४	मृदङ्ग	सम	शमी (छेकुर)
२५. शतभिषा	वरुण	१००	उत्तरद्वार वेष्टन	जघन्य	कदम्ब
२६. पूर्वाभाद्रपद	अजैकपात्	२	पर्यंक	सम	आम्रवृक्ष
२७. उत्तराभाद्रपद	अहिर्बुध्न्य	५	घर	बृहत्	निम्ब
२८. रेवती	पूषा	३२	बड़ा-सा घेरा	सम	महुआ

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के षष्ठ नक्षत्रफलाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई ॥ ६ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सप्तमोऽध्याय:

योगलक्षणाध्याय:

विष्कम्भादि सत्ताइस योगों का कथन

विष्कम्भप्रीतिरायुष्मान् सौभाग्यशोभनस्तथा।
अतिगण्डसुकर्मा च धृतिः शूलस्तथैव च॥ १॥
गण्डोवृद्धिर्ध्रुवाश्चैव व्याघाताहर्षणस्तथा।
वज्रं सिद्धिः व्यतीपातो वरीयान्परिघः शिवः॥ २॥
सिद्धः साध्यः शुभः शुक्लो ब्रह्मेन्द्रोऽथ वैधृतिः।
क्रमेण नित्ययोगा ते सप्तविंशति संख्यकाः॥ ३॥

१. विष्कम्भ, २. प्रीति, ३. आयुष्मान्, ४. सौभाग्य, ५. शोभन, ६. अतिगण्ड, ७. सुकर्मा, ८. धृति, ९. शूल, १०. गण्ड, ११. वृद्धि, १२. ध्रुव, १३. व्याघात, १४. हर्षण, १५. वज्र, १६. सिद्धि, १७. व्यतिपात, १८. वरीयान्, १९. परिघ, २०. शिव, २१. सिद्ध, २२. साध्य, २३. शुभ, २४. शुक्ल, २५. ब्रह्म, २६. ऐन्द्र, २७. वैधृति—ये नित्ययोग संख्या में सत्ताइस होते हैं॥ १-३॥

विमर्श—भारतीय पञ्चाङ्ग के पाँच अंगों में चौथा अंग योग होता है। ये विष्कम्भादि २७ योग भी पंचांग में नित्य दिये रहते हैं तथा नक्षत्रों की भाँति इनका समाप्तिकाल भी घटी-पलों में दिया जाता है। सूर्यस्पष्ट तथा चन्द्रस्पष्ट को जोड़कर उसमें ८०० कला का भाग देनेपर एक योग होता है। दूसरे शब्दों में जब सूर्यस्पष्ट तथा चन्द्रस्पष्ट का योग १३°/२०′ हो जाता है, तब एक योग बनता है। नीचे की तालिका से सूर्यस्पष्ट एवं चन्द्रस्पष्ट के योग से विष्कम्भादि योगों में कौन-सा योग है, यह जाना जा सकता है। ये योग प्रतिदिन क्रम से आते हैं, अतः नित्ययोग कहलाते हैं।

सूर्य+चन्द्र स्पष्ट के योग से विष्कम्भादि योग ज्ञात करने की सारिणी

सूर्य+चन्द्र का योग			योग	सूर्य+चन्द्र का योग			योग	सूर्य+चन्द्र का योग			योग
रा.	अं.	कला		रा.	अं.	कला		रा.	अं.	कला	
०	१३	२०	विष्कम्भ	४	१३	२०	गण्ड	८	१३	२०	परिघ
०	२६	४०	प्रीति	४	२६	४०	वृद्धि	८	२६	४०	शिव
१	१०	००	आयुष्मान	५	१०	००	ध्रुव	९	१०	००	सिद्ध
१	२३	२०	सौभाग्य	५	२३	२०	व्याघात	९	२३	२०	साध्य
२	६	४०	शोभन	६	६	४०	हर्षण	१०	६	४०	शुभ
२	२०	०	अतिगंड	६	२०	००	वज्र	१०	२०	००	शुक्ल
३	३	२०	सुकर्मा	७	३	२०	सिद्धि	११	३	२०	ब्रह्म
३	१६	४०	धृति	७	१६	४०	व्यतीपात	१०	१६	४०	ऐन्द्र
४	०	०	शूल	८	०	००	वरीयान	०	०	०	वैधृति

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

योगों के स्वामी

योगेशा यमविष्णिवन्दु धातृजीवनिशाकराः।
इन्द्रतोयाहिवह्न्यर्क भूमिरुद्रकतोयपाः॥ ४॥
गणेशभद्रधनदस्त्वष्टृमित्रषडाननाः।
सावित्री कमला गौरी नासत्यौ पितरोऽदिति॥ ५॥

१. विष्कम्भ योग के स्वामी यमराज, २. प्रीति योग के स्वामी विष्णु, ३. आयुष्मान् योग के (पूर्णचन्द्र), ४. सौभाग्य के विधाता, ५. शोभन के बृहस्पति, ६. अतिगण्ड का स्वामी क्षीण चन्द्र, ७. सुकर्मा के स्वामी इन्द्र, ८. धृति योग के स्वामी जलदेव, ९. शूल योग के सर्प, १०. गण्डयोग के अग्निदेव, ११. वृद्धि योग के सूर्य, १२. ध्रुव योग के भूमि, १३. व्याघात योग के रुद्र, १४. हर्षण के प्रजापति, १५. वज्र के वरुण, १६. सिद्धि योग के गणेश, १७. व्यतीपात के भद्र, १८. वरीयान् के कुबेर, १९. परिघ के त्वष्टा, २०. शिव योग के मित्र, २१. सिद्ध योग के कार्तिकेय, २२. साध्य की सावित्री, २३. शुभ योग की लक्ष्मी, २४. शुक्ल योग की गौरी, २५. ब्रह्मयोग के अश्विनीकुमार, २६. ऐन्द्र योग के पितर तथा २७. वैधृति योग की देवता अदिति होती हैं॥ ४-५॥

विमर्श—ज्योतिष ग्रन्थों एवं पंचांगों में योगों के नामों के सम्बन्ध में अशुद्धि चल रही है। प्रथम योग का नाम विष्कम्भ है, परन्तु भूल से इसे 'विष्कुम्भ' लिखते हैं। क्रमांक १६ के योग का नाम सिद्धि है, जबकि क्रमांक ३१ के योग का नाम सिद्ध है परन्तु ज्योतिष ग्रंथों में भ्रान्तिवश तथा पंचांगों में भू सिद्धि ही लिखा जा रहा है।

त्याज्य योगों का कथन

सवैधृतौ व्यतीपातौ महापातावुभौ सदा।
परिघस्य तु पूर्वार्धं सर्वकार्येषु गर्हितम्॥ ६॥
विष्कम्भवज्रयोस्तिस्त्रः षट्कं गण्डातिगण्डयोः।
व्याघाते नवशूले तु पञ्च नाड्यस्तु गर्हिताः॥ ७॥

व्यतीपात तथा वैधृति ये दोनों योग महापात (क्रान्ति साम्य) के सदृश हैं, अतः ये सम्पूर्ण रूप में सब शुभ कार्यों में गर्हित हैं। परिघयोग का पूर्वार्ध शुभकार्यों में निन्दित है। विष्कम्भ तथा वज्रयोग की ३-३ घटियाँ शुभ कर्म में त्याज्य हैं। गण्ड एवं अति गण्डयोगों की ६-६ घटियाँ शुभ कर्मों में वर्जित हैं। व्याघात की ९ घटी तथा शूल योग की पाँच घटी निन्द्य हैं (ये सब घटी प्रारम्भ की त्यागना चाहिये)॥ ६-७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्याज्य योगों की तालिका

अतिपात	वैधृति	विष्कंभ	वज्र	गण्ड	अतिगंड	व्याघात	शूल	परिघ	शुभकर्मों में नित्ययोग
सम्पूर्ण	सम्पूर्ण	३	३	६	६	९	५	पूर्वार्ध	त्याज्य घटी

विमर्श—चण्डेश्वर ने योग जानने की सरलतम विधि इस प्रकार लिखी है, जिसमें स्थूलरूप से योग का ज्ञान हो जाता है। तदनुसार सूर्य नक्षत्र तथा चन्द्र नक्षत्र की जो अश्विन्यादि संख्या हो, उसे जोड़कर उस योगफल में एक घटा दें। यदि योगफल २७ से कम हो तो वहीं संख्या वाला योग होता है, किन्तु यदि २७ से अधिक हो, तो उसमें २७ का भाग देने पर शेष तुल्य योग होता है। जैसा कि कहा गया है—

'यस्मिन् ऋक्षे स्थितो भानुर्यत्र तिष्ठति चन्द्रमाः।
एकीकृत्य त्यजेदेकं योगाः विष्कम्भादयः॥'

बृहद् दैवज्ञरंजन (२५।३) के अनुसार योग जानने की एक अन्य पद्धति यह है—

'वाक्पतेरर्कनक्षत्रं श्रवणाच्चान्द्रमेव च।
गण्यते तद्युतिं कुर्याद्योगः स्यादृक्षशेषतः॥'

अर्थात् बृहस्पति के नक्षत्र (पुष्य) से सूर्य नक्षत्र तक गिने तथा श्रवण नक्षत्र से चन्द्रमा के नक्षत्र तक गिनें तथा दोनों संख्याओं को जोड़ दें। जो योगफल हो, उसी संख्या वाला योग होता है। उदाहरण के लिये संवत् २०५१ शाके १९१६ में वैशाख कृष्ण अमावास्या मंगलवार दिनांक १० मई १९९४ ईस्वी को योग जानना है, उस दिन सूर्य तथा चन्द्रमा दोनों भरणी नक्षत्र पर हैं। अश्विनी से गिनने पर उनकी संख्या २+२=४ हुई। इसमें १ घटाने पर ३ आया। अतः तीसरी संख्या का योग आयुष्मान आया। अब दूसरे प्रकार से विचार किया, तो पुष्य से सूर्य नक्षत्र भरणी तक गिनने पर संख्या २२ हुई तथा श्रवण से गिनने पर चन्द्र नक्षत्र भरणी की संख्या ८ हुई। २२+८=३० हुए। इनमें २७ का भाग देने पर तीन शेष बचे। अतः आयुष्मान् योग आया। इस विधि से वास्तविक योग की संख्या में कभी-कभी एक का अन्तर पड़ता है, परन्तु सूर्यस्पष्ट तथा चन्द्रस्पष्ट के जोड़ने से जो संख्या आती है, वही एकदम सही होती है।

सूक्ष्म योगों का कथन

त्रिनाडीभिर्दशभिश्च सहितं घटिका द्वयम्।
प्रत्येकस्मिन्नपि योगे सर्वे योगा भवन्ति हि॥८॥

विष्कम्भादि प्रत्येक योग में क्रमशः अन्य सभी योग २ घटी १३ पल के प्रमाण से अन्त भोग करते हैं (जिन्हें सूक्ष्म योग कहते हैं)॥८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रत्येक योग में सूक्ष्म योग (क्षण योग=अन्तर्योग-प्रदर्शक-चक्र)
(पंचांग में जब योग का सम्पूर्ण योग साठ घटी है तब प्रत्येक सूक्ष्मयोग की अवधि २ घटी १३ पल तथा २० विपल होती है)

योग	सूक्ष्म योगों का मान — घटी	२	४	६	८	११	१३	१५	१७	२०	२२	२४	२६
	पल तक	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०
१. विष्कंभ		वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति.	सु.	धृ.	शूल	गं.	वृ.	ध्रु.
२. प्रीति		प्री	आ.	सौ	शो	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.
३. आयुष्मान्		आ.	सौ	शो.	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.
४. सौभाग्य		सौ	शो.	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	वज्र
५. शोभन		शो.	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	वज्र	सिद्धि
६. अतिगण्ड		अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	वज्र	सिद्धि	व्य.
७. सुकर्मा		सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	वज्र	सिद्धि	व्य.	वरी.
८. धृति		धृति	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	वज्र	सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.
९. शूल		शूल	गण्ड	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	वज्र	सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.	शि.
१०. गण्ड		गण्ड	वृद्धि	ध्रु.	व्या.	ह.	वज्र	सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध
११. वृद्धि		वृद्धि	ध्रु.	व्या.	ह.	वज्र	सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य
१२. ध्रुव		ध्रु.	व्या.	ह.	वज्र	सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ
१३. व्याघात		व्या.	ह.	वज्र	सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल
१४. हर्षण		ह.	वज्र	सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्र.
१५. वज्र		वज्र	सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्रह्म	ऐ.
१६. सिद्धि		सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्रह्म	ऐ.	वै.
१७. व्यतिपात		व्यति.	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्रह्म	ऐ.	वै.	वि.
१८. वरीयान्		वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्रह्म	ऐ.	वै.	वि.	प्री.
१९. परिघ		परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्रह्म	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आयु.
२०. शिव		शिव	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्रह्म	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आयु.	सौ.
२१. सिद्ध		सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्रह्म	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आयु.	सौ.	शो.
२२. साध्य		साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्रह्म	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आयु.	सौ.	शो.	अति.
२३. शुभ		शुभ	शुक्ल	ब्रह्मा	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आयु.	सौ.	शो.	अति.	सु.
२४. शुक्ल		शुक्ल	ब्रह्म	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आयु.	सौ.	शो.	अति.	सु.	धृ.
२५. ब्रह्म		ब्रह्म	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आयु.	सौ.	शो.	अति.	सु.	धृ.	शू.
२६. ऐन्द्र		ऐन्द्र	वै.	वि.	प्री.	आयु.	सौ.	शो.	अति.	सु.	धृ.	शू.	गं.
२७. वैधृति		वैधृति	वि.	प्री.	आयु.	सौ.	शो.	अति.	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.
		१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रत्येक योग में सूक्ष्म योग (क्षण योग=अन्तर्योग- प्रदर्शक-चक्र)
(पंचांग में जब योग का सम्पूर्ण योग साठ घटी है तब प्रत्येक सूक्ष्मयोग की अवधि २ घटी १३ पल तथा २० विपल होती है)

२८	३१	३३	३५	३७	४०	४२	४४	४६	४८	५१	५३	५५	५७	६०
५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०
व्या.	ह.	वज्र	सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्र.	ऐ.	वै.
ह.	वज्र	सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्र.	ऐ.	वै.	वि.
वज्र	सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्र.	ऐ.	वै.	वि.	प्री.
सिद्धि	व्य.	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्र.	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आयु.
व्यति	वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्र.	ऐ	वै.	वि.	प्री.	आ.	सौ.
वरी.	परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्र.	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.
परि.	शि.	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्र.	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति
शिव	सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्र.	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति	सु.
सिद्ध	साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्र.	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति	सु.	धृ.
साध्य	शुभ	शुक्ल	ब्र.	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति	सु.	धृ.	शू.
शुभ	शुक्ल	ब्र.	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.
शुक्ल	ब्र.	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.
ब्रह्म	ऐ.	वै.	वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.
ऐन्द्र	वै.	वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति	सु.	धृ	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.
वैधृति	वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.
वि.	प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	वज्र
प्री.	आ.	सौ.	शो.	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	व.	सिद्धि
आयु.	सौ.	शो.	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु	व्या.	ह.	व.	सिद्धि	व्य.
सौ.	शो.	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	व.	सिद्धि	व्य.	वरी
शो.	अति	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	व.	सिद्धि	व्य.	वरी	प.
अति.	सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	व.	सिद्धि	व्य.	वरी	प.	शि.
सु.	धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	व.	सिद्धि	व्य.	वरी	परि.	शिव	सिद्ध
धृ.	शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	व.	सिद्धि	व्य	वरी	परि.	शिव	सिद्ध	साध्य
शू.	गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	व.	सिद्धि	व्य.	वरी	परि	शिव	सिद्ध	सा.	शुभ
गं.	वृ.	ध्रु.	व्या.	ह.	व.	सिद्धि	व्य.	वरी	परि.	शिव	सिद्ध	सा.	शुभ	शुक्ल
वृद्धि	ध्रु.	व्या.	ह.	व.	सिद्धि	व्य.	वरी	परि.	शिव	सिद्ध	सा.	शुभ	शुक्ल	ब्रह्म
ध्रुव	व्या.	ह.	व.	सिद्धि	व्य.	वरी	परि.	शिव	सिद्ध	सा.	शु.	शु.	ब्र.	ऐन्द्र
१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एकार्गल (खार्जूर योग) का कथन

अदितीन्दुमघाश्लेषामूलमैत्रेन्यभानि च।
ज्ञेयानि सह चित्राणि मूर्ध्निभानि यथाक्रमात्॥ ९॥
लिखेदूर्ध्वगतामेकां तिर्यग्रेखास्त्रयोदश।
तत्र खार्जूरिके चक्रे कथितं मूर्ध्निभं न्यसेत्॥ १०॥
व्याघातशूलपरिघपातपूर्वेषु सत्स्वपि।
गण्डातिगण्डकुलिशवैधृत्या सहितेषु च॥ ११॥
भान्वेकरेखा मतयोः सूर्यचन्द्रमसोर्मिथः।
एकार्गलो दृष्टिपातश्चताभिजिद् वर्जितानि वै॥ १२॥

पुनर्वसु, मृगशिरा, मघा, श्लेषा, अश्विनी, मूल, अनुराधा, पुष्य तथा चित्रा—ये नौ नक्षत्र मूर्ध्नि नक्षत्र हैं। ये क्रम से हैं—खार्जूर-चक्र एकार्गल के लिये एक रेखा खड़ी तथा तेरह रेखा आड़ी (तिरछी या पड़ी) खींचना चाहिये। यदि उक्त नक्षत्रों में व्याघात, शूल, परिघ, व्यतिपात, गण्ड, अतिगण्ड, वज्र, वैधृति तथा विष्कम्भ में उक्त नक्षत्र हों तब यदि उस दिन सूर्य एवं चन्द्रमा के नक्षत्र एक रेखा पर हों तब एकार्गल या खार्जूर दोष होता है, परन्तु यदि सूर्य या चन्द्र में से कोई भी अभिजित् नक्षत्र पर स्थित हो, तो एकार्गल दोष में खार्जूर वेध होने पर भी मान्य नहीं होगा॥ ९-१२॥

खार्जूर चक्र

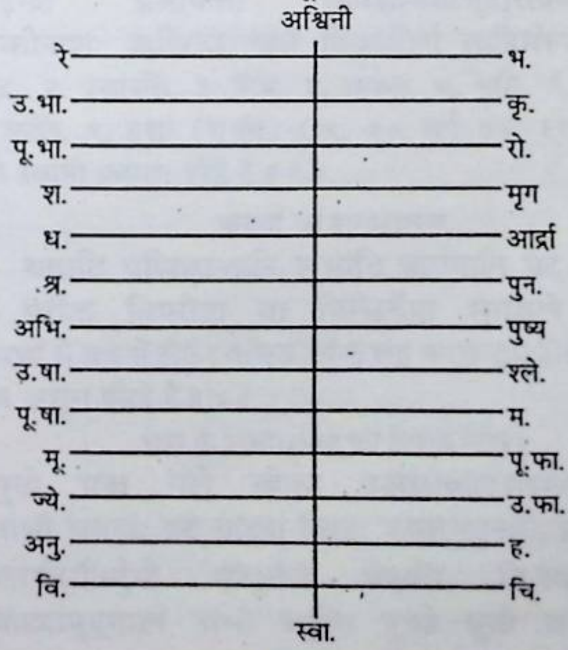

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अभिजिद् गणना की वर्जना

लाङ्गुले कमठे चक्रे फणिचक्रे त्रिनाडिके।
अभिजिद्गणना नास्ति चक्रपाते विशेषतः॥ १३॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां योगलक्षणाध्यायः सप्तमः॥ ७॥

हलचक्र, कूर्मचक्र, सर्पचक्र तथा त्रिनाडी चक्र में अभिजित् नक्षत्र की गणना नहीं होती है (विशेषकर चक्रपात में भी अभिजित् की गणना नहीं करते हैं)॥ १३॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के सप्तम योगलक्षणाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अष्टमोऽध्यायः

करणाध्यायः

विष्कम्भादि सत्ताइस योगों का कथन

वयश्च वाडवश्चैव कौडवो तैतिलस्तथा।
गराख्यो वणिजो विष्टिः तिथ्यर्थः चर संज्ञकाः॥ १॥
शकुनिःचतुष्पान्नगो किंस्तुघ्नो च चतुर्थकः।
स्थिरा करणाख्याता नामतुल्यफलप्रदाः॥ २॥

१. वय, २. वाडव, ३. कौडव, ४. तैतिल, ५. गर, ६. वणिज और ७. विष्टि—ये सात चर करण होते हैं।८. शकुनि, ९. चतुष्पात्, १०. नाग तथा ११. किंस्तुघ्न—ये चार स्थिर करण होते हैं (जो मास में केवल एक बार कृष्ण चतुर्दशी के उत्तरार्ध में आते हैं, तदुपरान्त सात चर करणों की आठ आवृत्तियाँ एक चान्द्रमास में होती हैं)।तिथि के आधे भाग को करण कहते हैं॥ १-२॥

विमर्श—वय करण के लिये बव तथा भव शब्द भी ज्योतिष-ग्रन्थों में प्रचलित हैं। वाडव को बालव, कौडव को कौलव, तैतिल को तैतिर भी लिखते हैं तथा विष्टि को भद्रा भी कहा जाता है।

करणों के स्वामी

इन्द्रः प्रजापतिः मित्रश्चार्यमाभूर्हरिप्रिया।
कीनाशः कलिरुक्षाख्यौ तिथ्यर्धेशा त्वहिर्मरुत्॥ ३॥

१. इन्द्र, २. प्रजापति, ३. मित्र, ४. अर्यमा, ५. भूमि, ६. लक्ष्मी, ७. कीनाश (यम), ८. कलि, ९. उक्षा (वृषभ)=Ox, १०. सर्प तथा ११. वायु—ये तिथ्यर्धों (करणों) के स्वामी क्रमशः होते हैं॥ ३॥

करणों का शुभाशुभत्व

बवादि वणिजान्तानि शुभानि करणानि षट्।
परीता विपरीता वा विष्टिर्नेष्टा सुमङ्गले॥ ४॥

इन करणों में बव से लेकर वणिज पर्यन्त छह करण शुभ होते हैं, किन्तु शुभ कर्मों में भद्रा सदैव अशुभ होती है॥ ४॥

भद्रा के शुभाशुभत्व का विशेष विचार

मुखे पञ्च गले त्वेका वक्षस्येकादशस्मृताः।
नाभौ चतस्त्रः षट् कट्यां तिस्त्रः पुच्छाख्यनाडिकाः॥ ५॥
कार्यहानिर्मुखे मृत्युर्गले वक्षसि निःस्वता।
कट्यामुद्गमनं नाभौ च्युतिः पुच्छे ध्रुवो जयः॥ ६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भद्रा मध्यम मान से ३० घटी तक रहती है, अतः उसकी प्रारम्भ की ५ घटी मुख पर, फिर १ घटी गले पर, फिर ११ घटी वक्ष पर, फिर ४ घटी नाभि पर, फिर ६ घटी कटि पर, फिर ३ घटी पूँछ पर लिखें ॥ ६ ॥

इनमें मुख की घटियाँ कार्य हानि करती हैं। गले की घटी मृत्युकारक है। वक्षःस्थल की घटियाँ निर्धनता करती हैं। कटिप्रदेश की घटियाँ व्यर्थ की दौड़-धूप कराती हैं। नाभि हानिकारक है तथा पूँछ की घटियाँ शुभ होती हैं ॥ ५-६ ॥

करणों के स्वामियों का चक्र

करणों के स्वामी	स्वामी	पर्यायवाची
१. बव	इन्द्र	व५, भव
२. बालव	प्रजापति	वाडव
३. कौलव	मित्र	कौडव
४. तैतिल	अर्यमा	तैतिर, तित्तिर
५. गर	भूमि	गराजिन
६. वणिज	लक्ष्मी	वाणिज्य, विपणि
७. विष्टि	कीनाश (यमराज)	भद्रा
८. शकुनि	कलियुग	शाकुन, पक्षि, अक्ष
९. चतुष्पात्	उक्षा (Ox)	चतुष्पद, वृषभ
१०. नाग	सर्प	अहि
११. किंस्तुघ्न	वायु	कौस्तुभ

भद्रा विभाग का चक्र

मुख	कण्ठ	वक्ष	नाभि	कटि	पुच्छ	स्थान
५	१	११	४	६	३	घटी
कार्यहानि	मृत्यु	दरिद्रता	हानि	भ्रमण	जय	फल

स्थिर करणों का शुभाशुभत्व

स्थिराणि मध्यमान्येषां नेष्टौ नाग चतुष्पदौ ॥ ७ ॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां करणाध्यायः अष्टमः ॥ ८ ॥

स्थिर करण सामान्यतः मध्यम फलदायक होते हैं, परन्तु उनमें नाग तथा चतुष्पद नेष्ट होते हैं ॥ ७ ॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के अष्टम करणाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई ॥ ८ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नवमोऽध्यायः

मुहूर्ताध्यायः

दिन के मुहूर्तों का कथन

दिवा मुहूर्ताः रुद्राहिमित्रपितृवसूदकम्।
विश्वे विधातृब्रह्मेन्द्रा इन्द्राग्निनिर्ऋतितोयपाः॥ १॥
अर्यमा भगसंज्ञश्च विज्ञेया दशपञ्च च।

दिन के १५ मुहूर्त—१. रुद्र, २. अहि, ३. मित्र, ४. पितृ, ५. वसु, ६. जल, ७. विश्वेदेवा, ८. अभिजित्, ९. ब्रह्मा, १०. इन्द्र, ११. इन्द्राग्नि, १२. निर्ऋति, १३. वरुण, १४. अर्यमा तथा १५. भग—ये दिन में पन्द्रह मुहूर्त होते हैं॥ १-१½ ॥

रात्रि के पन्द्रह मुहूर्त

ईशाजपादहिर्बुध्न्याः पूषाश्वि यमाह्वयः॥ २॥
धातृचन्द्रादितीज्याख्य विष्ण्वर्कत्वाष्ट्रवायवः।
अह्नः पञ्चदशो भागस्तथा रात्रिप्रमाणतः॥ ३॥
मुहूर्तमान द्वे नाड्यौ कथिते गणकोत्तमैः।

रात्रि के पन्द्रह मुहूर्त—दिन की भाँति रात्रि में भी—१. ईश, २. अजपात्, ३. अहिर्बुध्न्य, ४. पूषा, ५. अश्विनीकुमार, ६. धर्मराज, ७. अग्नि, ८. ब्रह्मा, ९. चन्द्रमा, १०. अदिति, ११. बृहस्पति, १२. विष्णु, १३. सूर्य, १४. त्वष्टा तथा १५. वायु में पन्द्रह मुहूर्त रात्रि में क्रमशः होते हैं॥ २-३½ ॥

दिन के पन्द्रहवें भाग के तुल्य एक मुहूर्त का मान दिन में होता है। तथैव रात्रि का पन्द्रहवाँ भाग रात्रि के मुहूर्त का प्रमाण होता है। जब दिन एवं रात्रि का मान बराबर होता है, तब विद्वानों ने पन्द्रह मुहूर्त का मान दो घटी कहा है॥ ३-३½ ॥

वारानुसार अशुभ मुहूर्तों का कथन

अथाशुभमुहूर्तानि वारादिक्रमशो यथा॥ ४॥
अर्यमा राक्षसब्राह्मौ पित्र्याग्नेयौ तथाभिजित्।
राक्षसप्यौ ब्राह्मपित्र्यौ भौजङ्गेशाविनादिषु॥ ५॥
वारेषु वर्जनीयास्ते मुहूर्ताः शुभकर्मसु।
अन्यानपि तु वक्ष्यामि योगानत्र शुभाशुभान्॥ ६॥

१. रविवार को अर्यमा, २. सोमवार को राक्षस तथा ब्रह्म, ३. मंगलवार को पितृ तथा अग्नि मुहूर्त, ४. बुधवार को अभिजित्, ५. गुरुवार को राक्षस तथा जल (उदक

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मुहूर्त), ६. शुक्रवार को ब्रह्म तथा पुत्र और शनिवार को सर्प एवं शिव मुहूर्त वर्जित होते हैं।

रविवार इत्यादि वारों में जो मुहूर्त अशुभ कहे गये हैं, उन्हें त्याग देना चाहिये। अब यहाँ आगे अशुभ योगों को भी शुभ बना देने वाले योग (रवियोग) को कहता हूँ॥ ४-६ ॥

विमर्श—तात्पर्य यह है कि अभिजित् मुहूर्त (मध्याह्न काल में) अति शुभ होता है, परन्तु बुधवार के दिन अभिजित् अशुभ हो जाता है। अत: उसे त्याग देना चाहिये। यही बात वारानुसार अन्य मुहूर्तों के सम्बन्ध में जानना चाहिये।

वारों में वर्जित मुहूर्तों का चक्र

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	वार
अर्यमा	राक्षस ब्रह्मा	पितृ अग्नि	अभिजित्	राक्षस उदक	ब्रह्मा पितर	सर्प शिव	वर्जित मुहूर्त

दोषसंघविनाशक रवियोग

सूर्यभाद् वेद गोऽर्क दिग्विश्व नखसम्मिते।
चन्द्रर्क्षे रवियोगास्युर्दोषसंघविनाशका: ॥ ७ ॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां मुहूर्ताध्यायो नवम: ॥ ९ ॥

सूर्य जिस नक्षत्र पर स्थित हो, उससे दिन नक्षत्र (चन्द्र नक्षत्र) तक गणना करे, यदि चन्द्रनक्षत्र, सूर्यनक्षत्र से चौथा, नौवाँ, छठवाँ, दसवाँ, तेरहवाँ अथवा बीसवाँ हो तो रवियोग होता है, जो कि अशुभ मुहूर्त के अनेक दोषों को नष्ट करता है॥ ७ ॥

सूर्य नक्षत्र	दैनिक चन्द्रनक्षत्र					
	४	६	९	१०	१३	२०
अश्विनी	रोहिणी	आर्द्रा	आश्लेषा	मघा	हस्त	पूर्वा.षा.
भरणी	मृगशिरा	पुनर्वसु	मघा	पूर्वा.फा.	चित्रा	उत्त.षा.
कृतिका	आर्द्रा	पुष्य	पूर्वा.फा.	उत्त.फा.	स्वाति	श्रवण
रोहिणी	पुनर्वसु	आश्लेषा	उत्त.फा.	हस्त	विशाखा	धनिष्ठा
मृगशिरा	पुष्य	मघा	हस्त	चित्रा	अनुराधा	शतभिषा
आर्द्रा	आश्लेषा	पूर्वा.फा.	चित्रा	स्वाति	ज्येष्ठा	पूर्वा.भा.

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सूर्य नक्षत्र	दैनिक चन्द्रनक्षत्र					
	४	६	९	१०	१३	२०
पुनर्वसु	मघा	उत्त.फा.	स्वाति	विशाखा	मूल	उत्त.भा.
पुष्य	पूर्वा.फा.	हस्त	विशाखा	अनुराधा	पूर्वा.षा.	रेवती
आश्लेषा	उत्त.फा.	चित्रा	अनुराधा	ज्येष्ठा	उत्त.षा.	अश्विनी
मघा	हस्त	स्वाति	ज्येष्ठा	मूल	श्रवण	भरणी
पूर्वा.फा.	चित्रा	विशाखा	मूल	पूर्वा.फा.	धनिष्ठा	कृतिका
उत्त.फा.	स्वाति	अनुराधा	पूर्वा.षा.	उत्त.षा.	शतभिषा	रोहिणी
हस्त	विशाखा	ज्येष्ठा	उत्त.षा.	श्रवण	पूर्वा.भा.	मृगशिरा
चित्रा	अनुराधा	मूल	श्रवण	धनिष्ठा	उत्त.षा.	आर्द्रा
स्वाति	ज्येष्ठा	पूर्वा.षा.	धनिष्ठा	शतभिषा	रेवती	पुनर्वसु
विशाखा	मूल	उत्त.षा.	शतभिषा	पूर्वा.भा.	अश्विनी	पुष्य
अनुराधा	पूर्वा षा.	श्रवण	पूर्वा.भा.	उत्त.भा.	भरणी	आश्लेषा
ज्येष्ठा	उत्त.षा.	धनिष्ठा	उत्त.भा.	रेवती	कृतिका	मघा
मूल	श्रवण	शतभिषा	रेवती	अश्विनी	रोहिणी	पूर्वा.फा.
पूर्वा षा.	धनिष्ठा	पूर्वा.भा.	अश्विनी	भरणी	मृगशिरा	उत्त.फा.
उत्त.षा.	शतभिषा	उत्त.भा.	भरणी	कृत्तिका	आर्द्रा	हस्त
श्रवण	पूर्वा.भा.	रेवती	कृतिका	रोहिणी	पुनर्वसु	चित्रा
धनिष्ठा	उत्त.भा.	अश्विनी	रोहिणी	मृगशिरा	पुष्य	स्वाति
शतभिषा	रेवती	भरणी	मृगशिरा	आर्द्रा	आश्लेषा	विशाखा
पूर्वा.भा.	अश्विनी	कृतिका	आर्द्रा	पुनर्वसु	मघा	अनुराधा
उत्त.भा.	भरणी	रोहिणी	पुनर्वसु	पुष्य	पूर्वा.फा.	ज्येष्ठा
रेवती	कृत्तिका	मृगशिरा	पुष्य	आश्लेषा	उत्त.फा.	मूल

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के नवम मुहूर्ताध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई ॥ ९ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दशमोऽध्यायः

नैमित्तिक योगाध्यायः

भूकम्पादि योगों की गणना

भूकम्पः सूर्यभात्सप्तमर्क्षे विद्युच्च पञ्चमे।
शूलोऽष्टमेऽब्धिदिग्भे शनिरष्टादशे तथा॥ १॥
केतुः पञ्चदशे दण्ड उल्का एकोनविंशतिः।
मोहनिर्घातकम्पाश्च कुलिशं परिवेषणम्॥ २॥
विज्ञेयमेकविंशर्क्षादारभ्य च यथाक्रमम्।
चन्द्रयुक्तेषु भेष्वेषु शुभकर्म न कारयेत्॥ ३॥

भूकम्पादि संज्ञाओं से युक्त नक्षत्र—सूर्य जिस नक्षत्र में हो, उससे सातवें नक्षत्र को भूकम्प, पाँचवें को विद्युत्, आठवें को शूल, दशवें को शनि, अठारहवें को केतु, पन्द्रहवें को दण्ड, उन्नीसवें को उल्का, इक्कीसवें को मोह, बाईसवें को निर्घात, तेईसवें को कम्प, चौबीसवें को कुलिश तथा पच्चीसवें को परिवेष कहते हैं। इन संज्ञाओं वाले नक्षत्रों में शुभकर्म वर्जित हैं॥ १-३॥

भूकम्पादि योग चक्र

पाँचवाँ	सातवाँ	आठवाँ	दशवाँ	पन्द्रहवाँ	अठारहवाँ	उन्नीसवाँ	इक्कीसवाँ	बाईसवाँ	तेईसवाँ	चौबीसवाँ	पच्चीसवाँ	सूर्यनक्षत्र से चन्द्रनक्षत्र की संख्या
विद्युत्	भूकम्प	शूल	शनि	दण्ड	केतु	उल्का	मोह	निर्घात	कम्प	कुलिश	परिवेष	योग का नाम

क्रकच योग

क्रकचं हि प्रवक्ष्यामि योगं शास्त्रानुसम्मतम्।
निन्दितं सर्वकार्येषु तस्मिन्नैवाचरेच्छुभम्॥ ४॥
त्रयोदशस्युर्मिलने संख्यया तिथिवारयोः।
क्रकचो नाम योगोऽयं मङ्गलेष्वतिगर्हितः॥ ५॥

अब मैं शास्त्रसम्मत क्रकच योग को कहता हूँ, जो सभी शुभकर्मों में निन्दित होता है, अतः इसमें शुभकर्म न करें। जब तिथि एवं वार को मिलाने पर तेरह की संख्या बन जाय, तो उस दिन क्रकच योग होता है। वह शुभकर्मों में गर्हित है॥ ४-५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—वार की गणना रविवार से करके जिस दिन की वार संख्या में उस दिन की तिथि संख्या मिलकर तेरह की अशुभ संख्या बन जाय, उस दिन क्रकच योग होता है।

क्रकच योग प्रदर्शक चक्र

१. रविवार	२. सोमवार	३. मंगलवार	४. बुधवार	५. गुरुवार	६. शुक्रवार	७. शनिवार	वार
द्वादशी	एकादशी	दशमी	नवमी	अष्टमी	सप्तमी	षष्ठी	तिथि
१२+१ = १३	११+२ = १३	१०+३ = १३	९+४ = १३	८+५ = १३	७+६ = १३	६+७ = १३	तिथिवार की संख्या का योग

सम्वर्तक योग

सप्तम्यामर्कवारश्चेत् प्रतिपत्सौम्यवासरे।
सम्वर्तयोगो विज्ञेयः शुभकर्मविनाशकृत्॥ ६॥

जब सप्तमी तिथि में रविवार हो तथा प्रतिपदा को बुधवार हो, तो सम्वर्त नामक योग होता है। जो शुभ कर्म का विनाशक होता है॥ ६॥

आनन्दादि अट्ठाईस योगों का कथन

आनन्दः कालदण्डश्च धूम्रधातृसुधाकराः।
ध्वाङ्क्षध्वजाख्य श्रीवत्सवज्रमुद्गरछत्रकाः॥ ७॥
मित्रमानसपद्माख्य लुम्बकोत्पातमृत्यवः।
काणः सिद्धिः शुभामृतमुसलान्तककुञ्जराः॥ ८॥
राक्षसाख्यः चरस्थैर्य वर्धमानाः क्रमादमी।
योगाः स्वसंज्ञफलदा अष्टाविंशति संख्यकाः॥ ९॥

१. आनन्द, २. कालदण्ड, ३. धूम्र, ४. धाता, ५. सौम्य, ६. ध्वाङ्क्ष, ७. ध्वज, ८. श्रीवत्स, ९. वज्र, १०. मुद्गर, ११. छत्र, १२. मित्र, १३. मानस, १४. पद्म, १५. लुम्बक, १६. उत्पात, १७. मृत्यु, १८. काण, १९. सिद्धि, २०. शुभ, २१. अमृत, २२. मुसल, २३. रोग (गद), २४. मातङ्ग, २५. राक्षस, २६. चर, २७. सुस्थिर तथा २८. प्रवर्ध—ये क्रमशः अट्ठाईस योग होते हैं। जो नाम के सदृश फल देते हैं॥ ७-९॥

आनन्दादि योगों को जानने की विधि

रविवारे क्रमादेते दस्त्रभान्मृगभा द्विधौ॥ १०॥
सार्पाद् भौमे बुधे हस्तान्मैत्रभात्सुरमन्त्रिणः॥ ११॥
वैश्वदेवे भृगुसुते वारुणाद् भास्करात्मजे॥ १२॥
यत्र स्यादिन्दु नक्षत्रं आनन्दादिगणस्ततः।
अष्टाविंशति योगानां क्रमोऽयं प्रोच्यते बुधैः॥ १३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि रविवार को अश्विनी नक्षत्र हो तो आनन्द योग, भरणी हो तो कालदण्ड योग, कृत्तिका हो तो धूम्र—इस क्रम से योग होते हैं। सोमवार को मृगशिरा से, मंगलवार को आश्लेषा से, बुधवार को हस्त नक्षत्र से, गुरुवार को अनुराधा से, शुक्रवार को उत्तराषाढ़ा से तथा शनिवार को शतभिषा से प्रारम्भकर आनन्दादि योग अभीष्ट चन्द्र नक्षत्र तक होता है। ये अट्ठाईस योग इसी प्रकार क्रमशः होते हैं॥ १०-१३॥

आनन्दादि योगों के जानने का चक्र

क्रम.	आनंदादयः योग	रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	फलम्
१	आनन्द	अश्वि.	मृग.	श्लेषा	हस्त	अनुरा.	उ.षा.	शत.	शुभ
२	कालदंड	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	अशुभ
३	धूम्र	कृति.	पुनर्वसु	पू.फा.	स्वाति	मूल	श्रवण	उ.भा.	अशुभ
४	धाता	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशा.	पू.षा.	ध.	रेवती	शुभ
५	सौम्य	मृग	श्लेषा	हस्त	अनु.	उ.षा.	शत	अश्वि.	शुभ
६	ध्वांक्ष	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	भरणी	अशुभ
७	केतु	पुनर्वसु	पूर्वाफा.	स्वाति	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृति.	शुभ
८	श्रीवत्स	पुष्य	उ.फा.	विशा.	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	शुभ
९	वज्र	श्लेषा	हस्त	अनु.	उ.षा.	शत.	अश्वि.	मृग	अशुभ
१०	मुद्गर	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	भरणी	आर्द्रा	अशुभ
११	छत्र	पूर्वाफा.	स्वाति	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृति.	पुन.	शुभ
१२	मित्र	उ.फा.	विशा.	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	शुभ
१३	मानस	हस्त	अनुरा.	उ.षा.	शत.	अश्वि.	मृग.	श्लेषा	शुभ
१४	पद्म	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	शुभ
१५	लुम्बक	स्वाति	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृति.	पुन.	पू.फा.	अशुभ
१६	उत्पात	विशा.	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	अशुभ
१७	मृत्यु	अनु.	उ.षा.	शतभि.	अश्वि.	मृग	श्लेषा	हस्त	अशुभ
१८	काण	ज्येष्ठा	अभि.	पू.भा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	अशुभ
१९	सिद्धि	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृति.	पुन.	पू.फा.	स्वाति	शुभ
२०	शुभ	पूर्वा.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशा.	शुभ
२१	अमृत	उ.षा.	शतभि.	अश्वि.	मृग.	श्लेषा	हस्त	अनु.	शुभ

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

२२	मुसल	अभि.	पू.भा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अशुभ
२३	गद	श्रवण	उ.भा.	कृति.	पुन.	पू.फा.	स्वाति	मूल	अशुभ
२४	मातंग	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशा.	पू.षा.	शुभ
२५	राक्षस	शत.	अश्वि.	मृग	श्लेषा	हस्त	अनु.	उ.षा.	अशुभ
२६	चर	पू.भा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभि.	शुभ
२७	सुस्थिर	उ.भा.	कृतिका	पुनर्व.	पू.फा.	स्वाति	मूल	श्रवण	शुभ
२८	प्रवर्ध	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशा.	पू.षा.	धनि.	शुभ

सिद्धियोग का कथन

हस्तर्क्षे रविवारेऽब्जे चेन्दुभं दस्रभे कुजे।
सौम्ये मित्रं सुराचार्ये तिष्यं पौष्णं भृगोः सुते।
रोहिणी मन्दवारे तु सिद्धि योगाक्षय अमी॥ १४॥

जब रविवार के दिन हस्तनक्षत्र, सोमवार को मृगशिरा, मंगलवार को अश्विनी, बुधवार को अनुराधा, गुरुवार को पुष्य, शुक्रवार को रेवती तथा शनिवार को रोहिणी नक्षत्र होता है; तब जितने समय तक ग्रह, वार एवं नक्षत्र का संयोग होता है, उतनी देर तक सिद्धियोग होता है, जो सर्वकार्यों को सफल करता है॥ १४॥

मृत्युयोग (मृत्युदा तिथियाँ)

आदित्यभौमयोर्नन्दा भद्रा शुक्रशशांकयोः।
जया सौम्ये गुरौ रिक्ता शनौ पूर्णा तु नो शुभाः॥

रविवार या मंगलवार के दिन नन्दा तिथि (१-६-११ में से कोई भी) हो, सोमवार एवं शुक्रवार के दिन भद्रा (२-७-१२) तिथि हो, बुधवार को जया तिथि (३-८-१३) तथा गुरुवार को यदि रिक्ता (४-९-१४ तिथि) अथवा शनिवार के दिन पूर्णा (५-१०-१५-३०) तिथियों में से कोई हो, तो उतने संयोग तक का समय अशुभ होता है। तब ये तिथियाँ मृत्युदा तिथियाँ कहलाती हैं।

सिद्धिदा तिथियाँ (सिद्धयोग)

नन्दातिथिः शुक्रवारे सौम्ये भद्रा जया कुजे।
रिक्ता मन्दे गुरोर्वारे पूर्णा सिद्धाह्वया अमी॥ १५॥

शुक्रवार को नन्दा (१-६-११) तिथि, बुधवार को भद्रा (२-७-१२) तिथि, मंगलवार को जयातिथि (३।८।१३), शनिवार को रिक्ता तिथि (४।९।१४) तथा गुरुवार को पूर्णा तिथि (५।१०।१५) होने पर 'सिद्धिदा' कही जाती हैं॥ १५॥

तिथिदग्धयोग (पङ्गुयोग)

एकादश्यामिन्दुवारो द्वादश्यामार्किवासरः।
षष्ठी बृहस्पतेर्वारे तृतीया बुधवासरे॥ १६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अष्टमी शुक्रवारे तु नवम्यामर्कवासरः।
पञ्चमी भौमवारे तु दग्धयोगाः प्रकीर्तिता॥ १७॥
दग्धयोगाश्च विज्ञेया पङ्गुयोगाभिधा अमी।

यदि एकादशी में सोमवार, द्वादशी में शनिवार, षष्ठी में गुरुवार, तृतीया में बुधवार, अष्टमी में शुक्रवार, नवमी में रविवार तथा पञ्चमी के साथ भौमवार का योग हो, तो इसे दग्धयोग कहा जाता है। इन्हीं योगों को पङ्गुयोग भी कहा जाता है (यह तिथिवारजन्य दग्धयोग है) ॥ १६-१७½ ॥

नक्षत्रजन्य दग्धयोग (ग्रहों के जन्मनक्षत्र)

यमर्क्षमर्कवारेऽब्जे चित्रा भौमे तु विश्वभम्॥ १८॥
बुधे धनिष्ठार्यमभं गुरौ ज्येष्ठा भृगोर्दिने।
रेवती मन्दवारे तु ग्रहजन्मर्क्षनाशनम्॥ १९॥

रविवार को भरणी, सोमवार को चित्रा, मंगलवार को उत्तराषाढ़ा, बुधवार को धनिष्ठा, गुरुवार को उत्तराफाल्गुनी, शुक्रवार को ज्येष्ठा तथा शनिवार को रेवती नक्षत्र होने से अशुभ फल होता है, क्योंकि ये भरण्यादि नक्षत्र क्रमशः ७ वारों के स्वामी ग्रहों सूर्यादि के जन्मनक्षत्र हैं॥ १८-१९॥

विमर्श—किसी ग्रह का जन्मनक्षत्र यदि उसी के वार में पड़े, तो यह कार्य नाशक होता है। वसिष्ठसंहिता में कहा गया है—

'भरणी चित्र विश्वर्क्ष वसुभोत्तरफाल्गुनी।
ज्येष्ठा रेवती चैव जन्मर्क्षं भानुतः क्रमात्॥'
अस्मिन् योगे कृतं यच्च शुभकर्म विनश्यति।
तस्माद्योगमिमं त्याज्यो मङ्गलेषु च सर्वदा॥'

उत्पातादि चार योग

विशाखादिचतुर्वर्गमर्कवारादिषु क्रमात्।
उत्पातमृत्युकाणाख्याः सिद्धियोगाः प्रकीर्तिताः॥ २०॥

यदि रविवार को विशाखादि चार नक्षत्र हों तो क्रमशः—१. उत्पात, २. मृत्यु, ३. काण तथा ४. सिद्धि योग होते हैं॥ २०॥

उत्पातादि योगचतुष्टय का चक्र

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	योग
विशाखा	पूर्वाषाढ़ा	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उत्तराफा.	१. उत्पात
अनुराधा	उ.षा.	शतभिषा	अश्विनी	मृगशिरा	श्लेषा	हस्त	२. मृत्यु
ज्येष्ठा	अभिजित्	पू.भा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा	३. काण
मूल	श्रवण	उ.भा.	कृतिका	पुनर्वसु	पूर्वाफाल्गुनी	स्वाति	४. सिद्धि

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दुष्ट योगों का परिहार

तिथिवारोद्भवाः नेष्टा योगा वारर्क्षसम्भवाः।
हूणवङ्गखशेभ्योऽन्यदेशेष्वतिशुभप्रदः ॥ २१ ॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां नैमित्तिकयोगाध्यायो दशमः ॥ १० ॥

ऊपर जो तिथिवारजन्य तथा वारनक्षत्रजन्य योग वर्णित हैं, वे केवल हूणदेश तथा वङ्गदेश एवं खशदेश में वर्जित हैं, भारत में अन्यत्र उनका अशुभफल नहीं होता है ॥ २१ ॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के दशम नैमित्तिक योगाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई ॥ १० ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एकादशोऽध्यायः

संक्रान्तिविचाराध्यायः

संक्रान्तियों का नामकरण

घोरा ध्वांक्षी महोदर्यो नन्दा मन्दाकिनी मता।
मिश्रा राक्षसिका नाम सूर्यवारादिषु क्रमात्॥ १॥

मेषादि बारह राशियों में सूर्य-संक्रमण जिस वार को होता है, उसके अनुसार उसका नाम रखा जाता है। रविवार आदिक्रम से संक्रान्ति का प्रवेश होने पर क्रमशः— १. घोरा, २. ध्वांक्षी, ३. महोदरी, ४. नन्दा, ५. मन्दाकिनी, ६. मिश्रा, ७. राक्षसी—ये नाम होते हैं॥ १॥

वारानुसार सूर्यसंक्रमण से संक्रान्ति के नामों का चक्र

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	वार
घोरा	ध्वांक्षी	महोदरी	नन्दा	मन्दाकिनी	मिश्रा	राक्षसी	संक्रान्ति का नाम

घोरा आदि नाम की संक्रान्तियों का फल

शूद्रविट्तस्करक्ष्माप भूदेवपशुनीचजाः।
अनुक्तानां च सर्वेषां घोराद्याः सुखदाः स्मृताः॥ २॥

१. यदि रविवार को सूर्य का राशि प्रवेश हो, तो वह घोरा नामक संक्रान्ति शूद्रों को सुख देती है। २. सोमवार को सूर्य संक्रमित होने पर ध्वांक्षी नामक संक्रान्ति वैश्यों के लिये सुखदायक होती है। ३. मंगलवार को सूर्य की संक्रान्ति लगने पर महोदरी नाम वाली संक्रान्ति चोरों, डाकुओं, तस्करों तथा जेबकतरों आदि को सुखी करती है। ४. बुधवार की संक्रान्ति नन्दा नामवाली होने से राजाओं, शासकों, अधिकारियों के लिये सुखदायक होती है। ५. जो संक्रान्ति गुरुवार को लगती है, वह मन्दाकिनी नाम वाली होने से ब्राह्मणों एवं बुद्धिजीवियों के लिये शुभफल देती हैं। ६. शुक्रवार को प्रारम्भ होनेवाली संक्रान्ति मिश्रा नामवाली होती है तथा पशुओं को सुखकर होती है। ७. सातवीं राक्षसी नामवाली संक्रान्ति शनिवार को संक्रमित होने से शेष लोगों म्लेच्छ आदि को सुखदायक होती है॥ २॥

संक्रान्ति का दिवारात्रि विभागानुसार फल

पूर्वाह्णे नृपतीन्हन्ति विप्रान्मध्यन्दिने विशः।
अपराह्णेऽस्तगे शूद्रान्प्रदोषे च पिशाचकान्॥ ३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

निशि रात्रिचरान्नाट्यकारानपररात्रिके ।
गोमाहिषेति सन्ध्यायां लिङ्गितो निशिसङ्क्रमः ॥ ४ ॥

१. यदि पूर्वाह्न समय में सूर्य की संक्रान्ति हो, तो राजाओं (राजनेताओं एवं शासकों) के लिये हानिकारक होती है। २. यदि मध्याह्न के समय संक्रान्ति प्रारम्भ हो, तो ब्राह्मणों के लिये हानिकर होती है। ३. यदि अपराह्न काल में सूर्य का राशि परिवर्तन (संक्रान्ति) हो, तो वैश्यों को हानिकारक होती है। ४. यदि सायं सन्ध्या के समय संक्रमण हो, तो शूद्रों को हानिकारक होती है तथा ५. प्रदोषकाल (सन्ध्याकाल के उपरान्त का समय) में सूर्य का राशि प्रवेश हो, तो पिशाचों (कबाइली लोगों को जो कि अफगानिस्तान, बलूचिस्तान, कश्मीर आदि में रहते हैं) के लिये हानिकर होती है ॥ ३ ॥

१. रात्रि में (दस बजे से दो बजे तक) सूर्य की संक्रान्ति हो, तो राक्षसों को पीड़ा होती है। २. यदि रात्रि के अपर भाग में संक्रमण हो, तो नाट्यकारों (अभिनेताओं) को कष्ट होता है। ३. यदि प्रातःकाल (उषःकाल) में संक्रमण हो, तब गायों-भैसों को पीड़ा होती है। ४. एकदम सूर्योदय के समीप संक्रमण हो, तो संन्यासियों आदि के लिये पीड़ा करती है ॥ ४ ॥

मेष संक्रान्ति का विशेष फल

दिवा चेन्मेषसंक्रान्तिरनर्थकलहप्रदा।
रात्रौ सुभिक्षमतुलं सन्ध्ययोर्वृष्टिनाशनम् ॥ ५ ॥

यदि मेष संक्रान्ति दिन में हो, तो अनर्थकारक एवं कलहकारक होती है। यदि रात्रि में मेष संक्रान्ति हो, तो सुभिक्षकारक होती है। यदि प्रातः एवं सायंकाल की सन्ध्याओं में सूर्य का संक्रमण मेष राशि में हो, तो वर्षा की हानि करता है ॥ ५ ॥

ग्यारह करणों के अनुसार संक्रान्ति वाहन का विचार

हरिशार्दूलवाराहखरकुञ्जरमाहिषाः ।
अश्वश्वाजवृषाः पादायुधाः करणवाहनाः ॥ ६ ॥

बव आदि ११ करणों में सूर्यसंक्रमण होने पर संक्रान्ति के—१. सिंह, २. व्याघ्र, ३. वाराह, ४. खर (गधा), ५. हाथी, ६. भैंसा, ७. घोड़ा, ८. श्वान, ९. बकरा या मेढ़ा, १०. बैल तथा ११. पादायुध (मुर्गा) वाहन होते हैं ॥ ६ ॥

करणानुसार संक्रान्ति के वाहनों का चक्र

१. बव	२. बालव	३. कौलव	४. तैतिल	५. गर	६. वणिज	७. विष्टि	८. शकुनि	९. चतुष्पद	१०. नाग	११. किंस्तुघ्न	**करण**
सिंह (शेर)	व्याघ्र (बाघ)	वाराह (सूअर)	खर (गधा)	कुंजर (हाथी)	महिष (भैंसा)	अश्व (घोड़ा)	श्वान (कुत्ता)	अज (बकरा या मेढ़ा)	वृषभ (बैल)	पादायुध (कुक्कुट)	**वाहन**

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मतान्तर से संक्रान्ति वाहन का विचार

खशवाह्लिकवङ्गेषु संक्रान्तिर्धिष्ण्यवाहना।
अन्यदेशेषु तिथ्यर्ध वाहना स्याद् बवादितः॥ ७॥

खश (असम), वाह्लीक (अफगानिस्तान) तथा वंग (बंगाल) में संक्रान्ति के वाहन का विचार नक्षत्रों के आधार पर होता है, परन्तु शेष देश में बवादि करणों के आधार पर ही होता है॥ ७॥

संक्रान्ति के आयुध

भुशुण्डिभिन्दिपालासिदण्डकोदण्डतोमरान्।
कुन्तपाशाङ्कुशास्त्रेषून् विभर्त्ति करणेस्विनः॥ ८॥

बवादि करणों के अनुसार भुशुण्डी, भिन्दिपाल, असि, दण्ड, धनुष, तोमर, कुन्त, पाश, अंकुश, अस्त्र तथा बाण—ये आयुध संक्रान्ति के होते हैं॥ ८॥

संक्रान्ति की स्थिति

निविष्टी वाणिजे विष्ट्यां बालवे च गरे बवे।
कौलके शंकुने भानुः किंस्तुघ्ने चोर्ध्वसंस्थिता॥ ९॥
चतुष्पात्तै तिले नागे सुप्ता क्रान्तिं करोति सा।
धान्यार्घवृष्टिषु भवेदनिष्टक्रमशस्तदा॥ १०॥

यदि वणिज विष्टि, बालव, गर तथा बव करणों में संक्रान्ति लगे, तो निविष्टी (बैठी हुई स्थिति में होती है)। कौलव; शकुनि तथा किंस्तुघ्न में खड़ी हुई होती है। चतुष्पाद, तैतिल, नाग इन करणों में सुप्तावस्था में होती है। बैठी हुई संक्रान्ति में अन्न के भाव सस्ते रहते हैं, खड़ी संक्रान्ति में वर्षा होती है तथा सुप्त (सोती हुई) संक्रान्ति अशुभफल करती है॥ ९-१०॥

संक्रान्ति के अन्न

अन्नञ्च पायसं भैक्ष्यमपूपं च पयोदधि।
चित्रान्नं गुडमध्वाज्यशर्कराबवतो हविः॥ ११॥

बवादि ११ करणों में संक्रान्ति का भक्ष्य क्रमशः अन्न, पायस, भिक्षान्न, पूड़ी, दूध, दही, चित्रान्न, गुड़, मधु, घृत, शर्करा जानना चाहिये॥ ११॥

संक्रान्ति से प्रभावित वस्तुएँ

आयुधं वाहनाहारो यज्जातीयजनस्य च।
स्वापोपविष्ट तिष्ठंतस्ते लोकाः क्षयमाप्नुयुः॥ १२॥

संक्रान्ति के आयुध, वाहन, आहार इत्यादि जिस जाति के लोगों के हों तथा सोयी, बैठी, खड़ी जिस स्थिति में हो, उसी प्रकार के लोगों और पदार्थों को नष्ट करती है॥ १२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

करणों के अनुसार संक्रान्ति के वाहनादि का प्रदर्शक चक्र (विस्तार से)

करण	१. बव	२. बालव	३. कौलव	४. तैतिल	५. गर	६. वणिज	७. विष्टि	८. शकुनि	९. चतुष्पद	१०. नाग	११. किंस्तुघ्न
स्थिति	बैठी	बैठी	खड़ी	सोती	बैठी	खड़ी	बैठी	सोती	खड़ी	सोती	खड़ी हुई
मुख	पूर्वमुख	दक्षिणमुख	पश्चिममुख	उत्तरमुख	वायव्य	आग्नेय	ईशान	नैर्ऋत्य	पाताल	ऊर्ध्व	सम
फल	मध्यम	मध्यम	महर्घ	समर्घ	मध्यम	महर्घ	महर्घ	महर्घ	समर्घ	समर्घ	महर्घ
वाहन	सिंह	व्याघ्र	वाराह	गर्दभ	हाथी	महिष	अश्व	श्वान	मेष	बैल	कुक्कुट
उपवाहन	गज	अश्व	वृषभ	मेष	गर्दभ	उष्ट्र	सिंह	शार्दूल	महिष	व्याघ्र	वाराह
फल	भय	भय	पीड़ा	सुख	लक्ष्मी	क्लेश	स्थिरता	सुख	क्लेश	स्थिरता	मृत्यु
वस्त्र	श्वेतवस्त्र	पीतवस्त्र	हरित	पाण्डुर	रक्त	श्याम	कृष्णनील	विचित्र	कम्बल	नग्न	मेघवर्ण
आयुध	भुशुण्डी	गदा	खड्ग	दण्ड	धनुष	तोमर	माला	पाश	अंकुश	तलवार	बाण
पात्र	स्वर्णपात्र	रौप्यपात्र	ताम्र	कांस्य	लौह	खर्पर	पत्र	वस्त्र	कर	भूमि	काष्ठपात्र
भक्ष्य	अन्न	खीर	भिक्षा	पक्वान्न	दूध	दही	चित्रान्न	गुड़	मधु	घृत	शर्करा
लेपन	कस्तूरी	कुंकुम	रक्तचन्दन	मृत्तिका	गोरोचन	महावर	हल्दी	सुरमा	सिन्दूर	अगर	कर्पूर
वर्ण	देव	भूत	सर्प	पशु	मृग	विप्र	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	मिश्र	अन्त्यज
पुष्प	नागकेशर	चमेली	बकुल	केतकी	ब्रह्म	मन्दार	कमल	दूर्वा	चमेली	पाटल	गुड़हल
भूषण	नूपुर	कंकण	मोती	प्रवाल	मुकुट	मणि	गुंजा	कपर्दी	नीलक	पुन्नाग	सुवर्ण
कंचुकी	विचित्र	पर्ण	हरित	भोजपत्र	श्वेत	पाण्डुर	नील	कृष्ण	अंजन	वल्कल	पाण्डुर
वय	बाला	कुमारी	तरुणी	युवती	प्रौढ़ा	प्रगल्भा	वृद्धा	वन्ध्या	अतिवृद्धा	पुत्रवती	संन्यासिनी

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नक्षत्रों की अन्धाक्षादि संज्ञाएँ

अन्धको मन्दसंज्ञश्च मध्यसंज्ञः सुलोचनः।
पर्यायाद् गणयेद् भानि रोहिण्यादि चतुर्विधम्॥ १३॥

रोहिणी से लेकर, चार नक्षत्र तक पुनरावृत्ति क्रम से नक्षत्रों की अन्धाक्ष, मन्दाक्ष, मध्याक्ष तथा सुलोचन—ये चार संज्ञाएँ होती हैं॥ १२॥

विमर्श—यहाँ नक्षत्रों की इन संज्ञाओं का प्रयोजन नहीं लिखा है। परन्तु इनका उपयोग नष्ट वस्तु की प्राप्ति जानने में होता है। अन्धलोचन में खोई हुई वस्तु शीघ्र मिलती है तथा पूर्व दिशा में जाती है। मन्दलोचन में नष्ट वस्तु की दिशा दक्षिण होती है तथा विलम्ब से प्राप्ति होती है। मध्यलोचन में नष्टवस्तु की दिशा पश्चिम होती है तथा प्राप्ति बहुत कठिनाई से होती है किन्तु सुलोचन नक्षत्र में नष्ट वस्तु की दिशा उत्तर होती है तथा उसकी प्राप्ति असम्भव होती है।

नक्षत्रों की अन्धाक्षआदि संज्ञा का चक्र

अन्धाक्ष	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.	विशाखा	पूर्वाषाढ़ा	धनिष्ठा	रेवती	पूर्व में प्राप्ति
मन्दाक्ष	मृगशिरा	आश्लेषा	हस्त	अनुराधा	उ.षा.	शतभिषा	अश्विनी	दक्षिण में प्राप्ति
मध्याक्ष	आर्द्रा	मघा	चित्रा	ज्येष्ठा	अभिजित्	पू.भा.	भरणी	पश्चिम में प्राप्ति
सुलोचन	पुनर्वसु	पू.फा.	स्वाति	मूल	श्रवण	उ.भा.	कृत्तिका	उत्तर में प्राप्ति

संक्रान्ति की विष्णुपदी तथा षडशीति संज्ञा

स्थिरभेष्वर्कसंक्रान्तिर्ज्ञेया विष्णुपदाह्वया।
षडशीतिमुखीज्ञेया द्विस्वभावेषु राशिषु॥ १४॥

१. विष्णुपदी—स्थिर राशियों (वृष-सिंह-वृश्चिक-कुम्भ) की संक्रान्ति विष्णुपदी कहलाती है तथा २. द्विस्वभाव राशियों (मिथुन-कन्या-धनु-मीन) की संक्रान्तियों को षडशीतिमुखी कहा जाता है॥ १४॥

अयन संक्रान्ति तथा विषुव संक्रान्ति

सौम्ययाम्यायने नूनं भवेतां मृगकर्किणोः।
तुलाधराजयोर्ज्ञेयो विषुवत्सूर्यसंक्रमः॥ १५॥

चर राशि की संक्रान्तियों में सूर्य जब मकर में संक्रमित होता है, तब उत्तरायण होता है तथा कर्क में संक्रमित होने पर दक्षिणायन होता है। उसी प्रकार तुला संक्रान्ति में दक्षिणगोल तथा मेष संक्रान्ति में उत्तरगोल होता है। इन दोनों संक्रान्तियों को विषुव संक्रान्ति भी कहते हैं॥ १५॥

विमर्श—विषुव संक्रान्ति के दिन सूर्य ठीक पूर्व दिशा में उदित होता है तथा शून्य अक्षांश अर्थात् निरक्षदेश या भूमध्य रेखा (विषुवत् रेखा=Equator) पर रहता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दिवारात्रि विभागानुसार संक्रान्ति का पुण्यकाल

अहः संक्रमणे कृत्स्नं महत्पुण्यं प्रकीर्तितम्।
रात्रौ संक्रमणे भानोर्व्यवस्था सर्वसंक्रमे॥ १६॥
सूर्यस्योदयसंध्यायां यदि याम्यायनं भवेत्।
तदोदयादहः पुण्यं पूर्वाहः परतो यदि॥ १७॥
सूर्यास्तमनवेलायां यदि सौम्यायनं भवेत्।
तदोपेयादहः पुण्यं पयस्ताः परतो यदि॥ १८॥

यदि दिन में (मध्याह्न) संक्रान्ति लगे, तो पूरे दिन ही पुण्यकाल होता है। यदि रात्रि में संक्रान्ति लगे तो सभी संक्रान्तियों में इस प्रकार पुण्यकाल होता है। यदि सूर्योदय की सन्ध्या में (तीन घटी पूर्व तक) कर्क संक्रान्ति हो, तो उदयवाले दिन में पुण्यकाल होता है। परन्तु यदि सूर्योदय की तीन घटी के पहले ही संक्रान्ति लग जाय, तो पूर्व दिन में ही पुण्यकाल होता है। यह कर्क संक्रान्ति के लिये है॥ १६-१७॥

यदि मकर का संक्रमण सूर्यास्त समय की संध्या में हो, तो उसी दिन पुण्यकाल होता है। परन्तु सूर्यास्त के ३ घटी उपरान्त संक्रान्ति होने पर अगले दिन पुण्यकाल होता है॥ १८॥

संध्याकाल की परिभाषा

अर्धार्कास्तमनात्सन्ध्याघटिकात्रयसम्मिता ।
तथैवार्धोदयात्प्रातः घटिकात्रयसम्मिता॥ १९॥

सूर्य विम्ब के आधे अस्त हो जाने के पश्चात् तीन घटी तक का समय सन्ध्या काल होता है। उसी प्रकार सूर्योदय के तीन घटी पूर्व प्रातः-सन्ध्या का समय होता है॥ १९॥

षडशीतिमुखी का पुण्यकाल

प्रागर्धरात्रात्पूर्वाह्णे पूर्ववद् विष्णुपादयोः।
षडशीतिमुखी चैव परतश्चेत्परेऽहनि॥ २०॥
पश्चात् पराहः सङ्क्रान्तिः षडशीतिर्विपर्ययात्॥ २१॥

विष्णुपदा संक्रान्ति का पुण्यकाल पूर्व की भाँति संक्रान्तिकाल से पूर्व १६ घटी पुण्यकाल तथा षडशीतिमुखी में संक्रान्तिकाल से आठ घटी पूर्वा तथा आठ घटी परा में पुण्यकाल होता है॥ २०-२१॥

चन्द्रानुसार संक्रान्ति का फल

यादृशेनेन्दुना भानोः संक्रान्तिस्तादृशं फलम्।
नरः प्राप्नोति तद्राशौ शीतांशोः साध्वसाधु वा॥ २२॥
सङ्क्रान्तेर्परतो भानुर्भुक्त्वा यावद्भिरंशकैः।
रवेरयनसंक्रान्तिः तदा तद्राशिसंक्रमात्॥ २३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सङ्क्रान्तिर्ग्रहणर्क्षं वा जन्मन्युभयपार्श्वयोः।
व्रतोद्वाहादिकेष्वेव द्वयं नेष्टं तु तत्क्रमात्॥ २४॥

जब सूर्य की संक्रान्ति होती है तो इस संक्रमण के समय में शुभ या अशुभ जैसा चन्द्रमा होता है, उसी चन्द्र के अनुसार मनुष्यों को उनकी जन्मराशि या नामराशि के अनुसार शुभाशुभ फल पूरे मास तक मिलता है॥ २२॥

किसी साधारण संक्रान्ति के उपरान्त जितने दिनों के बाद अयन संक्रान्ति आये अथवा ग्रहण पड़े तो संक्रान्ति या ग्रहण का जो नक्षत्र हो, वह नक्षत्र तथा आगे-पीछे वाले नक्षत्र भी विवाहादि शुभ कर्मों में नेष्ट होते हैं॥ २३-२४॥

ग्रहण के नक्षत्र से गणना विधि

रवेरयनसंक्रान्तिस्तदा तद्राशिसंक्रमः।
सङ्क्रान्तिर्ग्रहणर्क्षे वा जन्मभावधिगण्यताम्॥ २५॥

सूर्य की अयन संक्रान्ति के दिन जो चन्द्र नक्षत्र हो उससे जन्म नक्षत्र तक गिनकर के शुभाशुभ फल जानना चाहिये। तथैव ग्रहण के नक्षत्र से भी जन्मनक्षत्र तक गणना कर फल विचार किया जाता है॥ २५॥

संक्रान्ति या ग्रहणर्क्ष से जन्मनक्षत्र का फलकथन

नेष्टत्रयं षट् च शुभं पर्यायाच्च पुनः पुनः।
हानिर्वृद्धिः स्थानहानिस्तत्प्राप्तिर्भानुतः क्रमात्॥ २६॥

क्रमशः प्रथम तीन नक्षत्र अशुभ, फिर छह नक्षत्र शुभ, फिर तीन नक्षत्र हानिकर, फिर छह नक्षत्र वृद्धिकर, फिर तीन नक्षत्र स्थान हानिकारक, फिर छह नक्षत्र स्थान प्राप्तिकारक होते हैं॥ २६॥

विमर्श—संक्रान्तिवाले चन्द्र नक्षत्र अथवा ग्रहणवाले नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गणना करे, आगे चक्र में स्पष्ट है।

१,२,३	४,५,६, ७,८,९	१०, ११, १२	१३, १४, १५, १६, १७, १८	१९, २०, २१	२२, २३, २४ २५, २६, २७	जन्मनक्षत्र तक
हानि	वृद्धि	स्थान-हानि	स्थान-प्राप्ति	हानि	शुभ	फल

अशुभ फल की शान्ति का उपाय

तिलोपरि लिखेच्चक्रं त्रिशूलञ्च त्रिकोणकम्।
तत्र हेमं विनिक्षिप्य दद्यात् तद् दोषशान्तये॥ २७॥

जब संक्रान्ति या ग्रहण अशुभ फलदायक हो तो उसके दोष की शान्ति के लिये तिलों के ऊपर त्रिकोण तथा त्रिशूल बनायें तथा उस पर स्वर्ण रखकर दान (किसी विद्वान् ब्राह्मण को) दें॥ २७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तारा-चन्द्र एवं सूर्य के बल का तारतम्य

ताराबलेन शीतांशुर्बलवांस्तद्वशाद् रविः।
स सङ्क्रमणतस्तद्वद्वशात्खेट बलाधिकः॥ २८॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां संक्रान्तिविचाराध्यायः एकादशः॥ ११॥

तारा के बल से चन्द्र बली होता है, चन्द्र के बल से सूर्य भी बली होता है तथा सूर्य के बली होने से अन्य ग्रह भी बलवान् हो जाते हैं॥ २८॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के एकादश संक्रान्तिविचाराध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ११॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

द्वादशोऽध्यायः

गोचराध्यायः

सूर्य के शुभस्थान तथा विद्ध स्थान

शुभोऽर्को जन्मतस्त्र्याय दशषट्सु न विध्यते।
जन्मतो नवपञ्चाम्बुव्ययगैर्व्यर्किभिस्तदा॥ १॥

यदि जन्मराशि से ९।५।४।१२ इन स्थानों में (वेधस्थानों में) शनि को छोड़ कोई अन्य ग्रह न हो तब क्रमशः ३।११।१०।६ इन स्थानों में सूर्य गोचर भ्रमण के समय शुभ फल देता है॥ १॥

स्पष्टीकरण—मान लीजिये किसी की जन्मराशि मेष है और सूर्य मेष से तीसरे स्थान (मिथुन राशि) में है, तो शुभफल देगा। परन्तु यदि मेष से नौवें स्थान (धनु राशि) में कोई ग्रह उस समय गोचर में हो, तो सूर्य उस ग्रह से वेधित होने के कारण शुभफल नहीं देगा। परन्तु शनि होने पर वेध नहीं होगा।

सूर्य के शुभ एवं वेधस्थानों का चक्र

३	११	१०	६	शुभस्थान
९	५	४	१२	वेधस्थान (शनि से वेध नहीं)

चन्द्र के शुभ एवं वेधस्थान

विध्यते जन्मतो नेन्दुर्द्युनाद्यायारिखत्रिषु।
स्वेष्वष्टान्त्याम्बुधर्मस्थै विबुधैर्जन्मतः शुभः॥ २॥

यदि जन्मराशि से गोचर में चन्द्रमा सप्तम, प्रथम, एकादश, षष्ठ, दशम, तथा तृतीय में हो, तो क्रमशः द्वितीय, पञ्चम, अष्टम, द्वादश, चतुर्थ तथा नवम इन स्थानों में बुधको छोड़कर अन्य कोई ग्रह न होने पर शुभफल देता है॥ २॥

विमर्श—यदि चन्द्र से वेधस्थानों में बुध ग्रह हो तो वेध नहीं है, क्योंकि चन्द्र तथा बुध एवं सूर्य तथा शनि पिता-पुत्र है, अतः पिता-पुत्र में वेध नहीं होता है।

७	१	११	६	१०	३	शुभस्थान
२	५	८	१२	४	९	वेधस्थान (बुध से वेध नहीं)

शनि एवं मंगल के शुभ एवं वेधस्थान

त्र्यायारिषु कुजः श्रेष्ठो जन्मराशेर्न विध्यते।
व्ययेष्वर्कग्रहे सौरिरप्यसूर्येण जन्मतः॥ ३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. यदि जन्मराशि से तीसरे, ग्यारहवें तथा छठे भाव में मंगल गोचर भ्रमण में हो तो शुभ होता है। परन्तु उस समय क्रमशः बारहवें, पाँचवें तथा नौवें स्थान में (जन्म राशि से) कोई ग्रह न होना चाहिये, क्योंकि ये शुभ स्थानों के वेध स्थान हैं।

२. जो मंगल के वेध स्थान हैं, वही स्थान शनि के भी वेधस्थान हैं तथा जो मंगल के शुभ स्थान हैं, वही शनि के भी शुभ स्थान हैं, परन्तु शनि के वेधस्थानों में सूर्य हो तो वेध नहीं होता है ॥ ३ ॥

३	११	६	मंगल के शुभ स्थान
१२	५	९	मंगल के वेधस्थान
३	११	६	शनि के शुभ स्थान
१२	५	९	शनि के वेधस्थान (सूर्य से वेध नहीं)

बुध के वेधस्थान

ज्ञो द्वयब्धि अर्यष्टखायेषु जन्मतश्च न विध्यते।
धीत्र्यङ्काद्याष्टान्त्यखेटैर्जन्मतो व्यब्जकैः शुभः ॥ ४ ॥

जन्मराशि से गोचर भ्रमण में बुध दूसरे, चौथे, छठवें, आठवें, दसवें , ग्यारहवें—इन स्थानों में शुभफल करता है। परन्तु जन्मराशि से क्रमशः पाँचवें, तीसरे, नौवें, पहिले, आठवें तथा बारहवें भावों में चन्द्रमा को छोड़कर कोई भी अन्य ग्रह नहीं होना चाहिए ॥ ४ ॥

२	४	६	८	१०	११	शुभस्थान
५	३	९	१	८	१२	वेधस्थान (चन्द्र से वेध नहीं)

गुरु के शुभ एवं वेधस्थान

जन्मतः स्वायगोक्षास्तेष्वन्त्याष्टाय जलत्रिगैः।
जन्मराशेर्गुरुःश्रेष्ठो ग्रहैर्यदि न विध्यते ॥ ५ ॥

जन्मराशि से गोचर में गुरु दूसरे, ग्यारहवें, नौवें, पाँचवें तथा सातवें स्थानों में शुभ होता है। परन्तु जन्मराशि से क्रमशः बारहवें, आठवें, ग्यारहवें, चौथे तथा तीसरे स्थानों में कोई ग्रह नहीं होना चाहिये, क्योंकि ये स्थान उन शुभ स्थानों के वेध स्थान हैं ॥ ५ ॥

२	११	९	५	७	शुभस्थान
१२	८	११	४	३	शुभ स्थानों के वेधस्थान

शुक्र के शुभ एवं वेधस्थान

कु द्वयग्नि अब्धि सुताष्टाङ्कान्त्याये शुक्रो न विध्यते।
जन्मभान्मृत्युसप्ताद्य खाङ्केष्वायारि पुत्रगैः ॥ ६ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जन्मराशि से प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, अष्टम, नवम, द्वादश तथा एकादश इन स्थानों में गोचर का गुरु तब शुभफल देता है जब जन्मराशि से आठवें, सातवें, पहले, दसवें, नौवें, पाँचवें, ग्यारहवें तथा छठवें भाव में कोई ग्रह न हो॥ ६॥

१	२	३	४	५	८	९	१२	११	शुभस्थान
८	७	१	१०	९	५	११	६	५	वेध स्थान

स्पष्टीकरण—यदि किसी की जन्म राशि से शुक्र पहले स्थान पर है तो वह शुभ फल देगा। परन्तु शर्त यह है कि प्रथम स्थान का वेधस्थान आठवाँ स्थान है, उसमें कोई ग्रह गोचर भ्रमण में नहीं होना चाहिये। इसी प्रकार दूसरे स्थान का सातवाँ स्थान वेधस्थान है। ऊपर कहे गये सभी ग्रहों के शुभ स्थानों के वेधस्थानों को दिये गये चक्रों से समझें। यह वेध क्रमवेध कहलाता है।

वेध का फल

न ददाति शुभं किञ्चिद् गोचरे वेधसंयुते।
तस्माद् वेधं विचार्याथ कथ्यते तच्छुभाशुभम्॥ ७॥

जिस ग्रह का वेध हो जाता है वह अपना कुछ भी शुभ फल नहीं दे पाता है, अत: गोचर फल कहते समय यदि उस ग्रह का किसी से वेध है या नहीं। इसे विचारकर ही फल कहना चाहिये॥ ७॥

वामवेध का विचार

वामवेधविधानेनाप्यशुभोऽपि ग्रहो शुभः।
अतस्तान् द्विविधान् वेधान् विचार्याथ वदेत्फलम्॥ ८॥

वामवेध विधि से वेध विचार करने पर अशुभ ग्रह भी शुभ फलदायक हो जाता है, अत: दो प्रकार के वेधों का विचार करके ही जन्मराशि से ग्रहों के गोचर फल को कहना चाहिये॥ ८॥

स्पष्टीकरण—वाम का अर्थ है उल्टा या विपरीत या विलोम। पूर्व में जो वेध कहा है वह क्रमवेध होता है। इससे ग्रहों के शुभ फल का विचार होता है। परन्तु वामवेध ग्रहों का अशुभ फल में विचार करते हैं। मान लीजिये कोई ग्रह गोचर में अपने शुभ स्थान में नहीं है तब उसके फल में विपरीत वेध का विचार किया जाता है। यदि कोई ग्रह निन्दित स्थान में बैठा है परन्तु उस ग्रह के शुभ स्थानों में से किसी भी स्थान में कोई ग्रह बैठा हो, तो वामवेध या विलोम वेध होगा। इस कारण उस ग्रह का अशुभ फल नहीं मिलेगा।

जिस प्रकार क्रमवेध में ग्रह शुभफल नहीं देता, उसी प्रकार अशुभ स्थान स्थित ग्रह विपरीत वेध होने पर अशुभ फल नहीं देता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मान लीजिये किसी की जन्मराशि से सूर्य चतुर्थ राशि में बैठा है, तो वह अशुभफल देगा। परन्तु यदि शनि को छोड़कर कोई भी ग्रह सूर्य के शुभ स्थान ३।६।१०।११ में से किसी में भी बैठा हो तो सूर्य का अशुभ फल नहीं मिलेगा। जैसा कि मुहूर्तगणपति में कहा है—

'अविद्धः शुभदः खेटो न वेधस्तातपुत्रकः।
निन्द्यस्थाना गतोऽप्याद्यो विद्धश्चेत् स विलोमतः॥'

द्विविध वेधों का विचार न करने का फल

अज्ञात्वा द्विविधान्वेधान् यो ग्रहज्ञो फलं वदेत्।
स मृषावचनाभाषी हास्यं याति नरः सदा॥ ९॥

इन दो प्रकार के वेधों (क्रमवेध तथा विपरीतवेध) को ठीक जाने बिना जो दैवज्ञ ग्रहों के गोचर का फल कहता है, उसका वचन मिथ्या होता है तथा समाज में वह हँसी उड़वाता है॥ ९॥

गोचर में ग्रहों की दृष्टि का फल

सौम्येक्षितो नेष्टफलः शुभदो पापवीक्षितः।
निष्फलौ तौ ग्रहौ स्वेन शत्रुणा च विलोकितौ॥ १०॥

१. जिस ग्रह का गोचर फल विचार किया जा रहा हो, वह ग्रह यदि अशुभ फलदायक हो, परन्तु यदि उस पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो अशुभफल में कमी हो जाती है।

२. इसी प्रकार गोचरस्थ ग्रह के शुभ फलदायक होने पर भी पापग्रह से दृष्ट होने पर उसके शुभफल में न्यूनता आ जाती है।

३. परन्तु जो ग्रह अपने शत्रु ग्रह के द्वारा दृष्ट होता है, उसका शुभाशुभ फल निष्फल ही रहता है॥ १०॥

नीचराशिगत तथा अस्तङ्गत ग्रह का फल

नीचराशिगतः स्वस्य शत्रुक्षेत्रगतोऽपि वा।
शुभाशुभफलं नैव दद्यादस्तमितोऽपि वा॥ ११॥

जो ग्रह अपनी नीचराशि पर हो अथवा अपने शत्रु ग्रह की राशि में बैठा हो, वह ग्रह अपने शुभ अथवा अशुभ किसी भी प्रकार के फल को नहीं दे पाता है॥ ११॥

अशुभ ग्रहों की शान्ति का कथन

ग्रहेषु विषमस्थेषु शान्तिं यत्नात्समाचरेत्।
हानिर्वृद्धिर्ग्रहाधीना तस्मात्पूज्यतमा ग्रहाः॥ १२॥

ग्रह हानिलाभ के सूचक होते हैं, अतः यदि कोई ग्रह अशुभ स्थान में हो, तो उसकी शान्ति यत्नपूर्वक (मन्त्र, जप, होम, औषधि-धारण तथा रत्न-धारण आदि के द्वारा) करनी चाहिये॥ १२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ग्रहों के रत्न

माणिक्यमुक्ताफलं विद्रुमाख्यं गारुत्मकाह्वयम्।
पुष्परागं त्वथो वज्रनीलगोमेदसंज्ञके।
वैदूर्यं भास्करादीनां तुष्ट्यै धार्यं यथाक्रमम्॥ १३॥
रत्नधारणमात्रेण अशुभो शुभदो भवेत्॥ १४॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां गोचराध्यायो द्वादशः॥ १२॥

१. माणिक्य, २. मोती, ३. प्रवाल, ४. मरकत, ५. पुखराज, ६. हीरा, ७. नीलम, ८. गोमेद तथा वैदूर्य—ये नवग्रहों के धारणार्थ शुभ रत्न हैं। इनके धारण करने से अशुभ ग्रह शुभफल देते हैं॥ १३-१४॥

नवग्रहों के रत्नों की तालिका

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	ग्रह
माणिक्य	मुक्ता	विद्रुम	गारुत्मत	पुष्पराग	वज्र	नील	गोमेद	वैदूर्य	रत्न (संस्कृत)
लाल	मोती	मूंगा	पन्ना	पुखराज	हीरा	नीलम	गोमेद	लहसुनिया	हिन्दी टीका
Ruby	Pearl	Coral	Emerald	Topaz	Diamond	Sapphire	Ziricon	Cat's eye	अंग्रेजी नाम

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के द्वादश गोचराध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ १२॥

●

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रयोदशोऽध्यायः

चन्द्रताराबलाध्यायः

चन्द्रबल एवं ताराबल का विचार

शुक्लपक्षादिदिवसे चन्द्रो यस्य शुभप्रदः।
स पक्षस्तस्य शुभदः कृष्णपक्षोऽन्यथा शुभः॥ १॥

१. शुक्ल प्रतिपदा के दिन जिस व्यक्ति के लिये उसकी जन्मराशि से चन्द्रमा शुभस्थान में (गोचर) में हो, वह पूरा पक्ष उस व्यक्ति के लिये शुभफलकारक होता है।

२. कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को चन्द्रमा अन्यथा प्रकार से शुभ हो तो कृष्णपक्ष शुभ होता है॥ १॥

स्पष्टीकरण—शुक्लपक्ष में चन्द्रमा बलवान् होता है अतः उसका बल ग्रहण करना चाहिये। परन्तु कृष्णपक्ष में उसकी स्त्री तारा बलवान् होती है, अतः कृष्णपक्ष में तारा का बल ग्रहण करना चाहिये। जैसा कि ज्योतिषशास्त्र के अनेक प्राचीन एवं अर्वाचीन विद्वानों का कथन है—

'कृष्णे बलवती तारा शुक्ले चन्द्रः प्रशस्यते।
शुक्ले तारा न शुभदा कृष्णे चन्द्रो न शस्यते॥'

—बृहस्पति

'न कृष्णपक्षे शशिनः प्रभावो ताराबलं तत्र शुभं प्रदिष्टम्।
दशान्तरस्थे विकलौ च पत्यौ सर्वाणि कार्याणि करोति नारी॥'

—लल्लाचार्य

'विहाय ताराबलमौषधीशो पक्षद्वयेऽपीष्टफलं न यस्मात्।
अप्राप्य जायानुमतं हि लोके न कार्यसिद्धौ पुरुषो समर्थः॥'

—ज्योतिःप्रकाश

'विकलाङ्गौ च पत्यौ कार्येषु प्रभवः स्त्रियः।
एवं चन्द्रे च विकले तारा बलवती भवेत्॥'

—बृहद् दैवज्ञरंजन

शुक्लपक्ष में चन्द्रबल का कथन

शुक्लपक्षे शुभश्चन्द्रो द्वितीय नव पञ्चके।
रिपु मृत्यम्बुसंस्थश्च न विद्धो गगने चरैः॥ २॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शुक्लपक्ष का चन्द्रमा जन्मराशि से दूसरा, नौवाँ, तथा पाँचवाँ शुभ होता है। परन्तु उसके क्रमवेधस्थानों अर्थात् छठें, आठवें तथा चौथे भाव में कोई अन्य ग्रह (बुध को छोड़कर) नहीं होना चाहिये॥ २॥

ताराओं का कथन

जन्म सम्पद् विपत् क्षेमः प्रत्यरिः साधको वधः।
मित्रं परममित्रञ्च जन्मभाच्च पुनः पुनः॥ ३॥

जन्मनक्षत्र से प्रथम नक्षत्र—१. जन्म तारा, दूसरा नक्षत्र २. सम्पत् तारा, तीसरा नक्षत्र ३. विपत् तारा, चौथा नक्षत्र ४. क्षेम तारा, पाँचवाँ नक्षत्र ५. प्रत्यरि तारा, छठा नक्षत्र ६. बाधक तारा, सातवाँ नक्षत्र ७.परम मित्र तारा होता है। इस प्रकार जन्मनक्षत्र से पुनः-पुनः अर्थात् तीन बार गणना करनी चाहिये॥ ३॥

विमर्श—मान लीजिये किसी का जन्मनक्षत्र अश्विनी है, तो उसके लिये अश्विनी, मघा, मूल ये तीन नक्षत्र जन्मतारा हैं तथा भरणी, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा—ये तीन नक्षत्र सम्पत् तारा हैं। इसी प्रकार गणना कर लेनी चाहिये। इसमें जन्म नक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गिनकर जो संख्या हो, उसमें नौ का भाग दें तथा एकादि शेष से तारा जान लेना चाहिये।

ताराओं के नाम का चक्र

१	२	३	४	५	६	७	८	९	क्रमांक
जन्म	सम्पत्	विपत्	क्षेम	प्रत्यरि	साधक	वध	मित्र	परम मित्र	नाम
जन्म	सम्पति धनद	विपति सङ्कट घोर	मंगल कुशल कल्याण	शत्रु रिपु पाप वैरि अमित्र	सिद्धि सिद्धः शुभ सफल	मृत्यु संघात कष्ट	सुहृद् हितकर	अति सुहृद् परम मैत्र अतिमैत्र अतिमित्र परम हित	पर्याय-वाची नाम

अशुभ तारा एवं उनकी शान्ति

जन्मत्रिपञ्चसप्ताख्या तारा नेष्टफलप्रदाः।
अनिष्टपरिहाराय दद्यादेतद् द्विजातये॥ ४॥
शाकं गुडञ्च लवणं सतिलं काञ्चनं क्रमात्।
कृष्णे बलवती तारा शुक्लपक्षे बली शशीः॥ ५॥

जन्मतारा, तीसरा तारा, पाँचवाँ तारा तथा सातवाँ तारा ये अशुभ होते हैं, इनकी शान्तिहेतु ब्राह्मणों को क्रमशः शाक, गुड, लवण तथा तिलसहित स्वर्णदान देना चाहिये। कृष्णपक्ष में तारा तथा शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा बली होता है॥ ४-५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अशुभ तारा में दान का चक्र

१. जन्म तारा	३. विपत्ति तारा	५. प्रत्यरि तारा	६.बध तारा	अशुभ तारा
शाक	गुड़	लवण	तिल सहित स्वर्ण दान	दान पदार्थ

चन्द्र की द्वादश अवस्थाएँ

चन्द्रस्य द्वादशावस्था दिवा रात्रौ यथाक्रमात्।
यत्रोद्वाहादिकार्येषु संज्ञातुल्यफलप्रदा॥ ६॥
षष्टिघ्नं चन्द्रनक्षत्रं तत्कालघटिकान्वितम्।
वेदघ्नमिषुवेदाप्तमवस्था भानुभाजिताः॥ ७॥
प्रवासनष्टाख्यमृता जयाहास्यारतिर्मुदा।
सुप्तिर्भुक्तिज्वराकम्पसुस्थितिर्नामसंनिभाः ॥ ८॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां चन्द्रताराबलाध्यायः त्रयोदशः॥ १३॥

चन्द्र की बारह अवस्थाएँ क्रमशः होती हैं, जिनका विचार विवाह तथा यात्रादि शुभकर्मों में करना चाहिये॥ ६॥

अभीष्ट समय पर चन्द्रमा का जो नक्षत्र हो, उसकी संख्या अश्विनी से गिनकर उस संख्या में साठ का गुणा करें तथा उस गुणनफल में भयात की घटी जोड़ दें। फिर उस योगफल को चार से गुणा करें। अब जो दूसरी बार का गुणनफल आये, उसमें ४५ (पैंतालीस) का भाग दें, जो भागफल (लब्धि) प्राप्त हो, उसमें बारह का भाग दें। शेष से—१. प्रवास, २. नाश, ३. मरण, ४. जय, ५. हास्य, ६. अरति, ७. मुदित (क्रीडित), ८. सुप्ति (शमन), ९. भुक्ति, १०. ज्वर, ११. कम्प तथा १२. सुस्थिति (सुस्थिर या स्थिर)—ये बारह अवस्थाएँ क्रम से जानना चाहिये॥ ७-८॥

उदाहरण—संवत् २०४१ शाके १९०६ में वैशाख शुक्ल तृतीया भृगुवार दिनांक ४ मई सन् १९८४ को मृगशिरा नक्षत्र में दिवा लग्न में प्रातः साढ़े आठ बजे के पाणिग्रहण संस्कार के समय में (मिथुन लग्न में) चन्द्र की अवस्था का विचार करना है। उस दिन इष्टकाल छह घटी पाँच पल है तथा मृगशिरा की गत घटी (तत्काल घटी=भयात) १० घटी ४१ पल है। अश्विनी से गिनने पर नक्षत्र की संख्या ५ है। इसे ६० से गुणा किया, तो गुणनफल ३०० हुआ। इसमें भयात् की गत घटी ११ (आधी से अधिक होने से) जोड़ दी तो ३११ हुए। इसका ४ से गुणा किया, तो गुणनफल १२४४ हुआ। इसमें ४५ का भाग दिया, तो लब्धि २७ हुई। जिसमें १२ का भाग देने पर शेष ३ बची, तो मरण अवस्था आयी। यह शुभ नहीं है, इसे त्याग दिया जाय।

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के त्रयोदश चन्द्रताराबलाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ १३॥

●

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चतुर्दशोऽध्यायः

सर्वलग्नाध्यायः

मेषलग्न में करणीय का योग

पट्टबन्धनयानोग्रसन्धिविग्रहभूषणम्।
धात्वाकराहवं कर्म मेषलग्ने प्रसिध्यति॥ १॥

मेषलग्न में पट्टबन्धन, वाहनप्रयोग, उग्रकर्म, सन्धि (समझौता, मेलमिलाप, राजीनामा आदि), विग्रह (लड़ाई-झगड़ा-मुकदमा), भूषण (आभूषण का निर्माण तथा धारण), धातुकर्म , भूमि में धन गाड़ना या खोदना, खनन कार्य तथा युद्ध—ये कार्य मेषलग्न में सफल होते हैं॥ १॥

विमर्श—पट्टबन्ध का अर्थ है, सेना या पुलिस के अधिकारियों द्वारा अलंकरण-बैज-फ़ीती आदि धारण करना, विशिष्ट पदक आदि या सम्मान को किसी भी नागरिक द्वारा ग्रहण करना, मानद उपाधि धारण करना।

वृषलग्न में करणीय कर्म

मङ्गलानि स्थिराण्येव वेशमकर्म प्रवर्त्तनम्।
कृषिवाणिज्यपश्वादि वृषलग्ने प्रसिध्यति॥ २॥

मंगलकार्य, स्थिरकार्य, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, कृषि-उद्यान, वाणिज्य (व्यापार, दुकानदारी, दुकान का आरम्भ), पशुओं से तथा चार पहिया वाहनों से सम्बन्धी कार्य वृषलग्न में सफल होते हैं॥ २॥

मिथुनलग्न में करणीय कर्म

कलाविज्ञानसिद्धिश्च भूषणाहवसंश्रयम्।
गजोद्वाहाभिषेकाद्यं कर्त्तव्यं मिथुनोदये॥ ३॥

मिथुनलग्न में विविध प्रकार की कलाएँ, ज्ञान-विज्ञान के कार्य, वैज्ञानिक शोधकार्य का आरम्भ, वस्त्राभूषण सम्बन्धी कर्म, युद्ध (मुकदमा, चुनाव लड़ना आदि) गजकर्म (भारी वाहन), विवाह तथा अभिषेक (शपथ-ग्रहण आदि भी) करना चाहिये॥ ३॥

कर्कलग्न में करणीय कृत्य

वापीकूपतडागादि वारिबन्धनमोक्षणे।
पौष्टिकं लिपिलेखादि कर्त्तव्यं कर्कटोदये॥ ४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कर्कलग्न में बावड़ी, कूप, जलाशय, पानी की टंकी, नल लगाना, खेत की मेंड़ बाँधना, नहर आदि से पानी निकालना, नलकूप चालू करना, पौष्टिक कार्य, नयी लिपि सीखना तथा ग्रन्थादि लेखन करना चाहिये॥ ४॥

सिंहलग्न में करणीय कार्य

इक्षुधान्यवणिक्पण्य कृषिसेवादि यत्स्थिरम्।
साहसावहभूपाढ्यं सिंहलग्ने प्रसिध्यति॥ ५॥

ईख, अनाज, वाणिज्य, दुकानदारी, क्रय-विक्रय, खेती-बागवानी, सेवा (नौकरी आदि प्रारम्भ करना) स्थिर कार्य, साहस, युद्ध तथा राजनीति से सम्बन्धित कार्य सिंहलग्न में सफल होते हैं॥ ५॥

कन्यालग्न में करणीय कार्य

विद्याशिल्पौषधीकर्म भूषणं च चरं स्थिरम्।
कन्यालग्ने विधेयं तत् पौष्टिकाखिलमङ्गलम्॥ ६॥

विद्यारम्भ, शिल्पकार्य, औषध एवं चिकित्सा-सम्बन्धी कार्य, आभूषण-वस्त्र-सम्बन्धी कार्य, चर कार्य, स्थिर कार्य, पौष्टिक तथा मंगल कार्य—ये सब कन्यालग्न में करना चाहिये॥ ६॥

तुलालग्न में करणीय कार्य

कृषिवाणिज्ययानाश्च पशूद्वाहव्रतादिकम्।
तुलायामखिलं कर्म तुलाभाण्डाश्रितं च यत्॥ ७॥

खेती-बागवानी, वाणिज्यसम्बन्धी कार्य, वाहनसम्बन्धी कर्म, पशुसम्बन्धी कार्य, विवाह, व्रतारम्भ, तुलाकर्म (नाप-तौल से सम्बन्धित कार्य, बाँट-बटखरे, तराजू, मीटर आदि का प्रयोग, धारिता-सम्बन्धी पैमानों का उपयोग या क्रम आदि), बारदाना से सम्बन्धित कार्य—जो भी हैं, उन्हें तुलालग्न में करना चाहिये॥ ७॥

वृश्चिकलग्न में करणीय कार्य

स्थिरकर्माखिलं कार्यं राजसेवाभिषेचनम्।
चौर्यकर्मस्थिरारम्भाः कर्त्तव्या वृश्चिकोदये॥ ८॥

सम्पूर्ण स्थिर कार्य, सभी प्रकार के कार्य, राजसेवा राज्याभिषेक (पदग्रहण तथा शपथग्रहण आदि), चोरी (जासूसी) तथा स्थिर कर्मों का आरम्भ वृश्चिकलग्न में करना चाहिये॥ ८॥

धनुलग्न में करणीय कर्म

व्रतोद्वाहप्रयाणश्च ह्यङ्गशिल्पकलादिकम्।
चरं स्थिरं सशस्त्रास्त्रं कर्त्तव्यं कार्मुकोदये॥ ९॥

व्रतारम्भ, विवाह, यात्रा, शारीरिक अंगों सम्बन्धी कार्य, शिल्पकला, चरकार्य, स्थिरकार्य, शस्त्र एवं अस्त्र से सम्बन्धित कार्य—ये सब धनुलग्न में करने चाहिये॥ ९॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मकरलग्न में करणीय कर्म

तोयबन्धनमोक्षास्त्रकृष्यं चोष्ट्रादिकर्म यत्।
प्रस्थानं पशुदासादि कर्त्तव्यं मकरोदये॥ १०॥

तोयबन्धन (पानी रोकने के लिये मेंड़ या बाँध बनाना, पुल बनाना, नाली बनाना आदि), जलमोक्ष (पानी निकालने से सम्बन्धित कार्य), अस्त्र-शस्त्र कार्य, शस्त्रकर्म (आपरेशन), कृषि-कार्य, उष्ट्रकर्म (ऊँट या ट्रैक्टर से सम्बन्धित कार्य), यात्रा, पशु-सम्बन्धी कार्य), दास-संग्रह (श्रमिकों की भर्ती करना)—ये सब कर्म मकरलग्न में करना चाहिये॥ १०॥

कुम्भलग्न में करणीय कर्म

कृषिवाणिज्यपश्वम्बु शिल्पकर्मकलादिकम्।
जलयात्रास्त्रशस्त्रादि कर्त्तव्यं कलशोदये॥ ११॥

कृषिकर्म, उद्यानकर्म, वाणिज्य, पशुकर्म, जल से सम्बन्धित सभी कार्य, शिल्पकार्य आदि सभी कर्म कुम्भलग्न में करने चाहिये॥ ११॥

मीनलग्न में करणीय कर्म

व्रतोद्वाहाभिषेकाम्बुस्थापनं सन्निवेशनम्।
भूषणं जलपात्रञ्च कर्म मीनोदये शुभम्॥ १२॥

व्रतारम्भ, विवाह, राज्याभिषेक, जलस्थापन (नये पात्र या टंकी में जल को रखना), गृहप्रवेश, ग्रामप्रवेश, नगरप्रवेश, आभूषण-सम्बन्धी कार्य, जलपात्र का उपयोग—ये सभी कर्म मीन लग्न में करने चाहिये॥ १२॥

विमर्श—आजकल लोग घर में एक्वारियम में मछली पालते हैं, बर्फ का कारखाना या कारोबार करना ये सब भी जलसम्बन्धी कार्य ही हैं।

शुभराशियाँ (लग्नें) तथा पापराशियाँ

गोयुग्मकर्ककन्यान्त्यतुलाचापधराः शुभाः।
शुभग्रहास्पदत्वात्स्युरितरे पापराशयः॥ १३॥

वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, मीन, तुला तथा धनु—ये राशियाँ शुभग्रहों की होने से शुभ हैं। शेष मेष, सिंह, वृश्चिक, मकर तथा कुम्भ ये राशियाँ पापग्रहों की होने से अशुभ हैं॥ १३॥

शुभ एवं पापग्रह

क्षीणेन्द्वर्कार्कि भूपुत्राः पापाः स्युः संयुतो बुधः।
पूर्णचन्द्रबुधाचार्यशुक्रास्ते स्युः शुभग्रहाः॥ १४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. क्षीणचन्द्र, सूर्य, शनि, मंगल—ये तथा पापग्रह से युत बुध पापग्रह होते हैं तथा २. पूर्णचन्द्र, अकेला या शुभ युत बुध, गुरु तथा शुक्र शुभग्रह माने जाते हैं॥ १४॥

राशियों के साथ ग्रहफल में विशेषता

सौम्योग्रं तेषां राशीनां प्रकृत्येव फलं भवेत्।
योगेन सौम्यपापैश्च खचरैर्वीक्षितेन वा॥ १५॥
सौम्याश्रितत्वात् क्रूरो वा स राशिः शोभनः स्मृतः।
सौम्योऽपि राशिः क्रूरः स्यात् क्रूरग्रहयुतो यदि॥ १६॥

१. शुभराशि अपना शुभ फल तथा पापराशि अपना पाप फल स्वाभाविक रूप से देती हैं। २. जब किसी शुभ राशि पर अशुभ ग्रह की स्थिति अथवा दृष्टि होती है तो राशि की शुभता में कमी आ जाती है। ३. इसी प्रकार शुभराशि में शुभग्रह की स्थिति अथवा दृष्टि हो तो पूर्ण शुभफल होता है। ४. जब पापराशि में पापग्रह बैठा हो अथवा उसपर पापग्रह की दृष्टि हो तो पूर्ण पापफल मिलता है। ५. यदि पापराशि में शुभग्रह की स्थिति अथवा दृष्टि हो तब पापराशि के पापफल में न्यूनता आ जाती है। इस प्रकार राशि एवं उसमें शुभाशुभ ग्रहों की दृष्टि एवं स्थिति के अनुसार तारतम्य के साथ शुभाशुभ फल कहना चाहिये॥ १५-१६॥

वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, तुला, धनु तथा मीन	**शुभराशियाँ**
मेष, सिंह, वृश्चिक, मकर तथा कुम्भ	**पापराशियाँ**
पूर्ण चन्द्र, अकेला बुध, शुभयुत बुध, गुरु तथा शुक्र	**शुभग्रह**
सूर्य, मंगल, शनि, पापयुत बुध तथा क्षीण चन्द्र	**पापग्रह**

चन्द्रमा का विशेष फल

ग्रहयोगावलोकाभ्यां शशी धत्ते ग्रहोद्भवम्।
फलं ताभ्यां विहीनोऽसौ स्वं भावमुपसर्पति॥ १७॥

यदि चन्द्रमा के साथ कोई ग्रह हो अथवा उस पर ग्रह की दृष्टि हो, तो वह चन्द्रमा उस शुभाशुभ ग्रह के अनुसार ही फल करता है। यदि ग्रह योग तथा दृष्टि से रहित हो तब केवल स्वयं का ही शुभाशुभ फल देता है॥ १७॥

लग्न का विशेष फल

आदौ सम्पूर्णफलदं मध्ये मध्यफलप्रदम्।
अन्ते तुच्छफलं लग्नं सर्वस्मिन्नेवमेव हि॥ १८॥

यदि किसी लग्न के आदि (१० अंश तक) कोई कार्य किया जाय तो वह कार्य पूरा फल देता है। यदि लग्न के मध्य में (११° से २०° तक) कोई कार्यारम्भ किया जाय

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तो मध्यम फल मिलता है तथा लग्न के अन्तिम भाग (२१° से शून्य अंश तक) कोई कार्य होता है, तो उसका तुच्छ फल मिलता है। यह बात सभी लग्नों के लिये है ॥ १८ ॥

कर्त्ता के लिये लग्नबल का विचार

सर्वत्र प्रथमं लग्नं कर्तुश्चन्द्रबलं ततः।
कन्यान्य इन्दौ बलिनि सन्त्यन्ये बलिनो ग्रहाः ॥ १९ ॥

कर्त्ता पुरुष के लिये सर्वप्रथम लग्न का बल देखें, फिर चन्द्रमा का बल देखना चाहिये। यदि चन्द्र कन्या को छोड़ अन्य राशि का हो तो बली होता है तथा उसके बली होने से अन्य ग्रह भी बली होते हैं ॥ १९ ॥

चन्द्रबल का विचार

चन्द्रस्य बलमाधारं आधेयं चान्यखेटजम्।
आधारभूतेनाधेयं दीयते परिनिष्ठितम् ॥ २० ॥
स चेन्दुः शुभदः सर्वग्रहाः शुभफलप्रदाः।
अशुभश्चेदशुभदो वर्जयित्वा दिनाधिपम् ॥ २१ ॥

चन्द्रमा का बल आधार होता है जबकि अन्य ग्रहों का बल आधेय है अर्थात् चन्द्र के बल के ही अधीन होता है। अतः आधाररूप चन्द्रबल से आधेयरूप अन्य ग्रहों के बल की रक्षा होती है। इसलिये जब चन्द्रमा शुभ फलदायक हो तो सभी ग्रह शुभफल ही (उस दिन) देते हैं, किन्तु जब किसी अवसर पर चन्द्रमा अशुभ होता है, तब सूर्य को छोड़कर शेष ग्रह अपना अशुभ फल ही देते हैं ॥ २०-२१ ॥

विमर्श—सूर्य आत्मा है तथा चन्द्रमा मन है, अतः गोचर में यदि सूर्य शुभ है तथा चन्द्रमा अशुभ भी है, तो भी सूर्य उस दिन अशुभफल नहीं देगा। केवल चन्द्र का ही अशुभफल मिलेगा।

लग्न नवांश का महत्त्व

लग्ने ह्यभ्युदयो येषां तेष्वंशेषु स्थिताः ग्रहाः।
लग्नोद्भवं फलं धत्ते चैवमेवं प्रकल्पयेत् ॥ २२ ॥

जिस लग्न का जो कार्य है, वह उसके नवांश में भी किया जा सकता है तथा उन नवांशों में स्थित ग्रह भी लग्न की स्थिति जैसा ही फल प्रदान करते हैं ॥ २२ ॥

सर्वगुणयुक्त लग्न का प्रभाव

लग्नं सर्वगुणोपेतं लभ्यतेऽल्पैर्दिनैर्नहि।
दोषाल्पत्वं गुणाधिक्यं बहुसन्ततमिष्यते ॥ २३ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दोषदुष्टो हि कालः स परिहार्यः पितामहः।
अथ शक्त्या गुणाधिक्यं दोषाल्पत्वं ततो हितम्॥ २४॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां सर्वलग्नाध्यायः चतुर्दशः॥ १४॥

सभी गुणों से युक्त लग्न कभी-कभार ही मिलती है, इस कारण जिस लग्न में गुण अधिक तथा दोष कम हों, उसे ग्रहण कर लेना चाहिये, क्योंकि गुणों की अधिकता के कारण उस लग्न का शुभ फल बढ़ जाता है।

परन्तु यदि लग्न में गुण कम हों तथा दोष अधिक हों, तो उस दुष्ट काल को ब्रह्माजी भी शुद्ध नहीं कर सकते हैं, अतः उस दोषयुक्त लग्न को त्याग ही देना चाहिये। इस स्थिति में लग्न यदि बलवान् हो तो ही उसे ग्रहण करना चाहिये, अन्यथा नहीं॥ २३-२४॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के चतुर्दश सर्वलग्नाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ १४॥

●

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पञ्चदशोऽध्यायः

प्रथमार्त्तवाध्यायः

प्रथम रजोदर्शन

अमारिक्ताष्टमीषष्ठीद्वादशीप्रतिपत्स्वपि ।
परिघस्य तु पूर्वार्धे व्यतीपाते च वै धृतौ॥ १॥
सन्ध्यासूपप्लवे विष्ट्यामशुभं प्रथमार्त्तवम्॥ २॥

किसी कन्या के प्रथम बार रजस्वला होते समय यदि अमावस्या, रिक्ता (४-९-१४ तिथि), अष्टमी, षष्ठी, द्वादशी तथा प्रतिपदा—इनमें से कोई तिथि हो। परिघयोग का पूर्वार्ध, व्यतीपात, वैधृति योग में से कोई हो, अथवा सन्ध्याकाल (सायं तथा प्रात:) हो अथवा विष्टिकरण (भद्रा) हो तो अशुभ फलदायक होता है॥ १-२॥

आद्य रजोदर्शन में वारों का फल

रुग्णा पतिव्रता दुःखी पुत्रिणी भोगभागिनी।
पतिप्रिया क्लेशयुक्ता सूर्यवारादिषु क्रमात्॥ ३॥

प्रथम बार कन्या का रजस्वला होना इस प्रकार का फल करता है—१. रविवार को यदि कन्या का प्रथम रजोदर्शन हो तो वह रोगिणी रहती है। २. यदि कन्या का प्रथम आर्तव सोमवार को प्रकट हो तो वह पतिव्रता होती है। ३. जो कन्या मंगलवार के दिन पहिली बार रजस्वला होती है, वह दु:खी रहती है। ४. बुधवार के दिन यदि कन्या को पहला मासिकधर्म हो तो वह पुत्रवती होती है। ५. यदि गुरुवार के दिन प्रथम बार रजस्वला हो तो अनेक प्रकार के सुख भोग प्राप्त होते हैं। ६. शुक्रवार को प्रथम बार आर्त्तव के दर्शन हों तो पति को अधिक प्रिय होती है तथा ७. शनिवार को आद्य रजोदर्शन हो तो क्लेशयुक्त रहती है॥ ३॥

प्रथम रजोदर्शन में सत्ताईस नक्षत्रों के अलग-अलग फल

अश्विनी में प्रथम रजोदर्शन का फल

श्रीयुक्ता सुभगा पुत्रवती सौख्यान्विता स्थिरा।
मानी कुलाधिका नारी चाश्विन्यां प्रथमार्त्तवा॥ ४॥

जिस कन्या का सबसे पहिला मासिक धर्म अश्विनी नक्षत्र में हो वह धनसम्पन्न, सौभाग्यशालिनी, पुत्रवती, सुखान्विता, स्थिर स्वभाववाली, मानिनी तथा अपने कुल में मुख्य होती है॥ ४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भरणी में प्रथमार्त्तवा का फल

दुःशीला स्वैरिणी वन्ध्या गर्भपातनतत्परा।
परप्रेष्या काकवन्ध्या भरण्यां प्रथमार्त्तवा॥ ५॥

जो भरणी नक्षत्र में प्रथम बार रजस्वला होती है, वह दुश्चरिता, स्वेच्छाचारिणी, वन्ध्या, गर्भपात करानेवाली, परप्रेष्या (कालगर्ल) की भाँति रहनेवाली तथा काकवन्ध्या होती है॥ ५॥

कृत्तिका में प्रथमार्त्तवा का फल

अन्यथा पुंश्चली वन्ध्या गर्भपातनतत्परा।
वेश्या मृतप्रजा चापि वह्निभे प्रथमार्त्तवा॥ ६॥

यदि कृत्तिका नक्षत्र में प्रथमार्त्तव हो तो वह नारी अन्य पुरुष से रत, पुंश्चली, वन्ध्या, गर्भपात करानेवाली, वेश्या के समान, मृतवत्सा आदि अवगुणों से युक्त होती है॥ ६॥

रोहिणी में प्रथमार्त्तवा का फल

सुशीला सुत्प्रजाऽनन्या पतिभक्ता दृढव्रता।
ग्रहार्चनरता नित्यं धातृभे प्रथमार्त्तवा॥ ७॥

जिसका प्रथम आर्तव रोहिणी नक्षत्र में हो वह स्त्री शीलवती, अच्छी सन्तान-वाली, अपने पति में अनन्य भक्ति रखनेवाली, पतिव्रता तथा नित्य ग्रहों एवं देवताओं को पूजनेवाली होती है॥ ७॥

मृगशिरा में प्रथमार्त्तवा का फल

गुणान्विता धर्मरता नारी सर्वसहा सती।
पतिप्रिया सुपुत्रा या चन्द्रभे प्रथमार्त्तवा॥ ८॥

जिसका आद्य रजोदर्शन मृगशिरा नक्षत्र में हो वह स्त्री अधिक सहनशीलता से युक्त, पतिप्रिया, पतिव्रता तथा अच्छे पुत्रोंवाली होती है॥ ८॥

आर्द्रा में प्रथमार्त्तवा का फल

कुलटा दुर्भगा दुष्टा मृतपुत्रा खला जडा।
दुष्टव्रतपरिभ्रष्टा रौद्रभे प्रथमार्त्तवा॥ ९॥

जिसका पहला मासिक धर्म आर्द्रा नक्षत्र में होता है वह कुलटा, दुर्भाग्यशीला, दुष्टस्वभावा, मृतवत्सा, दुष्ट आचरण करनेवाली, मूर्ख, दुराचारिणी तथा चरित्रभ्रष्ट होती है॥ ९॥

पुनर्वसु में प्रथमार्त्तवा का फल

पतिभक्ता पुत्रवती परसन्तानमोदिनी।
कलाचारानुरक्ता या दितिभे प्रथमार्त्तवा॥ १०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जिसका प्रथमार्त्तव पुनर्वसु नक्षत्र में हो वह स्त्री पुत्रवती होकर भी दूसरे की सन्तान को पोषण तथा स्नेह देनेवाली तथा कला-कार्यक्रमों में अनुरक्त रहनेवाली होती है॥ १०॥

पुष्यनक्षत्र में प्रथम रजोदर्शन का फल

पतिप्रिया पुत्रवती मानभोगवती शुभा।
सुकर्मनिरता दक्षा तिष्यर्क्षे प्रथमार्त्तवा॥ ११॥

जिसको पहली बार की मासिक स्राव पुष्य नक्षत्र में हो, वह स्त्री पति की प्रिय, पुत्रवती, मानवती, भोगवती, शुभ आचरण वाली, सुकर्म में अनुरक्त रहनेवाली तथा सभी कार्यों में दक्ष होती है॥ ११॥

आश्लेषा में प्रथम रजोदर्शन का फल

परभर्तृरता प्रेष्या कोपिनी निर्घृणालसा।
मृषावादी च दुष्पुत्रा भौजङ्गे प्रथमार्त्तवा॥ १२॥

जिस नारी का आद्य रजोदर्शन आश्लेषा नक्षत्र में हो, वह दूसरी स्त्री के पति में अनुरक्त, प्रेष्णा (कालगर्ल), क्रुद्धा, दयाहीना, आलसी स्वभाववाली, झूठ बोलने वाली तथा बुरे पुत्रोंवाली होती है॥ १२॥

मघा में प्रथमार्त्तवा का फल

निर्द्वेष्या रोगसंयुक्ता सर्वदाज्ञा च लोलुपा।
पितृवेश्मरता मान्या पैतृभे प्रथमार्त्तवा॥ १३॥

जिसका प्रथम रजःस्राव मघा में होता है; वह द्वेषरहित, रोगिणी, सदैव अज्ञान से युक्त रहनेवाली, लोभ से युक्त, पिता के घर से अधिक मोहवाली तथा स्वाभिमानयुक्त होती है॥ १३॥

पूर्वाफाल्गुनी में प्रथमार्त्तवा का फल

परकार्यरता दीना दुष्पुत्रा क्लेशभागिनी।
मलिना कर्कशा क्रुद्धा भाग्यभे प्रथमार्त्तवा॥ १४॥

जिसका पहला रजोदर्शन पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में होता है, वह दूसरों के कार्य करनेवाली, दीन-दुःखी, बुरे पुत्रोंवाली, क्लेश भोगनेवाली, मलिन रहनेवाली तथा क्रोधयुक्ता होती है॥ १४॥

उत्तराफाल्गुनी में प्रथमार्त्तवा का फल

प्रजावती धर्मरता निर्वैरा मित्रपूजिता।
सती मित्रगृहे सक्तार्यमर्क्षे तु रजस्वला॥ १५॥

जिसका प्रथमार्त्तव उत्तराफाल्गुनी में प्रवर्तित हो, वह स्त्री सन्तान से युक्त, धर्मशीला, वैररहिता, मित्रों से सम्मानित, पतिव्रता, अपनी सहेली के घर का अधिक ख्याल करनेवाली होती है॥ १५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हस्तनक्षत्र में प्रथमार्त्तवा का फल

निर्द्वेष्या भूरिविभवा पुत्राढ्या भोगभोगिनी।
प्रधाना दानकुशला हस्तर्क्षे प्रथमार्त्तवा॥ १६॥

जिसका प्रथम रजोदर्शन हस्तनक्षत्र में हो, वह अधिक वैभव से युक्त, पुत्रों से सम्पन्न, भोगों को भोगनेवाली, समाज में प्रमुख तथा दानकुशल होती है॥ १६॥

चित्रा में प्रथमार्त्तवा का फल

चित्रकर्मा भोगिनी च कुशला क्रयविक्रये।
विकीर्णकामा सुश्लक्ष्णा त्वाष्ट्रभे प्रथमार्त्तवा॥ १७॥

जिसका प्रथम रजोदर्शन चित्रा नक्षत्र में हो, वह चित्रादि का निर्माण करनेवाली (डिजाइनिंग में दक्ष), भोगों से युक्त, क्रय-विक्रय में निपुण, अनेक प्रकार की रतिक्रिया करनेवाली, तथा मृदुल स्वभाववाली होती है॥ १७॥

स्वाति में प्रथमार्त्तवा का फल

बहुवित्तवती न स्यात् कुशला शिल्पकर्मणि।
पुत्रपौत्रवती साध्वी वायुभे प्रथमार्त्तवा॥ १८॥

जिसका प्रथम रजोदर्शन स्वाति नक्षत्र में हो, वह अधिक धनी न होकर गुजर-बसर आराम से करती रहती है, वह शिल्पकार्यों में कुशल, पुत्र-पौत्रों से युक्त होकर साध्वी के समान आचरण करनेवाली होती है॥ १८॥

विशाखा में प्रथमार्त्तवा का फल

नीचकर्मरता दुष्टा परसक्ता परप्रिया।
विपुत्रा मलिना क्रुद्धा द्विदैवे प्रथमार्त्तवा॥ १९॥

जिसका प्रथम आर्तव विशाखा नक्षत्र में हो, वह नीचकर्मा, दुष्टा, पर-पुरुष में आसक्त, पुत्रों से रहित, मैली-कुचैली रहनेवाली तथा क्रोधयुक्ता होती है॥ १९॥

अनुराधा में प्रथमार्त्तवा का फल

स्वामिपक्षार्चिता सौख्यगुणैः सम्यग्विभूषिता।
सुपुत्रा शुभदा कान्ता मित्रर्क्षे प्रथमार्त्तवा॥ २०॥

जिसका आद्य रजोदर्शन अनुराधा नक्षत्र में हो, वह अपने पतिकुल में अधिक सम्मानित होती है, वह सुखिनी, गुणवती, सुपुत्रा, शुभदा, सुन्दरी तथा सम्यक्रूप से विभूषिता होती है॥ २०॥

ज्येष्ठा में प्रथमार्त्तवा का फल

दुश्चरित्रा क्लेशिन्यार्त्तवा पुंश्चली व्यसुः।
दुःसन्तानवती ज्येष्ठानक्षत्रे प्रथमार्त्तवा॥ २१॥

जिसका प्रथम रजोदर्शन ज्येष्ठा में हो, वह दुश्चरित्रा, क्लेशान्विता, रक्तप्रदर की बीमारी से युक्त, पुंश्चली, मरियल से स्वास्थ्यवाली तथा बुरी सन्तानवाली होती है॥ २१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मूल में प्रथमार्त्तवा का फल

सन्तानार्थगुणैरन्यैर्युक्तान्यक्लेशमोचिनी ।
स्वकर्मनिरता नित्यं मूलभे प्रथमार्त्तवा॥ २२॥

जिसका प्रथमार्त्तव मूल नक्षत्र में हो, वह उत्तम सन्तानवाली, धनवती, गुणवती, दूसरों के दु:ख हरनेवाली तथा अपने कर्त्तव्यपालन में रत रहनेवाली होती है॥ २२॥

पूर्वाषाढ़ा में प्रथमार्त्तवा का फल

प्रच्छन्नपापा दुष्पुत्रा प्राणिहिंसनतत्परा।
अजस्त्रव्यसनासक्ता तोयभे प्रथमार्त्तवा॥ २३॥

जिसका प्रथम आर्तव पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में हो, वह गुप्तरूप से पाप करनेवाली, बुरे पुत्रोंवाली, जीव हिंसा में तत्पर रहनेवाली तथा अनेक व्यसनों (नशीली वस्तुओं) में रत रहनेवाली होती है॥ २३॥

उत्तराषाढ़ा में प्रथमार्त्तवा का फल

कार्याकार्येषु कुशला सदा धर्मानुवर्त्तनी।
गुणाश्रया भोगवती विश्वभे प्रथमार्त्तवा॥ २४॥

जिसका प्रथम रजोदर्शन उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में हो, वह सदैव धर्म पर चलनेवाली, गुणों के आश्रय से युक्त तथा अनेक भोगों को भोगनेवाली होती है॥ २४॥

श्रवण में प्रथमार्त्तवा का फल

धनधान्यवती भोगपुत्रपौत्रसमन्विता।
कुलानुमोदिनी मान्या विष्णुभे प्रथमार्त्तवा॥ २५॥

जिसका प्रथम आर्तव श्रवण नक्षत्र में हो, वह धनवती, धान्यवती, भोगवती, पुत्रवती, पौत्रवती, विस्तृत परिवारवाली तथा अपने कुल के अनुसार चलनेवाली होती है॥ २५॥

धनिष्ठा में प्रथमार्त्तवा का फल

पुत्रपौत्रान्विता भोगधनधान्यवती सती।
स्वकर्मनिरता मान्या वसुभे प्रथमार्त्तवा॥ २६॥

जिसका प्रथम आर्तव धनिष्ठा नक्षत्र में हुआ हो, वह पुत्रों एवं पौत्रों से युक्त, धन-धान्ययुक्ता तथा अपने कर्त्तव्य-पालन में रत रहती है॥ २६॥

शतभिषा में प्रथमार्त्तवा का फल

बहुपुत्रा धनवती स्वकर्मनिरता सती।
कुलानुमोदिनी मान्या वारुणे प्रथमार्त्तवा॥ २७॥

जिसका प्रथम रजोदर्शन शतभिषा नक्षत्र में हो, वह बहुत पुत्रोंवाली, धनवती, स्वकर्म में निरत, सदाचारिणी, अपने कुल को प्रसन्न करनेवाली तथा सम्मानित होती है॥ २७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पूर्वा भाद्रपदा में प्रथमार्त्तवा का फल

बन्धकी बन्धुविद्वेष्या नित्यं दुष्टरता खला।
शिल्पकार्येषु कुशलाऽजांघ्रिभे प्रथमार्त्तवा॥ २८॥

जिसका आद्य रजोदर्शन पूर्वाभाद्रपदा में हो, वह नारी दूसरे की रखैल, अपने बन्धु-बान्धवों से द्वेष करनेवाली, नित्य दुष्टों की संगति में रत, दुष्ट स्वभाववाली तथा शिल्पकार्यों में कुशल होती है॥ २८॥

उत्तरा भाद्रपदा में प्रथमार्त्तवा का फल

आढ्या पुत्रवती मान्या सुप्रसन्ना पतिप्रिया।
बन्धुपूज्या धर्मवत्यहिर्बुध्न्ये प्रथमार्त्तवा॥ २९॥

जो कन्या उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र में सबसे पहली बार रजस्वला होती है, वह धन से सम्पन्न, पुत्रवती, सम्मानित, प्रसन्न तथा पति की प्रिय होती है। वह अपने बन्धु-बान्धवों से भी सम्मानित होती है तथा सदैव स्वधर्म के पालन में संलग्न रहती है॥ २९॥

रेवती में प्रथमार्त्तवा का फल

दृढव्रता धर्मवती पुत्रसौख्यार्थसंयुता।
विशेषगुणसम्पन्ना पौष्णभे प्रथमार्त्तवा॥ ३०॥

जो स्त्री अपने जीवन का सबसे प्रथम रजोस्राव रेवती नक्षत्र में देखती है, वह नियमों के पालन में दृढ़ रहनेवाली, धर्मशीला, पुत्रवती, युक्तान्विता, धनवती तथा विशेष गुणों से युक्त होती है॥ ३०॥

प्रथमार्त्तवकाल में शुभ लग्नराशियाँ

कुलीरवृषचापान्त्यनृयुक्कन्यातुलाधराः।
राशयः शुभदा ज्ञेया नारीणां प्रथमार्त्तवे॥ ३१॥

स्त्रियों के प्रथम बार के रजोदर्शन में कर्क, वृष, धनु, मीन, मिथुन, कन्या तथा तुला लग्नें शुभ होती हैं॥ ३१॥

प्रथमार्त्तव में अन्य निषिद्धकाल

यामाग्निरौद्रभाग्याहिद्वीशेन्द्राह्युपद्विषाः।
तारका न हिता मासा मधूर्जशुचिपौषकाः॥ ३२॥
तथा च सङ्क्रमो निद्रा रात्रिश्चन्द्रार्कयोर्ग्रहः।
कुलटा पापयोगेषु निन्द्यर्क्षे निन्द्यवासरे॥ ३३॥

भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, पूर्वाफाल्गुनी, आश्लेषा, विशाखा, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढ़ा तथा पूर्वाभाद्र नक्षत्र प्रथम रजोदर्शन में शुभ नहीं होते हैं। चैत्र, कार्तिक, आषाढ़, पौष—ये मास निषिद्ध हैं। इसी प्रकार सूर्य संक्रान्ति का दिन, निद्रावस्था, रात्रिकाल, सूर्यग्रहण तथा चन्द्रग्रहण भी प्रथम मासिक धर्म में शुभ नहीं हैं। यदि अशुभ योग अशुभ नक्षत्र, अशुभ वार में कन्या को प्रथम बार मासिक धर्म हो तो वह कुलटा स्वभाववाली होती है॥ ३२-३३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

निन्द्य योग में प्रथमार्त्तव की शान्तिहेतु उपाय

निन्द्यर्क्षे तिथिवारेषु यत्र पुष्पं प्रदृश्यते।
तत्र शान्तिः प्रकर्त्तव्या घृतदूर्वातिलाक्षतैः॥ ३४॥
प्रत्येकमष्टशतं च गायत्र्या जुहुयात्ततः।
स्वर्णगोभूतिलान्दद्यात्सर्वदोषानुपत्तये ॥ ३५॥

यदि किसी कन्या की प्रथम रजोदर्शन ऊपर कहे हुए निन्द्य तिथि, वार, नक्षत्रादि में हो तो उसकी शान्ति के लिये दूर्वा, तिल, चावल के द्वारा प्रत्येक से १०८ आहुतियाँ गायत्री मन्त्र से देनी चाहिये। तत्पश्चात् स्वर्ण, गाय तथा तिल का दान करना चाहिये। इससे सभी दोष दूर हो जाते हैं॥ ३४-३५॥

शान्ति की अनिवार्यता

यावच्छान्तिं प्रकुर्वीत तावत्तां नावलोकयेत्।
भर्ता तत्राभिगमनं वर्जयेद्रक्तदर्शनात्॥ ३६॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां प्रथमार्तवाध्यायः पञ्चदशः॥ १५॥

पति को चाहिये कि जिसका रजोदर्शन अशुभ योग में हो, तो जब तक उसकी शान्ति न हो जाय, तब तक उसके मुख को न देखें तथा उसके साथ संयोग भी न करें॥ ३६॥

विमर्श—यदि बाल-विवाह हुआ है, तभी पतिगृह में रजोदर्शन होने पर पति के लिये बाध्यता है परन्तु आजकल तो कल्याण हेतु यह शान्ति विवाह के पश्चात् समागम से पूर्व करा लेना ही उत्तम होगा।

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के पञ्चदश प्रथमार्त्तवाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ १५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

षोडशोऽध्यायः

आधानाध्यायः

प्रथम चार दिन तक रजस्वला की अस्पृश्यता

रजोदर्शनतोऽस्पृष्टा नार्यो दिनचतुष्टयम्।
ततः शुद्धाः क्रियाश्चैताः सर्ववर्णेष्वयं विधिः॥ १॥

रजोदर्शन के प्रारम्भिक चार दिनों तक स्त्री अस्पृश्य रहती है, इसके पश्चात् स्नान करके ही गर्भाधान करना चाहिये। चारों वर्णों के लिये यही विधि है॥ १॥

विमर्श—प्रथम चार दिन में तीन रात्रियों तक नारी को अपना मुख किसी को न दिखाना चाहिये और न बोलना चाहिये। ऐसा कहा है—

'आर्त्तवाभिष्टुता नारी चैकवेश्मनि संश्रयेत्।
न चान्यजातिसंस्पर्शं कुर्यात्स्पर्शं न क्वचित्॥
त्रिरात्रं स्वमुखं नैव दर्शयेद्यस्य कस्यचित्।
स्ववाक्यं श्रावयेन्नैव न कुर्याद् दन्तधावनम्॥
न कुर्यार्तवे नारीं ग्रहाणामीक्षणं तथा।
अञ्जनाभ्यञ्जनं स्नानं प्रवासं वर्जयेत्तथा॥
नखादिकृन्तनं रज्जुतालपत्रादिबन्धनम्।
नवे शरवि भुञ्जीत तोयं चाञ्जलिना पिबेत्॥'

प्रथम चार दिन तक रजस्वला की अस्पृश्यता

षोडशर्त्तु निशाः स्त्रीणां तस्मिन् युग्मासु संविशेत्।
युग्मासु जायते पुत्रास्त्रियो युग्मासु रात्रिषु॥ २॥
तुर्ये पुत्र भवे क्लेशं पञ्चमे समता फलम्।
षष्ठेऽल्पायुः सुतः प्रोक्तः सप्तमे कन्यका तथा॥ ३॥
अष्टमे पुत्र उत्कृष्टो नवमे कन्यका शुभा।
दीर्घायुर्दशमे पुत्रः कन्यकैकादशां वरा॥ ४॥
द्वादशे धर्मकृत्पुत्रो सतीकन्या त्रयोदशे।
चतुर्दशदिने पुत्रः लक्ष्मीवान् सात्त्विकः शुभः॥ ५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पञ्चदशदिने कन्या लक्ष्मीसौभाग्यसंयुता।
दिने षोडशके पुत्रो दीर्घायुर्नृपतिर्भवेत्॥ ६॥

रजोदर्शन के प्रारम्भ की सोलह रात्रियों में (चार रात्रि को छोड़कर) सम संख्यावाली रात्रियों में गर्भाधान करना चाहिये। सम रात्रियों के गर्भाधान से पुत्र तथा विषम रात्रियों में गर्भाधान से कन्या उत्पन्न होती है॥ २॥

चौथी रात्रि में निषेक हो तो दुःखी पुत्र उत्पन्न होता है। पाँचवीं रात्रि के सम्भोग से सामान्य फल रहता है, पुत्र या पुत्री कुछ भी हो सकती है। छठी रात्रि के गर्भाधान से अल्पायु पुत्र होता है। सातवीं रात्रि के गर्भाधान से अल्पायु कन्या होती है। आठवीं रात्रि में उत्कृष्ट पुत्र उत्पन्न होता है। नवमी रात्रि में सुन्दर कन्या उत्पन्न होती है। दशमी रात्रि में दीर्घायु पुत्र तथा ग्यारहवीं रात्रि में श्रेष्ठ कन्या होती है। बारहवीं रात्रि में धर्मवान् पुत्र होता है तथा तेरहवीं रात्रि में सती कन्या उत्पन्न होती है। चौदहवीं रात्रि में लक्ष्मीवान् सात्त्विक तथा शुभ पुत्र उत्पन्न होता है। पन्द्रहवीं रात्रि में लक्ष्मी एवं सौभाग्य से युक्त कन्या का जन्म होता है। सोलहवीं रात्रि में दीर्घायु तथा राजा के समान पुत्र उत्पन्न होता है॥ २-६॥

गर्भाधानविधि

तिथ्यर्क्षवारनिन्द्याश्चेत् सेककर्म न कारयेत्।
दोषाधिक्ये गुणाल्पत्वे तथापि न च कारयेत्॥ ७॥
ओजराश्यंशगे चन्द्रे लग्ने पुंग्रहवीक्षिते।
उपवीती युग्मतिथौ सुस्नातां कामयेत् स्त्रियम्॥ ८॥
पुत्रार्थी पुरुषं त्यक्त्वा पौष्णमूलाहिपैतृभमम्।
युग्मेषु शशाङ्के च लग्ने स्त्रीग्रहवीक्षिते॥ ९॥
अयुग्मे दिवसे भार्यां कन्यार्थी कामयेत् पतिः।
निर्बीजानामिमे योगाः सर्वदानिष्फलप्रदाः॥ १०॥
पुंग्रहाः सूर्यभौमार्याः स्त्रीग्रहौ शशिभार्गवौ।
नपुंसकौ सौम्यसौरी शिरोमात्रं विधुन्तुदः॥ ११॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां आधानाध्यायः षोडशः॥ १६॥

यदि गर्भाधान के समय तिथिवार-नक्षत्र अशुभ हों तो उस समय निषेक कर्म न करे। यदि मुहूर्त में दोषों की अधिकता तथा गुणों की अल्पता हो तो भी निषेचन नहीं करना चाहिये। जिस समय चन्द्रमा मेष-मिथुन-सिंह-धनु-कुम्भ के नवांश में हो तथा लग्न भी विषम हो तथा पुरुष ग्रहों से दृष्ट हो तो स्नान की हुई स्त्री के साथ समागम करे॥ ७-८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुत्रार्थी स्त्री के रेवती, मूल, मघा, श्लेषा—इन नक्षत्रों को तथा समराशि के चन्द्रमा को गर्भाधान के समय त्याग दे॥ ९॥

विषम दिनों के गर्भाधान में पुत्री तथा सम दिनों के गर्भाधान में पुत्र की उत्पत्ति केवल वीर्ययुक्त पुरुषों द्वारा ही सम्भव है। निर्बीज व्यक्ति सन्तान उत्पन्न नहीं कर सकता है॥ १०॥

सूर्य, मंगल, गुरु ये पुरुष ग्रह, चन्द्र, शुक्र स्त्रीग्रह; बुध एवं शनि नपुंसक ग्रह तथा राहु केवल सिर मात्र का ग्रह है॥ ११॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के षोडश आधानाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ १६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सप्तदशोऽध्यायः

पुंसवनाध्यायः

पुंसवन का समय

प्रसिद्धविषये गर्भे तृतीये वाऽथ मासि च।
कुर्यात्पुंसवनं कर्म सीमन्तञ्च यथा तथा॥ १॥
व्यक्ते गर्भे भवेत्कार्यं सीमन्तेन सहाथवा॥ २॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां पुंसवनाध्यायः सप्तदशः॥ १७॥

जब गर्भ के लक्षण प्रकट हो जायँ तब अथवा तीसरे महीने में पुंसवन कर्म करना चाहिये। परन्तु यदि तीसरे मास में गर्भ के लक्षण प्रकट न हों, तब उससे आगे करें अथवा पुंसवन संस्कार के आगे करना अभीष्ट है॥ १-२॥

विमर्श—इस संस्कार को पुंसवन नाम इसलिये दिया गया है कि इसके करने से पुत्रोत्पत्ति होती है ('पुमान् प्रसूयते येन तेन पुंसवनमीरितम्')। पुंसवन शब्द अथर्ववेद (६।११।११) में आया है, जिसका अर्थ है बालक को जन्म देना। बृहस्पति के अनुसार इस संस्कार को करने से निश्चय ही लड़का (पुरुष) उत्पन्न होता है—

'गर्भः सुस्थापिते चास्य वक्ष्ये पुंसवनस्य च।
काले यस्मिन् कृतो गर्भः पुमान्भवति निश्चितम्॥'
—बृहद् दैवज्ञरंजन

इस संस्कार के साथ अनवलोमन अथवा गर्भरक्षण नामक कार्य भी किया जाता है। पुंसवन संस्कार पुरुष नक्षत्रों में करना चाहिये। यहाँ एक बात और विशेष है कि विवाह की भाँति स्त्री की जन्मराशि से गोचर में चन्द्रबल प्राप्त करना भी आवश्यक है। किन्तु पुरुष के चन्द्रबल की इसमें आवश्यकता नहीं है। यथा—

'स्त्रीणां सर्व क्रियारम्भे भर्तुर्गोचरतः फलम्।
यात्रापुंसवनोद्वाहे विशुद्धिर्योषितः सदा॥' (बृह.)

'विवाहकार्यं कुसुमप्रतिष्ठा गर्भप्रतिष्ठा वनिताविशुद्धौ।
अन्यानि कार्याणि धवस्य शुद्धौ पत्यौ निवृत्ये पुनरात्मशुद्ध्या॥'
—व्यवहारचण्डेश्वर

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'उद्वाहकर्मसु शशाङ्कबलं यथावत्
लग्ने प्रदानसमये वरकन्ययोस्तु।
ग्राह्यं विवाहसमयाद् अथ भर्त्तुरेव
सीमन्तपुंसवनयोः पुनरङ्गनायाः ॥'
—संहिताप्रदीप

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के सप्तदश पुंसवनाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ १७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अष्टादशोऽध्यायः

सीमन्तोन्नयनाध्यायः

सीमन्तोन्नयन संस्कार का समय

चतुर्थे मासि षष्ठे वाप्यष्टमे वा तदीश्वरे।
बलसम्पन्नदम्पत्योश्चन्द्रताराबलान्विते ॥ १ ॥

गर्भ के चौथे मास में अथवा छठवें मास में अथवा आठवें महीने में जब गर्भ के अष्टम मास का अधिपति ग्रह बली हो तथा पति-पत्नी दोनों का चन्द्रमा अथवा तारा बली हो तब सीमन्तोन्नयन संस्कार कराना शुभ रहता है ॥ १ ॥

विमर्श—गर्भावस्था में प्रत्येक मास के स्वामी ज्योतिष ग्रन्थों में बताये गये हैं, वे इस प्रकार हैं—

'कुजास्फुजिज्जीव रवीन्दु सौरि शशांकि लग्नेशु दिवाकराणाम्।
मासाधिपत्यप्रभवो न चैषा जयोपघातैर्ग्रहवद् भवन्ति ॥'

१. शुक्र, २. मंगल, ३. गुरु, ४. सूर्य, ५. चन्द्र, ६. शनि, ७. बुध, ८. लग्नेश (आधान लग्नेश), ९. चन्द्र तथा सूर्य। अतः यहाँ अष्टमाधिपति का अर्थ गर्भाधान लग्न का स्वामी ग्रह होता है।

त्याज्य तत्त्व तथा लग्नशुद्धि

अरिक्ता पर्वदिवसे कुजजीवार्कवासरे।
तीक्ष्णमिश्रोग्रवर्ज्येषु पुंसंज्ञभांशके शशी ॥ २ ॥
शुद्धेऽष्टमे जन्मलग्नात्तयोर्लग्ने न नैधने।
शुभग्रहयुते दृष्टे पापखेटयुते क्षिते ॥ ३ ॥
मासेऽष्टके चतुर्भिर्वा दृष्टेऽर्के बीजपूरकैः।
स्त्रीणां तु प्रथमे गर्भे सीमन्तोन्नयनं शुभम् ॥ ४ ॥
शुभग्रहेषु धीधर्मकेन्द्रेष्वरिभवे त्रिषु।
पापेषु सत्सु चन्द्रेन्त्य निधनाद्यारिवर्जिते ॥ ५ ॥
क्रूरग्रहाणामेकोऽपि लग्नादन्त्यात्मजाष्टगाः।
सीमन्तिनीनां सद्गर्भं बली हन्ति न संशयः ॥ ६ ॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां सीमन्तोन्नयनाध्यायः अष्टादशः ॥ १८ ॥

वर्ज्यकाल—रिक्ता तिथि (४-९-१४), पर्व दिवस (अष्टमी, अमावस्या, पूर्णिमा), मंगलवार, गुरुवार तथा रविवार, तीक्ष्ण नक्षत्र (मूल, ज्येष्ठा, आश्लेषा, तथा आर्द्रा), मिश्रनक्षत्र (कृत्तिका, भरणी, विशाखा), उग्र नक्षत्र इन सबका त्याग करें ॥ २ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लग्नशुद्धि—चन्द्रमा पुरुष नवांश में होना चाहिये। लग्न से अष्टम स्थान पर तथा लग्न में कोई पापग्रह नहीं होना चाहिये। इन दोनों स्थानों पर पापग्रह की दृष्टि भी वर्जित है॥ ३॥

जब गर्भ का आठवाँ महीना हो तथा सूर्य पर चार बली ग्रहों की दृष्टि हो, तब स्त्रियों के प्रथम गर्भ का सीमन्त कर्म करना शुभ होता है॥ ४॥

शुभग्रह लग्न से त्रिकोण तथा आत्मस्थानों (केन्द्रों) में स्थित हो तथा पापग्रह छठें, ग्यारहवें तथा तीसरे भाव में होना चाहिये। साथ ही चन्द्रमा अष्टम भाव, बारहवें भाव, लग्न तथा षष्ठ भाग में नहीं होना चाहिये। इस प्रकार की लग्न शुद्धि में सीमन्त कर्म करना उचित है॥ ५॥

गर्भनाशक योग—यदि सीमन्तकालीन लग्न में लग्न से बारहवें, पाँचवें तथा अष्टम स्थानों में कोई क्रूरग्रह बैठा हो तो यदि वह ग्रह बलवान् है तो अवश्य ही गर्भ को नष्ट करता है॥ ६॥

विमर्श—सीमन्तकर्म सम्पन्न होने के पश्चात् तथा विशेष रूप से आठवें मास में गर्भवती को सन्तान एवं स्वयं के हित के लिये कुछ नियमों का पालन करना आवश्यक है, उन्हें उपयोगी होने के कारण यहाँ लिखा जा रहा है—

'भूम्याञ्चोच्चनीचायामारोहणवरोहणे ।
नदीप्रतरणं चैव शकटारोहणं तथा॥ १॥
उग्रौषधं तथा क्षारं मैथुनं भारवाहनम्।
कृते पुंसवने चैव गर्भिणीपरिवर्जयेत्॥ २॥'
—ज्योतिषसार

अर्थात् आठवें मास में गर्भिणी को ऊँची-नीची भूमि पर उतरना-चढ़ना, सीढ़ी आदि से छत पर आना-जाना, नदी में तैरना, शकट (मोटर साइकिल, कार, बस आदि की सवारी करना) पर बैठना, उग्रवीर्य औषधि का सेवन, खारे तथा नमकीन पदार्थों का अधिक मात्रा में सेवन, मैथुन, बोझा उठाना आदि कर्म नहीं करना चाहिये।

और भी कहा है—

'गर्भिणी कुञ्जराश्वादि शैलहर्म्यादिरोहणम्।
व्यायामं शीघ्रगमनं शकटारोहणं त्यजेत्॥ १॥
शोकरक्तविमोक्षं च साध्वसं कुक्कुटासनम्।
व्यवायं च दिवास्वापं रात्रौ जागरणं त्यजेत्॥ २॥'

इसी प्रकार गर्भवती को व्यायाम, तेज चलना, शोक-चिन्ता, रक्तदान करना, भय, उकडूँ बैठना, मैथुन, दिन में शयन तथा रात्रि-जागरण भी त्यागना चाहिये।

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के अष्टादश सीमन्तोन्नयनाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ १८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एकोनविंशतितमोऽध्यायः

जातकर्माध्यायः

जातकर्मविधि

तस्मिञ्जन्ममुहूर्तेऽपि सूतकान्तेऽपि वा शिशुः।
जातकर्म प्रकर्त्तव्यं पितृपूजनपूर्वकम्॥ १॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां जातकर्माध्यायः एकोनविंशतितमः॥ १९॥

जिस समय शिशु का जन्म हो, उसी समय (नालच्छेदन के पूर्व) अथवा सूतक प्रवृत्त हो जाने पर, जब सूतक की निवृत्ति हो जाय, तब जातक का जातकर्म पितृपूजन-पूर्वक करना चाहिये॥ १॥

विमर्श—शिशु को जन्मने के समय किया जानेवाला संस्कार जातकर्म संस्कार कहलाता है। ऊपर श्लोक में 'पितृपूजनपूर्वकम्' वाक्यांश का प्रयोग हुआ है। अतः इस अवसर पर अपने मृत पूर्वजों का पूजन अवश्य करना चाहिये। इस पितृपूजन को नान्दीमुख श्राद्ध कहते हैं। नयी पीढ़ी के जन्म पर अपने वंश का इतिहास स्मरण करना आवश्यक होता है तथा पूजन (नान्दीमुख श्राद्ध) द्वारा उन पूर्वजों के प्रति कृतज्ञता का ज्ञापन किया जाता है और उन्हें इस बात की सूचना दी जाती है कि 'आपके द्वारा सतत सञ्चालित वंश में आगे एक कड़ी और जुड़ गयी है।'

नान्दीमुख श्राद्ध—नान्दीश्राद्ध को ही वृद्धिश्राद्ध कहते हैं। ब्रह्मपुराण के अनुसार, 'पिता-पितामह तथा प्रपितामह', ये तीन अश्रुमुख पितर कहलाते हैं। इसी प्रकार पितामह से तीन पीढ़ी पूर्व के पितर नान्दीमुख कहलाते हैं। श्राद्धकल्पतरु ने कहा है कि जब पिता-पितामह तथा प्रपितामह जीवित हों तो किसी भी शुभ अवसर पर प्रपितामह के पूर्व की तीन पीढ़ियों के पितर ही नान्दीमुख श्राद्धके देवता होते हैं—

'पितापितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः।
त्रयो ह्यश्रुमुखाः ह्येते पितरः सम्प्रकीर्तितः॥
तेभ्यो पूर्वे त्रयो ये तु ते तु नान्दीमुखा इति॥'

नान्दीश्राद्ध को ही आभ्युदयिक श्राद्ध भी कहा जाता है।

नालच्छेदन—इसे नाभिवर्धन भी कहते हैं। जब तक नालच्छेदन नहीं होता है तब तक सूतक की (अशौच की) प्रवृत्ति नहीं होती है, तभी तक जातकर्म सम्पन्न कर लेना चाहिये। शंख-स्मृति, स्मृतिचन्द्रिका तथा अन्य ग्रन्थों के अनुसार नाल काटने के पूर्व अशौच नहीं माना जाता है। इस समय चाहे दिन हो अथवा रात तिल, स्वर्ण, परिधान, धान्य आदि का दान किया जा सकता है। परन्तु इन सब कार्यों के पूर्व पिता को वस्त्र सहित स्नान कर लेना चाहिये।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुत्र और कन्या में भेद नहीं—जातकर्म में पुत्र एवं कन्या में भेद नहीं करना चाहिये, ऐसा भी मत धर्मशास्त्रों में स्पष्ट है। दिन या रात किसी भी समय में शिशु का जन्म हो, इस संस्कार को करना चाहिये तथा उसी समय स्नान, दान एवं पितृपूजन भी करना चाहिये। विभिन्न ग्रन्थों में जातकर्म के सम्बन्ध में उपलब्ध वचन इस प्रकार हैं—

'प्राङ्नाभिवर्धनात्पुंसा जातकर्म विधीयते।'
—मनुस्मृतिः

'श्रुत्वा जातं पिता पुत्रं सचैलस्नानमाचरेत्।
उत्तराभिमुखो भूत्वा नद्यां वा देवखातके॥
जातकर्म च कर्त्तव्यं तस्मिञ्जाते मुहूर्तके।
दानं देयञ्च विप्रेभ्यो यदीच्छेदात्मनः शिवम्॥'
—वसिष्ठः

'अथातः सम्प्रवक्ष्यामि जातकर्म क्रियां शुभाम्।
जातस्यारिष्टनाशाय नीरोगित्वाय सर्वदा॥
दीर्घायुष्यमवाप्त्यैव सर्वसम्पद् विवृद्धये।
जन्मन्यशुभदोषाणां विनाशाय विशेषतः॥
जातमात्रे पिता कुर्यात् पुत्रस्य मुखदर्शनम्।
स्तनाशनात् पुरो वापि नाभिच्छेदात्पुरोऽथवा॥'
—बृहस्पतिः

'जन्मनोऽनन्तरं कार्यं जातकर्म यथाविधि।
दैवादतीतकालं चेदतीते सूतके भवेत्॥'
—हेमाद्रौ वैजवापः

'अच्छिन्ननाभिकर्त्तव्यं श्राद्धं वै पुत्रजन्मनि।
पुत्रपदेन कन्यापि गृह्यते॥'
—पृथ्वीचन्द्रोदये

'प्रादुर्भावे पुत्रपुत्र्योर्ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः।
स्नात्वाऽनन्तरमात्मीयान् पितॄन श्राद्धे तर्पयेत्।
एतच्च रात्रावपि कार्यम्॥'
—पृथ्वीचन्द्रोदये कार्ष्णाजितिः

'जातमात्रकुमारस्य जातकर्म विधीयते।
स्तनप्राशनतः पूर्वं नाभिकर्त्तनतोऽपि वा॥'
—वैजवापः

'जाते कुमारे पितॄणामामोदात्पुण्यं तदहः।'
—निर्णयसिन्धौ हारीतः

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के उन्नीसवें जातकर्माध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ १९॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विंशोऽध्यायः

नामकरणाध्यायः

कुलानुसार नामकरण

सूतकान्ते नामकर्म विधेयं स्वकुलोचितम्।
नामपूर्वं प्रशस्तं स्यान्मङ्गलैश्च शुभाक्षरैः॥ १॥

सूतक की समाप्ति के उपरान्त (दस दिन के उपरान्त तथा छह मास के पूर्व) अपने कुल के योग्य शुभ अक्षरों का मंगलकारी नाम बालक या बालिका का रखना चाहिये॥ १॥

नामकरण का समय

देशकालोपयाताद्यैः कालातिक्रमणं यदि।
अनस्तगे भृगावीज्ये तत्कार्यञ्चोत्तरायणे॥ २॥
चरस्थिरमृदुक्षिप्रनक्षत्रे शुभवासरे।
चन्द्रताराबलोपेते दिवसे च शिशोः पिता॥ ३॥
शुभलग्ने शुभांशे च नैधने शुद्धिसंयुते।
लग्नेन्त्यनैधने सौम्ये संयुते वा निरीक्षिते॥ ४॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां नामकरणाध्यायः विंशतिः॥ २०॥

यदि किसी कारण सूतक के अन्त में बारहवें दिन तक नामकरण न हो सके, तो जब गुरु-शुक्र का अस्त न हो तथा सूर्य उत्तरायण (मकर से लेकर मिथुन राशि तक) में रहें तब यह कार्य करे॥ २॥

चर नक्षत्रों (स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा), मृदु नक्षत्रों (मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा), स्थिर नक्षत्रों (तीनों उत्तरा, रोहिणी), क्षिप्र नक्षत्रों (हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्) में शुभवार (चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र) में जब बालक को चन्द्रमा, तारा आदि का बल प्राप्त हो, तब शिशु का पिता शुभलग्न में, शुभ नवांश में, जब मुहूर्त कुण्डली में अष्टम भाव शुद्ध (पाप ग्रह से रहित) हों, लग्न द्वादश तथा अष्टम भाव में जब शुभग्रह स्थित हो, अथवा इन पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो, तब नामकरण संस्कार कराये॥ ३-४॥

विमर्श—नामकरण एक आवश्यक संस्कार है शिशु का नाम तो सभी को रखना ही पड़ता है। नामकरण कितने दिन के अन्तराल से किया जाय, इस पर प्राचीन ग्रन्थों में मतभेद है। जिसमें बृहदारण्यकोपनिषद्, आश्वलायनगृह्यसूत्र, शांखायन, काठक संहिता आदि के मत में जन्म के दिन ही नामकरण कर देना चाहिये। शतपथब्राह्मण में भी ऐसा ही कहा है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आपस्तम्ब, बौधायन, भारद्वाज एवं पारस्करगृह्यसूत्र में नामकरण दसवें दिन करने को कहा है। याज्ञवल्क्यस्मृति में ग्यारहवें दिन नामकरण का निर्देश है। बौधायन गृह्यसूत्र में दसवाँ या बारहवाँ दिन तथा हिरण्यकेशीय गृह्यसूत्र में बारहवाँ दिन नामकरण हेतु प्रशस्त कहा गया है। वैखानस गृह्यसूत्र के अनुसार माता दसवें दिन या बारहवें दिन सूतिकागृह छोड़ती है तथा बालक के नामकरण के लिये कहती है। मनुस्मृति के अनुसार जन्म से दसवें या बारहवें दिन शुभ तिथि नक्षत्र एवं मुहूर्त में नामकरण करना चाहिये।

सोष्यन्तीकर्म—गोभिलगृह्यसूत्र एवं खादिरगृह्यसूत्र में के अनुसार नामकरण 'सोष्यन्तीकर्म' के दिन भी किया जा सकता है। क्या है सोष्यन्तीकर्म? सोष्यन्तीकर्म की चर्चा आपस्तम्बगृह्यसूत्र, हिरण्यकेशिगृह्यसूत्र (२।२।८ तथा २।२।१), भारद्वाज गृह्यसूत्र (१।२२), गोभिलगृह्यसूत्र (२।७।१३-१४), खादिरगृह्यसूत्र (२।२।२९-३०), काठकगृह्यसूत्र (३३।१-३), तथा पारस्करगृह्यसूत्र (१।१६) में हुई है। इससे यह सिद्ध होता है कि यह एक अति प्राचीन संस्कार है।

'सोष्यन्तीकर्म' संस्कार का अर्थ है 'एक नारी के लिये किया जाने वाला संस्कार जो कि आसन्नप्रसवा हो।' इस प्रकार यह संस्कार बालक के जन्म के पूर्व किया जाता है। इस संस्कार का संकेत ऋग्वेद (५।७८।७-९) में मिलता है—

'यथा वातः पुष्करिणीं समिङ्गयति सर्वतः।
एषा ते गर्भ एजतु निरैतु दशमास्यः॥
यथावातो यथा वनं यथा समुद्र एजति।
एवा त्वं दशमास्य सहावेहि जरायुणा॥
दशमासाञ्छशयानः कुमारो अधि मातरि।
निरैतु जीवो अक्षतो जीवो जीवन्त्या अधि॥'

अर्थात् जिस प्रकार वायु किसी झील को सब ओर से हिलोर देता है, उसी प्रकार से इस (गर्भवती) का भ्रूण दसवें मास में बाहर निकल जाय। जिस प्रकार वायु, वन, तथा समुद्र को हिलाता है, उसी प्रकार हे भ्रूण! तुम दशममास में बाहर आ जाओ। हे कुमार! तुम माता के गर्भाशय में दशमास शयन करने के उपरान्त सुरक्षित ही बाहर निकल जाओ'।

गृह्यसूत्रों में इस संस्कार के विषय में अन्तर पाया जाता है। बृहदारण्यक उपनिषद् में भी इस संस्कार का उल्लेख है, जिसके अनुसार निम्न मन्त्र को पढ़कर प्रसवपीड़ा से ग्रस्त नारी को जल से अभिषेक (छिड़काव) करने से सुखपूर्वक प्रसव होता है—

सुखप्रसवमन्त्र—'सोष्यन्तीमद्भिरभ्युक्षति। यथा वायुः पुष्करिणीं समिङ्गयति सर्वतः। एवा ते गर्भ एजतु सहावैतु जरायुणा। इन्द्रस्यायं व्रजः कृतः सार्गलः सपरिश्रयः। तमिन्द्र निर्जहि गर्भेण सावराँ् सहेति॥'

—बृहदारण्यक उपनिषद् ६।४।२३

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नीचे नामकरण के काल के सम्बन्ध में प्राचीन ग्रन्थों के कुछ मूल वचनों को दिया जा रहा है—

'अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मुहूर्तं नामकर्मणः।
नाम क्रिया काले सर्व सम्यद्विवर्धनः॥
नामाखिलस्य व्यवहारहेतुः शुभावहं कर्मशुभाङ्गहेतुः।
ताम्नैव कीर्तिं लभते मनुष्यो ततः प्रशस्तं खलु नाम कर्म॥' (गुरु)

'एकादशेऽह्नि विप्राणां क्षत्रियाणां त्रयोदशे।
वैश्यानां षोडशे कार्यं मासान्ते शूद्रजन्मनः॥ १॥
मासनाम गुरोर्नाम दद्याद् बालस्य वै पिता।
कृष्णोऽनन्तोऽच्युतश्चक्री वैकुण्ठोऽथ जनार्दनः॥ २॥
उपेन्द्रो यज्ञपुरुषो वासुदेवस्य तथा हरिः।
योगीशो पुण्डरीकाक्षो मासनामान्युक्रमात्॥ ३॥
नामधेयं तु वर्णानां कर्त्तव्यं तु समाक्षरम्।
शर्मान्तं ब्राह्मणस्योक्तं वर्मान्तं क्षत्रियस्य तु॥ ४॥
गुप्तदासान्तकं नाम कथितं वैश्यशूद्रयोः।
नामधेयं तु कर्त्तव्यं स्वकुलानुगमने वा॥ ५॥
स्त्रीणामोजाक्षरं शान्तं विस्पष्टार्थं मनोरमम्।
नामकार्यं नराणां च न कार्यं विषमाक्षरम्॥ ६॥
दीर्घनाम कृतं कुर्यान्न युग्माक्षरान्तकम्।
अकारान्तं न कर्त्तव्यं स्त्रियै च हितप्रदम्॥'
—गर्गाचार्यः

'नामधेयं दशम्यान्तु केचिदिच्छन्ति सूरयः।
द्वादश्यामाहुरन्ये तु मासे पूर्णे तथा परे॥
अष्टादशेऽह्नि तदा वदन्त्यन्ये मनीषिणः॥' (व्यासः)
'द्वादशे दशमे वापि जन्मतो दिवसे शुभम्।
षोडशे विंशतिच्चैव द्वाविंशे वर्णतः क्रमात्॥' (बृहस्पतिः)

जन्म के पूर्व नामकरण—जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि वैदिक काल में कुछ लोगों में बालक के तथा बालिका के जन्मग्रहण करने के पूर्व ही सोष्यन्ती संस्कार के समय नामकरण करने की परम्परा थी। वह परम्परा पंजाब में विशेषकर सिख सम्प्रदाय में तथा राजस्थान में अनेक परिवारों में आज पर्यन्त विद्यमान है। जैसे जन्म के पूर्व ही सिखों में किसी भ्रूण का नामकरण राजेन्द्र, सुरेन्द्र, अमृत, मुनीन्द्र आदि रख देते हैं। अब यदि जन्म के उपरान्त शिशु पुत्र हुआ, तो ये नाम रजिन्दर सिंह, सुरिन्दर सिंह, अमृत सिंह, मुनिन्दर सिंह आदि हो जाते हैं किन्तु यदि पुत्री उत्पन्न हो गयी, तो उसका

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नाम राजिन्दर कौर, सुरिन्दर कौर, अमृत कौर तथा मुनिन्दर कौर हो जाता है। कुमारी के स्थान पर पंजाबी भाषा में कौर शब्द प्रयुक्त होता है।

शिशु के एक से अधिक नाम रखना—आचार्य सायण के मतानुसार चार नाम होते हैं अर्थात् एक व्यक्ति के नाम चार तक हो सकते हैं। एक नाम सामान्य एवं प्रकट नाम होता है, जो सर्वसाधारण के पुकारने के लिये रखा जाता है। दूसरा नाम वह होता है, जो जन्म नक्षत्र के अनुसार रखा जाता है। जैसे अश्विनी नक्षत्र में जन्म होने से आश्विन नाम रखा जा सकता है। तीसरा गुप्त नाम होता है, जिसे केवल माता-पिता एवं अति निकट सम्बन्धी ही जानते हैं। चौथा नाम यज्ञकर्म के उपरान्त रखा जाता है, जैसे कि सोमयज्ञ कर लेने के उपरान्त सोमयाजी, वाजपेय यज्ञ कर लेने के उपरान्त वाजपेयी इत्यादि।

जन्म नक्षत्र, चरण एवं राशि के आधार पर जन्म नाम रखने की परम्परा बहुत बाद में प्रचलित हुई है। इसके अतिरिक्त भी नामों के रखने के अन्य आधार भी रहे हैं। उन्हें नीचे दिया जा रहा है—

गोत्रनाम—जैसे भरद्वाज के कुल में उत्पन्न व्यक्ति को भारद्वाज, पराशर कुल में उत्पन्न पाराशर, तथा पाराशर गोत्रोत्पन्न को 'पाराशर्य' आदि कहते हैं।

कुलनाम—कुल के नाम के आधार पर भी नाम रखना प्रचलित रहा है।

मातृनाम—माता का नाम जोड़कर नामकरण की पद्धति भी वैदिक काल में प्रचलित रहे हैं। यथा—१. पौतिमाषीपुत्र, २. कात्यायनीपुत्र, ३. गौतमीपुत्र, ४. भारद्वाजीपुत्र, ५. पाराशरीपुत्र इत्यादि। इसी प्रकार कयाधु के पुत्र कायाधव, पृथा के पुत्र पार्थ आदि।

पितृनाम—यथा पिजवन का पुत्र पैजवन, ऋष्टिषेण का पुत्र आर्ष्टिषेण, वरुण का पुत्र वारुणि, दुष्यन्त का पुत्र दौष्यन्ति, बृहस्पति का पुत्र बार्हस्पत्य आदि।

नाम के स्वरूप के सम्बन्ध में धर्मशास्त्रों के निर्देश—१. पुरुषों का नाम दो या चार अक्षरों वाला होना चाहिये। २. नाम उच्चारण में सुविधाजनक हो। ३. नाम के अन्त में दीर्घस्वर या विसर्ग होना चाहिये। ४. आपस्तम्ब के मत से नाम का पूवार्ध संज्ञा तथा उत्तरार्ध क्रियात्मक हो, जैसे देवदत्त, ब्रह्मदत्त, यज्ञदत्त, रामकुमार आदि। ५. नाम के पूर्व 'सु' उपसर्ग हो तो अच्छा है। यथा—सुजात, सुपर्ण, सुनन्दन, सुकेश, सुकेशा, सुकेशी, सुदर्शन, सुधन्वा आदि। ६. गुप्तनाम को सोष्यन्तीकर्म के समय ही रखना चाहिये। ७. कन्याओं के नाम के अन्त में 'दा' होना शुभ है। यथा—यशोदा, नर्मदा, सत्यदा, हर्षदा, वर्णदा, धर्मदा, गुणदा, गोदा, वसुदा आदि।

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के बीसवें नामकरणाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ २०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एकविंशोऽध्यायः

अन्नप्राशनाध्यायः

अन्नप्राशन के समय शिशु की वय

षष्ठमास्यष्टमे वापि पुंसां स्त्रीणां तु पञ्चमे।
सप्तमे मासि वा कार्यं नवान्नप्राशनं शुभम्॥ १॥

जन्म से छठवें या आठवें महीनों में पुत्रों को तथा जन्म के पाँचवें अथवा सातवें महीने में कन्याओं को जीवन के प्रथम अवसर का अन्नप्राशन कराना चाहिये। ऐसा करना शुभ होता है॥ १॥

अन्नप्राशनार्थ शुभ तिथियाँ तथा वार

रिक्तां दिनक्षयं नन्दां द्वादशीमष्टमीममाम्।
त्यक्त्वान्यतिथयः श्रेष्ठा प्राशने शुभवासरे॥ २॥

रिक्ता तिथि (४।९।१४) क्षय तिथि, नन्दातिथि (१।६।११) द्वादशी, अष्टमी तथा अमा (अमावस्या) को छोड़कर अन्य तिथियाँ अन्नप्राशन में श्रेष्ठ होती हैं। शुभवार (सोमवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार) को ग्रहण करना चाहिये॥ २॥

अन्नप्राशन में शुभ नक्षत्र तथा लग्नशुद्धि

चरस्थिरमृदुक्षिप्रनक्षत्रे शुभनैधने।
दशमे शुद्धिसंयुक्ते शुभलग्ने शुभांशके॥ ३॥
पूर्वाह्ने सौम्यखेटेन संयुक्ते वीक्षितेऽपि वा।
त्रिषष्ठलाभगैः क्रूरैः केन्द्रधीधर्मगैः शुभैः॥ ४॥
यदा वाराधिपतिस्तिष्ठेत्स्वोच्चमित्रगते तदा।
गुरुणा बलिना वापि वीक्षितश्च बलान्वितः॥ ५॥

चर नक्षत्रों (स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा), मृदुनक्षत्र, (मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा), क्षिप्रनक्षत्र (हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्) तथा स्थिर नक्षत्रों (तीनों उत्तरा, रोहिणी) में अन्नप्राशन कराना चाहिये।

शुभलग्न तथा शुभनवांश में, पूर्वाह्न समय में जब लग्न में शुभग्रह स्थित हो अथवा लग्न पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो, पापग्रह लग्न से ३।६।११ भावों में हो तथा केन्द्रों (४-७-१०) में तथा त्रिकोणों (५।९) में शुभग्रह स्थित हो। जिस वार में अन्नप्राशन हो यदि उसका स्वामी स्वराशि में, उच्चराशि में तथा मित्र राशि में स्थित हो तथा गुरु बलवान् हो तब बालक को प्रथम बार का अन्नप्राशन कराना शुभ होता है॥ ३-५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अन्नप्राशन में ६।८।१२ भावों में चन्द का निषेध

न व्यापारे निधनस्थे चन्द्रेण प्राशनं शुभम्।
अन्नप्राशनलग्नस्थे क्षीणेन्दौ वास्तनीचगे॥ ६॥
क्रियते यदि वै मोहाद् शिशोश्चान्नस्य प्राशनम्।
नित्यभोक्तुश्च दारिद्र्यं रिष्फषष्ठाष्टगे तदा॥ ७॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायामन्नप्राशनाध्यायः एकविंशतितमः॥ २१॥

१. अन्नप्राशन की लग्न से चन्द्रमा, बारहवाँ, छठवाँ तथा आठवाँ न होने पर (शेष स्थानों में) शुभ होता है।

२. लग्न में क्षीण चन्द्रमा नहीं होना चाहिये तथा शुभ स्थानों में भी चन्द्रमा अस्त नहीं होना चाहिये।

३. ६।८।१२ में स्थित चन्द्रमा होने पर भी यदि भूल से बालक को अन्नप्राशन करा दिया जाता है तो वह प्राशन करनेवाला शिशु जीवन भर दरिद्र होकर रहता है॥ ६-७॥

विमर्श—जीवन की द्वितीय छमाही में शिशु के लिये अन्नप्राशन आवश्यक होता है। एक वर्ष की आयु होने तक तो इसे अवश्य ही करा देना चाहिये। अन्यथा आयुर्वेदशास्त्र की दृष्टि से ऐसा न करना अनुचित तथा स्वास्थ्य के लिये हानिकर भी होगा, क्योंकि स्वस्थ बालक के मुख में इस काल में छह मास के उपरान्त दाँत निकलने का उपक्रम चलने लगता है। इसीलिये आचार्य वाग्भट कहते हैं कि जब शिशु के दाँत निकलने की प्रक्रिया प्रारम्भ होती प्रतीत हो तो क्रमशः उसका माता द्वारा कराया जानेवाला स्तनपान धीरे-धीरे बन्द कराना चाहिये और उसे बकरी या गाय का दूध तथा लघु एवं बृंहण (शरीर की वृद्धि करनेवाला या पोषक) अन्न देना चाहिये। इसके लिये उन्होंने दो प्रकार के लड्डू बनाकर बालक को प्रतिदिन खिलाने के लिये कहा है—

१. **प्रियालादि मोदक**—चिरौंजी, मुलैठी, मधु, लाजा (धान की खील या लावा=लइया=लाई) का चूर्ण तथा मिश्री मिलाकर लड्डू बना लें, ये लड्डू माता का दूध छुड़ाये गये बच्चे के लिये प्रिय तथा पोषक होते हैं।

२. **बालबिल्वादि मोदक**—कच्चे बेल फल का चूर्ण, इलायची तथा धान की खील या लावा का चूर्ण—इनको शक्कर मिलाकर लड्डू बना लें। ये लड्डू भूख बढ़ाते हैं।

३. जिन बालकों को अधिक पतला मल त्याग होता हो, उन्हें धाय के फूल, शक्कर तथा धान की खील या लावा को मिलाकर बनाया मन्थ (ठण्डाई) देना चाहिये। यथा—

'अथैनं जात दशनं क्रमेणपनयेत्स्तनात्।
पूर्वोक्तं योजयेत्क्षीरमन्नं च लघुबृंहणम्॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रियालमज्ज मधुक मधु लाजसितोपलैः।
अपस्तन्यस्य संयोज्यः प्रीणनो मोदकः शिशोः॥
दीपनो बालबिल्वैलाशर्करालाजसक्तुभिः।
सङ्ग्राही धातकीपुष्पशर्करालाजतर्पणैः॥'

—अष्टाङ्गहृदय उत्तरस्थान १। ३७। ३९

छह मास के उपरान्त शिशु को अन्नप्राशन कराने के उपरान्त प्रतिदिन उंगली से दलिया आदि की दो-एक अंगुली अवश्य खिलानी चाहिये (चटानी चाहिये), साथ ही पके टमाटर का स्वरस, पका केला, पका मीठा अनार का स्वरस, पतली दाल तथा उबली हरी शाक-सब्जियाँ देना हितकर होता है।

ऊपर जो कुछ वाग्भटाचार्य ने आज से दो शताब्दियों से अधिक पूर्व कहा था, उसी का समर्थन आज के शिशु रोग विज्ञानियों को भी करना पड़ता है। वे भी छह मास से नौ मास के भीतर बालक को माता का दूध छुड़ाकर गोदुग्ध तथा मृदु अन्न पर पोषित करने की सलाह देते हैं। परन्तु ग्रीष्मकाल के दिनों में बच्चे को माता का दूध नहीं छुड़ाना चाहिये—

'Weaning is usually advisable when the infant is nine month of age, but should be avoided, if possible, during extremly hot weather......... In any event when the mother's milk is abundant; the process of weaning should be sufficiently gradual to avoid causing her unnecessary discomfort and to let the baby learn to accept milk from a new source.'

—Nelson's Text Book of Pediatrics.

'During the second half year of life the infant will show a readiness to chew rather than just to swallow foods. This is an indication for offering him coarser foods such as toast and give him less finely strained fruits and vegetables.'

—Nelson's Text Book of Pediatrics.

अन्न, फल, शाकादि की मात्रा में धीरे-धीरे शिशु की रुचि के अनुसार वृद्धि करना चाहिये।

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के इक्कीसवें अन्नप्राशनाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ २१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

द्वाविंशोऽध्यायः

चौलाध्यायः

चौलकर्म हेतु शिशु की वयस

तृतीये पञ्चमाब्दे वा स्वकुलाचारतोऽपि वा।
बालानां जन्मतः कार्यं चौलमावत्सरे त्रयात्॥ १॥

बालकों के चौलकर्म (मुण्डन संस्कार) को उनके जन्म से तीसरे या पाँचवें वर्ष में अथवा अपने कुल की परम्परा के अनुसार कराना चाहिये। यह संस्कार तीसरे वर्ष में विशेष उत्तम रहता है॥ १॥

विमर्श—शिशुओं के प्रथम बार शिर के बाल कटवाने को संस्कृत में चौलकर्म, चूड़ाकरण, क्षुरकर्म, क्षौरकर्म, पूजाकर्म तथा मुण्डन आदि कहते हैं।

शिशु की माता के गर्भिणी होने पर चूडाकर्म का निषेध

चूडाकर्म न कर्त्तव्यं यस्य माता तु गुर्विणी।
करोति यदि मूढात्मा तदा गर्भस्य नो शुभम्॥ २॥
सूनोर्मातरि गर्भिण्यां चूडाकर्म न कारयेत्।
पञ्चाब्दादश्योर्ध्वं तु गर्भिण्यामपि कारयेत्॥ ३॥

जिस शिशु की माता गर्भिणी हो उस बालक का मुण्डन नहीं करना चाहिये। यदि कोई मूढ़तावश ऐसा करता है तो उस गर्भ के शिशु के लिये शुभ नहीं होता है॥ २॥

सामान्यतः यह उचित है कि शिशु की माता यदि गर्भवती हो, तो उसका मुण्डन न करे। परन्तु यदि बालक पाँच वर्ष से अधिक का हो गया हो, तो फिर बालक की माता के गर्भवती होने पर भी मुण्डन कराया जा सकता है। उसमें दोष नहीं है॥ ३॥

चौलकर्म में शुभ काल एवं तिथि-वार

सौम्यायने नास्तगयोरसुरासुरमन्त्रिणोः।
अपर्वरिक्तातिथिषु शुक्रेज्ञेज्येन्दुवासरे॥ ४॥

उत्तरायण में सूर्य होने पर गुरु-शुक्र अस्त न होने पर पूर्णिमा तथा रिक्ता (४।९।१४) तिथियों को छोड़कर शेष तिथियों में तथा शुक्र, बुध, गुरुवार एवं सोमवार में मुण्डनकर्म शुभ होता है॥ ४॥

मुण्डन में नक्षत्रशुद्धि

दस्रादितीज्यचन्द्रेन्द्रपूषाभानि शुभान्यतः।
चौलकर्मणि हस्तार्क्षात् त्रीणि त्रीणि च विष्णुभात्॥ ५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पट्टबन्धनचौलान्नप्राशने चोपनायने।
शुभदं जन्मनक्षत्रमशुभं त्वन्यकर्मणि॥ ६॥

अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, ज्येष्ठा, रेवती—ये नक्षत्र मुण्डन में शुभ होते हैं। पट्टबन्धन, चौलकर्म, अन्नप्राशन तथा उपनयन—इन कर्मों में यदि हस्त, चित्रा, स्वाति, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा—ये नक्षत्र हों तो भी शुभ है। यदि इन छह नक्षत्रों में किसी व्यक्ति का जन्म नक्षत्र भी पड़ जाये, तो इनमें जन्म नक्षत्र का भी दोष नहीं होता है। परन्तु इनसे भिन्न कार्यों में यदि कोई भी शुभ नक्षत्र यदि जन्म नक्षत्र है, तो उसे अशुभ मानना चाहिये॥ ५-६॥

चौलकर्म में लग्नशुद्धि

अष्टमे शुद्धिसंयुक्ते शुभलग्ने शुभांशके।
न नैधने भे शीतांशौ षष्ठेऽन्त्ये तु विवर्जयेत्॥ ७॥
धनत्रिकोणकेन्द्रस्थैः शुभैस्त्र्यायारिगैः परैः।
अभ्यक्ते सन्ध्ययोर्नान्ते निशि भोक्तुर्न चाहवे॥ ८॥

शुभग्रहों के राशि लग्न में शुभ नवांश में जब अष्टम भाव शुद्ध (पापग्रह से रहित) हो तथा चन्द्रमा आठवें, छठें, तथा बारहवें भाव में न हो, शुभग्रह द्वितीय, पंचम, नवम, लग्न, चतुर्थ, सप्तम तथा दशम भाव में हों तथा पापग्रह तृतीय, छठे या ग्यारहवें हों तब मुण्डन कार्य शुभ होता है।

निषिद्ध समय—सन्ध्या कालों में, भोजन के पश्चात्, रात्रि में, तैलाभ्यंग के उपरान्त तथा युद्धकाल में मुण्डन या क्षौर कर्म नहीं कराना चाहिये॥ ७-८॥

नित्य के क्षौरकर्म में अन्य विधि-निषेध

नोत्कटे भूषिते नैव न याने नवमेऽह्नि च।
क्षौरकर्म महीशानां पञ्चमे पञ्चमेऽहनि॥ ९॥
कर्त्तव्यं क्षौरनक्षत्रे ह्यस्यवास्योदयेऽष्टदम्।
नृपविप्राज्ञया यज्ञे मरणे बन्दिमोक्षणे॥ १०॥
उद्वाहेऽखिलवारर्क्षतिथिषु क्षौरमिष्टदम्।
नित्ये क्षौरकर्मणि च प्राचीनानां मतमिदम्॥ ११॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां चौलाध्यायः द्वाविंशोऽध्यायः॥ २२॥

१. उकड़ूँ बैठकर अथवा ऊटपटाँग ढंग से खड़े-बैठने में, वस्त्राभूषणों से सज-धजकर, वाहन पर बैठकर तथा एक क्षौरकर्म के बाद पुनः दूसरे क्षौरकर्म को उसके नवें दिन नहीं कराना चाहिये। अर्थात् ये स्थितियाँ क्षौरकर्म में वर्जित हैं।

२. राजा लोगों को प्रति पाँचवें दिन क्षौर कराना शुभ होता है।

३. अन्य लोगों के लिये शुभ नक्षत्रादि में अपना क्षौर कर्म कराना अभीष्ट होता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

४. अपवाद—राजा की आज्ञा से, विद्वान् ब्राह्मण की आज्ञा से, यज्ञकार्य या धार्मिक कृत्य के अवसर पर, मृत्यु हो जाने पर, मंगल कार्य के अवसर पर तथा विवाहादि के समय किसी भी तिथि-वार-नक्षत्र में क्षौरकर्म कराया जा सकता है। उस समय किसी मुहूर्त की आवश्यकता नहीं है॥ ९-११॥

विमर्श—इस प्रकार क्षौरकर्म दो प्रकार का होता है, एक तो जन्म के पश्चात् प्रथम बार का क्षौरकर्म होता है। उसे चूडाकर्म कहते हैं। दूसरा जीवन में शरीर-शुद्धि के लिये समय-समय पर कराया गया क्षौरकर्म होता है।

चूडा का अर्थ है बालों का वह गुच्छा जिसे शिर पर धारण किया जाता है। इसे शिखा या चोटी भी कहते हैं, अतः चूडाकर्म का अर्थ है बालक के जीवन में प्रथम बार मुण्डन कराकर मुण्डित सिर पर चोटी रख लेना। चूडा से ही चूला या चौल बन गया है। व्याकरण के नियम 'डस्यलः' के अनुसार 'ड' के स्थान पर 'ल' हो गया है। बिना शिखा-सूत्र के किया गया कोई भी नित्य, नैमित्तिक तथा काम्य कर्म सफल नहीं होता है।

कन्याओं का मुण्डन—आश्वलायनगृह्यसूत्र (१।१७।१८) के अनुसार कन्याओं का भी चूडाकरण होना चाहिये। याज्ञवल्क्य के मतानुसार कन्याओं के चूडादि संस्कार पौराणिक मन्त्रों से करना चाहिये, वैदिक मन्त्रों से नहीं करना चाहिये। वीर मित्रोदय के रचयिता श्रीमित्रमिश्र ने लिखा है कि कन्याओं का भी चौलकर्म होना चाहिये तथा उसमें शिखा रखें, अथवा पूरा मुण्डन करें अथवा अमुण्ड न रखें—यह सब कुलपरम्परानुसार करना चाहिये—

'कुमारी चौलेऽपि यथा कुलधर्ममित्यनुवर्त्तते।
ततश्च सर्वमुण्डनं शिखाधारणं अमुण्डनमेव वेति सिध्यति॥'

परन्तु किसी भी प्रकार से मुण्डन का कार्य दस वर्ष की आयु के पूर्व ही करा लेना चाहिये; क्योंकि बृहद् दैवज्ञ रंजन में वृद्ध नारद के वचन के अनुसार तीन वर्ष के भीतर चूडाकर्म श्रेष्ठ, पाँचवें या सातवें वर्ष में मध्यम तथा गर्भ से गिनकर नौवें तथा ग्यारहवें वर्ष में भी यदि किया जाय तो अधम होता है—

'जन्मतस्तु तृतीयेऽब्दे श्रेष्ठमिच्छन्ति पण्डिताः।
पञ्चमे सप्तमे वापि जन्मतो मध्यमं भवेत्॥
अधमं गर्भतः स्यात् तन्नवमेकादशेऽपि वा।
अतोर्ध्वं चूडाकरणे धर्मतः पतितो भवेत्॥'

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के बाईसवें चौलाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ २२॥

●

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रयोविंशोऽध्यायः

मङ्गलाङ्कुरार्पणाध्यायः

माङ्गलिक अङ्कुरार्पण का समय (जवारे बोने का समय)

कर्त्तव्यं मङ्गलेष्वादौ मङ्गलेष्वङ्कुरार्पणम्।
नवमे सप्तमे मासि पञ्चमे दिवसेऽपि वा॥ १॥
तृतीये बीजनक्षत्रे शुभवारे शुभोदये।
अङ्कुरार्थे च बीजोप्तिः कर्तव्यं शुभमिच्छता॥ २॥

माङ्गलिक कार्यों के प्रारम्भ में अंकुरार्पण की तैयारी करना चाहिये। यह कार्य उस मांगलिक कार्य के नौवें, सातवें या पाँचवें मास पूर्व में अथवा ९-७-५-३ दिन पूर्व बीजवपन के नक्षत्रों में शुभलग्न में अङ्कुर उगाने के लिये अपना कल्याण चाहनेवालों को करना चाहिये॥ १-२॥

अङ्कुर सिद्ध करने की विधि (जवारे बोना)

सम्यग्गृहाण्यलंकृत्य वितानध्वजतोरणैः।
आशिषो वाचनं कार्यं पुण्यं पुण्याङ्गनादिभिः॥ ३॥
महावादित्रनृत्याद्यैर्गताः प्रागुत्तरां दिशम्।
तत्र मृत्सिकतां श्लक्ष्णां गृहीत्वा पुनरागतः॥ ४॥
मृण्मयेष्वथवा वैणवेषु पात्रेषु पूरयेत्।
अनेकबीजसंयुक्तं तोयं पुष्पोपशोभितम्॥ ५॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां मङ्गलाङ्कुरार्पणं नाम त्रयोविंशतितमः अध्यायः॥ २३॥

उक्त समय में घरों को भलीभाँति वितान,ध्वज, तोरणादिसे अलंकृतकर ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचनादि तथा सौभाग्यवती स्त्रियों से मंगल-गायन कराके महावादित्र, (ढोल, नगाड़ा, ढोल, ढमाका) नृत्य आदि के साथ ग्राम से उत्तर दिशा में मिट्टी लेने के लिये जाय। वहाँ से बालुकायुक्त सूक्ष्म मृदु मृत्तिका लाकर घर में ईशान कोण में बाँस की टोकरी अथवा पकी मिट्टी के पात्रों में अनेक प्रकार के बीज (गेहूँ-जौ-बाजरा) को बोकर उन पर जल सींचना चाहिये तथा पुष्पादि से शोभित करना चाहिये॥ ३-५॥

विमर्श—अंकुरार्पण को 'जवारे बोना' कहते हैं। ये पुराण कथा एवं यज्ञादि के अवसर पर भी बोये जाते हैं।

इस प्रकार नारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के तेईसवें मङ्गलाङ्कुरार्पणाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ २३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चतुर्विंशोऽध्यायः

उपनयनाध्यायः

उपनयन योग्य वय

आधानादष्टमे वर्षे जन्मतो वाग्रजन्मनाम्।
राज्ञामेकादशे मौञ्जीबन्धनं द्वादशे विशाम्॥ १॥

गर्भाधान से आठवें वर्ष में अथवा जन्म से आठवें वर्ष में ब्राह्मण बालकों का यज्ञोपवीत तथा मौंजी बन्धन करना चाहिये। क्षत्रियों का यज्ञोपवीत ग्यारहवें वर्ष में तथा वैश्यों का बारहवें वर्ष में करना चाहिये॥ १॥

ब्राह्मणों के लिये पाँचवाँ वर्ष विशेष निपुणतादायक

आजनेः पञ्चमे वर्षे वेदशास्त्रविशारदः।
उपनीतो यतः श्रीमान् कार्यं तत्रोपनायनम्॥ २॥

यदि कोई ब्राह्मण अपने बालक को वेदशास्त्र में निपुण होने की इच्छा करता है तो उसका यज्ञोपवीत पाँच वर्ष की वयस में कराना उत्तम रहता है॥ २॥

निर्बल गुरु की शान्ति का कथन

बालस्य बलहीनोऽपि शान्त्या जीवो बलप्रदः।
यथोक्तावसरे कार्यमनुक्ते नोपायनम्॥ ३॥

यदि किसी ब्राह्मण बालक का गुरु गोचर में अनुकूल न हो तो भी उसकी शान्ति करके उसका यज्ञोपवीत ठीक समय पर करा देना चाहिये। उचित वयस (उम्र) का उल्लंघन नहीं करना चाहिये॥ ३॥

वेदाधिपों का कथन

दृश्यमाने गुरौ शुक्रे दिनेशे चोत्तरायणे।
वेदानामधिपा जीवशुक्रभौमबुधाः क्रमात्॥ ४॥

१. जब गुरु तथा शुक्र उदित हों तथा सूर्य उत्तरायण में हों तथा बालक का वेदाधिप बलवान् हो तब यज्ञोपवीत करायें।

२. गुरु-शुक्र-मंगल-बुध—ये ग्रह क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद के स्वामी होते हैं, अतः इन ग्रहों का वार अपने-अपने वेदानुसार यज्ञोपवीत में किया जा सकता है॥ ४॥

विमर्श—सामान्यतः मंगलवार शुभकर्मों में त्याज्य है परन्तु सामवेद का अधिपति मंगल है, अतः सामवेदियों के बालक का यज्ञोपवीत मंगलवार को हो जाता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यज्ञोपवीत के लिये द्विज वर्णों के अनुकूल ऋतुएँ

शरद्ग्रीष्मवसन्तेषु व्युत्क्रमात् तु द्विजन्मनाम्।
मुख्यं साधारणं तेषां तपोमासादि पञ्चसु॥ ५॥

१. शरद्, ग्रीष्म एवं वसन्त ऋतुओं में व्युत्क्रम से ब्राह्मणादि का यज्ञोपवीत कराना अभीष्ट होता है। अर्थात् वसन्त ऋतु में ब्राह्मण का, ग्रीष्म ऋतु में क्षत्रिय का तथा शरद् ऋतु में वैश्यों का यज्ञोपवीत कराना चाहिये। ये ऋतुएँ इनके लिये मुख्य होती हैं। सामान्यतः सभी द्विजातियों को माघादि पाँच मासों में यज्ञोपवीत करा लेना चाहिये॥ ५॥

माघादि पञ्चमासों का उपनयन में फल

स्वकुलाचारधर्मज्ञो माघमासे तु फाल्गुने।
विधिज्ञो ह्यर्थवांश्चैत्रे वेदवेदाङ्गपारगः॥ ६॥
वैशाखे धनवान्वेदशास्त्रविद्याविशारदः।
उपनीतो बलाढ्यश्च ज्येष्ठे विधिविदाम्वरः॥ ७॥

१. अपने कुलाचार के अनुसार माघ में यज्ञोपवीत कराये तो धर्मज्ञ होता है। २. फाल्गुन में धर्मशास्त्र की विधियों का ज्ञाता होता है। ३. चैत्र मास वेदवेदांग में पारंगत करनेवाला है। ४. वैशाख का यज्ञोपवीत धनवान् बनाता है। ५. ज्येष्ठ में किया हुआ यज्ञोपवीत बलशाली तथा विधान का जानकार बनाता है॥ ६-७॥

यज्ञोपवीत में शुभ एवं त्याज्य तिथियाँ

शुक्लपक्षे द्वितीया च तृतीया पञ्चमी तथा।
त्रयोदशी च दशमी सप्तमी व्रतबन्धने॥ ८॥
श्रेष्ठा त्वेकादशी षष्ठी द्वादश्येतास्तु मध्यमाः।
एका चतुर्थी सन्त्याज्या कृष्णपक्षे च मध्यमाः॥ ९॥
आपञ्चम्यांस्तु तिथयः परास्तु रतिनिन्दिताः।

शुक्लपक्ष में द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी तथा त्रयोदशी व्रतबन्ध (यज्ञोपवीत) में शुभ होती हैं। एकादशी, द्वादशी तथा षष्ठी तिथियाँ यज्ञोपवीत में मध्यम होती हैं। कृष्णपक्ष में प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया तथा पंचमी मध्यम हैं किन्तु इनमें अकेली चतुर्थी त्याज्य है। कृष्णपक्ष में पंचमी के उपरान्त की सभी तिथियाँ अतिनिन्दित होती हैं॥ ८-९½॥

यज्ञोपवीत में शुभ नक्षत्र

श्रेष्ठान्यर्क त्रयान्त्येज्य रुद्रादित्युत्तराणि च॥ १०॥
विष्णुत्रयाश्वमित्राज योनिभान्युपनायने।

हस्त, चित्रा, स्वाति, रेवती, पुष्य, आर्द्रा, पुनर्वसु तीनों उत्तरा (उ०फा०, उ०षा०, उ०भा०), श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, अनुराधा, अज (पूर्वाभाद्रपदा)—ये नक्षत्र उपनयन में श्रेष्ठ कहे गये हैं॥ १०-१०½॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जन्म-नक्षत्र से कर्मसंघातादि नक्षत्रों की त्याज्यता

जन्मभाद् दशमं कर्म सङ्घातर्क्षं च षोडशम्॥ ११॥
अष्टादशं सामुदायं त्रयोविंशं विनाशनम्।
मानसं पञ्चविंशर्क्षे नाचरेच्छुभमेव तु॥ १२॥

जन्म नक्षत्र से दसवाँ नक्षत्र कर्म नक्षत्र, सोलहवाँ संघात नक्षत्र, अठारहवाँ सामुदायिक नक्षत्र, तेईसवाँ वैनाशिक नक्षत्र तथा पच्चीसवाँ नक्षत्र मानस नक्षत्र कहलाता है, इस नक्षत्रों को शुभ कार्य में त्यागना चाहिये॥ ११-१२॥

विमर्श—इन नक्षत्रों को नाड़ी नक्षत्र भी कहते हैं, जन्म नक्षत्र भी त्याज्य है।

जन्म नक्षत्रों के अनुसार शुभकर्म में त्याज्य नाड़ी नक्षत्रों का चक्र

क्रमांक	१ जन्म नक्षत्र (नाड़ी)	२ कर्म नक्षत्र (नाड़ी)	३ संघात नक्षत्र (नाड़ी)	४ सामुदायिक नक्षत्र (नाड़ी)	५ वैनाशिक नक्षत्र (नाड़ी)	६ मानस नक्षत्र (नाड़ी)
१	अश्विनी	मघा	विशाखा	ज्येष्ठा	धनिष्ठा	पूर्वाभाद्र
२	भरणी	पू०फा०	अनुराधा	मूल	शतभिषा	उ०भा०
३	कृत्तिका	उ०फा०	ज्येष्ठा	पू०षा०	पू०भा०	रेवती
४	रोहिणी	हस्त	मूल	उ०षा०	उ०भा०	अश्विनी
५	मृगशिरा	चित्रा	पूर्वाषाढ़ा	श्रवण	रेवती	भरणी
६	आर्द्रा	स्वाति	उ०षा०	धनिष्ठा	अश्विनी	कृत्तिका
७	पुनर्वसु	विशाखा	श्रवण	शतभिषा	भरणी	रोहिणी
८	पुष्य	अनुराधा	धनिष्ठा	पू०भा०	कृत्तिका	मृगशिरा
९	आश्लेषा	ज्येष्ठा	शतभिषा	उ०भा०	रोहिणी	आर्द्रा
१०	मघा	मूल	पू०भा०	रेवती	मृगशिरा	पुनर्वसु
११	पूर्वाफाल्गुनी	पू०षा०	उ०भा०	अश्विनी	आर्द्रा	पुष्य
१२	उत्तराफाल्गुनी	उ०षा०	रेवती	भरणी	पुनर्वसु	श्लेषा
१३	हस्त	श्रवण	अश्विनी	कृत्तिका	पुष्य	मघा
१४	चित्रा	धनिष्ठा	भरणी	रोहिणी	श्लेषा	पू०फा०
१५	स्वाति	शतभिषा	कृत्तिका	मृगशिरा	मघा	उ०फा०
१६	विशाखा	पू०भा०	रोहिणी	आर्द्रा	पू०फा०	हस्त
१७	अनुराधा	उ०भा०	मृगशिरा	पुनर्वसु	उ०फा०	चित्रा
१८	ज्येष्ठा	रेवती	आर्द्रा	पुष्य	हस्त	स्वाति
१९	मूल	अश्विनी	पुनर्वसु	श्लेषा	चित्रा	विशाखा
२०	पूर्वाषाढ़ा	भरणी	पुष्य	मघा	स्वाति	अनुराधा
२१	उत्तराषाढ़ा	कृत्तिका	श्लेषा	पू०फा०	विशाखा	ज्येष्ठा
२२	श्रवण	रोहिणी	मघा	उ०फा०	अनुराधा	मूल
२३	धनिष्ठा	मृगशिरा	पू०फा०	हस्त	ज्येष्ठा	पू०षा०
२४	शतभिषा	आर्द्रा	उ०फा०	चित्रा	मूल	उ०षा०
२५	पूर्वा भाद्रपद	पुनर्वसु	हस्त	स्वाति	पू०षा०	श्रवण
२६	उत्तराभाद्रपद	पुष्य	चित्रा	विशाखा	उ०षा०	धनिष्ठा
२७	रेवती	श्लेषा	स्वाति	अनुराधा	श्रवण	शतभिषा

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यज्ञोपवीत में प्रशस्त वार

आचार्यसौम्यकाव्यानां वाराः शस्ताः शशीनयोः।
वारौ तौ मध्यमफलदौ इतरौ निन्दितौ व्रते॥ १३॥

यज्ञोपवीत में बुधवार, गुरुवार तथा शुक्रवार शुभ होते हैं। रविवार तथा सोमवार मध्यम होते हैं तथा अन्य वार निन्दित हैं॥ १३॥

विमर्श—सामवेद का स्वामी मंगल होने से सामवेदियों के उपनयन में मंगलवार भी प्रशस्त होता है।

दैव-मानुष-पितृकर्मों के लिये दिन के तीन भाग

त्रिधा विभज्य दिवसं तत्रादौ कर्मदैविकम्।
द्वितीये मानुषं कार्यं तृतीयांशे च पैतृकम्॥ १४॥

दिन के तीन भाग करे। प्रथम भाग देव कार्यों के लिये, द्वितीय (मध्य भाग) मानुष कार्य हेतु तथा तृतीय (अन्तिम) भाग में पितृकर्म करे॥ १४॥

शाखेश ग्रह के नीच शत्रुगत होने का फल

स्वनीचगे तदंशे वा स्वारिभे वा तदंशके।
गुरौ भृगौ च शाखेशे कुलशीलविवर्जितः॥ १५॥
स्वाधिशत्रुगृहस्थे वा तदंशस्थेऽथवा व्रती।
शाखेशे वा गुरौ शुक्रे महाघातकृद् भवेत्॥ १६॥

पूर्व में जो चारों वेदों की शाखाओं के अधिपतिग्रह कहे हैं, अपनी-अपनी वेद, शाखानुसार यदि वह वेदाधिप अपनी नीचराशि अथवा नीचनवांश में हो अथवा शत्रुराशि या शत्रु नवांश का हो और विशेषकर यदि गुरु एवं शुक्र नीच या शत्रु स्थिति में हैं तो ऐसी स्थिति में उपनयन कराने से वह बालक अपने कुल के आचरण से रहित बनता है॥ १५॥

यदि शाखेश गुरु या शुक्र हो और वह यदि अपने अधिशत्रु ग्रह की राशि में अथवा अधिशत्रु के नवांश में है तो बालक महाघातक होता है॥ १६॥

वेदाधिपतियों के उच्चादि स्थिति का सुफल

स्वोच्चसंस्थे तदंशे वा स्वराशौ राशिगे गणे।
शाखेशे वा गुरौ शुक्रे केन्द्रगे वा त्रिकोणगे॥ १७॥
अतीवबलवांश्चैव वेदवेदाङ्गपारगः।
परमोच्चगते जीवे शाखेशे वाथवा सिते॥ १८॥
व्रतीशिशुर्धनाढ्यश्च वेदशास्त्रविशारदः।
मित्रराशिगते जीवे तदंशे वा स्वराशिगे॥ १९॥
शुक्रे वाचार्यसंयुक्ते तदा तत्र व्रतीशिशुः।
स्वस्वमित्रगृहस्थे वा तस्योच्चस्थे तदंशके॥ २०॥
गुरौ भृगौ वा शाखेशे विद्याधनसमन्वितः॥ २१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. यदि वेदाधिपति (शाखेश) अपनी उच्चराशि अथवा उच्च नवांश में अथवा स्वराशि में अथवा स्वनवांश में हो तथा गुरु-शुक्र की भी यदि यही स्थिति हो अथवा शाखेश या गुरु-शुक्र उपनयन की लग्न से केन्द्र अथवा त्रिकोण में बैठे हों तो ऐसी स्थिति में बालक का उपनयन-संस्कार कराने से जातक अत्यन्त बलवान् तथा वेद-वेदांग में पारंगत होता है।

२. यदि शाखेश अथवा गुरु-शुक्र अपने परमोच्चांशों पर हों तो इस योग में उपनीत बालक धनाढ्य तथा वेदपाठी होता है।

३. यदि शाखेश मित्र राशिगत हो या मित्र नवांशगत हो तो भी बालक धनधान्य से संयुक्त होता है॥ १७-२१॥

उपनयन में दुर्लभ योग

शाखाधिपतिवारश्च शाखाधिपबलं शिशोः।
शाखाधिपतिलग्नञ्च दुर्लभं त्रितयं व्रते॥ २२॥

१. शाखाधिपतिग्रह का वार, २. शाखाधिपतिग्रह का बल तथा शाखाधिपति की राशि का लग्न ये तीनों संयोग किसी बालक के यज्ञोपवीत में दुर्लभ हैं अर्थात् इनका प्राप्त होना अति उत्तम होता है॥ २२॥

उपनयन में चन्द्रमा का फल

तस्माच्छुभांशगे चन्द्रे व्रती विद्याविशारदः।
पापेऽष्टगे स्वांशगे वा दरिद्रो नित्यदुःखितः॥ २३॥
श्रवणादितिनक्षत्रे कर्क्यंशस्थे निशाकरे।
सदाव्रती वेदशास्त्रधनधान्यसमृद्धिमान्॥ २४॥

१. यदि चन्द्रमा शुभ राशिगत तथा शुभ नवांश दोनों में हो तो इस योग में उपनयन कराने से बालक विद्या में पारंगत होता है।

२. यदि चन्द्रमा या पाप ग्रह उपनयन लग्न से आठवें हों अथवा चन्द्रमा पाप ग्रह के नवांश में हो अथवा चन्द्र पाप ग्रह के साथ हो तो उपनीत बालक दरिद्र तथा नित्य दुःखी रहता है।

३. यदि चन्द्रमा पुनर्वसु या श्रवण नक्षत्र में हो अथवा कर्क के नवांश में हो तो इस योग में उपनयन कराने पर बालक वेदशास्त्रों का ज्ञाता तथा धनधान्य की समृद्धि से युक्त होता है॥ २३-२४॥

उपनयन में लग्नशुद्धि

शुभलग्ने शुभांशे च नैधने शुद्धिसंयुते।
लग्ने त्वनैधने सौम्यैः संयुक्ते वा निरीक्षिते॥ २५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दृष्टैर्जीवार्कचन्द्राद्यैः पञ्चभिर्बलिभिर्ग्रहैः।
स्थानादिबलसम्पूर्णैश्चतुर्भिर्वा समन्वितैः॥ २६॥
ईक्षते वा चैकविंशन्महादोषविवर्जिते।

शुभ लग्न तथा शुभ नवांश में जब उपनयन लग्न से आठवाँ स्थान शुभ ग्रह से युक्त तथा पाप ग्रह से रहित हो अथवा उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो; गुरु, सूर्य, चन्द्र आदि से अथवा पंचमादि शुभ स्थानों में चार बली ग्रह बैठे हों अथवा उनकी दृष्टि हो, लग्न के समय इक्कीस महादोष (आगे विवाह-प्रकरण में वर्णित) न हों, तब उपनयन कराना शुभ फलदायक होता है॥ २५-२६$\frac{1}{2}$॥

शुभ राशिलग्न तथा शुभनवांश

राशयः सकलाः श्रेष्ठाः शुभग्रहयुतेक्षिताः॥ २७॥
शुभा नवांशाश्च ग्राह्यास्ते शुभराशयः।
पापग्रहस्य लग्नांशः शुभेक्षितयुतोऽपि वा॥ २८॥
तस्माद् गोमिथुनान्त्याश्च तुलाकन्यांशकाः शुभाः।
एवं विधे लग्नगते नवांशे व्रतमीरितम्॥ २९॥

१. यदि शुभग्रह से युत या वीक्षित हो तो मेषादि बारहों राशियों में से किसी भी राशि का लग्न उपनयन में श्रेष्ठ होता है। २. यदि किसी राशि में शुभ ग्रह का नवांश है तो वह राशि भी व्रतबन्ध की लग्न के लिये श्रेष्ठ होती है। ३. यदि पाप ग्रह की लग्न का नवांश शुभ राशि में हो परन्तु वह शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो वह नवांश भी शुभ होता है।

नवांशों में वृषभ, मिथुन, मीन, तुला तथा कन्या के नवांश शुभ होते हैं। ऐसी राशियों एवं नवांशों में व्रतबन्ध कराना शुभ होता है॥ २७-२९॥

उपनयन लग्न में अनुकूल ग्रहस्थिति

त्रिषडायगतैः पापैः षडष्टान्त्यविवर्जितैः।
शुभैः षष्ठाष्टलग्नान्त्यवर्जितेन हिमांशुना॥ ३०॥
स्वोच्चसंस्थोऽपि शीतांशुर्व्रतिनो यदि लग्नगः।
तं करोति शिशुं निःस्वं सततं क्षयरोगिणम्॥ ३१॥

व्रतबन्ध की लग्न से ३। ६। ११ स्थान में पाप ग्रह बैठे हों, शुभ ग्रह ६। ८। १२ भावों में न हों तथा चन्द्रमा लग्न तथा ६। ८ भावों में नहीं होना चाहिये॥ ३०॥

यदि चन्द्रमा भले ही उच्च राशिगत हो परन्तु यदि वह यज्ञोपवीत की लग्न में बैठा है तो वह उपनीत वटु को निर्धन, दरिद्री तथा क्षय रोगी बनाता है॥ ३१॥

उपनयन लग्न की विशिष्ट ग्रहस्थिति के साथ उत्पातों का फल

स्फूर्जितं केन्द्रगे भानौ व्रतिनो वंशनाशनम्।
कूजितं केन्द्रगे भौमे शिष्याचार्यविनाशनम्॥ ३२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

करोति रुदितं केन्द्रसंस्थे मन्देऽतुलान् गदान्।
लग्नात्केन्द्रगते राहौ रन्ध्रे मातृविनाशनम्॥ ३३॥
उग्रकेन्द्रगते केतौ तातवित्तविनाशनम्।
पञ्चदोषैर्युतं लग्नं शुभदं नोपनायने॥ ३४॥

१. यदि उपनयन लग्न से केन्द्र में सूर्य बैठा हो तथा उस समय यदि स्फूर्जित (मेघगर्जना) हो तो उपनीत वटु के वंश का नाश होता है।

२. यदि उपनयन लग्न से केन्द्र में मंगल बैठा हो तथा उसी समय पक्षियों का कूजन हो तो गुरु तथा शिष्य दोनों का नाश होता है।

३. यदि उपनयन लग्न से केन्द्र में शनि बैठा हो तो ऐसे में यदि रुदन का शब्द सुनायी पड़े तो वटु के लिये अत्यन्त रोगकारक होता है।

४. यदि व्रतबन्ध की लग्न से केन्द्र में राहु बैठा हो अथवा अष्टम भाव में बैठा हो तो माता का विनाश करता है।

५. यदि अष्टम भाव अथवा केन्द्र में केतु हो तो पिता एवं धन का नाशक होता है।

अतः इन पाँच दोषों से युक्त लग्न को बालक के जनेऊ संस्कार में वर्जित करना चाहिये॥ ३२-३४॥

गलग्रहसंज्ञक तिथियों की वर्जना

विना वसन्तऋतुना कृष्णपक्षे गलग्रहे।
अनध्यायोपनीतश्च पुनः संस्कारमर्हति॥ ३५॥
त्रयोदश्यादि चत्वारि सप्तम्यादि दिनत्रयम्।
चतुर्थी चैकतः प्रोक्ता ह्यष्टावेते गलग्रहाः॥ ३६॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायामुपनयनाध्यायश्चतुर्विंशतितमः॥ २४॥

१. यदि वसन्त ऋतु को छोड़कर (ग्रीष्म अथवा शरद् में) गलग्रह तिथि में उपनयन-संस्कार हो जाय तो उसका पुनः उपनयन कराना चाहिये; क्योंकि ये अनध्याय तिथियाँ होती हैं।

२. कृष्णपक्ष में चतुर्थी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावास्या तथा शुक्ल प्रतिपदा ये आठ गलग्रह तिथियाँ हैं॥ ३५-३६॥

विमर्श—गलग्रह का अर्थ है गले (कण्ठ) को जकड़नेवाली वस्तु। अतः गलग्रह तिथियों में यदि भूल से यज्ञोपवीत हो जाय तो वटुक का कण्ठ जकड़ा रहने से वेद-पाठ में समर्थ नहीं होता है, इसलिये इनका निषेध है।

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के चौबीसवें उपनयनाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ २४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पञ्चविंशोऽध्यायः

छुरिकाबन्धनाध्यायः

छुरिकाबन्धन में शुभमासादि

क्षुरिकाबन्धनं वक्ष्ये नृपाणां प्राक्करग्रहात्।
विवाहोक्तेषु मासेषु शुक्लपक्षेऽप्यनस्तगे॥ १॥
शुक्रे जीवे च भूपुत्रे चन्द्रताराबलान्विते।
मौञ्जीबन्धर्क्षतिथिषु कुजविवर्जितवासरे॥ २॥

राजाओं (क्षत्रियों) को विवाह के पूर्व छुरी (कटार या तलवार) बाँधने के लिये विवाह में कथित मास, शुक्लपक्ष तथा गुरु-शुक्र अस्त न हों—ऐसा समय चयन करना चाहिये। मंगल को छोड़कर शेष सभी वार शुभ हैं। चन्द्रबल तथा ताराबल ग्रहण करके जो मौञ्जीबन्धन (यज्ञोपवीत) में तिथि नक्षत्र कहे गये हैं। उनमें छुरिकाबन्धन शुभ होता है॥ १-२॥

छुरिकाबन्धन में लग्नशुद्धि

तेषां लग्नोदये कर्त्तुरष्टमोदयविवर्जिते।
शुद्धेऽष्टमे तिथौ लग्नात् षडष्टान्त्यविवर्जिते॥ ३॥
धनत्रिकोणकेन्द्रस्थैः शुभैस्त्र्यायारिगैः परैः।
छुरिकाबन्धनं कार्यमर्चयित्वामरान्पितॄन्॥ ४॥

शुभग्रहों की राशि के लग्न (वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, तुला, धनु तथा मीन) में गोचर में छुरी बाँधनेवाले की जन्मराशि से कोई ग्रह आठवाँ नहीं होना चाहिये। तात्कालिक लग्न से चन्द्रमा आठवें न हो तथा छठे एवं बारहवें भी न हो। पापग्रह भी अष्टम में वर्जित है। शुभ ग्रह २। ५। ९। १। ४। ७। १० में हों तथा पापग्रह ३। ६। ११ में होना चाहिये। ऐसी ग्रहस्थिति में देवताओं तथा पितरों की पूजा करके छुरिकाबन्धन करना चाहिये॥ ३-४॥

छुरिकाबन्धन विधि

अर्चयेच्छुरिकां सम्यग्देवतानाञ्च सन्निधौ।
ततः सुलग्ने बध्नीयात् कट्यां लक्षणसंयुताम्॥ ५॥

देवमूर्तियों एवं पितरों के सम्मुख खड्ग का पूजन करे, तत्पश्चात् शुभ लक्षणों से युक्त कटारी को शुभलग्न में कमर में बाँधना चाहिये॥ ५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ब्रह्मोक्त खड्गलक्षण

तस्यास्तु लक्षणं वक्ष्ये यदुक्तं ब्रह्मणा पुरा।
सम्मितं छुरिकायामविस्तारेणैव ताडयेत्॥ ६॥
भाजितं गजसंख्यैश्च ह्यंगुली परिकल्पयेत्।
आयामार्द्धाग्रविस्तारप्रमाणेनैव छेदयेत्॥ ७॥
तच्छेदखण्डान्यायाः स्युर्ध्वजाये रिपुनाशनम्।
धूम्राये मरणं सिंहे जयशुनि च निरोगिता॥ ८॥
धनलाभो वृषेऽन्त्यन्तं दुःखी भवति गर्दभे।
गजायेऽत्यन्तसम्प्रीतिर्ध्वाङ्क्षे वित्तनाशनम्॥ ९॥

पूर्व में ब्रह्माजी ने खड्ग के लक्षण जानने की जो विधि कही है, उसे बताता हूँ—

खड्ग (छुरिका = कटारी) की जितनी लम्बाई हो, उतनी ही लम्बाई की कोई वस्तु (रस्सी या पतली शलाका) लेकर उस वस्तु की लम्बाई को आठ से भाग दें। तत्पश्चात् उस वस्तु के उतने हिस्से को जो कि अन्तिम बार में आठ का भाग देने से बच जाता है। वहाँ एक चिह्न लगाकर उस चिह्नित स्थान पर उस लम्बी वस्तु को उसी नवीन छुरिका की धार के उस स्थान से काटें, जहाँ पर वह छुरिका की लम्बाई का ठीक अर्ध (मध्य) भाग हो, अब जो आठ का भाग देने पर छोटा टुकड़ा बचे (जो कि अंगुलात्मक ८ अंगुल से कम होगा) उसे अंगुलियों से नापें। १. यदि वह टुकड़ा एक अंगुल हो तो ध्वज आय होता है, जिसका फल शत्रुनाशक है। २. यदि दो अंगुल हो तो धूम्र आय होता है, यह मृत्युकारक होता है। ३. यदि तीन अंगुल हो तो सिंह आय जयकारक होता है। ४. यदि चार अंगुल हो तो चौथा श्वान नामक आय होन पर अतिरोगिता होती है। ५. पाँच अंगुल वृष आय होती है, जो कि धनलाभकारक है। ६. छह अंगुल शेष रहने पर गर्दभ आय दुःखकारक है। ७. सात अंगुल पर गज आय लोकप्रियता देती है। ८. आठ अंगुल पूरा शेष बचने पर ध्वाङ्क्ष आय धननाशक होती है॥ ६-९॥

खड्गलक्षण जानने की दूसरी विधि

खड्गपुत्रिकयोर्मानं गणयेत् स्वाङ्गुलेन तु।
मानाङ्गुले तु पर्यायानेकादशमितांस्त्यजेत्॥ १०॥
शेषाणामङ्गुलानञ्च फलानि स्युर्यथाक्रमात्।
पुत्रलाभः शत्रुवृद्धिः स्त्रीलाभो गमनं शुभम्॥ ११॥
अर्थहानिश्चार्थवृद्धिः प्रीतिः सिद्धिर्जयः स्तुतिः।
शुभाशुभन्तु खड्गस्य वर्णितं पूर्वसूरिभिः॥ १२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कटारी को अपने अंगुलों से नापें जो नाप हो, वह यदि ग्यारह अंगुलों से अधिक हो तो उस नाप (माप) में ग्यारह अंगुल कम कर दें। फिर यदि एक अंगुल शेष बचे, तो पुत्रलाभ, दो अंगुल शेष बचे तो शत्रुवृद्धिकारक, तीन अंगुल शेष बचे तो स्त्रीलाभ, चार शेष बचने पर गमनकारक, पाँच शेष रहे तो शुभ, छह शेष बचने पर द्रव्यहानि, सात शेष बचने पर धनवृद्धिकारक, आठ शेष बचने पर प्रीतिकारक, नौ शेष बचने पर सिद्धिदायक, दस शेष बचने पर विजयकारक, ग्यारह शेष बचने पर यशप्राप्ति होती है॥ १०-१२॥

विमर्श—इस मुहूर्त का उपयोग सिखों में कटारी बाँधने के लिये किया जाता है।

छुरिका या खड्ग में व्रण या भंग होने का फल

स्थितो ध्वजे वृषाये वा नष्टात् चेत्पूर्वतो व्रणम्।
सिंहे गजे मध्यभागे त्वन्तभागे श्वकाकयोः॥ १३॥
धूम्रगर्दभयोर्नैव व्रणं श्रेयोऽन्त्यभागगम्।
एतस्मिन्नेषु व्रणितां छुरिकां वा खड्गं त्यजेत्॥ १४॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां छुरिकाबन्धनाध्यायो पञ्चविंशतितमः॥ २५॥

यदि छुरिका अथवा खड्ग में पूर्वोक्त विधि से नापे गये ध्वज आय के अथवा वृष आय के पूर्वभाग में व्रण हो जाय (चिह्न बन जाय) तो, अथवा सिंह एवं गज आयों के मध्यभाग में व्रण हो किम्वा श्वान तथा काक (ध्वांक्ष) आयों के अन्त्यभाग में व्रण हो तथा धूम्र एवं गर्दभ आयों के किसी भी भाग में व्रण हो जाय, तो ऐसे खड्ग या छुरिका को अशुभ मानकर त्याग देना चाहिये॥ १३-१४॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता के पच्चीसवें छुरिकाबन्धनाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ २५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

षड्विंशोऽध्यायः

समावर्तनाध्यायः

समावर्तनहेतु कालशुद्धि

अथोत्तरायणे शुक्रजीवयोर्दृश्यमानयोः।
द्विजातीनां गुरोगेहान्निवृत्तानां यतात्मनाम्॥ १॥

जब सूर्य उत्तरायण में हों तथा गुरु एवं शुक्र का अस्त न हो, तब ऐसे समय में द्विजातियों का गुरुगृह (ऋषिगुरुकुल, कुलेज्यगेह) से ब्रह्मचर्य पालनोपरान्त स्वगृह में लौटना होता है॥ १॥

विमर्श—इस संस्कार के पश्चात् विद्यार्थी स्नातक कहलाता है। यह गुरुकुल से लौटने पर संस्कार स्नान होता है। इसे ही धर्मशास्त्रों में 'समावर्तन' (सम्यक् रूप से घर लौटना), 'स्नान' (ज्ञानगङ्गा में डुबकी लगाकर सराबोर हो जाना) तथा 'आप्लवन' (ज्ञान-सरोवर में आप्लावित हो चुकना) आदि शब्दों का प्रयोग किया है, परन्तु अपरादित्यरचित अपरार्क ग्रन्थ के अनुसार स्नान तथा समावर्तन में अन्तर है। स्नान के पश्चात् व्यक्ति स्नातक कहलाने लगता है, परन्तु यदि वह घर नहीं लौटना चाहता तथा जीवनभर नैष्ठिक ब्रह्मचारी रहना चाहता है, तो उसका केवल स्नान होगा। समावर्तन नहीं; क्योंकि समावर्तन का अर्थ तो विद्या-प्रतिष्ठान से विद्याध्ययन पूरा करके घर लौटना होता है। इस संस्कार के पश्चात् गुरुदक्षिणा दी जाती है। जब तक व्यक्ति विवाह न कर ले, तब तक वह स्नातक कहा जा सकता है, परन्तु विवाह करने के पश्चात् उनकी संज्ञा गृहस्थ होती है।

वर्तमान मैकाले की शिक्षापद्धति के कारण अब यह संस्कार समाप्तप्राय हो चुका है। यह बात दूसरी है कि किसी समय अखिल विश्व में वैदिक शिक्षा-प्रणाली ही प्रचलित थी। उसके प्रमाणस्वरूप अंग्रेजी के School तथा College शब्दों को लें, तो स्कूल शब्द संस्कृत के ऋषिकुल शब्द का अपभ्रंश है, जिसमें पालिभाषा में उसका रूप इसिकुल (इषि=ऋषि) होता है, वही फिर अंग्रेजी में School कहलाता है। इसी प्रकार 'कुलेज्यगेह' का घिसा हुआ रूप अंग्रेजी का College शब्द है। कुलेज्य का अर्थ है कुलपूज्य अथवा कुलगुरु तथा उनके गेह (घर) को 'कुलेज्यगेह' (आजकल कॉलेज) कहते हैं। अंग्रेजी का पौण्टिफ (Pontiff) शब्द पण्डित शब्द का ही अपभ्रंश है, जो पोप के लिये प्रचलित है। पोप ईसाई धर्मगुरु को कहते हैं।

समावर्तन में प्रशस्त नक्षत्रादि

चित्रोत्तरादितीज्यान्त्य हरिमैत्रेन्दुदिधातृषु।
भैष्वर्केन्द्विज्य शुक्रज्ञवारलग्नांशकेषु च॥ २॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अथवा प्रस्थानऋक्षवारलग्नांशकेष्वपि ।
प्रतिपत्पर्वरिक्तामा सप्तमीतो दिनत्रयम्॥ ३॥
हित्वान्यदिवसे कार्यं समावर्तनमण्डलम्॥ ४॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां समावर्तनाध्यायो षड्विंशः॥ २६॥

१. चित्रा, तीनों उत्तरा, पुनर्वसु, पुष्य, रेवती, श्रवण, अनुराधा, मृगशिरा तथा रोहिणी इन नक्षत्रों में; रविवार, सोमवार, बुधवार, गुरुवार तथा शुक्रवार—इन वारों में तथा इन वाराधीशों की राशियों एवं नवांशों में अथवा यात्रा के लिये विहित नक्षत्र, वार, लग्न, नवांशादि में समावर्तन-संस्कार शुभ होता है।

२. प्रतिपदा, पर्वतिथि, रिक्ता तिथियाँ, अमावस्या, सप्तमी, अष्टमी तथा दशमी—इनको त्याग देना चाहिये॥ २-४॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के छब्बीसवें समावर्तनाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ २६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सप्तविंशतितमोऽध्यायः

विवाहाध्यायः

गृहस्थाश्रम का महत्त्व तथा शुभलग्न का प्रभाव

सर्वाश्रमाणामाश्रेयो गृहस्थाश्रम उत्तमः।
यतः सोऽपि च योषायां शीलवत्यौ स्थितस्ततः॥ १॥
तस्यास्तच्छीललब्धिस्तु सुलग्नवशतः खलु।
पितामहोक्तां सम्वीक्ष्य लग्नशुद्धिं प्रवच्म्यहम्॥ २॥

गृहस्थाश्रम अन्य सभी आश्रमों का आश्रयदाता है, अतः सभी आश्रमों में श्रेष्ठ है, परन्तु उस आश्रम (गृहस्थाश्रम) की उत्तमता का मूल तो शीलवती स्त्री होती है॥ १॥

उक्त शील की प्राप्ति श्रेष्ठ लग्न के अधीन होती है। अतः श्रीब्रह्माजी द्वारा कथित लग्नशुद्धि का वर्णन करता हूँ॥ २॥

दैवज्ञ के समीप जाकर विवाह-प्रश्न पूछने की विधि

पुण्येऽह्नि लक्षणोपेतं सुखासीनं सुचेतसम्।
प्रणम्य देववत्पृच्छेद दैवज्ञं भक्तिपूर्वकम्॥ ३॥
ताम्बूलफलपुष्पाद्यैः पूर्णाञ्जलिरुपाग्रतः।
कर्त्ता निवेद्य दम्पत्योर्जन्मराशिं स जन्मभम्॥ ४॥

शुभ दिन में लक्षणोपेत ज्योतिषी के पास जो कि सुखपूर्वक सुखासन पर बैठा हो, तब स्वस्थ चित्त से उसको प्रणाम करके देवता की भाँति मानकर भक्तिपूर्वक पान, सुपारी, फल, पुष्प आदि को दोनों हाथों की अञ्जलि में पूरा भरके उसके आगे निवेदित करे तथा कर्त्ता यजमान ज्योतिषी को कन्या या वर (जिसका विवाह अभीष्ट हो) उसकी जन्मराशि तथा जन्म का नक्षत्र बतायें॥ ३-४॥

विवाह-प्रश्न लग्न का फल (वरकन्या की मृत्यु के योग)

पृच्छकस्य भवेल्लग्नादिन्दुः षष्ठाष्टकोऽपि वा।
दम्पत्योर्मरणं वाच्यं अष्टमर्क्षान्तरे यदि॥ ५॥
यदि लग्नगतश्चन्द्रस्तस्मात्सप्तमगः कुजः।
विज्ञेयं भर्तृमरणं त्वष्टमेऽब्दे न संशयः॥ ६॥

यदि प्रश्नकालीन लग्न से चन्द्रमा ६-८ भावों में से किसी में बैठा हो, तो वर एवं कन्या (जिससे सम्बन्धित प्रश्न हो) की मृत्यु होती है अथवा प्रश्नकालीन नवाँश कुण्डली में आठवें भाव में लग्न से चन्द्रमा हो तो भी यही फल होता है॥ ५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि प्रश्नलग्न में ही चन्द्रमा बैठा हो तथा उस चन्द्रमा से सप्तम भाव में मंगल बैठा हो, तो विवाह के आठवें वर्ष में निश्चय ही पति का मरण होता है ॥ ६ ॥

कन्या के मृतवत्सा एवं व्यभिचारिणी होने के योग

लग्नात्पञ्चमगः पापः शत्रुदृष्टः स्वनीचगः।
मृतपुत्रा तु सा कन्या कुलटा न तु संशयः ॥ ७ ॥

लग्न से पाँचवें स्थान में चन्द्रमा शत्रुदृष्ट अथवा नीचराशिगत हो, तो कन्या मृतवत्सा तथा कुलटा होती है ॥ ७ ॥

प्रश्नलग्न के शुभ योग

तृतीयपञ्चमसप्ताय कर्मगश्च निशाकरः।
लग्नात्करोति सम्बन्धं दम्पत्योर्गुरुवीक्षितः ॥ ८ ॥
तुलागोकर्कटे लग्ने संस्थाः शुक्रेन्दुसंयुताः।
वीक्षिताः स्त्रीग्रहा नृणां कन्यालाभो भवेत्तदा ॥ ९ ॥
शुक्रेन्दू युग्मराशीस्थौ युग्मांशकगतौ तदा।
बलिनौ पश्यतो लग्नं कन्यालाभो भवेत्तदा ॥ १० ॥
अयुग्मराशिगौ चेत्तौ शुक्रेन्दू बलिनौ तथा।
पश्यतो लग्नमेतौ चेद् वरलाभो भवेत्तदा ॥ ११ ॥
एवं स्त्रीणां भर्तृलब्धिः पुंग्रहैरवलोकिते।
कृष्णपक्षे युग्म लग्नाद्युग्मराशौ भवेद्यदि।
पापदृष्टेऽथवा रन्ध्रे न सम्बन्धो भवेत्तदा ॥ १२ ॥
पुण्यैर्निमित्तैः शकुनैः प्रश्नकाले तु मङ्गलम्।
दम्पत्योरशुभैरेतैरशुभं सर्वतो भवेत् ॥ १३ ॥

१. यदि प्रश्न लग्न से ३।५।७।१०।११ भावों में से किसी में भी चन्द्रमा हो तथा गुरु से दृष्ट हो तो विवाह कराता है।

२. यदि प्रश्न समय में तुला, वृष या कर्क लग्न हो तथा उसमें स्त्री ग्रह बैठे हों, चन्द्र तथा शुक्र की युति भी हो, तो कन्यालाभ होता है।

३. यदि शुक्र एवं चन्द्रमा समराशि में हों अथवा बली होकर समराशि के नवांशक में हों तो वर को कन्या मिलती है।

४. यदि वे चन्द्र तथा शुक्र बली होकर प्रश्नलग्न को देखते हों तथा विषम राशिगत हों तब कन्या को अच्छा वर प्राप्त होता है।

५. इसी प्रकार यदि लग्न पर पुरुष ग्रहों की दृष्टि हो तो भी कन्याओं को वर मिलता है।

६. यदि कृष्णपक्ष का चन्द्रमा समराशि पर बैठा हो अथवा पापदृष्ट हो अथवा आठवें भाव में हो तो विवाह नहीं होता है ॥ ८-१२ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि प्रश्नकाल में शुभ शकुन हों तो विवाह-प्रश्न का फल शुभ होता है। यदि विवाह प्रश्न के समय उस स्थान पर अशुभ शकुन दिखायी पड़ें तो अशुभ तथा नकारात्मक फल होता है॥ १३॥

कन्यावरणमुहूर्त

पञ्चाङ्गः शुद्धिदिवसे चन्द्रताराबलान्विते।
विवाहभस्योदये वा कन्यावरणमिष्यते॥ १४॥

जिस दिन तिथि, वार, नक्षत्र, योग तथा करण शुद्ध हों तथा चन्द्रमा एवं तारा बली हों तब विवाह के नक्षत्रों में कन्या का वरण (गोदी भरना या ओली भरना) शुभ है॥ १४॥

कन्यावरणविधि

भूषणैः पुष्पताम्बूलैः फलगन्धाक्षतादिभिः।
शुक्लाम्बरैर्गीतवाद्यैः विप्राशीर्वचनैः सह॥ १५॥
कारयेत्कृन्यका गेहे वरणं प्रीतिपूर्वकम्।
तदा कुर्यात् पिता तस्याः प्रदानं प्रीतिपूर्वकम्॥ १६॥

सुन्दर आभूषण, पुष्प, पान, फल, गन्ध, अक्षत आदि से श्वेत वस्त्रों आदि को लेकर गीत-वाद्यादि के साथ ही ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन करवाकर वर का पिता कन्या के घर पर पहुँचकर प्रीतिपूर्वक कन्या का वरण करे।

तदनन्तर उस वरण की हुई कन्या का पिता प्रीतिपूर्वक कन्या का वाग्दान (सगाई) करे॥ १५-१६॥

वाग्दानयोग्य कन्या के गुण तथा वर के गुण

कुलशीलवयोरूपवित्तविद्यायुताय च।
वराय रूपसम्पन्नां कन्यां दद्याद्यवीयसीम्॥ १७॥

१. कुल, २. शील, ३. वय, ४. रूप, ५. वित्त, ६. विद्या—इन गुणोंसे युक्त वर को उसके अनुरूप गुणोंवाली तथा वर से कम वयस वाली कन्या का वाग्दान करें॥ १७॥

वाग्दान के पूर्व कन्या द्वारा शची-पूजन

सम्पूज्य प्रार्थयित्वा तां शचीं देवीं गुणाश्रयाम्।
त्रैलोक्यसुन्दरीं दिव्यां गन्धमाल्याम्बरावृताम्॥ १८॥
सर्वलक्षणसंयुक्तां सर्वाभरणभूषिताम्।
अनर्घ्यमणिमालाभिर्भासयन्तीं दिगन्तराम्॥ १९॥
विलासिनीसहस्त्राद्यैः सेव्यमानामहर्निशम्।
एवं विधां कुमारीं तां पूजान्ते प्रार्थयेदिति॥ २०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जो अनेक गुणों की खान हैं ऐसी त्रैलोक्य सुन्दरी शचीदेवी (इन्द्राणी) जो कि दिव्य गन्ध माल्याम्बर धारण किये हैं तथा सर्वलक्षण एवं गुणसम्पन्न हैं। सभी प्रकार के आभूषणों से विभूषित हैं, जिसकी बहुमूल्य मणिमालाओं की उत्तम कान्ति से सभी दिशाएँ प्रकाशित हो रही हैं। जिनकी सहस्रों की संख्या में विलासिनी स्त्रियाँ सेवा करती हैं (या कर रही हैं), ऐसी कुमारीरूप शची का ध्यान एवं नाना प्रकार के द्रव्यों से पूजन करके अन्त में आगे लिखे मन्त्र से इन्द्राणी देवी की प्रार्थना करे॥ १८-२०॥

इन्द्राणी की प्रार्थना

देवीन्द्राणि नमस्तुभ्यं देवेन्द्रप्रियभाषिणि।
विवाहं भाग्यमारोग्यं पुत्रलाभञ्च देहि मे॥ २१॥

हे इन्द्राणी! आपका प्रणाम है, आप देवेन्द्र से प्रिय बोलनेवाली तथा उनकी प्रिया हैं। आप मेरा विवाह सम्पन्न कराके मुझे सौभाग्य तथा पुत्र प्रदान करें॥ २१॥

विमर्श—वर-वरण के लिये यदि कन्या के पिता एवं ज्येष्ठ भ्राता के अतिरिक्त कोई व्यक्ति आता है तो उसे निम्न मन्त्र कहना चाहिये—

'शुभे लग्नेऽग्निसान्निध्ये स्नातं पुण्यामरोगिणीम्।
तत्कालोपस्थितो कन्यापिता तुभ्यं प्रयच्छति॥'

यदि कन्या का पिता या ज्येष्ठ भ्राता वाग्दान (सगाई=वर-वरण) करे तो उसे निम्न श्लोकों को कहना चाहिये—

'यदित्वं पतितो न स्यात् सर्वदोषविवर्जितः।
तुभ्यं कन्यां प्रदास्यामि द्विजदेवाग्निसन्निधौ॥
तुभ्यं कन्यार्थिने वाचा कन्यादानां प्रयच्छति।
तन्निश्चयार्थं मद्दत्तं गृह्यतां साक्षतं फलम्॥'

विवाह हेतु सम-विषम वर्षों का फल

युग्मेऽब्दे जन्मतः स्त्रीणां प्रीतिदं पाणिपीडनम्।
एतत्पुंसामयुग्मेऽब्दे व्यत्यये नाशनं तयोः॥ २२॥

१. जन्म से सम वर्षों (बीसवें, बाईसवें, चौबीसवें, छब्बीसवें, अट्ठाइसवें, तीसवें) वर्ष में कन्याओं का विवाह करना शुभ होता है तथा २. जन्म से विषम वर्षों (२३-२५-२७-२९-३१-३३ आदि) में लड़कों का विवाह करना शुभ होता है। यदि इससे विपरीत हो तो अशुभ फल होता है॥ २२॥

विवाहार्थ शुभ एवं मध्यम मास

माघफाल्गुनवैशाखज्येष्ठमासाः शुभप्रदा।
मध्यमः कार्त्तिको मार्गशीर्षो वै निन्दिताः परे॥ २३॥

माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ—ये चार मास विवाह में श्रेष्ठ होते हैं। कार्तिक तथा मार्गशीर्ष ये मास मध्यम होते हैं तथा शेष मास निन्दित होते हैं (विवाह में सौर मास ग्रहण करना चाहिये)॥ २३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आर्द्रादि दश नक्षत्रों के सूर्य में विवाह का निषेध

न कदाचिद् दशर्क्षेषु भानोरार्द्राप्रवेशनात्।
विवाहं देवतानाञ्च प्रतिष्ठाञ्चोपनायनम्॥ २४॥

जब सूर्य आर्द्रा में प्रविष्ट हो तब से लेकर दस नक्षत्रों तक अर्थात् स्वाति के सूर्य तक विवाह, देव-प्रतिष्ठा तथा उपनयन (जनेऊ) नहीं करना चाहिये॥ २४॥

विवाह में गुर्वादित्य का निषेध

नास्तङ्गते सिते जीवे न तयोर्बालवृद्धयोः।
न गुरौ सिंहराशिस्थे सिंहांशकगतेऽपि वा॥ २५॥

१. जब गुरु या शुक्र अस्त हों तब विवाह न करें। २. जब तक गुरु एवं शुक्र बाल अथवा वृद्ध हो तब भी विवाह न करें। ३. जब गुरु सिंह राशि में हों तब तथा सिंह नवाँश में हो तब भी विवाह नहीं करना चाहिये॥ २५॥

गुरु-शुक्र के बालत्व एवं वृद्धत्व का कथन

पश्चात् प्रागुदितः शुक्रः पञ्च सप्तदिनं शिशुः।
अस्तकाले तु वृद्धत्वं तद् वद् देवगुरोरपि॥ २६॥

१. शुक्र जब पूर्व में उदित होता है तो पाँच दिन तक बाल रहता है किन्तु जब पश्चिम में उदित होता है तो सात दिनों तक बाल होता है। अस्तकाल से पाँच तथा सात दिन पूर्व ही शुक्र की वृद्ध संज्ञा हो जाती है।

२. इसी प्रकार बृहस्पति का उदय-अस्त से पूर्व ५-७ दिन तक बाल-वृद्धत्व मानना चाहिये॥ २६॥

देवशयन का विवाहादि में निषेध

अप्रबुद्धो हृषीकेशो यावत्तावन्न मङ्गलम्।
उत्सवे वासुदेवस्य दिवसेनान्य मङ्गलम्॥ २७॥

जब तक देवशयन रहे (आषाढ़ शुक्ल एकादशी से कार्तिक शुक्ल दशमी तक) तब तक विवाहादि कोई भी मांगलिक कार्य नहीं करना चाहिये। जब कार्तिक शुक्ल एकादशी को देवोत्थान हो जाय, तभी विवाहादि कृत्य करें॥ २७॥

जन्ममासादि का निषेध

न जन्ममासे जन्मर्क्षे न जन्मदिवसेऽपि च।
नाद्यगर्भसुतस्याथ दुहितुर्वा करग्रहम्॥ २८॥

किसी ज्येष्ठ वर या कन्या का विवाह उसके जन्म मास, जन्म नक्षत्र तथा जन्म दिवस (जन्म की चान्द्र तिथि) में नहीं करें। (यदि वे प्रथमगर्भक नहीं हैं तो कर सकते हैं)॥ २८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रिज्येष्ठ निषेध

नैवोद्वाहो ज्येष्ठपुत्रीपुत्रयोश्च परस्परम्।
ज्येष्ठमासजयोरेकं ज्येष्ठे मासे हि नान्यथा॥ २९॥

वर-कन्या दोनों ही ज्येष्ठ हों तो उनका विवाह सौर ज्येष्ठ (वृष) के सूर्य में नहीं करना चाहिये॥ २८॥

उत्पात-ग्रहण-मासान्तादि दोषों की विवाह में वर्जना

उत्पातग्रह्णादूर्ध्वं सप्ताहमखिले ग्रहे।
नाखिले त्रिदिनं चर्क्षं तथानेष्टमृतुत्रयम्॥ ३०॥
ग्रस्तास्ते त्रिदिनं पूर्वं पश्चात् ग्रस्तोदये तथा।
सन्ध्याकाले त्रित्रिदिनं निःशेषे सप्त सप्त च॥ ३१॥
मासान्ते पञ्चदिवसांस्त्यजेद्रिक्तां तथाष्टमीम्।
षष्ठीं च परिघाद्यर्धं व्यतीपातं सवैधृतिम्॥ ३२॥

१. उल्कापात—वज्रपात (बिजली गिरना) आदि उत्पातों तथा खग्रास ग्रहण (पूर्णग्रहण) के उपरान्त एक सप्ताह पर्यन्त विवाहादि कर्म नहीं करना चाहिये।

२. यदि खण्डग्रास ग्रहण हो तो तीन दिन उपरान्त तक मंगल कार्य न करें।

३. यदि ऋतुजन्य उत्पात हों तो तीन दिन बाद तक मंगल कार्य वर्जित है॥ ३०॥

४. यदि ग्रस्तास्त ग्रहण (ग्रहण लगा हुआ अस्त हो जाय) तो उसके तीन दिन पूर्व से शुभकृत्य न करें।

५. यदि ग्रस्तोदय ग्रहण हो (ग्रहण लगा उदित हो) तो उसके बाद तीन दिन तक शुभ कृत्य न करें।

६. यदि सन्ध्या कालों में उत्पात हो तो तीन-तीन दिन वर्जित रखें।

७. यदि अन्य समय में उत्पात हो तो सात दिन वर्जित रखें॥ ३१॥

८. मासान्त में अर्थात् कृष्णपक्ष की त्रयोदशी से लेकर पाँच दिनों में शुभकार्य न करें।

९. रिक्ता तिथि, अष्टमी, षष्ठी तथा परिघ योग का आरम्भिक भाग (पूर्वार्ध) त्याग दें।

१०. वैधृत योग तथा व्यतीपात योग का सम्पूर्ण समय विवाह में अनिवार्य रूप से (लग्न कितनी ही अच्छी क्यों न हो) त्याज्य होता है॥ ३२॥

विवाहहेतु शुभ नक्षत्र

पौष्णभत्र्युत्तरामैत्रमरुच्चन्द्रार्क पैतृभम्।
समूलभं विधेर्भं च स्त्रीकरग्रह इष्यते॥ ३३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा, अनुराधा, स्वाति, मृगशिरा, हस्त, मघा, मूल तथा रोहिणी इन (ग्यारह) नक्षत्रों में विवाह करना शुभ है॥ ३३॥

विमर्श—विवाह के ये नक्षत्र चारों वेदवालों के लिये शुभ हैं, परन्तु जिनका यजुर्वेद ही मुख्य वेद है, उनके लिये 'त्रिषु-त्रिषु उत्तरादिषु।' पारस्कर के इस सूत्र के अनुसार उत्तराओं से प्रारम्भ करके तीन-तीन नक्षत्र यजुर्वेदियों के विवाह में शुभ होते हैं। इसका अर्थ है कि चित्रा, श्रवण, धनिष्ठा तथा अश्विनी—ये चार नक्षत्र भी केवल यजुर्वेदियों के लिये विवाहार्थ शुभ होते हैं। पञ्चांगों में इन्हें कात्यायन की नक्षत्र चतुष्टयी के विवाह मुहूर्त नाम से दिया जाता है। नर्मदा से उत्तर में बसनेवाले ९९% से अधिक हिन्दू (बौद्ध, जैन एवं सिख भी) यजुर्वेदीय ही हैं।

विवाह में वरकन्या हेतु गुरु-सूर्य का बल

विवाहे बलमावश्यं दम्पत्योर्गुरुसूर्ययोः।
तत्पूजा यत्नतः कार्या दुष्फलप्रदयोस्तयोः॥ ३४॥

विवाह में कन्या के लिये गुरुबल तथा वर के लिये सूर्य का बल अवश्य ही ग्रहण करना चाहिये। अतः इन दोनों की पूजा यत्नपूर्वक करना चाहिये, जिससे उनका दुष्फल प्राप्त न हो॥ ३४॥

अष्टक वर्ग बल की श्रेष्ठता

गोचरं वा वेधजं चाष्टवर्गरूपजं बलम्।
यथोत्तरं बलाधिक्यं स्थूलं गोचरमार्गजम्॥ ३५॥

ऊपर कथित गुरु एवं सूर्य का गोचर बल स्थूल होता है, उससे अधिक सूक्ष्म-फलप्रद वेधरहित ग्रह का बल होता है तथा सबसे अधिक बल अष्टवर्ग का बल होता है॥ ३५॥

विमर्श—विवाह के समय की लग्नकुण्डली बनाकर उसका अष्टक वर्ग निकालना चाहिये, यदि उक्त ग्रहों (गुरु एवं सूर्य को) वर एवं कन्या की राशि में ५ या अधिक रेखा प्राप्त हों तो उसे शुभ जानना चाहिये।

वर-कन्या के लिये विवाह में अन्य बलों का कथन

चन्द्रताराबलं वीक्ष्य ग्रहपश्वाङ्गजं बलम्।

वर-कन्या दोनों के लिये चन्द्रबल अथवा ताराबल तथा विवाहलग्न के ग्रहों के बल से पशुओं के शकुन का भी विचार करना चाहिये॥ ३५½॥

तिथ्यादि के बलों का तारतम्य

तिथिरेक गुणा वारो द्विगुणः त्रिगुणञ्च भम्॥ ३६॥
योगश्चतुर्गुणः पञ्चगुणं तिथ्यर्धसंज्ञकम्।
ततो मुहूर्तो बलवाँस्ततो लग्नं बलाधिकम्॥ ३७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ततोऽतिबलिनी होरा द्रेष्काणोऽतिबली ततः।
ततो नवांशो बलवान् द्वादशांशो बली ततः॥ ३८॥
त्रिंशांशो बलवान् तस्माद्वीक्ष्यते तद् बलाबलम्।

१. तिथि में एक गुणा बल होता है। २. वार में तिथि से दुगुना तथा ३. नक्षत्र में तिगुना बल होता है। ४. योग में चार गुना। ५. करण में पाँच गुना। इस प्रकार इन पाँचों अंगों में बल होता है। ६. करण से अधिक बली मुहूर्त। ७. मुहूर्त से अधिक बली लग्न होता है॥ ३६-३७॥

८. लग्न से द्रेष्काण अधिक बली होता है। द्रेष्काण से होरा अधिक बली होता है। होरा से नवाँश अधिक बली होता है। नवाँश से द्वादशांश अधिक बली होता है। अत: बलाबल की समीक्षा करके ही विवाह हेतु शुभ लग्नादि का चयन करें। परन्तु सर्वाधिक बली तो त्रिंशांश होता है॥ ३८-३८½॥

षड्वर्गों का कथन

त्रिंशद् भागात्मकं लग्नं होरा तस्यार्धमुच्यते॥ ३९॥
लग्नत्रिभागो द्रेष्काणो नवमांशो नवमांशकः।
द्वादशांशो द्वादशांशः त्रिंशांशो त्रिंशदंशकः॥ ४०॥

१. लग्न—एक लग्नराशि में पूरे तीस अंश होते हैं।

२. होरा—पन्द्रह-पन्द्रह अंश के प्रत्येक राशि में दो होरा होते हैं। इस प्रकार उनकी कुल परिवृत्तियाँ मेषादि बारह राशियों में होती हैं। कुल होरा २४ होते हैं॥ ३९॥

३. द्रेष्काण—लग्न (तीस अंश) के तीन भाग करने पर प्रत्येक भाग त्रिभाग या द्रेष्काण कहलाता है। दस-दस अंशों के इन द्रेष्काणों की मेषादि बारह राशियों में कुल तीन आवृत्तियाँ होती हैं। इनकी कुल संख्या ३६ होती है।

४. नवमांश—राशि के ९ भाग करने पर प्रत्येक राशि में नौ नवाँश (प्रत्येक ३°/२०′ का) होते हैं। बारह राशियों में कुल १०८ नवाँश होते हैं।

५. द्वादशांश—एक राशि के बारह भाग करने पर द्वादशांश होता है। प्रत्येक द्वादशांश २ अंश ३० कला (ढाई अंश) का होता है।

त्रिंशांश—एक राशि के तीस भाग करने पर एक-एक अंश के कुल तीस त्रिंशांश तथा बारह राशियों में कुल ३६० त्रिंशांश होते हैं॥ ४०॥

शुद्ध होरा चक्र (विश्व पंचांग के अनुसार)

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ
१	३	५	७	९	११	१	३	५	७	९	११	१५° तक प्रथम होरा
२	४	६	८	१०	१२	२	४	६	८	१०	१२	३०° तक द्वितीय होरा
प्रथम परिवृत्ति						द्वितीय परिवृत्ति						परिवृत्ति

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शुद्ध द्रेष्काण चक्र (विश्व पंचांग के अनुसार)

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ
१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१० अंश तक प्रथम त्रिभाग
२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२० अंश तक द्वितीय त्रिभाग
३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३० अंश तक तृतीय त्रिभाग
प्रथम परिवृत्ति				द्वितीय परिवृत्ति				तृतीय परिवृत्ति				परिवृत्ति

नवमांश चक्र

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ
१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	३ अंश २० कला तक I
२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८	५	६ अंश ४० कला तक II
३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	१० अंश तक III
४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	१३ अंश २० कला तक IV
५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८	१६ अंश ४० कला तक V
६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	२० अंश तक VI
७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	२३ अंश २० कला तक VII
८	५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	२६ अंश ४० कला तक VIII
९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	३० अंश तक IX

द्वादशांश चक्र

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	राशियाँ
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	२°।३०' तक प्रथम द्वादशांश
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	५°।००' तक द्वितीय ,,
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	७°।३०' तक तृतीय ,,
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	१०°।००' तक चतुर्थ ,,
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	१२°।३०' तक पंचम ,,
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	१५°।००' तक षष्ठ ,,
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	१७°।३०' तक सप्तम ,,
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२०°।००' तक अष्टम ,,
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२२°।३०' तक नवम ,,
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२५°।००' तक दशम ,,
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२७°।३०' तक एकादश ,,
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	३०°।००' तक द्वादश ,,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शुद्ध त्रिंशांश चक्र (विश्व पंचांग के मत से)

भाग क्रमांक	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	लग्न या ग्रहस्पष्ट अंश से	अंश तक
पहला	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	शून्य अंश से	एक अंश तक
दूसरा	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	एक से	दो तक
तीसरा	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	दो से	तीन तक
चौथा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	तीन से	चार तक
पाँचवाँ	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	चार से	पाँच तक
छठा	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	पाँच से	छह तक
सातवाँ	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	छह से	सात तक
आठवाँ	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	सात से	आठ तक
नौवाँ	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	आठ से	नौ तक
दशवाँ	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	नौ से	दस तक
ग्यारहवाँ	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	दस से	ग्यारह तक
बारहवाँ	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	ग्यारह से	बारह तक
तेरहवाँ	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	बारह से	तेरह तक
चौदहवाँ	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	तेरह से	चौदह तक
पन्द्रहवाँ	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	चौदह से	पन्द्रह तक
सोलहवाँ	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	पन्द्रह से	सोलह तक
सत्रहवाँ	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	सोलह से	सत्रह तक
अठारहवाँ	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	सत्रह से	अट्ठारह तक
उन्नीसवाँ	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	अट्ठारह से	उन्नीस तक
बीसवाँ	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	उन्नीस से	बीस तक
इक्कीसवाँ	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	बीस से	इक्कीस तक
बाईसवाँ	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	इक्कीस से	बाईस तक
तेईसवाँ	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	बाईस से	तेईस तक
चौबीसवाँ	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	तेईस से	चौबीस तक
पच्चीसवाँ	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	चौबीस से	पच्चीस तक
छब्बीसवाँ	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	पच्चीस से	छब्बीस तक
सत्ताईसवाँ	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	छब्बीस से	सत्ताईस तक
अट्ठाईसवाँ	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	सत्ताईस से	अट्ठाईस तक
उन्तीसवाँ	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	अट्ठाईस से	उन्तीस तक
तीसवाँ	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	उन्तीस से	तीस तक

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—आजकल पञ्चांगों में यवन मत से प्रक्षिप्त किये गये होरा, द्रेष्काण तथा त्रिंशांश (वास्तव में पंचमांश है) प्रचलित हैं, उनके स्थान पर शुद्ध षड्वर्ग के चक्र दिये गये हैं।

विवाह में शुभ लग्न राशियाँ

शुभ युक्तेक्षिताः सर्वे विवाहे सर्वराशयः।
चन्द्रार्केज्यादयः पञ्च यस्य राशेस्तु खेचराः॥
इष्टास्तच्छुभदं लग्नं चत्वारोऽपि बलान्वितः॥ ४१॥

१. विवाह में वे सब राशियाँ जो शुभग्रहों से युत या दृष्ट होती हैं। शुभ लग्न होती हैं।

२. सूर्य-चन्द्र गुरु-बुध-शुक्र ग्रह जिन राशियों के स्वामी हैं, उनकी राशियों के लग्न विवाह में शुभ होते हैं।

३. यदि किसी विवाह लग्न की कुण्डली में चार ग्रह बली हों तो वह लग्न भी प्रशस्त होती है॥ ४१॥

विवाह में जामित्र तथा इक्कीस दोषों की वर्जना

जामित्र शुद्ध्येकविंशन्महादोषविवर्जितम्।
एकविंशति दोषाणां नामरूपफलानि च॥ ४२॥
पितामहोक्तान्यावीक्ष्य वक्ष्ये तानि समासतः।
पञ्चाङ्गशुद्धिरहितो दोषस्त्वाद्यः प्रकीर्तितः॥ ४३॥
उदयास्तशुद्धिहीनो द्वितीयः सूर्यसंक्रमः।
तृतीयः पापषड्वर्गो भृगुः षष्ठे कुजोऽष्टमे॥ ४४॥
गण्डान्तः कर्तरीरिः षडष्टेन्दुश्च सङ्ग्रहः।
दम्पत्योरष्टमं लग्नं राशिर्विषघटी भवः॥ ४५॥
दुर्मुहूर्तो वारदोषः खार्जुरीकः समाङ्घ्रिजः।
ग्रहणोत्पातभं क्रूरविद्धर्क्षं क्रूरसंयुतम्॥ ४६॥
कुनवाँशो महापातो वैधृतिश्चैकविंशतिः।
तिथिवारर्क्षयोगानां करणस्य च मेलनम्॥ ४७॥
पञ्चाङ्गमस्य संशुद्धिः पञ्चाङ्गं समुदाहृतम्।
यस्मिन्पञ्चाङ्गदोषोऽस्ति तस्मिँल्लग्नं निरर्थकम्॥ ४८॥

यामित्र दोष (विवाह लग्न एवं चन्द्रराशि से सप्तम भाव में पाप ग्रह की स्थिति) को विवाह में बचाना चाहिये। इसके अतिरिक्त भी विवाह में इक्कीस दोषों का विचार किया जाता है। आगे उनके नामरूप तथा फल कहा जा रहा है, जैसा ब्रह्माजी ने बताया है, उसे संक्षेप में कह रहा हूँ॥ ४२½॥

१. सबसे पहला दोष पंचांग शुद्धि दोष है, फिर २. उदयास्त शुद्धिदोष, ३. सूर्यसंक्रम, ४. पापषड्वर्ग, ५. भृगुषष्ठदोष, ६. अष्टम भौमदोष, ७. गण्डान्तदोष,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

८. कार्त्तरीदोष, ९. षष्टाष्टमद्वादशगत चन्द्रदोष, १०. अष्टम जन्मराशि लग्नदोष, ११. संग्रहदोष, १२. राशिदोष, १३. विषघटीदोष, १४. दुष्टमुहूर्तदोष, १५. वारदोष, १६. खार्जूर समांघ्रिदोष, १७. ग्रहणोत्पातदोष, १८. पापग्रहवेध, १९. पापग्रह की युति, २०. दुष्ट नवाँशकदोष तथा २१. महापात (वैधृतिव्यतिपात) दोष—ये २१ दोष हैं॥ ४२-४६½ ॥

इनमें तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण की शुद्धि देखना ही पंचांग शुद्धिदोष कहलाता है। जिसमें पंचांग शुद्धि न हो, वह विवाह की लग्न निरर्थक समझना चाहिये॥ ४७-४८॥

उदयास्त शुद्धिदोष

लग्नलग्नांशकौ स्व-स्वपतिना वीक्षितौ शुभौ।
न चेद् वान्योऽन्यपतिना शुभमित्रेण वा तथा॥ ४९॥
वरस्य मृत्युः परमो लग्नद्यूननवांशकौ।
नैवं तैर्वीक्षितयुतौ मृत्युर्वध्वाः करग्रहे॥ ५०॥

१. यदि विवाह लग्न तथा उसका नवाँश ये दोनों ही अपने स्वामी द्वारा युत अथवा दृष्ट हों तो शुभफल देते हैं।

२. अथवा विवाह लग्न एवं उसके नवाँशों के स्वामी परस्पर दृष्टि युति करते हों अर्थात् लग्नेश नवाँश को तथा नवाँशेश लग्न को देखता हो, अथवा उनमें बैठे हों, तो शुभफल होता है।

३. अथवा शुभग्रह, या मित्रग्रह से दृष्ट हों तो भी शुभफल होता है। यदि ऐसा न हो तो उक्त लग्न में वर या कन्या की मृत्यु होती है।

४. यदि लग्न की शुद्धि न हो तो वर की मृत्यु तथा सप्तम भाव की शुद्धि न हो तो कन्या की मृत्यु होती है॥ ४९-५०॥

विमर्श—लग्न को उदय तथा सप्तम को अस्त कहते हैं, अतः इन दोनों स्थानों की शुद्धि को ही उदयास्त शुद्धि कहते हैं।

सङ्क्रान्तिदोष

त्याज्यः सूर्यस्य सङ्क्रान्तिः पूर्वतः परतः सदा।
विवाहादिषु कार्येषु नाड्यः षोडशषोडश॥ ५१॥

सूर्य संक्रमण काल की पूर्व की तथा पश्चात् की सोलह-सोलह घटियाँ विवाहादि कार्यों में त्यागना चाहिये॥ ५१॥

राशि स्वामी

सिंहस्याधिपतिर्भानुश्चन्द्रः कर्कटकेश्वरः।
मेषवृश्चिकयोर्भौमः कन्यामिथुनयोर्बुधः॥ ५२॥
धनुर्मीनद्वयोर्मन्त्री शुक्रो वृषतुलेश्वरः।
शनिर्मकरकुम्भेश इत्येते राशिनायकाः॥ ५३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सिंह का स्वामी सूर्य, कर्क का चन्द्रमा, मेष-वृश्चिक का मंगल, कन्या-मिथुन का बुध, धनु-मीन का गुरु, वृष-तुला का शुक्र, तथा मकर-कुम्भ का स्वामी शनि होता है॥ ५२-५३॥

भृगुषष्ठाह्वय दोष

भृगु षष्ठाह्वयो दोषो लग्नात्षष्ठगते सिते।
उच्चगे शुभसंयुक्ते तल्लग्नं सर्वदा त्यजेत्॥ ५४॥

यदि विवाह लग्न से छठे भाव में शुक्र बैठा हो, तो यह 'भृगुषष्ठाह्वय' दोष होता है। यह दोष होने पर, यदि लग्न शुभग्रह या उच्चग्रह से भी युत-दृष्ट हो तो भी त्याग दें॥ ५४॥

अष्टम भौम दोष

कुजाष्टमे महादोषो लग्नादष्टमगे कुजे।
शुभत्रययुतं लग्नं त्यजेत्तुङ्गगते यदि॥ ५५॥

यदि विवाहलग्न से आठवें भाव में मंगल हो तो उस लग्न को त्याग दें, भले ही वह लग्न तीन शुभग्रहों अथवा उच्चग्रह से युक्त क्यों न हो॥ ५५॥

तिथिगण्डान्त दोष

पूर्णानन्दाख्ययोस्तिथ्योः सन्धिर्नाडीद्वयं सदा।
गण्डान्तं मृत्युदं जन्मयात्रोद्वाहव्रतादिषु॥ ५६॥

पूर्णा तिथियों के अन्त की एक घटी तथा नन्दा तिथियों के आरम्भ की एक घटी यह तिथि गण्डान्त होता है; जो विवाह, यात्रा, यज्ञोपवीत आदि शुभ कृत्यों में मृत्युदायक होती है, अतः तिथि गण्डान्त त्यागना चाहिये॥ ५६॥

लग्नगण्डान्त

कुलीरसिंहयोः कीटचापयोर्मीनमेषयोः।
गण्डान्तमन्तरालं स्याद् घटिकार्धं मृतिप्रदम्॥ ५७॥

कर्क-सिंह, वृश्चिक-धनु तथा मीन एवं मेष राशियों के संधिकारक अंश (अर्थात् पूर्वराशि का २९वाँ अंश तथा पश्चाद्राशि का शून्य अंश लग्नगण्डान्त होता है। यह आधी घटी के लगभग का समय मृत्युकारक होता है॥ ५७॥

नक्षत्रगण्डान्त

सार्पेन्द्रपौष्णभेष्वन्त्यनाडीयुग्मं तथैव च।
तदग्रभेष्वाद्यपादभानां गण्डान्तसंज्ञिकाः॥ ५८॥

आश्लेषा, ज्येष्ठा तथा रेवती नक्षत्रों की अन्तिम दो-दो घटी (४८ मिनट) का समय तथा मघा, मूल, अश्विनी—इन नक्षत्रों की प्रारम्भ की दो-दो घटियों का समय नक्षत्रगण्डान्त होता है॥ ५८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रिविध गण्डान्त की त्याज्यता

उग्रञ्च सन्धित्रितयं गण्डान्तं त्रितयं महत्।
मृत्युप्रदं जन्मयानविवाहस्थापनादिषु॥ ५९॥

इस प्रकार यह ऊपर कहा गया तीन प्रकार का गण्डान्त (तिथिगण्डान्त-लग्नगण्डान्त-नक्षत्रगण्डान्त) बहुत उग्र तथा मृत्युप्रद होता है॥ ५९॥

विमर्श—ज्योतिष ग्रन्थों में मृत्यु का अर्थ साक्षात् मृत्यु के अतिरिक्त आठ प्रकार का होता है—

'व्यथा दुःखं भयं लज्जा रोगःशोकस्तथैव च।
मरणञ्चापमानञ्च मृत्युरष्टविधस्मृतः॥'

कर्त्तरी दोष

लग्नाभिमुखयोः पापग्रहयोरुभयस्थयोः।
सा कर्त्तरीति विज्ञेया दम्पत्यो गलकर्त्तरी॥ ६०॥
कर्त्तरीयोगदुष्टं यद् लग्नं तत्परिवर्जयेत्।

यदि विवाहलग्न से बारहवें भाव में मार्गी पापग्रह तथा द्वितीय भाव में कोई वक्री पापग्रह हो तो यह कर्त्तरीयोगदम्पति के गले को काटनेवाला होता है। अतः जो विवाह लग्न कर्त्तरी दोष से युक्त हो, उसे त्याग देना चाहिये॥ ६०-६०½॥

लग्नदोष

अपि सौम्यग्रहैर्युक्तं गुणैः सर्वैः समन्वितम्॥ ६१॥
व्ययाष्टरिपुगे चन्द्रे लग्नदोषः स संज्ञितः।
तल्लग्नं वर्जयेद् यत्नात् जीवशुक्रसमन्वितम्॥ ६२॥
उच्चगे नीचगे वापि मित्रगे शत्रुराशिगे।
अपि सर्वगुणोपेतं दम्पत्योर्निधनप्रदम्॥ ६३॥

यदि विवाहलग्न से ६।८।१२ भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो यह लग्नदोष कहलाता है। इस दोष के होने पर वह लग्न भले ही शुभग्रह से युक्त हो तथा सर्वगुणों से युक्त हो अथवा गुरु-शुक्र से भी युक्त क्यों न हो, उस लग्न को विवाह में यत्नपूर्वक त्याग देना चाहिये।

यदि वह ६।८।१२ भावों का चन्द्रमा उच्चराशि में या नीचराशि में या शत्रुराशि में किसी भी राशि में बैठा हो तो भी लग्नदोष त्याज्य है॥ ६१-६३॥

चन्द्र संग्रहदोष तथा उसका फल

शशाङ्के पापसंयुक्ते दोषः सङ्ग्रहसंज्ञकः।
तस्मिन् संग्रहदोषे तद् विवाहं नैव कारयेत्॥ ६४॥
सूर्येण संयुते चन्द्रे दारिद्र्यं भवति ध्रुवम्।
कुजेन मरणं व्याधिर्बुधेन त्वनपत्यता॥ ६५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दौर्भाग्यं गुरुणा चैव सापत्न्यं भार्गवेन तु।
प्रव्रज्या रविपुत्रेण राहुणा कलहः सदा॥ ६६॥
केतुना संयुते चन्द्रे नित्यं कष्टं दरिद्रता।
पापद्वययुते चन्द्रे दम्पत्योर्मरणं भवेत्॥ ६७॥

यदि विवाह लग्न कुण्डली में चन्द्र के साथ कोई ग्रह हो तो इस दोष को 'संग्रह दोष' कहा जाता है। यह चन्द्रमा सूर्य के साथ दरिद्रता, मंगल के साथ मृत्यु तथा रोग, बुध के साथ संतानहीनता, गुरु के साथ दुर्भाग्य, शुक्र से युत हो तो पति-पत्नी में वैमनस्य, शनि से युत हो तो प्रव्रज्या (गृहत्याग या तलाक), राहु के साथ होने पर कलह तथा केतु के साथ हो तो कष्ट एवं दरिद्रता होती है। यदि चन्द्रमा के साथ कोई दो पापग्रह बैठे हों तो दम्पति की मृत्यु होती है॥ ६४-६७॥

शुभ एवं पापग्रहों की युति की विशेषता

शुभग्रहयुते चन्द्रे स्वोच्चस्थे मित्रराशिगे।
दोषायनं भवेल्लग्नं दम्पत्योः श्रेयसे सदा॥ ६८॥
स्वोच्चगो वा स्वर्क्षगो वा मित्रक्षेत्रगतोऽपि वा।
पापग्रहयुतश्चन्द्रः करोति मरणं तयोः॥ ६९॥

१. यदि विवाहकालीन लग्न कुण्डली में चन्द्रमा शुभग्रह से युक्त हो साथ ही अपनी उच्चराशि, स्वराशि या मित्रराशि का होकर बैठा हो तो उस लग्न में यदि अनेक दोष भी हों तो भी वह दम्पति के लिये कल्याणकारक होता है।

२. यदि स्वक्षेत्री, उच्चराशिगत या मित्रराशिगत चन्द्रमा किसी पापग्रह के साथ हो तो दम्पति के लिये निधनकारक होता है॥ ६८-६९॥

अष्टम लग्न-राशि दोष

दम्पत्योरष्टमं लग्नं त्वष्टमो राशिरेव च।
यदि लग्नगतः सोऽपि दम्पत्योर्मरणप्रदः॥ ७०॥
सराशिः शुभयुक्तोऽपि लग्नं वा शुभसंयुतम्।
लग्नं विवर्जयेद् यत्नात् तदंशांश्च तदीश्वरान्॥ ७१॥

यदि वर या कन्या की जन्मराशि से विवाह की राशि आठवीं हो अथवा जन्म लग्न से विवाह लग्न आठवीं हो तो दम्पति के लिये मृत्युकारक होती है॥ ७०॥

वह अष्टम राशि या अष्टम लग्न भले ही शुभग्रह से युक्त हो, उस लग्न, नवाँश एवं उनके स्वामियों को भी अशुभ समझकर त्याग देना चाहिये॥ ७१॥

द्वादशराशिदोष

दम्पत्योर्द्वादशं लग्नं राशिर्वा यदि लग्नगः।
अर्थहानिर्तयोस्तस्मात् तदंशस्वामिनं त्यजेत्॥ ७२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वर-वधू के जन्म लग्न अथवा जन्मराशि से यदि विवाह की लग्न या विवाह की चन्द्रराशि बारहवीं हो तो धन हानि करनेवाली होती है। अत: उस लग्न को तथा उसके स्वामी को भी त्याग देना चाहिये॥ ७२॥

जन्मलग्न एवं जन्मराशि से उपचय में लग्न शुभता

जन्मराश्युदयश्चैव जन्मलग्नोदये शुभाः।
तयोरुपचयस्थाने यदा लग्नं गतं शुभम्॥ ७३॥

यदि विवाह के समय जन्म की लग्न या जन्म की राशि हो तो विवाह में शुभ होती है तथा जन्मलग्न एवं राशि से उपचय स्थान (३। ६। १०। ११) में विवाह की लग्न या राशि हो तो शुभ होती है॥ ७३॥

विषघटीदोष

खमार्गणा वेदपक्षाः खरामाः शून्यसागराः।
वार्द्धिचन्द्रा रूपदस्राः खरामा व्योमवाहवः॥ ७४॥
द्विरामाः खाग्नयः शून्यदस्रकुञ्जरभूमयः।
रूपपक्षा व्योमदस्रा वेदचन्द्राश्चतुर्दश॥ ७५॥
शून्यचन्द्रा वेदचन्द्राः षट्पञ्चवेदबाहवः।
शून्यदस्राः शून्यचन्द्राः पूर्णचन्द्रा गजेन्दवः॥ ७६॥
तर्कचन्द्रा वेदपक्षाः खरामाश्चाश्विभात् क्रमात्।
आभ्यः परा स्युश्चतस्रो नाडिकाविषसंज्ञिकाः॥ ७७॥
विवाहादिषु कार्येषु वर्ज्यास्ता विषनाडिकाः।
ऋक्षाद्यन्तघटिमितं ऋक्षमानेन ताडितः॥ ७८॥
षष्टिभिर्हरते लब्धं पूर्वऋक्षेण योजयेत्।

अश्विनी नक्षत्र की ५० से ५४, भरणी की २४ से २८ घटी, कृत्तिका की ३०-३४, रोहिणी की ४० से ४४ तक, मृगशिरा की १४ से १८, आर्द्रा की २१ से २५, पुनर्वसु की ३० से ३४ तक, पुष्य की २०-२४, आश्लेषा की ३२-३४, मघा की ३० से ३४ तक, पूर्वाफाल्गुनी की २०-२४, उत्तराफाल्गुनी की १८ से २२ तक, हस्त में २१ से २५ तक, चित्रा में २०-२४, स्वाति में १४-१८, विशाखा में भी १४-१८, अनुराधा में १०-१४, ज्येष्ठा में १४-१८, मूल में ५६-६०, पूर्वाषाढ़ा में २४-२८, उत्तराषाढ़ा में २०-२४, श्रवण में १०-१४, धनिष्ठा में भी १० से १४ तक, शतभिषा में १८ से २२ तक, तथा रेवती में ३० से ३४ तक मध्यम मान से विषघटी होती है, विवाहादि कार्यों में इन विषघटी (विष नाडी) को त्यागना चाहिये॥ ७४-७७½॥

नक्षत्र का मान सदैव साठ घटी नहीं होता है, अत: विषघटियों का स्पष्ट समय जानने के लिये जिस नक्षत्र में विवाह होना हो उसके भभोग के मान से ऊपर दी गयी विष घटी के प्रारम्भ तथा समाप्तिकाल के दोनों ध्रुवाङ्कों का गुणा करके उस गुणनफल

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

में ६० का भाग देने से विषघटी के प्रारम्भ तथा समाप्ति का समय सूर्योदयादिष्ट घटी-पलों में आ जाता है॥ ७८-७८½ ॥

विमर्श—गुणा करने के लिये गोमूत्रिका रीति का प्रयोग करें अथवा फिर उस नक्षत्र की विषघटी के प्रारम्भ एवं समाप्ति काल के घटी-पलों को पलात्मक बनाकर उसमें ६० घटी के विपलों (२१६००) का भाग दें तो विषघटी का स्पष्ट प्रारम्भ एवं समाप्तिकाल आ जाता है।

उदाहरण—मान लीजिये मघा नक्षत्र की विषघटी का प्रारम्भ काल एवं समाप्ति काल जानना है तथा उस दिन मघा का सर्वर्क्ष (भभोग) ५५ घटी एवं १० पल है। अब ऊपर के श्लोकों में मघा की ३० घटी पर विष घटी का प्रारम्भकाल है, जिसमें चार घटी जोड़ने पर उसका समाप्तिकाल ३४ घटी हुआ।

५५।१० भभोग मघा ×३० घटी (प्रारम्भकाल)		५५।१० × ३४ घटी विष घटी (समाप्तिकाल)	
१६५० +५ योग = १६५५ ६०) १६५५ (२७ घटी १२० ४५५ ४२० शेष = ३५ पल	३०० ÷ ६० ३०० ० शेष लब्धि ५ जिसे बाईं ओर जोड़ दिया।	१८७० +५ योग = १८७५ ६०) १८७५ (३१ घटी १८० ७५ ६० शेष = १५ पल	३४० ÷ ६० ३०० शेष ४० शेष विपल ५ लब्धि को बाईं ओर जोड़ा।
अतः २७ घटी ३५ पल शून्य विपल पर मघा की विष घटी प्रारम्भ होगी।		३१ घटी १५ पल ४० विपल पर उस दिन मघा की विष घटी का काल समाप्त होगा।	

विवाह में निन्दित मुहूर्तों की त्याज्यता

भास्करादिषु वारेषु ये मुहूर्त्ताश्च निन्दिताः॥ ७९॥
विवाहादि शुभे वर्ज्या अपि लग्नगुणैर्युताः।

रविवारादि सात वारों में जो मुहूर्त निन्दित कहे गये हैं, उन्हें भी विवाह में लग्न के गुणयुक्त होने पर भी त्याग देना चाहिये॥ ७९-७९½ ॥

वार दोषों की त्याज्यता

वारमध्ये तु ये दोषाः सूर्यवारादिषु क्रमात्॥ ८०॥
अपि सर्वगुणोपेतास्ते वार्ज्याः सर्वमङ्गले।

सूर्यादि वारों में जो वार दोष कहे हैं, उन वार दोषों (वार वेलादि) को भी लग्न के गुणयुक्त होते हुए भी त्यागना चाहिये॥ ८०-८०½ ॥

एकार्गल (खार्जूर) दोष

एकार्गलः समाङ्घ्रिश्चेत् तत्र लग्ने विवर्जयेत्॥ ८१॥
अपि शुक्रेज्यसंयुक्त विषसंयुक्तदुग्धवत्।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नक्षत्र के चरण में एकार्गल दोष विद्यमान हो, उस चरणवाले नक्षत्र को भी त्यागना चाहिये। यदि उस चरण में गुरु एवं शुक्र भी बैठे हों तो भी वह विषाक्त दूध की भाँति त्याज्य है ॥ ८१-८१½ ॥

ग्रहण एवं उत्पातयुक्त नक्षत्र का निषेध

ग्रहणोत्पातभं त्याज्यं मङ्गलेषु त्रिधाऽशुभम् ॥ ८२ ॥

जिस नक्षत्र में सूर्य अथवा चन्द्रग्रहण लगा हो, वह नक्षत्र तथा तीन प्रकार के उत्पात से युक्त नक्षत्र को भी अशुभ मानकर ६ मास के लिये त्याग दें ॥ ८२ ॥

क्रूरग्रहविद्ध सम्पूर्ण नक्षत्र का निषेध

यावच्चरणकं भुक्तं शेषञ्च दग्धकाष्ठवत्।
मङ्गलेषु त्यजेत्क्रूरं विद्धभं क्रूरसंयुतम् ॥ ८३ ॥
अखिलर्क्षं पञ्चगव्यं सुराबिन्दुयुतं तथा।

यदि किसी पाप ग्रह के द्वारा उसके एक चरण का भी वेध किया जाय अथवा उसके चरण में पाप ग्रह स्थित हो तो सम्पूर्ण नक्षत्र को ही जले हुए काठ की भाँति त्याग दे अथवा पंचगव्य में पड़ी हुई सुरा की बूँद जैसे पूरे पंचगव्य को अपवित्र कर देती है, वैसे ही उस पूरे नक्षत्र को अशुद्ध मानकर त्यागना चाहिये ॥ ८३-८३½ ॥

शुभ ग्रह द्वारा विद्ध नक्षत्र का चरण मात्र त्याज्य

पादमेव शुभैर्विद्धमशुभं नैव कृत्स्नभम् ॥ ८४ ॥
क्रूरविद्धयुतं धिष्ण्यं निखिलं चैव पादतः।

१. शुभ ग्रह के द्वारा वेधित नक्षत्र का केवल चरण मात्र त्याज्य होता है। २. जबकि पापयुत-विद्ध नक्षत्र में चरण नहीं अपितु सम्पूर्ण नक्षत्र ही त्याज्य है ॥ ८४-८४½ ॥

विमर्श—यहाँ पर पापविद्ध सम्पूर्ण नक्षत्र को त्यागना चाहिये। इस बात पर जोर देने के लिये ही एक ही बात को दोहराया गया है।

विवाह में शुभाशुभ नवांश

तुलामिथुनकन्यांशं धनुरंशैश्च संयुताः ॥ ८५ ॥
एते नवाँशाः सद्ग्राह्या अन्येषु कुनवाँशकाः।
कुनवाँशकलग्नं यत् त्याज्यं सर्वगुणान्वितम् ॥ ८६ ॥

तुला, मिथुन, कन्या तथा धनु के नवांश शुभ हैं तथा शेष नवांश कुनवांश हैं। विवाह में कुलग्न तथा कुनवांश भले ही सर्वगुणों से युक्त हों तो भी त्याग देना चाहिये ॥ ८५-८६ ॥

व्यतीपात तथा वैधृति का निषेध

यस्मिन् दिने महापातस्तद्दिनं वर्जयेत् बुधः।
अपि सर्वगुणोपेतं दम्पत्योर्मृत्युदं यतः ॥ ८७ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जिस दिन महापात (क्रान्तिसाम्य, व्यतिपात, वैधृति) दोष हों उस दिन को सर्वगुणयुक्त होने पर भी त्याग दें। वह दम्पति के लिये मृत्युकारक होता है॥ ८७॥

उत्पातदोषयुक्त नक्षत्र दिन का त्याग

अनुक्ताः स्वल्पदोषाः स्युर्विद्युन्नीहारवृष्टयः।
प्रत्यर्क परिवेषेन्द्र चापाम्बुघनगर्जनम्॥ ८८॥
एवमाद्यास्ततस्तेषां व्यवस्था क्रियतेऽधुना।
अकाले सम्भवन्त्येते विद्युन्नीहारवृष्टयः॥ ८९॥
प्रत्यर्क परिवेषेन्द्र चापाभ्रघनयोर्यदि।
दोषाय मङ्गले नूनमदोषायैव कालजाः॥ ९०॥

बिजली गिरना, ओला गिरना तथा पाला गिरना ये दोष स्वल्प होने से अनुक्त हैं, परन्तु प्रतिसूर्य, परिवेष, इन्द्रधनुष, मेघगर्जना—ये सभी यदि समय पर हों तो दोष नहीं होता, परन्तु यदि ये सब असमय (ऋतु के बिना) हों तब दोषकारक हो जाते हैं॥ ८८-९०॥

केन्द्रस्थित शुभग्रह की दोषनाशक क्षमता

बृहस्पतिः केन्द्रगतः शुक्रो वा यदि वा बुधः।
एकोऽपि दोषविलयं करोत्येव सुशोभनम्॥ ९१॥

यदि गुरु, शुक्र, अथवा पापरहित बुध में से कोई भी एक ग्रह विवाह-लग्न कुण्डली में केन्द्र में बैठा हो तो अनेक दोषों को नष्टकर शुभफल उत्पन्न करता है॥ ९१॥

पञ्चशलाका वेध का कथन

तिर्यक् पञ्चोर्ध्वगाः पञ्च रेखे द्वे द्वे च कोणयोः।
द्वितीयं शम्भुकोणेऽग्निं भचक्रं तत्र विन्यसेत्॥ ९२॥
भान्यतः साभिजित्येक रेखा खेटेन विद्धभम्।

पाँच रेखा ऊपर से नीचे की ओर (ऊर्ध्व अधोगाः) खींचे। फिर बाएं से दायें पाँच रेखा (तिर्यक् = पड़ी या तिरछी) खींचे। फिर आमने-सामने के सम्मुख कोणों को मिलानेवाली दो-दो रेखाएँ खींचे। इसे पंचशलाका चक्र कहते हैं। इसमें ऊपर बाईं ओर ईशानकोण में जो दो रेखा है उनमें दूसरी रेखा के शीर्ष पर कृत्तिका नक्षत्र लिखकर फिर दाहिनी ओर को क्रमशः अभिजित् सहित अट्ठाईस नक्षत्र लिखें॥ ९२॥

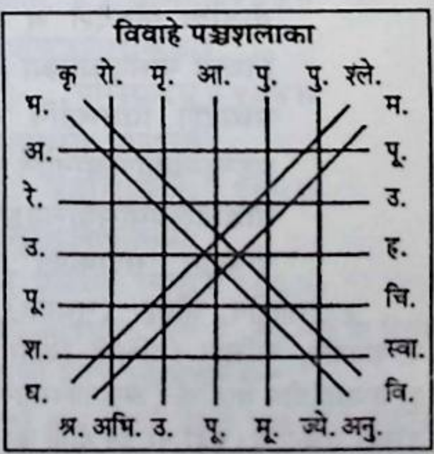

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जब इस पञ्चशलाका चक्र में जिस रेखा के एक छोर पर विवाह का नक्षत्र हो तथा दूसरे छोर पर उस विवाहलग्न के समय में कोई ग्रह बैठा हो, तो वह नक्षत्र उस ग्रह से विद्ध कहलायेगा॥ ९२½ ॥

विमर्श—जैसे कि विवाह नक्षत्र रोहिणी है तथा अभिजित् में कोई ग्रह हो तो रोहिणी का वेध करेगा। मघा में विवाह होने पर श्रवण नक्षत्र स्थित ग्रह से वेध होगा। इसी प्रकार अन्यों का भी समझें।

लत्ता दोष

पुरतः पृष्ठतोऽर्काद्या दिनर्क्षं लत्तयन्ति च॥ ९३॥
ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः स्वपृष्ठे भं सप्तगो जातिशरैर्मिते हि।
संल्लत्तयन्तेऽर्कशनीज्यभौमा सूर्याष्टतर्काग्निमितं पुरस्तात्॥ ९४॥

१. सूर्यादि ग्रह अपने आगे अथवा पीछे के दिन नक्षत्र को लात मारते हैं, उसे लत्ता दोष कहते हैं।

२. बुध, राहु, पूर्णिमा का चन्द्रमा एवं शुक्र—ये क्रमशः अपने पृष्ठवर्त्ती (पीछेवाले) सातवें, नौवें, बाईसवें तथा पाँचवें नक्षत्र को लात मारते हैं।

३. सूर्य, शनि, गुरु तथा मंगल—ये ग्रह क्रमशः अपने नक्षत्र से आगेवाले बारहवें, आठवें, छठवें तथा तीसरे दिन नक्षत्र को लात मारते हैं॥ ९३-९४॥

विमर्श—यहाँ ग्रह की लात चन्द्र नक्षत्र को लगती है। इस कारण, उस चान्द्र मास की पूर्णिमा के दिन जो नक्षत्र हो, उससे पीछेवाले बाईसवें नक्षत्र को लात लगेगी। मान लो चन्द्रमा(पूर्ण) श्रवण नक्षत्र पर है तो उसके पीछे बाईसवाँ नक्षत्र अश्विनी है, उस पर लात लगेगी। अतः उस मास में अश्विनी नक्षत्र चन्द्र की लत्ता से पीड़ित रहेगा।

दोषों की स्थान भेद से वर्जना

सौराष्ट्रशाल्वदेशेषु लत्तितं भं विवर्जयेत्।
कलिङ्गवङ्गदेशेषु पाततं भमुपग्रहम्॥ ९५॥
वाह्लीके कुरुदेशे च अन्यदेशे न दूषणम्।
तिथयो मासदग्धाख्या दग्धलग्नानि तान्यपि॥ ९६॥
मध्यदेशे विवर्ज्यानि न दूष्याणीतरेषु च।
पङ्ग्वन्धकाणलग्नानि मासशून्याश्च राशयः॥ ९७॥
गौडमालवयोस्त्याज्याश्चान्यदेशे न गर्हिताः।
दोषदुष्टः सदाकाले वर्जनीयः प्रयत्नतः॥ ९८॥

१. लत्तादोष सौराष्ट्र (गुजरात), शाल्वप्रदेश (मालवा) में वर्जित है। २. पातदोष, कलिङ्ग (दक्षिणी बिहार तथा उड़ीसा) एवं बंगाल में वर्जित है। ३. उपग्रह दोष वाह्लीक (अफगानिस्तान) में वर्जित है तथा कुरुदेश (पंजाब) में भी उसकी वर्जना है। वहीं पर इन दोषों का विचार है, अन्यत्र नहीं॥ ९५½ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

४. दग्धा तिथियाँ तथा दग्ध लग्नादि मध्यदेश (उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा) में वर्जित हैं, अन्यत्र इनका दोष नहीं है।

५. पंगुलग्न, अन्ध लग्न, काण लग्न, मास शून्य तिथियाँ तथा राशियाँ केवल गौडदेश तथा मालव प्रदेश में वर्जित हैं। अन्य देशों में वर्जित नहीं हैं।

दोषयुक्त समय को प्रयत्नपूर्वक त्याग देना चाहिये॥ ९६-९८॥

गुण एवं दोषों के मध्य शुभकाल का चयन

अपि भूरिगुणोऽन्यार्थे दोषाल्पत्वं गुणोदयः।
परित्यज्य महादोषाञ्छेषयोर्गुणदोषयोः॥ ९९॥
गुणाधिकः स्वल्पदोषः सकलो मङ्गलप्रदः।
दोषो न प्रभवत्येको गुणानां परिसञ्चये॥ १००॥
एको यथा तोयबिन्दुरुदर्चिर्षि हुताशने।
एवं सञ्चिन्त्य गणितशास्त्रोक्तं लग्नमानयेत्॥ १०१॥

इस प्रकार विवाह हेतु शुभ समय के चयन में बहुत बड़े दोषों को पूर्णतः त्यागकर यदि गुण अधिक हों तथा सामान्य दोष कम हों तो उस स्थिति में उक्त समय को विवाह हेतु निर्धारित कर लेना चाहिये; क्योंकि गुणाधिक्य के कारण अल्प दोष अपना प्रभाव नहीं दिखा सकते हैं। परन्तु यदि दोष प्रबल हों तथा गुण निर्बल हों तो उस मुहूर्त को छोड़ देना चाहिये; क्योंकि वह हानि करेगा। इस बात को यों समझें जैसे कि प्रचण्ड अग्नि को जल की एक बूँद बुझाने में समर्थ नहीं हो सकती है॥ ९९-१०१॥

समय की माप के लिये जलघटी यन्त्र का निर्माण

तल्लग्नं जलयन्त्रेण दद्याज्ज्योतिषिकोत्तमः।
षडङ्गुलमितोत्सेधं द्वादशाङ्गुलमायतम्॥ १०२॥
कुर्यात् कपालवत्ताम्रपात्रं तद्दशभिः पलैः।
पूर्णषष्टिर्जलपलैः षष्टिर्मज्जति वासरे॥ १०३॥
माषमात्रत्र्यंशयुतं स्वर्णवृत्तशलाकया।
चतुर्भिरङ्गुलैरापस्तथा विद्धं परिस्फुटम्॥ १०४॥
कार्येणाप्यधिकः षड्भिः पलैस्ताम्रस्य भाजनम्।
द्वादशं मुखविष्कंभ उत्सेधः षड्भिरङ्गुलैः॥ १०५॥
स्वर्णमाषेन वै कृत्वा चतुरङ्गुलकात्मकः।
मध्यभागे तथा विद्धा नाडिका घटिका स्मृता॥ १०६॥

लग्न जानने के लिये शुद्ध समय की माप आवश्यक होती है, उस माप के लिये जलघटी यन्त्र का निर्माण करना चाहिये, जिसकी विधि इस प्रकार है—

दश पल (लगभग ५०० ग्राम) भार का ताम्र लेकर उससे एक ऐसा कटोरा बनवायें जिसके मुख की चौड़ाई (व्यास) बारह अंगुल हो, इसमें साठ पल (लगभग

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तीन लिटर) जल भरने पर वह जल से भर (छेद द्वारा) अहोरात्र में साठ बार डूब सके। इस पात्र में तली में उड़द जितना मोटा गोल छेद स्वर्ण शलाका से बनायें। अथवा इस पात्र को अभाव में छह पल से अधिक भार को भी बनवाकर काम चलाया जा सकता है। परन्तु जो भी पात्र बने, उसकी चौड़ाई बारह अंगुल तथा ऊँचाई छह अंगुल होनी चाहिये। इसकी तली के मध्य भाग का निर्माण स्वर्ण से होना चाहिये तथा उसमें उड़द के बराबर गोल छेद हो, जिससे उसको पानी से भरे बड़े पात्र में रखने पर उसकी तली से धीरे-धीरे पानी भरने में ६० घटी का समय लगना चाहिये। अत: इसके अहोरात्र में बार-बार साठ बार डूबने से समय की ठीक नाप की जा सकती है। (मध्यवर्त्ती छेद में चार अंगुल ऊँची स्वर्ण की पोली नलिका लगाते हैं, जिसका छेद उड़द के बराबर होता है) यह जलघटी यन्त्र कहलाता है॥ १०२-१०६॥

जलघटी यन्त्र के प्रयोग की विधि

ताम्रपात्रे जलैः पूर्णे मृत्पात्रेऽथवा शुभे।
गन्धपुष्पाक्षतैः सार्द्धैरलंकृत्य प्रयत्नतः॥ १०७॥
तन्दुलस्थे स्वर्णयुते वस्त्रयुग्मेन वेष्टिते।
मण्डलार्द्धोदयं वीक्ष्य रवेस्तत्र विनिःक्षिपेत्॥ १०८॥

फिर जल से पूर्ण ताँबे की टंकी अथवा मिट्टी के बड़े पात्र में उस जलघटी यन्त्र का पूजनकर वस्त्रादि से पूजकर प्रात:काल जब सूर्य का आधा विम्ब पूर्वी क्षितिज पर दिखे, तब उसे उस जल में छोड़ दे (यह यन्त्र घटी-पलों की नाप तथा इष्टकाल बतायेगा)॥ १०७-१०८॥

घटिका यन्त्र को जल में छोड़ने का मन्त्र

मन्त्रेणानेन पूर्वोक्तलक्षणं मन्त्रमुत्तमम्।
'मुख्यं त्वमसि यन्त्राणां ब्रह्मणा निर्मितं पुरा॥ १०९॥
भाव्याभाव्याय दम्पत्योः कालसाधनकारणम्'।
द्वादशाङ्गुलकं प्रोक्तमिति शङ्कुप्रमाणकम्॥ ११०॥
अन्ययन्त्रप्रयोगा ये दुर्लभाः कालसाधने।
एवं सुलग्ने दम्पत्योः कारयेत्सम्यगीक्षणम्॥ १११॥

निम्नलिखित मन्त्र से उस यन्त्र को जल में छोड़ना चाहिये॥ १०८½॥

'हे यन्त्र! आप ब्रह्माजी द्वारा कालसाधन हेतु बनाये गये यन्त्रों में मुख्य हो, आप ही दम्पति के शुभ-अशुभ, होनी-अनहोनी के समय-निर्धारण के उपकरण हो'॥ १०९-१०९½॥

यदि इस यन्त्र का प्रयोग सम्भव न हो तथा अन्य भी कालमापन में सहयोगी यन्त्र उपलब्ध न हों तो ज्योतिषी को बारह अंगुल के शंकु की छाया द्वारा इष्टकाल का निर्धारण करना चाहिये तथा शुभलग्न में पाणिग्रहण कराना चाहिये ॥ ११०-१११॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—प्राचीन काल में जब यन्त्र घड़ी नहीं थी तब इन यन्त्रों का प्रयोग होता था, आजकल तो यन्त्र घड़ी से ही इष्टकाल जानकर लग्न निकाली जाती है।

विवाहवेदी एवं मण्डप का निर्माण

हस्तोच्छ्रितां चतुर्हस्तैश्चतुरस्त्रां समन्ततः।
स्तम्भैश्चतुर्भिः श्लक्ष्णैर्वा वामभागे स्वसद्मनः॥ ११२॥
समण्डलं चतुर्दिक्षु सोपानैरति शोभनम्।
प्रागुदकप्रवणारम्भास्तम्भा हयशुकादिभिः॥ ११३॥
विचित्रितां चित्रकुम्भैर्विविधैस्तोरणाङ्कुरैः।
शृङ्गारपुष्पनिचयैर्वर्णकैः समलङ्कृताम्॥ ११४॥
विप्राशीर्वचनैः पुण्यस्त्रीभिर्दीपैर्मनोरमाम्।
वादित्रगीतनृत्याद्यैर्हृदयानन्दिनीं शुभाम्॥ ११५॥
एवं विधां तामारोहेन्मिथुनं साग्निवेदकम्।

विवाह कार्य हेतु अपने घर के वामभाग में एक हाथ ऊँची तथा चार हाथ लम्बी चारों ओर विस्तृत, चार खम्भों से युक्त, मण्डल एवं परिधियों से युक्त वेदी एवं मण्डपका निर्माण करना चाहिये। इसका विस्तार पूर्व से पश्चिम एवं उत्तर से दक्षिण में होना चाहिये।

मण्डप के स्तम्भों पर अश्व, शुक आदि के चित्रों के द्वारा शोभा का निर्माण करें। वहाँ अंकुर, पुष्प एवं तोरणों से सजावट करना चाहिये। रंग से मण्डप को अलंकृत कर देना चाहिये। उस स्थल पर ब्राह्मणों द्वारा स्वस्तिवाचन, आशीर्वचन तथा सौभाग्यवती स्त्रियों द्वारा मांगलिक गीतों का गायन वाद्यों एवं नृत्य के साथ होना चाहिये तथा मन को प्रसन्न करनेवाला वातावरण बनाना चाहिये॥ ११२-११५½॥

विवाह लग्न-कुण्डली में ग्रहों की शुभता

त्रिषडायगताः पापाः षष्ठाष्टमं विना विधुः॥ ११६॥
कुर्वन्त्यायुर्धनारोग्यं पुत्रपौत्रसमन्विताः।
त्रिकोणकेन्द्रखत्र्याये शुभं कुर्वन्ति खेचराः॥ ११७॥
द्यूनकेन्द्रभगं शुक्रं हित्वा पुत्रधनान्वितान्।
धनत्रिबन्धुतनयाधर्मखायेषु चन्द्रमाः॥ ११८॥
करोति सुतसौभाग्यभोगयुक्तां विवाहिताम्।

विवाह समय की लग्नकुण्डली में यदि पापग्रह तीसरे, छठवें एवं ग्यारहवें भाव में बैठे हों, चन्द्रमा ६-८ भावों को छोड़कर अन्यत्र कहीं भी बैठा हो तो दम्पति को आय-धन, आरोग्य, पुत्र एवं पौत्र से युक्त करते हैं। शुभग्रहों की स्थिति त्रिकोण (पाँचवें तथा नौवें) केन्द्र (१-४-७-१०) एवं तृतीय तथा ग्यारहवें भाव में शुभ फलदायक होती है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

परन्तु शुक्र को सप्तम भाव छोड़कर अन्य केन्द्र में होना चाहिये तो वह वर-वधू को पुत्र एवं धनादि से युक्त करता है। चन्द्रमा द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, नवम, दशम तथा एकादश में बैठा हो तो विवाहिता को सुत-सौभाग्ययुक्त करता है ॥ ११८½ ॥

नीचादिगत ग्रहों की फल देने में असमर्थता

अस्तगा नीचगाः शत्रुराशिगाश्च पराजिताः ॥ ११९ ॥
ना शक्तास्ते फलं दातुं दानमश्रोत्रिये यथा।

जो ग्रह सूर्य से अस्त, नीचराशिगत, शत्रुराशिगत तथा युद्ध में पराजित ग्रह हो, वे फल देने में असमर्थ रहते हैं जिस प्रकार अविद्वान् (वेदविहीन) विप्र को दिया गया दान निष्फल होता है ॥ ११८-११९½ ॥

शुभ ग्रहों की लग्न में शुभ फल देने की सामर्थ्य

गुरुरेकोऽपि लग्नस्थः सकलं दोषसञ्चयम् ॥ १२० ॥
विनाशयति धर्मांशुरुदितं तिमिरं यथा।
एकोऽपि लग्नगः काव्यो बुधो वा यदि लग्नगः ॥ १२१ ॥
नाशयत्यखिलान्दोषांस्तूलराशिमिवानलः ।

१. अकेला गुरु ही यदि लग्न में बैठा हो तो वह विवाह समय के सम्पूर्ण दोषों को उसी प्रकार से नष्ट कर देता है। जिस प्रकार से धर्मांशु (सूर्य) अन्धकार को नष्ट कर देता है।

२. यदि अकेला शुक्र अथवा बुध विवाह लग्न में बैठा हो तो वह भी सम्पूर्ण दोषों को उसी प्रकार नष्ट कर देते हैं जैसे कि रुई को अग्नि नष्ट करती है ॥ १२०-१२१½ ॥

शुभ ग्रहों की केन्द्रों में दोष नाश की सामर्थ्य

गुरुरेकोऽपि केन्द्रस्थः शुक्रो वा यदि वा बुधः ॥ १२२ ॥
दोषसङ्घान्निहन्त्येव केसरीवेभसंहतिम्।
दोषाणां शतकं हन्ति बलवान् केन्द्रगो बुधः ॥ १२३ ॥
शुक्रोऽपहाय वै द्यूनं द्विगुणं लक्षमङ्गिराः।

यदि अकेला गुरु अथवा शुक्र अथवा बुध केन्द्र (चतुर्थ-दशम) में बैठा हो तो जैसे सिंह हाथियों के झुण्ड को भगा देता है, वैसे ही दोष नष्ट हो जाते हैं। केन्द्र में स्थित बली बुध एक सौ दोषों को नष्ट करता है। सप्तम भाव को छोड़कर चतुर्थ-दशम केन्द्रगत शुक्र बुध से दुगुना फल करता है तथा बुध की अपेक्षा गुरु लाख गुना शुभ फल देता है ॥ १२२-१२३½ ॥

लग्नगत गुरु की शुभता का पुनः कथन

लग्नदोषाश्च दोषा ये दोषाः षड्वर्गजाश्च ये ॥ १२४ ॥
हन्ति ताँल्लग्नगो जीवो मेघसङ्घमिवानिलः।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विवाह लग्न के जितने दोष हैं, षड्वर्ग के जितने दोष हैं उन सबको विवाह लग्न में बैठा गुरु उसी प्रकार से नष्ट करता है जैसे कि मेघों के समूह को तीव्र वायु उड़ा देता है॥ १२४-१२४½ ॥

त्रिकोणस्थ शुक्र ग्रहों द्वारा दोष नाश

केन्द्रत्रिकोणगे जीवे शुक्रो वा यदि वा बुधः॥ १२५॥
दोषा विनाशमायान्ति पापानीव हरिस्मृतेः।
गुरुर्बली त्रिकोणस्थः सर्वदोषविनाशकृत्॥ १२६॥

केन्द्र की भाँति ही त्रिकोण में स्थित गुरु-शुक्र या बुध भी उसी प्रकार से दोषों को नष्ट करते हैं, जैसे भगवान् का नाम लेने से पापों के समूह नष्ट हो जाते हैं।

यदि बलवान् गुरु त्रिकोण (पाँचवें-नौवें) में बैठा हो तो सम्पूर्ण दोषों को नष्ट करता है॥ १२५-१२६॥

एकादशस्थ चन्द्रमा एवं सूर्य की दोषनाशक शक्ति

निहन्ति निखिलं पापं प्रणाममिव शूलिनः।
मुहूर्तपापषड्वर्गकुनवांशग्रहोत्थिताः ॥ १२७॥
ये दोषास्तान्निहन्त्येव यत्रैकादशगः शशी।
नाशयत्यखिलान्दोषान् यत्रैकादशगो रविः॥ १२८॥

यदि लग्न से ग्यारहवें भाव में चन्द्रमा बैठा हो, तो मुहूर्त दोष, पापषड्वर्ग दोष, कुनवाँश दोष, ग्रहों के दोष तथा अन्य दोष उसी प्रकार नष्ट होते हैं, जैसे शिवजी को प्रणाम करने से सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं।

ग्यारहवें भाव का सूर्य भी विवाह लग्न के सम्पूर्ण दोषों को नष्ट कर देता है॥ १२७-१२८॥

केन्द्रस्थ गुरु से प्राकृतिक उत्पातों से उत्पन्न दोषों का नाश

गङ्गायाः स्नानतो भक्त्या सर्वपापानि वाचिरात्।
वायूपसूर्यनीहारमेघगर्जनसम्भवाः ॥ १२९॥
दोषाः नाशं ययुः सर्वे केन्द्रस्थाने बृहस्पतौ।
ये दोषाः मासदग्धास्तिथिलग्नसमुद्भवाः॥ १३०॥
ते सर्वे विलयं यान्ति केन्द्रस्थाने बृहस्पतौ।
बलवान्केन्द्रगो जीवः परिवेषोत्थदोषहा॥ १३१॥

जिस प्रकार भक्तिपूर्वक गंगाजी में स्नान करने से तुरन्त समस्त पाप नष्ट होते हैं। उसी प्रकार आँधी, उपसूर्य, नीहार (कोहरा), मेघगर्जन तथा परिवेष आदि दोष केन्द्र में बलवान् गुरु के बैठने से नष्ट होते हैं। मासदग्धा तिथि दोष, लग्न दोष आदि भी केन्द्री गुरु के कारण शीघ्र ही नष्ट हो जाया करते हैं॥ १२९-१३१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बलवान् गुरु-शुक्र से दोषनाश का पुनः कथन

एकादशस्थः शुक्रो वा बलवाञ्छुभवीक्षितः।
त्रिविधोत्पातजान् दोषान् हन्ति केन्द्रगतो गुरुः॥ १३२॥
स्थानादिबलसम्पूर्णः पिनाकी त्रिपुरं यथा।
लग्नलग्नांशसम्भूतान् बलवान्केन्द्रगो गुरुः॥ १३३॥
भस्मी करोति तान्दोषानिन्धेनानिव पावकः।
सर्वे ते विलयं यान्ति केन्द्रस्थाने बृहस्पतौ॥ १३४॥
उक्तानुक्ताश्च ये दोषास्तान्निहन्ति बली गुरुः।
केन्द्रसंस्थः सितो वापि भुजङ्गं गरुडो यथा॥ १३५॥

१. ग्यारहवें भाव में यदि बलवान् गुरु शुभ ग्रहों से दृष्ट होकर केन्द्र में बैठा हो तो तीन प्रकार के उत्पातजन्य दोषों को नष्ट करता है॥ १३३॥

२. लग्नदोष, नवांशदोष, आदि को बली गुरु केन्द्र में बैठकर उसी प्रकार नष्ट करता है, जिस प्रकार शिवजी त्रिपुर को नष्ट करते हैं।

३. वर्ष, अयन, ऋतु, मास आदि से उत्पन्न दोषों एवं लग्न के दोषों को बलवान् केन्द्रीगुरु वैसे ही नष्ट करता है, जैसे अग्नि से ईंधन।

४. उक्त-अनुक्त सभी प्रकार के दोष केन्द्रस्थ गुरु के कारण उसी प्रकार से नष्ट होते हैं, जैसे गरुड सर्प को नष्ट करता है॥ १३४-१३५॥

वर्गोत्तम लग्न का फल

वर्गोत्तमगते लग्ने सर्वदोषालयं ययुः।
परमाक्षरविज्ञाने कर्माणीव न संशयः॥ १३६॥

यदि विवाह लग्न वर्गोत्तम हो तो सभी प्रकार के दोष उसी प्रकार से नष्ट होते हैं, जिस प्रकार परब्रह्म के ज्ञान से कर्मदोष समाप्त हो जाते हैं; इसमें कोई सन्देह नहीं है॥ १३६॥

उच्चस्थ केन्द्री गुरु का विशेष फल

दुःस्थानस्थ ग्रहकृताः पापखेटसमुद्भवाः।
ते सर्वे लयमायान्ति केन्द्रस्थाने बृहस्पतौ॥ १३७॥
उच्चस्थो गुरुरेकोऽपि लग्नगो दोषसंचयम्।
हन्ति दोषान् हरिदिने चोपवासव्रतं यथा॥ १३८॥

१. यदि केन्द्र में उच्च का गुरु बैठा हो, तो अन्यत्र दुःस्थानगत ग्रहों के दोष समाप्त हो जाते हैं॥ १३७॥

यदि उच्चराशि का अकेला गुरु लग्न में बैठा हो, तो वह लग्न के सम्पूर्ण दोषों को उसी प्रकार नष्ट करता है, जैसे एकादशी के व्रत से सम्पूर्ण पाप नष्ट होते हैं॥ १३८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अष्टकूटों की शुभता का फल

अष्टधा राशिकूटं च स्त्रीदूरगणराशयः।
राशीशयोनिवर्णाख्य शुद्धाश्चेत् पुत्रपौत्रदाः॥ १३९॥

आठ प्रकार का राशि कूट, स्त्री दूर दोष, गण दोष, राशिदोष, राशीश मेलापक, योनि, वर्ण—इन सबका शुद्ध मेलापक पुत्र-पौत्र देनेवाला होता है॥ १३९॥

वर-कन्या के एक राशि एवं एक नक्षत्र दोष का कथन

एकराशौ पृथक् धिष्ण्ये दम्पत्योः पाणिपीडनम्।
उत्तमं मध्यमं भिन्नराश्यैकर्क्षजयोस्तयोः॥ १४०॥
एकर्क्षे त्वेकराशौ च विवाहः प्राणहानिदः।

१. यदि वर-कन्या दोनों की एक ही राशि हो परन्तु जन्मनक्षत्र अलग-अलग हों तो उत्तम होता है।

२. यदि वर-कन्या दोनों का जन्म-नक्षत्र एक ही हो तथा जन्मराशि अलग-अलग हो तो उन दोनों का विवाह करना मध्यम होता है।

३. किन्तु यदि वर-कन्या दोनों की एक ही जन्मराशि तथा एक ही नक्षत्र हो तो प्राणनाशक होता है॥ १४०-१४०½॥

स्त्री दूर दोष का कथन

स्त्रीधिष्ण्यादाद्यनवके स्त्रीदूरमतिनिन्दितः॥ १४१॥
द्वितीयं मध्यमं श्रेष्ठं तृतीये नवके भृशम्।

१. यदि कन्या के जन्म नक्षत्र से वर का नक्षत्र प्रथम नवक (नौ नक्षत्र के भीतर) में हो तो यह स्त्रीदूर दोष होता है, यह अतिनिन्दित होता है।

२. यदि कन्या के जन्म नक्षत्र से वर का जन्म नक्षत्र द्वितीय नवक (१० से १८ नक्षत्रों) के भीतर हो तो मध्यम फल होता है।

३. यदि कन्या के जन्म नक्षत्र से वर का जन्म नक्षत्र तृतीय नवक (१९वें से २७वें नक्षत्र तक) में हो तो शुभफल दायक होता है।

विमर्श—मान लीजिये कि कन्या का जन्म अश्विनी नक्षत्र में हुआ है तो आश्लेषा तक के नक्षत्रों में वर का जन्म नक्षत्र हो तो निन्दित होगा। यदि मघा से ज्येष्ठा तक वर का जन्म नक्षत्र होगा तो मध्यम फलदायक होगा। यदि अश्विनी में जन्मी कन्या के लिये वर का जन्म नक्षत्र मूल से अश्विनी तक होगा तो यह तृतीय नवक में होने से शुभ होगा।

गण मेलापक

तिस्रः पूर्वोत्तरा धातृयाम्यमाहेशतारकाः॥ १४२॥
इति मर्त्यगणो ज्ञेयो स्यादमर्त्यगणः परः।
हयादित्यर्क वाय्विज्य मित्रेन्दु विष्णु चान्त्यभम्॥ १४३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रक्षोगणः पितृत्वाष्ट्र द्विदैवानीन्द्रतारकाः।
वसुतोयेश मूलाहि तारकाभिर्युतोऽनलः॥ १४४॥
दम्पत्योर्जन्मभे चैकगणे प्रीतिरनेकधा।
मध्यमा देवमर्त्यानां राक्षसानां तयोर्मृतिः॥ १४५॥

१. पू.फा., पू.षा., पू.भा., उ.फा., उ.षा., उ.भा., रोहिणी भरणी एवं आर्द्रा—ये (नौ नक्षत्र) मनुष्यगण है।

२. अश्विनी, पुनर्वसु, हस्त, स्वाति, पुष्य, अनुराधा, मृगशिरा, श्रवण तथा रेवती—ये (नौ नक्षत्र) देवतागण वाले हैं।

३. मघा, चित्रा, विशाखा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, शतभिषा, मूल, आश्लेषा तथा कृत्तिका—ये (नौ) नक्षत्र राक्षसगण के हैं॥ १४२-१४४॥

यदि वर एवं कन्या का जन्म एक ही गण का हो तो दोनों में परस्पर प्रेम होता है। यदि एक का देवगण तथा दूसरे का मनुष्यगण हो तो दोनों में मध्यम प्रेम रहता है। यदि वर-कन्या में से एक देव तथा राक्षस हो तो परस्पर कलह होता रहता है। यदि उनमें एक मनुष्यगण तथा दूसरा राक्षसगण हो तो मनुष्यगण वाले की मृत्यु हो जाती है (क्योंकि मनुष्य को राक्षस खा जाते हैं)॥ १४५॥

राशिकूट का कथन (भकूट)

मृत्युः षडाष्टके पञ्च नवमे त्वनपत्यता।
नेष्टं द्विर्द्वादशेऽन्येषु दम्पत्योः प्रीतिरुत्तमा॥ १४६॥
एकाधिपे मित्रभावे शुभदं पाणिपीडनम्।
द्विर्द्वादशे त्रिकोणे च न कदाचित् षडष्टके॥ १४७॥
शत्रुषडाष्टके कुम्भकन्ययोर्घटमीनयोः।
वामोक्षयो नृयुक्कीटभयोः कुम्भकुलीरयोः॥ १४८॥
पञ्चास्यमृगयोश्चैव निन्दितं तदतीव तु।

१. जब एक राशि से अन्य राशि छठवीं तथा अन्य राशि से प्रथम राशि आठवीं हो तो यह षडष्टक (षष्ठाष्टक) कहा जाता है। इस प्रकार के वर-कन्या की राशियों में विवाह होने पर मृत्यु होती है।

२. **नव पञ्चम**—यदि वर एवं कन्या की राशियों एक-दूसरे से नौवीं-पाचवीं अथवा पाँचवीं-नौवीं हो तो यह नव पञ्चम सन्तानहीनता देता है।

३. **द्विर्द्वादश**—यदि वर-कन्या की राशियाँ परस्पर दूसरी-बारहवीं अथवा बारहवीं-दूसरी हों तो भी नेष्ट हैं।

४. शेष प्रकार के राशि-सम्बन्ध (समसप्तक, त्रिरेकादश, चतुर्थ-दशम) में वर-कन्या में प्रेम रहता है, अतः मेलापक उत्तम होता है॥ १४६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

५. **अपवाद**—उक्त सम्बन्धों में यदि दो राशियों का स्वामी एक ही ग्रह हो तो विवाह करना शुभ रहता है, परन्तु यह नियम केवल द्विर्द्वादश तथा नव पञ्चम के लिये है षडष्टक के लिये नहीं है अर्थात् यदि षडष्टक की राशियों का स्वामी एक ही ग्रह हो अथवा राशीशों में मैत्री हो तो भी विवाह न करें किन्तु यदि द्विर्द्वादश या नव पंचम राशीशों में मैत्री हो अथवा दोनों राशियों का स्वामी एक ही ग्रह हो तब विवाह किया जा सकता है ॥ १४७ ॥

६. **शत्रुषडष्टक**—कुम्भ-कन्या, तुला-मीन, कन्या-वृष, मिथुन-वृश्चिक, कुम्भ-कर्क, तथा सिंह-मकर—ये शत्रुषडष्टक की राशियाँ हैं। इनके वर-कन्या का परस्पर विवाह अत्यन्त निन्दित है ॥ १४८½ ॥

अशुभ राशिकूट प्रदर्शक चक्र

मेष कन्या	वृष तुला	मिथुन वृश्चिक	कर्क धनु	सिंह मकर	कन्या कुम्भ	तुला मीन	वृश्चिक मेष	धनु वृष	मकर मिथुन	कुम्भ कर्क	मीन सिंह	षडष्टक राशियाँ
मेष धनु	वृष मकर	मिथुन कुम्भ	कर्क मीन	सिंह मेष	कन्या वृष	तुला मिथुन	वृश्चिक कर्क	धनु सिंह	मकर कन्या	कुम्भ तुला	मीन वृश्चिक	नव पञ्चम राशियाँ
मेष वृष	वृष मिथुन	मिथुन कर्क	कर्क सिंह	सिंह कन्या	कन्या तुला	तुला वृश्चिक	वृश्चिक धनु	धनु मकर	मकर कुम्भ	कुम्भ मीन	मीन मेष	द्विर्द्वादश राशियाँ

विमर्श—यहाँ इस प्रसंग में राशियों के ये तीन प्रकार के अशुभ सम्बन्धों का उल्लेख हुआ है। अब पाठकों के सौकर्य के लिये शेष तीन प्रकार के शुभ सम्बन्धों का भी प्रदर्शन चक्रों द्वारा किया जा रहा है।

राशियों के शुभ सम्बन्धों का प्रदर्शक चक्र

मेष तुला	वृष वृश्चिक	मिथुन धनु	कर्क मकर	सिंह कुम्भ	कन्या मीन	तुला मेष	वृश्चिक वृष	धनु मिथुन	मकर कर्क	कुम्भ सिंह	मीन कन्या	सम सप्तक राशियाँ
मेष कर्क	वृष सिंह	मिथुन कन्या	कर्क तुला	सिंह वृश्चिक	कन्या धनु	तुला मकर	वृश्चिक कुम्भ	धनु मीन	मकर मेष	कुम्भ वृष	मीन मिथुन	चतुर्थ दशम राशियाँ
मेष मिथुन	वृष कर्क	मिथुन सिंह	कर्क कन्या	सिंह तुला	कन्या वृश्चिक	तुला धनु	वृश्चिक मकर	धनु कुम्भ	मकर मीन	कुम्भ मेष	मीन वृष	त्रिरेकादश राशियाँ

ग्रह मैत्री

सितार्कीज्येन्दु भौमास्ते रिपुमित्रसमा रवेः ॥ १४९ ॥
इन्दोर्नशत्रुरर्कज्ञौ कुजेज्यभृगुसूर्यजाः ।
कुजस्य ज्ञोर्कचन्द्रेज्याः शुक्रसूर्यसुतौ क्रमात् ॥ १५० ॥
ज्ञस्येन्दुरर्कशुक्रौ च कुजजीवशनैश्चराः ।
गुरोर्ज्ञशुक्रौ सूर्येन्दुकुजाः स्युर्भास्करात्मजः ॥ १५१ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शुक्रस्येन्दुरवीज्ञार्की कुजदेवेशपूजितौ।
शनेरर्केन्दुभूपुत्रा ज्ञशुक्रौ देवपूजितः॥ १५२॥

सूर्य के गुरु, चन्द्र तथा मंगल—ये तीनों परस्पर मित्र होते हैं तथा बुध सम है। शुक्र-शनि एवं सूर्य में परस्पर शत्रुता रहती है॥ १४९॥

चन्द्रमा का कोई भी ग्रह शत्रु नहीं होता है। सूर्य-बुध से चन्द्रमा की मैत्री है। मंगल, गुरु, शनि, शुक्र—ये चन्द्र के सम हैं।

मंगल का बुध शत्रु है तथा सूर्य, चन्द्र, गुरु—ये मित्र हैं तथा शुक्र-शनि ये मंगल के सम हैं॥ १५०॥

बुध का चन्द्रमा शत्रु, सूर्य-शुक्र मित्र तथा मंगल-गुरु-शनि—ये बुध के सम हैं। गुरु के बुध एवं शुक्र शत्रु होते हैं। सूर्य-चन्द्र-मंगल—ये तीनों ग्रह शुक्र के मित्र हैं तथा शनि सम होता है॥ १५१॥

शुक्र के सूर्य तथा चन्द्रमा शत्रु होते हैं। बुध एवं शनि—ये दोनों शुक्र के मित्र होते हैं तथा मंगल एवं गुरु—ये दोनों शुक्र के सम होते हैं। शनिग्रह के सूर्य-चन्द्र-मंगल—ये तीनों ही ग्रह शत्रु हैं। बुध एवं शुक्र—ये दोनों शनिग्रह के मित्र हैं तथा गुरु शनिग्रह का सम होता है। (इस प्रकार ग्रहों की नैसर्गिक मित्रता, समता एवं शत्रुता का ज्ञान करना चाहिये)॥ १५२॥

ग्रहों की मैत्री का चक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	ग्रहों के
चं. मं. गु.	सू. बु.	सू. चं. मं.	सू. शु.	सू. चं. मं.	बु. श.	बु. शु.	मित्र ग्रह
बु.	मं. गु. शु. श.	शु. श.	मं. गु. श.	श.	मं. गु.	गु.	सम ग्रह
शु. श.	कोई नहीं	बु.	चं.	बु. शु.	सू. चं.	सू. चं. मं.	शत्रु ग्रह

योनिकूट का कथन

अश्वेभमेषसर्पाहिश्वोतु मेषो तु मूषकाः।
आखुर्गोमहिषव्याघ्राश्वद्विड् व्याघ्रो मृगद्वयम्॥ १५३॥
श्वानः कपिर्बभ्रुयुग्मं कपिसिंहतुरङ्गमाः।
सिंहगोहस्तिनोभानामेषां योनिर्यथाक्रमम्॥ १५४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वैरं बभ्रूरङ्गमेषवानरं सिंहदन्तिनम्।
गोव्याघ्रमाखुमार्जारं महिषाश्वं च शात्रवम्॥ १५५॥

१. अश्व, २. गज, ३. मेष, ४. सर्प, ५. सर्प, ६. श्वान, ७. मार्जार, ८. मेष, ९. ओतु (मार्जार), १०. मूषक, ११. मूषक, १२. गो, १३. महिष, १४. व्याघ्र, १५. महिष, १६. व्याघ्र, १७. मृग, १८. मृग, १९. श्वान, २०. वानर, २१. नकुल, २२. नकुल, २३. वानर, २४. सिंह, २५. अश्व, २६. सिंह, २७. गो तथा २८. गज—ये अभिजित् सहित (अश्विनी से गिनकर) क्रमशः अट्ठाईस नक्षत्रों की योनियाँ हैं॥ १५३-१५४॥

वैरयोनि—इनमें श्वान-मृग, नकुल-सर्प, मेष-वानर, सिंह-गज, गो-व्याघ्र, मूषक-मार्जार तथा महिष एवं अश्व का परस्पर वैर रहता है॥ १५५॥

विमर्श—अभिजित् सहित अट्ठाईस नक्षत्रों की ये कुल चौदह योनियाँ होती हैं। यदि वर-कन्या की योनियों में परस्पर वैर हो तो विवाह नहीं करना चाहिये। चीनी ज्योतिष में जो तेरह राशियाँ कल्पित की गयी हैं, वे भारतीय ज्योतिष के इसी आधार पर से ग्रहण की गयी हैं। वहाँ इनमें से १. मूषक, २. व्याघ्र, ३. मार्जार, ४. नकुल, ५. सर्प, ६. अश्व, ७. छाग (मेष), ८. वानर, ९. श्वान एवं गो जो योनि नामों को ग्रहण किया गया है तथा गज, महिष, सिंह, मृग इन चार नामों को छोड़ दिया गया है। पूर्व के दस योनि नामों में कुक्कुट तथा वाराह—इन दो नामों को मिलाकर चीन ने बारह राशियों की कल्पना की है। इनमें से प्रत्येक चीनी वर्ष का अधिपति इन १. मूषक, २. गो (वृषभ), ३. व्याघ्र, ४. मार्जार, ५. नकुल (ड्रेगन), ६. सर्प, ७. अश्व, ८. छाग, ९. वानर, १०. कुक्कुट, ११. श्वान तथा १२. वाराह (शूकर) प्राणिनामवाली राशियाँ क्रमशः होती हैं।

पीछे इस ग्रन्थ के द्वितीयाध्याय में जिस प्रकार से बृहस्पति के चार वशात् वर्षों के नाम रखे जाते हैं, उसी प्रकार से चीन में धार्मिक एवं सांस्कृतिक वर्ष के नाम मूषकादि प्राणियों के नाम पर रखने की परम्परा अद्यावधि प्रचलन में है। चीन का नव वर्ष वैदिक् वर्ष की भाँति माघ कृष्ण अथवा फाल्गुन कृष्ण अमावस्या से आरम्भ होता है। उस समय सूर्य तथा चन्द्रमा दोनों ही धनिष्ठा नक्षत्र पर होते हैं। वेदाङ्ग ज्योतिष का युगारम्भ इसी स्थिति में कहा गया है—

'स्वराक्रमेते सोमार्कौ यदा साकं सवासवौ।
स्यात्तदादि युगं माघस्तपशुक्लोऽयनो ह्युदक्॥'

—याजुष ज्योतिष श्लोक ६

चीन का धार्मिक पञ्चांग सौर समन्वित चान्द्र पञ्चांग ही है। इस विषय की अधिक जानकारी मेरी 'विश्व के प्रमुख कालदर्शक' नामक पुस्तक में पढ़ें।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

योनि प्रदर्शक चक्र

१. अश्व	२. गज	३. मेष	४. सर्प	५. श्वान	६. मूषक	७. मार्जार	८. गो	९. महिष	१०. मृग	११. व्याघ्र	१२. वानर	१३. सिंह	१४. नकुल	योनि
अश्वि. धनि.	भरणी रेवती	कृत्ति. पुष्य	मृग. रोहिणी	आर्द्रा. मूल	पू.फा. मूल	पुन. श्लेषा	उ.फा. उ.षा. उ.भा.	हस्त स्वाति	ज्ये. अनु.	चित्रा विशा.	श्रवण पू.षा.	शत. पू.भा.	अभि-जित्	नक्षत्र
महिष	सिंह	वानर	नकुल	मृग	मार्जार	मूषक	व्याघ्र	अश्व	श्वान	गो	मेष	गज	सर्प	वैरयोनि

वर्ण कूट

झषालिकर्कटा विप्रास्तदूर्ध्वाः क्षत्रियादयः।
पुंवर्णराशेः स्त्रीराशिः सति हीने यथा शुभम्॥ १५६॥

१. कर्क-वृश्चिक-मीन—ये ब्राह्मण वर्ण हैं। २. मेष-सिंह-धनु—ये क्षत्रिय वर्ण हैं। ३. वृष-कन्या-मकर—ये वैश्य वर्ण हैं तथा ४. मिथुन-तुला-कुम्भ—ये तीन राशियाँ शूद्र वर्ण होती हैं।

वर-कन्या की राशियाँ समान वर्ण की होना शुभ होता है, किन्तु यदि वर की राशि उच्चवर्ण तथा कन्या की राशि निम्न वर्ण की हो तो भी शुभ होता है। यदि वर की राशि का वर्ण निम्न तथा कन्या की राशि का वर्ण ऊँचा हो तो अशुभ होता है॥ १५६॥

नाडी कूट विचार

चतुस्त्रिद्व्याङ्घ्रिभोत्थायाः कन्यायाश्चाश्विभात् क्रमात्।
वह्निभादिन्दुभान्नाडी त्रिचतुः पञ्चपर्वसु॥ १५७॥
गणयेत् संख्यया चैकनाड्यां मृत्युर्नपार्श्वयोः॥ १५८॥

१. चार चरणवाले नक्षत्र में जन्मे जातक जाति का (अश्विनी, भरणी, रोहिणी, आर्द्रा, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, स्वाति, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, उत्तरभाद्रपद तथा रेवती में जन्मे) के लिये अश्विनी से आरम्भकर रेवती पर्यन्त तीन पर्वों पर क्रम-उत्क्रम से गिनकर नाडी जानना चाहिये। (यह त्रिनाडी गणना है।)

२. तीन चरणवाले नक्षत्रों (कृत्तिका, पुनर्वसु, उ.फा., विशाखा, उत्तराषाढ़ा तथा पूर्वाभाद्रपद) में उत्पन्न कन्या के लिये कृत्तिका नक्षत्र से भरणी पर्यन्त चार पर्वों पर क्रम-उत्क्रम से गिनकर नाडी का ज्ञान करना चाहिये। (इसमें चार नाडी होती है)।

३. यदि कन्या का जन्म दो चरणवाले नक्षत्रों में हुआ हो तो उसकी नाडी के लिये नाडी की गणना मृगशिरा से रोहिणी तक पाँच पर्वों में क्रम-उत्क्रम से करना चाहिये। (यह पंचनाडी है)।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि वर-वधू के नक्षत्र एक ही पर्व में पड़ें, तो उनके लिये घातक होते हैं, किन्तु यदि वर-कन्या के जन्म-नक्षत्र अलग-अलग पार्श्वों (पर्वों) पर हों तो शुभफल होता है ॥ १५७-१५८ ॥

देशभेद से त्रिनाडी-चतुर्नाडी तथा पंचनाडी का विचार

चतुर्नाडी त्वहल्यायां पाञ्चाले पञ्चनाडिका।
त्रिनाडी सर्वदेशेषु वर्जनीयाः प्रयत्नतः ॥ १५९ ॥

अहिल्या प्रदेश में चतुर्नाडी, पांचाल (पंजाब) में पंचनाडी तथा सर्वत्र त्रिनाडी का विचार करना चाहिये ॥ १५९ ॥

त्रिनाडी ज्ञान का चक्र (चतुष्पाद नक्षत्रों में)

नाडी	जन्म के नक्षत्र
१. आदिनाडी	अश्विनी, आर्द्रा, पुनर्वसु, उ.फा., हस्त, ज्येष्ठा, मूल, शतभिषा तथा पूर्वा भाद्रपद।
२. मध्यनाडी	भरणी, मृगशिरा, पुष्य, पूर्वा फाल्गुनी, चित्रा, अनुराधा, पूर्वाषाढ़ा, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद।
३. अन्त्यनाडी	कृत्तिका, रोहिणी, श्लेषा, मघा, स्वाति, विशाखा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण तथा रेवती।

चतुर्नाडी (चतुः पर्व गणना) चक्र

गणना	१. कनिष्ठानाडी	२. अनामिकानाडी	३. मध्यमानाडी	४. तर्जनी नाडी	
क्रम गणना	कृत्तिका	रोहिणी	मृगशिरा	आर्द्रा	नक्षत्र
उत्क्रम गणना	मघा	आश्लेषा	पुष्य	पुनर्वसु	नक्षत्र
क्रम गणना	पूर्वाफाल्गुनी	उत्तराफाल्गुनी	हस्त	चित्रा	नक्षत्र
उत्क्रम गणना	ज्येष्ठा	अनुराधा	·विशाखा	स्वाति	नक्षत्र
क्रम गणना	मूल	पूर्वाषाढ़ा	उत्तराषाढ़ा	अभिजित्	नक्षत्र
उत्क्रम गणना	पू.भा.	शतभिषा	धनिष्ठा	श्रवण	नक्षत्र
क्रमगणना	उत्तराभाद्र	रेवती	अश्विनी	भरणी	नक्षत्र

पञ्चपर्वगणना (पंचनाडी) चक्र

१. कनिष्ठा नाडी के नक्षत्र	२. अनामिका नाडी के नक्षत्र	३. मध्यमा नाडी के नक्षत्र	४. तर्जनी नाडी के नक्षत्र	५. अङ्गुष्ठ नाडी के नक्षत्र
मृगशिरा	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	आश्लेषा
हस्त	उत्तराफाल्गुनी	पूर्वाफाल्गुनी	मघा	×
चित्रा	स्वाति	विशाखा	अनुराधा	ज्येष्ठा
श्रवण	उत्तराषाढ़ा	पूर्वाषाढ़ा	मूल	×
धनिष्ठा	शतभिषा	पूर्वाभाद्र	उत्तराभाद्र	रेवती
रोहिणी	कृत्तिका	भरणी	अश्विनी	×

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—यह तीन प्रकार से नाडी-गणना कुछ अन्य ऋषियों ने भी बतायी है—

'चतुष्कात्कन्यका ऋक्षं गणयेदश्विभादिकम्।
त्रिभं सव्यापसव्येन भिन्नं पर्वं शुभावहम्॥
कन्यकर्क्षं त्रिपाच्चेत्स्यात् गणयेत् कृत्तिकादिकम्।
चतु:भि: पर्वभिस्तद्वदभिजित्तारकान्वितम्॥
कन्यकर्क्षं द्विपाच्चेत्स्यात् गणयेत्यौम्यभादिकम्।
पञ्चभिस्त्ववरोहे तु पञ्चमङ्गुलि वर्जयेत्॥'

—गर्गाचार्य

पंचपर्व गणना में अवरोह के समय पञ्चमांगुलि को (अँगूठे को) छोड़ देना चाहिये। यह बात गर्गाचार्य ने स्पष्टता के साथ कही है। इसी कारण पीछे (ऊपर) दिये गये 'पंचपर्वगणनाचक्र' में अवरोह क्रम में अंगुष्ठ नाडी के नीचे नक्षत्र नहीं लिखा है, उसके स्थान पर × यह चिह्न लिख दिया है।

विवाहों के आठ भेद

प्राजापत्य ब्राह्मदैवा विवाहार्षकसंयुता:।
उक्तकाले तु कर्त्तव्याश्चत्वार: फलदायका:॥ १६०॥
गन्धर्वासुरपैशाचराक्षसाख्यास्तु सर्वदा।

१. प्राजापत्य विवाह, ब्राह्मविवाह, दैव विवाह तथा आर्षविवाह—इन चार प्रकार के विवाहों को तो ऊपर कथित शुभमुहूर्त एवं शुभ समय में करने से शुभफल मिलता है॥ १६०॥

२. गन्धर्व विवाह, आसुर विवाह, पैशाच विवाह तथा राक्षस विवाह—इन चार प्रकार के विवाह तो सर्वदा सब समय में (बिना मुहूर्त के भी) होते रहते हैं॥ १६०½ ॥

गन्धर्वादि चार प्रकार के विवाहों के लक्षण तथा निन्द्यता

आसुरो द्रविणादानात् पैशाच: कन्यका छलात्॥ १६१॥
राक्षसो युद्धहरणाद् गान्धर्व: समयान्मिथ:।
गान्धर्वासुरपैशाचराक्षसाख्यास्तु नोत्तमा:॥ १६२॥

आसुर विवाह में कन्या को मोल खरीदा जाता है। पैशाच विवाह में कन्या के साथ छल तथा बलात्कार किया जाता है। राक्षस विवाह में (कन्या की सम्मति से) उसे अभिभावकों से लड़कर बलपूर्वक उठा लिया जाता है तथा गन्धर्व विवाह में स्त्री-पुरुष दोनों कामभावना से आसक्त होकर मैथुन कर लेते हैं, तत्पश्चात् विवाह होता है। अत: ये चार प्रकार के विवाह उत्तम नहीं होते, अर्थात् अधम होते हैं॥ १६१-१६२॥

विमर्श—यहाँ पूर्वोक्त चार उत्तम विवाहों के भेद नहीं लिखे गये हैं। अत: उनके लक्षण भी यहाँ लिखे जा रहे हैं—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. ब्राह्म विवाह में कन्या के अभिभावक वर को आदरपूर्वक बुलाकर देवताओं एवं अग्नि की साक्षी में अलंकृत करके कन्यादान करते हैं। २. दैवविवाह में यज्ञ के अवसर पर ऋत्विज को दक्षिणा के रूप में कन्या देते हैं। ३. आर्ष विवाहमें दो गायें या गाय–बैल वर पक्ष से लेकर तब कन्यादान करते हैं तथा ४. प्राजापत्य विवाह में जीवन भर गृहस्थ बने रहने की प्रतिज्ञा करनी पड़ती है।

अभिजित् मुहूर्त तथा गोधूलि लग्न की प्रशंसा

चतुर्थमभिजिल्लग्नमुदयर्क्षात्तु सप्तमम्।
गोधूलिकं तदुभयं विवाहे पुत्रपौत्रदम्॥ १६३॥
प्राच्यानान्तु कलिङ्गानां मुख्यं गोधूलिकं स्मृतम्।
अभिजित्सर्वदेशेषु मुख्यं दोषविनाशकृत्॥ १६४॥
मध्यन्दिनगते भानौ मुहूर्त्तोऽभिजिदाह्वयः।
नाशयत्यखिलान्दोषान्पिनाकी त्रिपुरं यथा॥ १६५॥
मध्यन्दिनगते भानौ सकलं दोषसञ्चयम्।
करोति दोषमभिजित् तूलराशिमिवानलः॥ १६६॥

सूर्योदय से चतुर्थ लग्न को अभिजित्लग्न कहते हैं तथा सूर्योदय के समय की राशि लग्न से सातवाँ लग्न गोधूलिसंज्ञक होता है। ये दोनों लग्न विवाह में पुत्र-पौत्रदायक होते हैं॥ १६३॥

प्राच्यों, कलिङ्गों आदि के लिये विवाह में गोधूलि लग्न ही मुख्य होती है तथा सभी प्रदेशों में अभिजित् मुहूर्त का लग्न सर्वश्रेष्ठ मान्य किया गया है, क्योंकि वह सम्पूर्ण दोषों का नाशक होता है॥ १६४॥

मध्याह्नकाल में होनेवाला अभिजित् मुहूर्त सम्पूर्ण दोषों को उसी प्रकार नष्ट करता है, जिस प्रकार से भगवान् शंकर त्रिपुरासुर का नाश करते हैं॥ १६५॥

सूर्य के मध्याह्न में शिर पर चमकते ही अभिजित् मुहूर्त होता है, वह सम्पूर्ण दोषों को उसी प्रकार नष्ट कर देता है, जिस प्रकार से कि अग्नि कपास या रूई के ढेर को जला डालती है॥ १६६॥

एक महान् दोष से गुणसमूह का नाश

हन्त्येकश्च महादोषो गुणलक्षमपीह सः।
पावने पञ्चगव्यं तु पूर्णकुम्भं सुरालयम्॥ १६७॥

विवाहादि शुभ कार्यों में महादोष एक भी हो तो भी उसे त्याग देना चाहिये, क्योंकि? जैसे पवित्र पञ्चगव्य में यदि मदिरा का कलश (बोतल) डाल दिया जाय तो वह सम्पूर्ण पञ्चगव्य अपवित्र हो जाता है, उसी भाँति एक महान् दोष लाखों गुणों को भी नष्ट कर देता है॥ १६७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एक समय में सहोदर बहिन-भाई के विवाह का निषेध

पुत्रोद्वाहात्परं पुत्री विवाहो न ऋतुत्रये।
न तयोर्व्रतमुद्वाहान्मङ्गले नान्यमङ्गलम्॥ १६८॥

पुत्र का विवाह करने के उपरान्त पुत्री का विवाह छह मास तक नहीं करना चाहिये और न उनका व्रत (जनेऊ) अथवा अन्य मङ्गल कार्य ही करना चाहिये॥ १६८॥

सहोदर कन्याओं के विवाह का छह मास के भीतर निषेध

विवाहश्चैकजकन्यानां षण्मासाभ्यन्तरे यदि।
असंशयं त्रिभिर्वर्षैस्तत्रैका विधवा भवेत्॥ १६९॥

एक साथ एक समय पर अथवा छह महीने के भीतर दो सहोदर कन्याओं का (बड़ी-छोटी बहिनों) का विवाह भी नहीं करना चाहिये। यदि किया जाय, तो उनमें एक तीन वर्ष के भीतर निश्चित ही विधवा (या परित्यक्ता) हो जाती है॥

प्रत्युद्वाहादि का निषेध (सांठ सगाई का निषेध)

प्रत्युद्वाहो नैव कार्यो नैकस्मै दुहितुर्द्वयम्।
न चैक जन्मनोः पुंसोरेकजन्ये तु कन्यके॥ १७०॥

१. अपने पुत्र के साथ जिसकी पुत्री का विवाह हो, उस व्यक्ति (समधी) के पुत्र के साथ अपनी पुत्री का विवाह नहीं करना चाहिये अर्थात् दूल्हे की बहिन का विवाह उसके (दूल्हे के) साले के साथ करना निषिद्ध है। इसे प्रत्युद्वाह (सांठ) कहते हैं।

२. एक ही वर को अपनी दो कन्याओं का विवाह एक ही साथ नहीं करना चाहिये। (यदि पहली के अनेक वर्षों तक सन्तान न हो तो सन्तान हेतु दूसरी का विवाह बाद में किया जा सकता है)।

३. दो सहोदर भाइयों को दो सहोदर बहिनें भी नहीं ब्याहनी चाहिये, अन्यथा दोनों को कोई-न-कोई कष्ट अवश्य होता है॥ १७०॥

विवाह—यदि दूसरी पत्नी की सन्तान हो तो उसे एकोदर या सहोदर नहीं कहते हैं, एक ही माता-पिता की सन्तानें ही सहोदर कहलाती हैं।

एक साथ दो मंगल कार्यों का निषेध

नैवं कदाचिदुद्वाहो नैकदा मुण्डनद्वयम्।

एक साथ दो विवाह अथवा दो मुण्डन भी नहीं करना चाहिये॥ १७०½॥

गण्डान्त में जन्म का फल

दिवाजातस्तुपितरं रात्रौ तु जननीं तथा॥ १७१॥
आत्मानं सन्ध्ययोर्हन्ति नास्ति गण्डे विपर्ययः।
सुतो सुता वा नियतं श्वशुरं हन्ति मूलजा॥ १७२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तदन्त्यपादजो नैव तथाऽश्लेषाद्यपादजः।
ज्येष्ठान्त्यपादजो ज्येष्ठं हन्ति बालो न बालिका॥ १७३॥
बालिका मूलऋक्षे तु मातरं पितरं तथा।
ऐन्द्री धवाग्रजं हन्ति देवरं तु द्विदैवजा॥ १७४॥

(रेवती, श्लेषा, ज्येष्ठा की अन्तिम दो घटी तथा अश्विनी, मघा एवं मूल के आरम्भ की दो घटी का समय गण्डान्त दोष से विशेषरूप से युक्त होता है)।

सामान्यतः दिन में यदि गण्डान्त में जन्म हो तो पिता की हानि, रात्रि में गण्डान्त में जन्म हो तो माता की हानि तथा दोनों सन्ध्याओं में जन्म होने पर जातक-जातिका की स्वयं की हानि होती है। इस प्रकार गण्ड के इस फल में कोई विपर्यय (उलट-फेर) नहीं होता है।

मूलनक्षत्र के अन्तिम चरण को छोड़कर शेष भाग में जन्मे पुत्र तथा पुत्रियाँ अपने श्वसुर (ससुर) के लिये हानिकारक होते हैं। इसी प्रकार से आश्लेषा नक्षत्र का प्रथम चरण दोषकारक नहीं होता है, शेष तीन चरण (दूसरा, तीसरा, चौथा) ही दोषप्रद होते हैं।

ज्येष्ठा नक्षत्र के अन्तिम चरण में जन्मा हुआ बालक अपने बड़े भाई के लिये हानिकर होता है। परन्तु ज्येष्ठ के अन्तिम चरण में जन्मी कन्या अपने ज्येष्ठ भ्राता के लिये हानिकर नहीं होती है (अर्थात् बड़ी बहिन के लिये हानिकर हो सकती है)।

मूल नक्षत्र में उत्पन्न कन्या (प्रारम्भ के तीन चरणों में) अपने माता-पिता के लिये अशुभ होती है तथा ज्येष्ठा में जन्मी कन्या अपने पति के ज्येष्ठ भ्राता के लिये अशुभ फलदायक होती है। इसी प्रकार विशाखा में जन्मी कन्या अपने देवर (पति के छोटे भाई) के लिये अशुभ होती है॥ १७१-१७४॥

कालगणना का कथन

स्वस्थे नरे सुखासीने यावत्स्पन्दति लोचनम्।
तस्य त्रिंशत्तमो भागः तत्परः परिकीर्तितः॥ १७५॥
तत्पराच्छतगो भागो त्रुटिरित्यभिधीयते।
त्रुटेः सहस्त्रगो योंशो लग्नकालः स उच्यते॥ १७६॥
देवोऽपि तन्न जानाति किम्पुनः प्राकृतो जनः।
स कालोऽथान्यकालो वा पूर्वकर्मवशाद् भवेत्॥ १७७॥

स्वस्थ व्यक्ति स्वस्थ स्थिति में सुखपूर्वक बैठा हुआ जितनी देर में अपने नेत्रों की पलक झपकाता है, उस कालान्तरावधि का तीसवाँ भाग 'तत्पर' या 'तत्पल' कहलाता है॥ १७५॥

उस तत्पर का सौवाँ भाग ($\frac{1}{100}$) त्रुटि कहलाता है। उस त्रुटि का सहस्त्रवाँ भाग ($\frac{1}{1000}$) लग्नकाल (किसी घटना के घटने का समय) कहलाता है। उस काल को देवता भी नहीं जानते हैं फिर मनुष्य की तो बात ही क्या है? वह काल अथवा अन्य

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कोई भी काल व्यक्ति के पूर्वकृत कर्मों के फलानुसार (शुभाशुभ फल देने के लिये) स्वतः प्राप्त हो जाता है ॥ १७६-१७७ ॥

दैवज्ञ द्वारा शङ्कु साधन

निमित्तमात्रं दैवज्ञस्तद्वशान्न शुभाशुभम्।
न्यग्रोधखदिराश्वत्थरक्तचन्दनवृक्षजाः ॥ १७८ ॥
श्रीखण्डागरुदन्तोत्थं शुभशङ्कुमकल्मषम् ।
द्वादशाङ्गुलमुत्सेधं परिणाहे षडङ्गुलम्॥ १७९ ॥
एवं लक्षणसंयुक्तं कल्पयेत्कालसाधने॥ १८० ॥

तब फिर काल का निर्धारण करने में दैवज्ञ (ज्योतिषी) तो निमित्त मात्र ही होता है, अतः उसके ज्ञान के लिये दैवज्ञ को वट, पीपल, खैर, लाल चन्दन, चन्दन, अगुरुकाष्ठ अथवा हाथीदाँत से बना हुआ बारह अंगुल का ऊँचा तथा छह अंगुल परिणाह (मोटाई या चौड़ाई) का शङ्कु (खूँटा) बनवाकर उसे भूमि में रोपकर कालसाधन करना चाहिये॥ १७८-१८० ॥

विमर्श—उक्त कालगणना की इकाइयाँ इस प्रकार से होती हैं—

६० तत्पर=१ विपल, ६० विपल=१ पल, ६० पल=१ घटी, ६० घटी=एक अहोरात्र।

वधूप्रवेशमुहूर्त

आरभ्योद्वाहदिवसात्षष्ठे वाप्यष्टमे दिने।
वधूप्रवेशः सम्पत्यै दशमेऽथ समे दिने॥ १८१ ॥
हायनं द्वितयं जन्मलग्नदिवसानपि।
सन्त्यज्य प्रतिशुक्रोऽपि यात्रा वैवाहिकी शुभा॥ १८२ ॥

जिस दिन विवाह हुआ हो, उससे गिनकर छठे दिन अथवा आठवें दिन अथवा दसवें दिन अथवा अन्य समदिन में द्वितीय वर्ष, जन्मदिन तथा जन्मलग्न को छोड़कर तथा सम्मुख शुक्र को छोड़कर वधूप्रवेश करना शुभ होता है तथा सुख-सम्पत्तिदायक होता है॥ १८१-१८२ ॥

विमर्श—पूर्वकाल में विवाहकार्य सम्पन्न होने में न्यूनतम चार दिन लगते थे, अब तो समयाभाव के कारण बारात के पहुँचने के कुछ घण्टों में ही विवाह समाप्त होकर बारात घर लौट आती है। अतः विवाह के दूसरे, चौथे दिन में वधूप्रवेश (ऊपर लिखे निर्देश के अनुसार) करा लेना चाहिये।

समवर्षादि में वधूप्रवेश का निषेध

समे वर्षे समे मासे यदि नारी गृहं व्रजेषु।
आयुष्यं हरते भर्त्तुः सा नारी मरणं व्रजेत्॥ १८३ ॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां विवाहाध्यायः सप्तविंशतितमः ॥ २७ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि समवर्ष, सममास में स्त्री का वधूप्रवेश (पति के गृह में प्रथम बार प्रवेश) होता है, तो उसके पति की आयु क्षीण होती है और स्वयं के लिये भी खतरा होता है॥ १८३॥

विमर्श—वृद्ध वसिष्ठ के अनुसार तो वधू प्रवेश समदिनों में यदि पञ्चाङ्ग शुद्धि भी न हो तो भी कराया जा सकता है—

'षष्ठाष्टमे वा दशमे दिने वा विवाहमारभ्यवधूप्रवेशः।
पञ्चाङ्गसंशुद्धिदिनं विनापि विधाव सद्गोचरणेऽपि कार्यः॥'
—बृ०दै० रंजन

मधुयामिनी मुहूर्त—तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुष्य, अनुराधा, हस्त, मृगशिरा, स्वाति, चित्रा तथा धनिष्ठा में कन्या, मकर, मीन, वृष, वृश्चिक लग्नों में जब केन्द्र में शुभग्रह हों तथा सप्तम भाव शुभ दृष्ट एवं पाप प्रभावरहित है। तब नववधू से प्रथम समागम शुभ होता है।

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के सत्ताईसवें विवाहाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ २७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अष्टविंशतितमोऽध्यायः

प्रतिष्ठाध्यायः

देवप्रतिष्ठा में शुभ काल एवं तिथियाँ

श्रीप्रदं सर्वगीर्वाणस्थापनं चोत्तरायणे।
गीर्वाणपूर्वगीर्वाणमन्त्रिणोर्दृश्यमानयोः ॥ १ ॥
विचैत्रेष्वेवमासेषु माघादिषु च पञ्चसु।
शुक्लपक्षेषु कृष्णेषु तदादि पञ्चसु स्मृतम्॥ २ ॥
दिनेषु यस्य देवस्य या तिथिस्तत्र तस्य च।
द्वितीयादिद्वयोः पञ्चम्यादितस्तिसृषु क्रमात्॥ ३ ॥
दशम्यादेश्चतसृषु पौर्णमास्यां विशेषतः।

सभी देवताओं की प्रतिष्ठा उत्तरायण सूर्य में श्रीप्रद होती है। प्रतिष्ठाकाल में गुरु एवं शुक्र का उदय होना भी आवश्यक है॥ १ ॥

चैत्र को छोड़कर माघ से लेकर पाँच मास (माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़) प्रतिष्ठा में शुभ है। शुक्लपक्ष की पञ्चमी से लेकर कृष्णपक्ष की पंचमी तक प्रतिष्ठा शुभ होती है। जिस देवता की जो विशेष तिथि है, उसमें उस देवता की प्रतिष्ठा विशेष शुभ होती है। इसके अतिरिक्त द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी में तिथि शुभ होती है। फिर दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी तथा पूर्णिमा शुभ होती है॥ १-३½ ॥

विमर्श—ऊपर कथित अयनादि सामान्य हैं। उत्तरायण में सभी सामान्य देवों की प्रतिष्ठा होती है, परन्तु उग्र देवताओं की प्रतिष्ठा दक्षिणायन में भी की जा सकती है, किन्तु मलमास में किसी की भी प्रतिष्ठा नहीं करनी चाहिये। शिवलिंग की प्रतिष्ठा भी दक्षिणायन में श्रावण मास में की जा सकती है—

'मातृभैरववाराहनारसिंहत्रिविक्रमाः ।
महिषासुरहन्त्री च स्थाप्या वै दक्षिणायने॥'

—वैखानससंहिता

अर्थात् मातृ (मातृका गण), भैरव, वाराह भगवान्, नृसिंह, त्रिविक्रम (वामन) तथा काली-महाकाली आदि की स्थापना दक्षिणायन में करनी चाहिये।

मुहूर्तगणपति में तो प्रत्येक देवता के लिये मासविशेष का भी प्रावधान किया है—

'याम्यायनेऽपि वाराहमातृभैरववामनान्।
महिषासुरहन्त्री च नृसिंह स्थापयेद् बुधः॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्रावणे स्थापये लिङ्गमाश्विने जगदम्बिकाम्।
मार्गशीर्षे हरिञ्चैव सर्पान्पौषेऽपि केचन॥'

अर्थात् श्रावण में शिवलिङ्ग की, आश्विन में देवी की, मार्गशीर्ष में विष्णु की तथा पौष में नागों की स्थापना करनी चाहिये।

ऊपर 'दिनेषु यस्य देवस्य या तिथिस्तत्र तस्य च' यह श्लोकार्ध आया है, इसका अर्थ है कि देव विशेष के वार एवं तिथि भी उसके लिये ग्राह्य होती है। अभिप्राय यह है कि रविवार सूर्य का वार है तथा चन्द्रवार चन्द्रमा का, बुधवार विष्णु का; इनमें इनकी स्थापना कर सकते हैं। आगे चलकर मंगलवार प्रतिष्ठा में वर्जित लिखा है, परंतु मंगलवार को श्रीहनुमान्जी की प्रतिष्ठा शुभ होती है।

इसी प्रकार से चतुर्थी तिथि अन्य लोगों के लिये वर्जित है, परन्तु गणेश की स्थापना हेतु शुभ है। नवमी अन्य देवों के लिये रिक्ता होने से त्याज्य है किन्तु दुर्गा की स्थापना के लिये शुभ है। रामनवमी श्रीरामजी की प्रतिष्ठा के लिये शुभ है तथा दक्षिणायन होते हुए भी श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी श्रीराधाकृष्ण की प्रतिष्ठा के लिये शुभ है। शिवजी की प्रतिष्ठा के लिये कृष्णपक्ष की चतुर्दशी भी शुभ है।

प्रतिष्ठा में शुभवार एवं नक्षत्र

त्रिरुत्तरादितिश्चान्त्यहस्तत्रयगुरूडुषु ॥ ४॥
साश्विधातृजलाधीशहरिमित्रवसूष्वपि ।
कुजवर्जितवारेषु कर्त्तुः सूर्यबलप्रदे॥ ५॥
चन्द्रताराबलोपेते पूर्वाह्णे शोभने दिने।

पुनर्वसु उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाति, अश्विनी, रोहिणी, शतभिषा, श्रवण, अनुराधा, तथा धनिष्ठा—इन नक्षत्रों में तथा मंगलवार को छोड़कर शेष सब वारों में सामान्यतः सभी देवताओं की प्रतिष्ठा शुभ होती है। प्रतिष्ठा-समय पर कर्त्ता पुरुष की राशि को सूर्य का बल प्राप्त होना चाहिये अर्थात् कर्त्ता की जन्मराशि से सूर्यस्थित राशि तीसरी, छठी, दशमी अथवा ग्यारहवीं होनी चाहिये तथा पूर्वाह्ण समय में प्रतिष्ठा कार्य करना चाहिये॥ ४-५½ ॥

विमर्श—जिस नक्षत्र का जो देवता स्वामी है, उसमें भी उसकी प्रतिष्ठा कर सकते हैं, जैसे कि आर्द्रा नक्षत्र में शिव की प्रतिष्ठा शुभ होती है।

प्रतिष्ठाहेतु शुभ लग्न एवं नवांश

शुभलग्ने शुभांशे च कर्त्तुर्न निधनोदये॥ ६॥
राशयः सकलाः श्रेष्ठाः शुभग्रहयुतेक्षिताः।
शुभग्रहयुते लग्ने शुभग्रहयुतेक्षिते॥ ७॥

प्रतिष्ठा के लिये शुभ लग्न तथा शुभ नवाँश ग्रहण करना चाहिये। शुभग्रह से युक्त लग्न एवं चन्द्रमा सभी राशियों में श्रेष्ठ होते हैं। इसी प्रकार लग्न-राशि पर शुभग्रह की दृष्टि उत्तम फलप्रद होती है॥ ६-७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लग्न में ग्रहों का फल

राशिः स्वभावजं हित्वा फलं ग्रहजमाश्रयेत्।
अनिष्टफलदः सोऽपि प्रशस्तफलदः शशी॥ ८॥
सौम्यर्क्षगोऽधिमित्रेण गुरुणा वा विलोकितः।
पञ्चेष्टिके शुभे लग्ने नैधने शुद्धिसंयुते॥ ९॥

यदि लग्न की राशि अशुभ भी हो अर्थात् पापग्रह की राशि हो परन्तु उसमें यदि शुभग्रह बैठा हो तो उसका फल शुभ होता है। यदि चन्द्रमा शुभराशि में या अधिमित्र की राशि में हो तथा गुरु से दृष्ट हो तथा लग्न से पाँच ग्रह अनुकूल स्थानों में हों तथा अष्टम भाव में कोई ग्रह न हो तो उसमें प्रतिष्ठा करना शुभ होता है॥ ८-९॥

प्रतिष्ठामुहूर्त के लग्न में ग्रहों का फल

लग्नस्थाः सूर्यचन्द्रारराहुकेत्वर्कसूनवः।
कर्त्तुर्मृत्युप्रदाश्चान्ये धनधान्यसुखप्रदाः॥ १०॥
द्वितीये नेष्टदाः पापाः शुभाश्चन्द्रश्च वित्तदाः।
तृतीये निखिलाः खेटाः पुत्रपौत्रसुखप्रदाः॥ ११॥
चतुर्थे सुखदाः सौम्याः क्रूराश्चन्द्रश्च दुःखदाः।
हानिदाः पञ्चमे क्रूराः सौम्याः पुत्रसुखप्रदाः॥ १२॥
पूर्णः क्षीणः शशी तत्र पुत्रदः पुत्रनाशनः।
षष्ठे शुभाः शत्रुदाः स्युः पापाः शत्रुक्षयप्रदाः॥ १३॥
पूर्णः क्षीणोऽपि वा चन्द्रः षष्ठेऽखिलरिपुक्षयम्।
षष्ठे शुभाः शत्रुदास्युर्पापाः शत्रुक्षयङ्कराः॥ १४॥
व्याधिदाः सप्तमे पापाः सौम्याः सौम्यफलप्रदाः।
अष्टमस्थानगाः सर्वे कर्त्तुर्मृत्युप्रदा ग्रहाः॥ १५॥
धर्मे पापाः घ्नन्ति सौम्याः शुभदाः शुभदः शशीः।
भङ्गदाः कर्मगाः पापाः सौम्याश्चन्द्रश्च कीर्तिदाः॥ १६॥
लाभस्थानगताः सर्वे भूरिलाभप्रदा ग्रहाः।
व्ययस्थानगताः शश्वद्बहुव्ययकरा ग्रहाः॥ १७॥

१. यदि प्रतिष्ठाकालीन कुण्डली में लग्न में सूर्य, चन्द्र (क्षीण) राहु, केतु या शनि हो तो कर्त्ता (यजमान) के लिये मृत्युकारक होते हैं तथा शेषग्रह (पूर्णचन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र) धनदायक होते हैं।

२. यदि प्रतिष्ठाकालीन लग्न से द्वितीयाभाव में पापग्रह हों तो अशुभ फलप्रद होते हैं। यदि चन्द्रमा तथा शुभग्रह बैठे हों तो धनप्रद होते हैं।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

३. तृतीय भाव में शुभ एवं पाप किसी भी प्रकार के ग्रह हों, उनका फल शुभ ही होता है।

४. चतुर्थ भाव में शुभग्रह सुखप्रद तथा क्रूरग्रह कष्टप्रद होते हैं।

५. प्रतिष्ठा लग्न से पञ्चम भाव में क्रूरग्रह हानिप्रद तथा सौम्यग्रह सन्तान का सुख देते हैं। यदि पञ्चम भाव में पूर्ण चन्द्रमा हो तो पुत्रप्रदायक तथा क्षीण चन्द्रमा हो तो पुत्रों को हानिप्रद होता है।

६. प्रतिष्ठा लग्न से छठें भाव में चाहे पूर्ण चन्द्रमा हो अथवा क्षीण चन्द्रमा हो, शत्रुओं का नाश करता है। षष्ठ में शुभग्रह शत्रुवर्धक तथा पापग्रह शत्रुनाशक होते हैं।

७. प्रतिष्ठा लग्न से सप्तम स्थान में पापग्रह हो तो यजमान को रोगकारक होते हैं तथा शुभग्रह शुभफल प्रदान करते हैं।

८. प्रतिष्ठा लग्न से अष्टम स्थान में स्थित शुभ या अशुभ सभी प्रकार के ग्रह यजमान के लिये अनिष्टकारक होते हैं, अतः अष्टम भाव तो ग्रहरहित ही होना चाहिये।

९. यदि प्रतिष्ठा लग्न से नवम भाव में पापग्रह हों तो धर्म का नाश होता है, परन्तु नवम भाग में शुभग्रह हों तो धर्म की वृद्धि होती है। नवम भाव में चन्द्रमा भी शुभ फलदायक होता है।

१०. दशम भाव में बैठे पापग्रह लग्न को भंग करते हैं तथा शुभग्रह एवं चन्द्रमा सुयश की वृद्धि करते हैं।

११. ग्यारहवें भाव में शुभग्रह या पापग्रह कोई भी बैठा हो प्रचुर लाभप्रद होता है।

१२. इसी प्रकार बारहवें स्थान में बैठे शुभाशुभ सभी ग्रह व्ययकारक होते हैं॥ १०-१७॥

विमर्श—प्रतिष्ठा की लग्नकुण्डली में यदि अकेला गुरु बलवान् होकर लग्न में बैठा हो अथवा बली बुध या बलवान् शुक्र बैठा हो तो वह दोषों के समूह को उसी प्रकार से नष्ट कर देता है, जिस प्रकार स्वामी कार्तिकेय ने तारकासुर के दैत्यवृन्द का नाश किया था। जैसा कि वसिष्ठजी का कथन है—

'एकोऽपि जीवो बलवान तनुस्थः सितोऽपि सौम्योऽप्यथवा बली चेत्।
दोषानशेषान्विनिहन्ति सद्यः स्कन्दो यथा तारकदैत्यवृन्दम्॥'

—बृ० दै० रंजन

लग्न में गुणाधिक्य की प्रशंसा

गुणाधिकतरे लग्ने दोषाल्पत्वतरे यदि।
सुराणां स्थापनं तत्र कर्त्तुरिष्टार्थसिद्धिदम्॥ १८॥

जिस लग्न में दोषों की अल्पता हो तथा गुणों की अधिकता हो, उसमें देवताओं की प्रतिष्ठा करने से यजमान के अभीष्ट मनोरथ पूर्ण होते हैं॥ १८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रतिष्ठा के दोषों का फल

हन्त्यर्थहीना कर्त्तारं मन्त्रहीना तु ऋत्विजम्।
श्रियं लक्षणहीना तु न प्रतिष्ठासमो रिपुः॥ १९॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां सुरप्रतिष्ठाध्यायो अष्टाविंशतितमः॥ २८॥

द्रव्यहीन प्रतिष्ठा यजमान का नाश करती है, मन्त्रहीनप्रतिष्ठा ऋत्विजों के लिये हानिकर होती है तथा यदि मूर्ति लक्षणरहित है तो उसकी प्रतिष्ठा यजमान की लक्ष्मी को नष्ट करती है। अतः दोषपूर्ण प्रतिष्ठा के समान दूसरा कोई शत्रु नहीं है॥ १९॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के अट्ठाईसवें सुरप्रतिष्ठाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ २८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नवविंशोऽध्यायः

वास्तुविधानाध्यायः

गृहनिर्माणस्थल की भूमिपरीक्षा

निर्माणे पत्तनग्रामगृहादीनां समासतः।
क्षेत्रमादौ परीक्षेत गन्धवर्णरसप्लवैः॥ १॥

किसी नगर, ग्राम अथवा आवास के निर्माण के पूर्व साररूप में उसके क्षेत्र (निर्माण-स्थल)की गन्ध, वर्ण (रंग), रस (स्वाद) तथा प्लव (पानी का बहाव या ढलान) द्वारा परीक्षा कर लेनी चाहिये॥ १॥

ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिये शुभ गन्ध एवं वर्ण

मधुपुष्पाम्लपिशितगन्धान् विप्रानुपूर्वकम्।
सितरक्तेश हरित कृष्णवर्णं यथाक्रमात्॥ २॥

ब्राह्मणों के लिये मधु गन्धवाली, क्षत्रियों को पुष्प के समान सुगन्धिवाली, वैश्यों के लिये अम्ल गन्धवाली तथा शूद्रों के लिये कच्चे मांस के समान गन्धवाली भूमि प्रशस्त होती है।

इसी प्रकार ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिये क्रमशः श्वेतवर्ण, रक्तवर्ण, हरितवर्ण तथा कृष्णवर्ण की भूमि वास करने के लिये शुभ होती है॥ २॥

स्वाद एवं प्लव द्वारा भूमि की परीक्षा

मधुरं कटुकं तिक्तं कषायाश्च रसः क्रमात्।
अत्यन्तं वृद्धिदं नृणामीशानप्रागुदक्प्लवम्॥ ३॥
अन्य दिक्षु प्लवं तेषां शश्वदत्यन्तहानिदम्।

ब्राह्मणों के लिये मधुर स्वादवाली भूमि, क्षत्रियों के लिये कटुक स्वाद (मिर्च की भाँति) स्वादवाली भूमि, वैश्यों के लिये तिक्त स्वाद (नीम की भाँति स्वाद) वाली भूमि तथा शूद्रों के लिये कषाय स्वादवाली भूमि क्रमशः शुभ होती है।

सभी वर्णों के लिये जिस भूमि का ढाल (पानी का बहाव) ईशान कोण (पूर्व+उत्तर का कोना) में हो वह वृद्धिदायक (उन्नतिकारक) होती है, शेष दिशाओं में जिस भूमि का प्लव (जल बहाव) हो वह हानिकारक होती है॥ ३-३½॥

विमर्श—अन्य ग्रन्थों में ईशानप्लवा भूमि को सुख-सम्पत्तिदायक, पूर्वप्लवा को उन्नतिदायक, उत्तरप्लवा को धनदायक तथा दक्षिणप्लवा को मृत्यु-शोक-प्रदायक कहा है। नैर्ऋत्य कोण में प्लववाली भूमि घर का नाश करनेवाली, पश्चिमप्लवा भूमि

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कीर्तिदायक, वायुकोणप्लवा भूमि नित्य उद्वेगकारक कही गयी है। इतना ही नहीं कारिका नामक ग्रन्थ के अनुसार जिस भूमि का प्लव सब दिशाओं से मध्य की ओर हो अथवा मध्य से चारों ओर को हो, वह भूमि भी अशुभ होती है—

'श्रियं दाहं तथा मृत्युं धनहानिसुतक्षयम्।
प्रवासं धनलाभञ्च विद्यालाभं क्रमेण च॥
विदधात्यचिरेणैव पूर्वादिप्लवतो मही।
मध्यप्लवा मही नेष्टा न शुभा प्लवतत्परा॥'

—कारिका

'शम्भुकोणे प्लवा भूमिः कर्त्तुः श्रीसुखदायिनी।
पूर्वप्लवा वृद्धिकरी धनदा तूत्तरप्लवा॥
मृत्युशोकप्रदा नित्यं सर्वथा दक्षिणे प्लवा।
गृहक्षयकरी सा च भूमिर्या नैर्ऋतिप्लवा॥
धनहानिकरी चैव कीर्तिदा वरुणप्लवा।
वायुप्लवा तथा भूमिर्नित्यमुद्वेगकारिणी॥'

—बृहद् दैवज्ञरंजन

भूमि के गन्ध-वर्ण-रस द्वारा उपयोग का चक्र

ब्राह्मणी	क्षत्रिया	वैश्या	शूद्रा भूमि	चारों वर्णों के लिये उपयुक्त भूमि
मधुगन्धि श्वेतवर्णा मधुरा	पुष्पगन्धि रक्तवर्णा चरपरी	अम्लगन्धि हरितवर्णा कड़वी	पिशित गन्धि कृष्णवर्णा कसैली	गन्ध वर्ण (रंग) रस (स्वाद)

भूमि के प्लव (जलबहाव) के फल का चक्र

१ ईशान प्लवा	२ पूर्व-प्लवा	३ आग्नेय प्लवा	४ दक्षिण प्लवा	५ नैर्ऋत्य प्लवा	६ पश्चिम प्लवा	७ वायव्य प्लवा	८ उत्तर प्लवा	९ मध्य प्लवा	१० प्लव तत्परा	प्लव की दिशा
शुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ	अशुभ	नारद का मत
विद्यालाभ	श्रीप्रद	दाह	मृत्यु	धनहानि	सुतक्षय	प्रवास	धनलाभ	नेष्ट	नेष्ट	कारिका का मत
श्रीलाभ	उन्नति		मृत्यु शोक	गृहहानि धनहानि	कीर्ति-प्रदा	उद्वेग	धनप्रद	×	×	अन्य मत

भूमि की गर्त्तपरीक्षा

तत्र कर्त्ता हस्तमात्रं खनित्वा तत्र पूरयेत्॥ ४॥
अत्यन्तवृद्धिरधिके हीने हानिः समे समम्।
तथा निशादौ कृत्वा तु पानीयेन प्रपूरयेत्॥ ५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रातर्दृष्टे जले वृद्धिः समं पङ्के व्रणे क्षयः।
एवं लक्षणसंयुक्ते क्षेत्रे सम्यक् समीकृते॥ ६॥

मृत्तिका पूरण परीक्षा—कर्त्ता पुरुष अपने हाथ से उस भूमि में एक हाथ लम्बा एक हाथ चौड़ा तथा एक हाथ गहरा गड्ढा खोदे। उससे जो मिट्टी बाहर निकले, उसे पुनः उसी गर्त्त (गड्ढे) में भर दे। यदि वह मिट्टी गर्त्त के किनारों के बहुत ऊपर तक रहे, तो वृद्धिकारक (उन्नतिकारक) होती है। यदि पूरा गड्ढा न भरे, तो हानि की सूचक होती है तथा सम रहने पर समफल होता है।

जल पूरण परीक्षा—रात्रि में उस गर्त्त को पानी से लबालब भर दें। प्रातःकाल उस गड्ढे को देखें, प्रातःकाल वह गर्त्त कुछ चौड़ा हो गया हो तो वृद्धि का सूचक होता है। यदि उतना ही रहे तो समान फल जानना । यदि प्रातः गड्ढे की तली में दरारें पड़ गयी हों तो वह भूमि वास करने में क्षयङ्करी जानना चाहिये। इस प्रकार भूमि की परीक्षा से सन्तुष्ट हो जाने पर फिर उस भूमि का समतलीकरण कर लेना चाहिये॥ ४-६॥

दिक्साधन

दिक्साधनाय तन्मध्ये समे मण्डलमालिखेत्।
द्वादशाङ्गुलकं शङ्कुं तन्मध्ये स्थापयेत् ततः॥ ७॥
ततश्छायां स्पृशेद्यत्र वृत्ते पूर्वापराह्णयोः।
तत्र कार्यावुभौ बिन्दू वृत्ते पूर्वापराविधौ॥ ८॥
रेखाया सोत्तरा साध्या तन्मध्ये तिमिनास्फुटा।
तन्मध्ये तिमिनारेखा कर्त्तव्या पूर्वपश्चिमा॥ ९॥
तन्मध्यमत्स्यैर्विदिशः साध्यासूचीमुखास्तदा।
मध्याद् विनिर्गतैः सूत्रैश्चतुरस्त्रं लिखेद् बहिः॥ १०॥
चतुरस्त्री कृते क्षेत्रे षड्वर्गपरिशोधिते।
रेखामार्गे च कर्त्तव्यं प्राकारं सुमनोहरम्॥ ११॥

भूमि के समतलीकरणोपरान्त उस भूमि के मध्यभाग में मण्डल (वृत्त) बनाये। उस वृत्त में बारह अंगुल के शङ्कु (खूँटी या कील) को स्थापित करे। उस द्वादशाङ्गुल शंकु की सूर्य के प्रकाश में बनने वाली पूर्वाह्न एवं अपराह्न की छाया पूर्व एवं पश्चिम में जहाँ तक पहुँचे, वहाँ चिह्नार्थ बिन्दु अंकित कर दे। उन दोनों पूर्व-पश्चिम बिन्दुओं से पूर्व एवं पश्चिम दिशा सूचित होगी तथा उस पूर्व एवं पश्चिमगत रेखा को समकोण पर काटनेवाली उत्तर-दक्षिण रेखा से विभाजित करने से उत्तर एवं दक्षिण दिशा का साधन हो जायेगा। यह रेखा परकार से खींचने पर मत्स्य समान आकृति की बन जाती है। इस प्रकार ये चार समकोण बन जायेंगे। इन समकोणों को मध्य में सूक्ष्म रेखा द्वारा

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

समविभक्त कर देने से विदिशाओं (कोणों) का ज्ञान हो जाता है। फिर इसके आधार पर गृहनिर्माण-स्थल को चतुरस्र (चौकोर) रेखांकित कर देना चाहिये। फिर उस चतुरस्र स्थल में षड्वर्ग द्वारा परिशोधित कर रेखाओं द्वारा चहारदीवारी बना दें॥ ७-११ ॥

विमर्श—इस प्रकार का दिक्साधन स्थूल है; क्योंकि वर्ष में केवल दो बार जब सायन सूर्य मेष राशि तथा तुला में प्रवेश करते हैं, तभी सूर्य ठीक पूर्व दिशा में निकलता है। शेष दिनों में पूर्व की अपेक्षा कुछ उत्तर अथवा दक्षिण में प्रतिदिन हटते हुए उदित होता है। अब इस छह मास के अन्तराल की आज के समय में प्रतीक्षा नहीं की जा सकती है, एतदर्थ ग्रन्थों में नक्षत्रों से दिक्साधन की विधियाँ वर्णित हैं। परन्तु वर्तमान समय में उनके झंझट में पड़ने की आवश्यकता ही नहीं है और यह कार्य किसी दिक्सूचक यन्त्र की सहायता से तुरन्त कर लेना चाहिये।

ऊपर श्लोक ११ में 'षड्वर्गपरिशोधिते' वाक्यांश आया है। इसका अर्थ है गृह-निर्माण कर्त्ता (गृहस्वामी) के नाम के अनुसार जो नाम नक्षत्र हो, उससे गृह के नक्षत्र का मेलापक करके फिर उसके अनुसार घर का क्षेत्रफल निर्धारित करने से है।

दिक्शोधन की अनिवार्यता के सम्बन्ध में वृद्ध नारद का कथन है—

'प्रासादे सदनेऽलिन्दे द्वारे कुण्डे विशेषतः।
दिङ्मूढे कुलनाशः स्यात् तस्मात्संसोधयेद् दिशः॥'

अर्थात् देवालय, गृह, अलिन्द (कमरा) या द्वार के निर्माण में सही एवं शुद्ध दिशा का ज्ञान परमावश्यक है। इसी प्रकार से कुण्ड, मण्डप एवं यज्ञशालादि के निर्माण के पूर्व भी दिक्साधन सम्यक् प्रकार से कर लेना चाहिये। अन्यथा दिङ्मूढ़ता की स्थिति से गृहस्वामी अर्थात् कर्त्ता का कुल नष्ट हो जाता है।

घर के चारों ओर के आठ भाग दो मुखों में द्वारों के फल

आयामेषु चतुर्दिक्षु प्रागादिषु च सत्स्वपि।
अष्टाष्टौ च प्रतिदिशं द्वाराणि स्युर्यथाक्रमात्॥ १२॥
प्रदक्षिणक्रमात्तेषाममूनि च फलानि वै।
हानिर्नैस्वं धनप्राप्तिर्नृपपूजा महद् धनम्॥ १३॥
अतिचौर्यमतिक्रोधो भीतिर्दिशि शचीपतेः।
निधनं बन्धनं भीतिरर्थाप्तिर्धनवर्द्धनम्॥ १४॥
अनातङ्कं व्याधिभयं निःसत्त्वं दक्षिणां दिशि।
पुत्रहानिः शत्रुवृद्धिः लक्ष्मीप्राप्तिर्धनागमः॥ १५॥
सौभाग्यमतिदौर्भाग्यं दुःखं शोकश्च पश्चिमे।
कलत्रहानिर्निःसत्त्वं हानिर्धान्यं धनागमः॥ १६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सम्पद् वृद्धिर्महाभीतिरामयो दिशि शीतगोः।
एवं गृहादिषु द्वारं विस्ताराद् द्विगुणोच्छ्रितम्॥ १७॥
इति प्रदक्षिणं द्वारं फलमीशानकोणतः।
मूलद्वारस्य चोक्तानि नान्यत्रैवं वियोजयेत्॥ १८॥
पश्चिमे दक्षिणे चैव कपाटं स्थापयेद् गृहे।

घर की चारों भुजाओं में प्रत्येक भुजा (दिशा) में ८-८ भागों की कल्पना करें (ये आठ भाग नौ रेखाओं से बनते हैं)। इस प्रकार घर के चारों ओर अभीष्ट दिशाओं में द्वार करने पर उसका फल निम्न प्रकार होगा। यह फल प्रदक्षिण क्रम (पूर्व-दक्षिण-पश्चिम तथा उत्तर इस क्रम से) जानना चाहिये।

(क) **पूर्व दिशा के आठ द्वारों का फल** (ईशान कोण से प्रारम्भ करके)— १. प्रथम भाग में हानिकारक, २. द्वितीय भाग में दरिद्रताकारक, ३. तृतीय भाग में धनलाभ, ४. चतुर्थ भाग में राज्यलाभ, ५. पंचम भाग में प्रचुर धनलाभ, ६. छठे भाग में बार-बार चोरी होना, ७. सातवें भाग में अति क्रोध तथा ८. आठवें भाग में भय होता है। ये फल शचीपति इन्द्र की दिशा (पूर्व) के द्वारों के हैं॥ १२-१३½॥

(ख) **दक्षिण दिशा के अष्टभागों में द्वार का फल**—दक्षिण दिशा में (अग्निकोण से प्रारम्भकर) १. प्रथम भाग में द्वार करने से मृत्यु, २. द्वितीय भाग में द्वार बन्धन (कारावास अपहरण आदि) कारक, ३. तृतीय भाग में द्वार भयकारक, ४. चतुर्थ भाग में धनप्राप्ति, ५. पाँचवें भाग में धनवृद्धि, ६. छठें भाग में आरोग्यकारक, ७. सातवें भाग में रोगकारक तथा ८. आठवें भाग में द्वार करना दरिद्रताकारक होता है।

(ग) **पश्चिम दिशा के आठ भागों में द्वारों का फल**—नैर्ऋत्य कोण से आरम्भ करके पश्चिम दिशा में क्रमशः १. प्रथम भाग में द्वार करना पुत्रहानिकारक, २. द्वितीय भाग में शत्रुवृद्धिकारक, ३. तृतीय भाग में लक्ष्मीप्राप्तिकारक, ४. चतुर्थ भाग में धन लाभकारक, ५. पंचम भाग में सौभाग्यप्रदायक, ६. छठें भाग में अति दुर्भाग्यकारक, ७. सातवें भाग में दुःखप्रद तथा ८. आठवें भाग में शोकप्रद होता है।

(घ) **उत्तर दिशा के द्वारों का फल**—वायव्य कोण से आरम्भ करके क्रमशः १. प्रथम भाग में पत्नी की हानि (अथवा पति की हानि), २. द्वितीय में दरिद्रता, ३. तृतीय में हानि, ४. चतुर्थ में धान्य की प्रचुरता, ५. पंचम में धनलाभ, ६. छठे में धनवृद्धि, ७. सातवें में महाभय तथा ८. आठवें भाग में द्वार करना रोगकारक होता है॥ १४-१६½॥

द्वार की जितनी चौड़ाई हो, उससे उसकी ऊँचाई द्विगुणित होनी चाहिये। इस प्रकार ईशान कोण से प्रदक्षिण क्रम से चारों दिशाओं में मुख्य द्वार का फल कहा है॥ १७-१८½॥

घर के पश्चिम-दक्षिण में कपाट लगायें।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

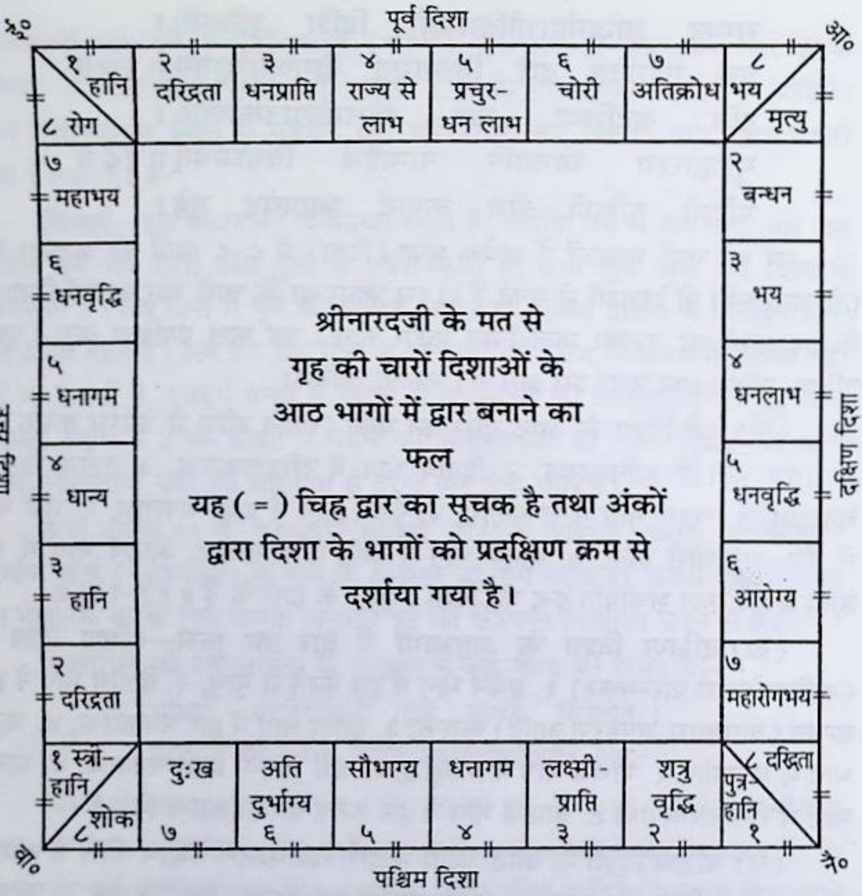

ब्रह्मस्थान में निर्माणकार्य का निषेध तथा पिशाचांशों का त्याग

प्राकारान्तः क्षितिं कुर्यादेकाशीतिपदं यथा॥ १९॥
मध्ये नवपदं ब्रह्मस्थानं तदतिनिन्दितम्।
द्वात्रिंदंशाः प्राकाराः समीपांशाः समन्ततः॥ २०॥
पिशाचांशा गृहारम्भे दुःखशोकभयप्रदाः।
शेषास्युर्गृहनिर्माणे पुत्रपौत्रधनप्रदाः॥ २१॥

प्राकार (चहारदीवारी = अहाता) के भीतर जो भूमि हो, उसके इक्यासी (८१) भाग करने पर उसके मध्य में नौ भाग में ब्रह्मस्थान होता है। इस स्थान को खाली रखना चाहिये; क्योंकि इसमें निर्माण कार्य अत्यन्त निन्दित होता है। इस प्राकार से संलग्न चारों ओर के बत्तीस भाग (कोठि) 'पिशाचांश' कहलाते हैं। अतः ब्रह्मस्थान की भाँति वास्तुभूमि के इन ३२ भागों का स्थान भी रिक्त रखना चाहिये, इनमें किसी प्रकार का निर्माण कार्य नहीं करना चाहिये। उनमें कमरे आदि बनाने से दुःख, शोक एवं भय उत्पन्न

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होता है। शेष भागों (ब्रह्मस्थान एवं पिशाचांशों के मध्य के कोष्ठकों में) ही घर के विभिन्न कार्यों में उपयोगी कक्ष बनाना पुत्र-पौत्र तथा धनदायक होता है ॥ १९-२१ ॥

विमर्श—यह व्यवस्था प्राचीन आचार्यों ने पर्यावरण को शुद्ध बनाये रखने के लिये की है। इसके अनुसार पूरे आयताकार भूखण्ड को दस रेखा पूर्व से पश्चिम की ओर तथा दस रेखा उत्तर से दक्षिण की ओर खींचकर ९×९=८१ कोष्ठों में विभाजित कर लें। भूखण्ड की चारों दिशाओं को दिक्शुद्ध कर चारों ओर प्राकार (परकोटा) बना दें, परकोटा बाहरी रेखा होगी। परकोटे के भीतर चारों ३२ भाग पिशाचांश हैं, उनको खाली छोड़ने से वायुसंचार मुक्त भाव से होता है तथा भूखण्ड के ठीक बीचों-बीच जहाँ ९ खण्डों में ब्रह्मस्थल है, उसे आंगन के रूप में पूर्णतः खुला छोड़ दें, वहाँ कोई निर्माण-कार्य न रखें (उसके मध्य में तुलसी वृक्ष का घरोंदा बनाया जा सकता है)। ब्रह्मस्थान में जूठन, गन्दगी, जूते, चप्पल आदि न पहुँचना चाहिये। अन्यथा गृह-स्वामी को पीड़ा होती है, जैसाकि श्रीवराहमिहिर ने कहा है—

'सुखमिच्छन् ब्रह्माणं यत्नाद् रक्षेद् गृही गृहान्तस्थम्।
उच्छिष्ठाद् उपघातात् गृहपतिरुपतप्यते तस्मिन्॥'

—बृहत्संहिता ५३। ६६

गृहभूमि के ये ८१ भाग वृत्ताकार वास्तु तथा त्रिकोणाकार वास्तु में भी किये जाते हैं।

इक्यासी पद के आयताकार वास्तु का चक्र

ईशान० पूर्व आग्नि०

१. शिखी	२. पर्जन्य	३. जयन्त	४. इन्द्र	५. सूर्य	६. सत्य	७. भृश	८. अन्तरिक्ष	९. अनिल
३२. दिति								१०. पूषा
३१. अदिति								११. वितथ
३०. भुजग			ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा			१२.बृहत्क्षत
२९. सोम			ब्रह्मा	ॐ ब्रह्मा	ब्रह्मा			१३. यम
२८. भल्लाट			ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा			१४. गन्धर्व
२७. मुख्य								१५.भृंगराज
२६.नाग								१६. मृग
२५. रोग	२४. पापयक्ष्मा	२३. शोष	२२. असुर	२१. वरुण	२०. कुसुमदन्त	१९. सुग्रीव	१८. दौवारिक	१७. पिता

उत्तर (बायें) — दक्षिण (दायें)

वायव्य पश्चिम नैर्ऋत्य

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वृत्ताकार वास्तु में ब्रह्मस्थानादि

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

८१ पद का त्रिभुजवास्तु
ब्रह्मस्थान एवं पिशाचांश का स्थान

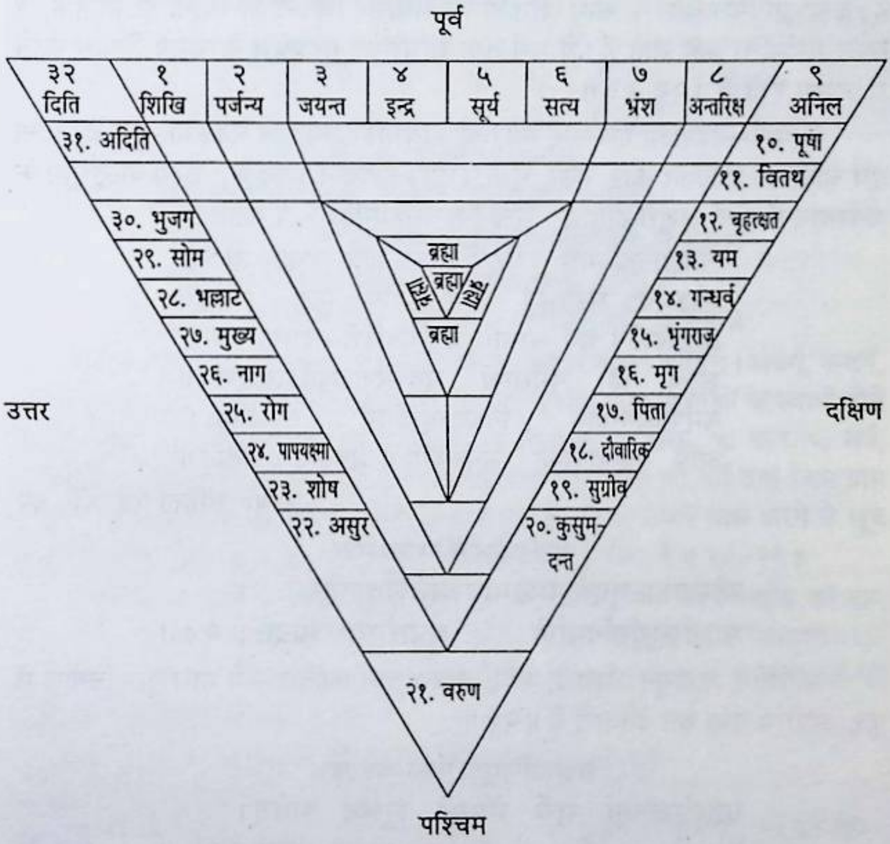

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वास्तु में मर्म एवं शिरा का ज्ञान

शिरस्यर्वाक्तना रेखा दिग्विदिङ्मध्यसम्भवाः।
ब्रह्मभागपिशाचांशाः शिराणां यत्र संहतिः॥ २२॥
तत्र तत्र विजानीयाद् वास्तुनो मर्मसन्धयः।
मर्माणि सन्धयो नेष्टाः तेष्वेव विनिवेशने॥ २३॥

वास्तुभूमि की दिशा-विदिशाओं में जो कल्पिरेखा होती हैं, वे शिरा कहलाती हैं। ब्रह्मभाग पिशाचांश के साथ शिराओं का संयोजन जिन-जिन स्थानों पर होता है, वे स्थल मर्मसन्धि कहे जाते हैं। ये मर्म तथा संधिस्थल गृहप्रवेश के समय निवास करने में अशुभ होते हैं॥ २२-२३॥

विमर्श—शिराओं एवं मर्मों का विशेष विचार शल्य ज्ञान में किया जाता है। सोना एवं चाँदी को छोड़कर काष्ठ, हड्डी, भूसा, (तुष) नागदन्त आदि का शल्य वास्तुभूमि के मर्मस्थान में होना अशुभ होता है। जैसा कि वराहमिहिराचार्य कहते हैं—

'धनहानिर्दारुमये पशुपीडारुग्भयानि चास्थिकृते।
लोहमये शस्त्रभयं कपालकेशेषु मृत्युः स्यात्॥
अङ्गारेस्तेन भयं भस्मनि च विनिर्दिशेत्सदाग्निभयम्।
शल्यं हि मर्मसंस्थं सुवर्णरजतादृतेऽत्यशुभम्॥
मर्मण्यमर्मगोवा निरुणध्यर्थागमं तुषसमूहः।
अपि नागदन्तको मर्मसंस्थो दोषकृद् भवति॥'

—बृ० संहिता ५३-६०-६२

गृहनिर्माण में प्रशस्त मास

सौम्यफाल्गुनवैशाखमाघश्रावणकार्तिकाः ।
मासास्युर्गृहनिर्माणे पुत्रारोग्यधनप्रदाः॥ २४॥

मार्गशीर्ष, फाल्गुन, वैशाख, माघ, श्रावण तथा कार्तिक—ये मास गृह-निर्माण में पुत्र, आरोग्य तथा धन देनेवाले हैं॥ २४॥

सङ्क्रान्तियुक्त मासों का ग्रहण

ग्रहसंस्थापनं सूर्ये मेषस्थे शुभदं भवेत्।
वृषस्थे धनवृद्धिः स्यान्मिथुने मरणं ध्रुवम्॥ २५॥
कर्कटे शुभदं प्रोक्तं सिंहे भृत्यविवर्धनम्।
कन्या रोगं तुला सौख्यं वृश्चिके धनवर्धनम्॥ २६॥
कार्मुके च महाहानिर्मकरे स्याद् धनागमः।
कुम्भे तु रत्नलाभः स्यान्मीने सद्मभयावहम्॥ २७॥

गृह-निर्माण में विवाह की भाँति सौर मासों का ग्रहण किया जाता है। तदनुसार १. मेषार्क में गृह बनाने से शुभ होता है। वृषार्क में गृह-निर्माण धनवृद्धिकारक, मिथुन में मृत्युकारक, कर्क में शुभ, सिंह में नौकरों-चाकरों की वृद्धि करनेवाला, कन्या में

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रोगप्रद, तुला में सुखदायक तथा वृश्चिक के सूर्य में धनवृद्धिकारक होता है। धनु के सूर्य में गृहारम्भ अत्यधिक हानिकारक, मकर में धन का लाभ करनेवाला, कुम्भ में रत्नलाभ देनेवाला तथा मीन में भयप्रद होता है॥ २५-२७॥

गृह-निर्माण में मासानुसार फल-प्रदर्शक-चक्र

१ मेष	२ वृष	३ मिथुन	४ कर्क	५ सिंह	६ कन्या	७ तुला	८ वृश्चिक	९ धनु	१० मकर	११ कुम्भ	१२ मीन	**सौर मास**
वैशाख	ज्येष्ठ	आषाढ़	श्रावण	भाद्र	आश्विन	कार्तिक	मार्गशीर्ष	पौष	माघ	फाल्गुन	चैत्र	**सम्बद्ध चान्द्र मास**
शुभप्रद	धनवृद्धि	मरण	शुभप्रद	भृत्यवृद्धि	रोगप्रद	सौख्य	धनवृद्धि	महाहानि	धनागम	रत्नलाभ	भयावह	**फल**

दिशाओं में वर्ग तथा वर्गेश

अकारादिषु वर्गेषु दिक्षु प्रागादिषु क्रमात्।
खगेशौ तु हरिश्वाख्य सर्पाखुमृगमेषकाः॥ २८॥
वर्गेशाः क्रमतो ज्ञेया स्ववर्गात्पञ्चमो रिपुः।
स्ववर्गे परमाप्रीतिः कथ्यते गणकोत्तमैः॥ २९॥

गृहस्वामी के नाम के आदि अक्षर से वर्ग का विचार करना चाहिये। अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग तथा शवर्ग क्रमशः पूर्वादि आठ दिशाओं के स्वामी होते हैं। इन वर्गों के अधिष्ठाता क्रमशः १. गरुड, २. विडाल, ३. सिंह, ४. श्वान, ५. सर्प, ६. मूषक, ७. मृग तथा ८. मेष होते हैं। यदि गृहस्वामी के नाम का वर्ग तथा जिस ग्राम या नगर में वास किया जा रहा है—उसका वर्ग एक ही हो तो उसमें वास करने से खूब सुख तथा स्नेह प्राप्त होता है। स्ववर्ग से पाँचवाँ वर्ग शत्रु होता है॥ २८-२९॥

विमर्श—गृह एवं ग्रामादि में निवास एवं निर्माण के लिये सदैव व्यक्ति की नाम राशि एवं नाम के आदि अक्षर का ही उपयोग करना चाहिये तथा जन्मराशि एवं जन्माक्षर का उपयोग कथमपि नहीं करना चाहिये। उस ग्राम या नगर में उसी वर्ग की दिशा में वास करना शुभ होता है।

वर्ग-वर्गेश एवं उनकी दिशा का ज्ञापक चक्र

वर्गांक संख्या	वर्ग का नाम	वर्ग के अक्षर	वर्ग के स्वामी	वर्ग की दिशा
१	अ वर्ग	अ-आ, इ-ई, उ-ऊ, ए-ऐ, ओ-औ	गरुड	पूर्व
२	क वर्ग	क, ख, ग, घ, ङ	विडाल	आग्नेय
३	च वर्ग	च, छ, ज, झ, ञ	सिंह	दक्षिण
४	ट वर्ग	ट, ठ, ड, ढ, ण	श्वान	नैर्ऋत्य
५	त वर्ग	त, थ, द, ध, न	सर्प	पश्चिम
६	प वर्ग	प, फ, ब, भ, म	मूषक	वायव्य
७	य वर्ग	य, र, ल, व,	मृग	उत्तर
८	श वर्ग	श, ष, स, ह	मेष	ईशान

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

काकिणी विचार

स्ववर्गं द्विगुणं कृत्वा परवर्गेण योजयेत्।
अष्टभिस्तु हरेद् भागं योऽधिकः स धनी भवेत्॥ ३०॥

व्यक्ति के नामाक्षर के वर्ग की जो संख्या (क्रमांक) है, उसे द्विगुणित करें तथा उसमें ग्राम या नगर के वर्ग की संख्या मिला दें। इस योगफल में आठ का भाग दें। जो शेष बचे, वह उस व्यक्ति की काकिणी संख्या होगी। फिर अभीष्ट नगर की वर्गसंख्या (वर्गांक) को द्विगुणित कर उसमें व्यक्ति के आदि नामाक्षर के वर्ग की संख्या जोड़ दें और उस योगफल में ८ का भाग दें, जो शेष बचेगा, वह उस नगर की काकिणी संख्या होगी। जिस ग्राम या नगर की काकिणी संख्या व्यक्ति की काकिणी संख्या से न्यून हो, वह नगर उस व्यक्ति के लिये निवास करने एवं व्यवसायादि करने में लाभप्रद रहेगा॥ ३०॥

विमर्श—तात्पर्य यह है जिसकी काकिणी अधिक होती है, वह लाभ में रहता है। यदि व्यक्ति की काकिणी अधिक होगी, तो व्यक्ति को नगर से लाभ मिलेगा। यदि नगर की काकिणी व्यक्ति की काकिणी से अधिक हो तो नगर लाभ में रहेगा तथा व्यक्ति को घाटा होगा। इसी प्रकार व्यापार की साझेदारी में तथा नौकरी में मालिक या अधिकारी के साथ काकिणी द्वारा मेलापक का विचार किया जाता है। यहाँ शून्य शेष को ८ शेष मानना चाहिये।

ग्राम एवं व्यक्ति की काकिणी का चक्र

ग्राम या नगर का वर्ग एवं संख्याएं	दोनों की काकिणी	व्यक्ति का वर्ग एवं वर्ग की संख्याएं							
		(१) अवर्ग	(२) कवर्ग	(३) चवर्ग	(४) टवर्ग	(५) तवर्ग	(६) पवर्ग	(७) यवर्ग	(८) शवर्ग
(१) अवर्ग	व्यक्ति की	३	५	७	१	३	५	७	१
		सम	लाभ	लाभ	हानि	हानि	हानि	लाभ	हानि
	ग्राम की	३	४	५	६	७	८	१	२
(२) कवर्ग	व्यक्ति की	४	६	८	२	४	६	८	२
		हानि	सम	लाभ	हानि	लाभ	लाभ	लाभ	हानि
	ग्राम की	५	६	७	८	१	२	३	४
(३) चवर्ग	व्यक्ति की	५	७	१	३	५	७	१	३
		हानि	हानि	सम	लाभ	लाभ	लाभ	हानि	हानि
	ग्राम की	७	८	१	२	३	४	५	६

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(४) टवर्ग	व्यक्ति की	६	८	२	४	६	८	२	४
		लाभ	लाभ	हानि	सम	लाभ	लाभ	हानि	हानि
	ग्राम की	१	२	३	४	५	६	७	८
(५) तवर्ग	व्यक्ति की	७	१	३	५	७	१	३	५
		लाभ	हानि	हानि	हानि	सम	हानि	लाभ	लाभ
	ग्राम की	३	४	५	६	७	८	१	२
(६) पवर्ग	व्यक्ति की	८	२	४	६	८	२	४	६
		लाभ	हानि	हानि	हानि	लाभ	सम	लाभ	लाभ
	ग्राम की	५	६	७	८	१	२	३	४
(७) यवर्ग	व्यक्ति की	१	३	५	७	१	३	५	७
		हानि	हानि	लाभ	लाभ	हानि	हानि	सम	लाभ
	ग्राम की	७	८	१	२	३	४	५	६
(८) शवर्ग	व्यक्ति की	२	४	६	८	२	४	६	८
		लाभ	लाभ	लाभ	लाभ	हानि	हानि	हानि	सम
	ग्राम की	१	२	३	४	५	६	७	८

टीप—वर्गों में ऊपर व्यक्ति की तथा उसके नीचे नगर या ग्राम की काकिणी संख्या दी है।

व्यक्ति के वर्गानुसार ग्राम या नगर में वासयोग्य दिशा का चक्र

व्यक्ति का वर्ग	ग्राम या नगर जिसमें बसना है, उसमें वास की दिशा							
	पूर्व	आग्नेय पूर्व+द०	दक्षिण	नैर्ऋत्य द०+प०	पश्चिम	वायव्य प०+उ०	उत्तर	ईशान उ०+पू०
अवर्ग	अति शुभ	शुभ	शुभ	सम	अति अशुभ	सम	शुभ	शुभ
कवर्ग	शुभ	अति शुभ	शुभ	शुभ	सम	अति अशुभ	सम	शुभ
चवर्ग	शुभ	शुभ	अति शुभ	शुभ	शुभ	सम	अति अशुभ	सम
टवर्ग	सम	शुभ	शुभ	अति शुभ	शुभ	शुभ	सम	अति अशुभ
तवर्ग	अति अशुभ	सम	शुभ	शुभ	अति शुभ	शुभ	शुभ	सम
पवर्ग	सम	अति अशुभ	सम	शुभ	शुभ	अति शुभ	शुभ	शुभ
यवर्ग	शुभ	सम	अति अशुभ	सम	शुभ	शुभ	अति शुभ	शुभ
शवर्ग	शुभ	शुभ	सम	अति अशुभ	सम	शुभ	शुभ	अति शुभ

विशेष—काकिणी विचार में कई विद्वानों का मत है कि पुरुष की काकिणी से नगर या ग्राम की काकिणी का अधिक होना शुभ होता है। यह अर्थ समीचीन नहीं है; क्योंकि मुहूर्तमार्तण्ड में स्पष्ट कहा है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'अष्टाव प्रमुखाः स्व पञ्चम पराः द्विघ्नः स्वर्णोऽन्ययुक्।
तष्टः काकणिका गजैर्मिथ इमा यस्याधिकाः सोऽर्थदः॥'

इसमें 'अर्थप्रद' तो वही हो सकता है, जिसके पास धन हो। काकिणी में विचार इसी बात का होता है कि अमुक व्यक्ति अमुक वासस्थान में अथ अमुक नामक अन्य व्यक्ति के साथ साझेदारी में व्यवसाय करने पर धनी होगा अथवा ऋणी होगा? अतः जब वासस्थान (नगर या ग्राम) की काकिणी अधिक होती है तो उस व्यक्ति को उस वासस्थल से ऋण लेना पड़ेगा, तब वह दुःखी तथा खिन्न होगा। इसी बात को स्पष्ट करते हुए श्रीनारदजी ने आगे के श्लोकों में कहा है।

काकिणी विचार का स्पष्टीकरण

साध्यवर्गं पुरःस्थाप्य पृष्ठतः साधकं न्यसेत्।
विभजेद् अष्टाभिः शेषं साधकस्य धनं भवेत्॥ ३१॥
व्यत्ययेनागतं शेषं साधकस्य ऋणं स्मृतम्।
धनाधिकं स्वल्पमृणं सर्वसम्पत्करं स्मृतम्॥ ३२॥

यहाँ व्यक्ति साधक तथा वास-स्थान अथवा अन्य व्यक्ति (साझीदार, अधिकारी, सहकर्मी आदि) साध्य होता है। साध्य के वर्ग को पुरः (इकाई के स्थान पर) स्थापित करें। उसके पृष्ठ भाग में साधक (व्यक्ति) की वर्ग संख्या स्थापित करें। फिर उसमें आठ का भाग दें, तो शेष साधक का धन होता है। यदि शेष में विपर्यय हो, तो वह साधक का ऋण होता है, धन का अधिक होना तथा ऋण का स्वल्प होना शुभ है॥ ३१-३२॥

विमर्श—इस प्रकार श्रीनारदजी द्वारा तथा वसिष्ठादि महर्षियों द्वारा पुरुष की काकिणी को 'धन' तथा ग्रामादि की काकिणी को 'ऋण' कहा गया है। अतः ऋण का न्यून तथा धन का अधिक होना ही शुभ होता है। पिछले पृष्ठों में स्थान एवं व्यक्ति की काकिणी का चक्र दिया गया है, जिसमें वाम भाग में ऊपर से नीचे की ओर स्थान (नगर-ग्राम) अथवा साध्य के वर्ग दिये गये हैं तथा उसके दाहिनी ओर ऊपर से नीचे व्यक्ति एवं नगर की काकिणी लिखी गयी है। ऊपरी भाग में व्यक्ति के आठों वर्गों के नाम दिये गये हैं तथा उनके नीचे प्रत्येक वर्ग की व्यक्ति एवं नगर की काकिणी की संख्या लिखकर साथ ही फल भी लिख दिया गया है।

उदाहरण के लिये किसी व्यक्ति का नाम शिवनारायण है, उसे लहार नगर में बसना है, वह इस व्यक्ति के लिये कैसा फल देगा? शिवनारायण का शवर्ग है, जिसकी संख्या ८ है अतः ८×२=१६ इसमें लहार का यवर्ग जिसकी संख्या ७ को जोड़ दिया, तो १६+७=२३ हुआ। इस योगफल में ८ का भाग देने पर शेष ७ बचा, यह व्यक्ति की काकिणी संख्या हुई।

अब लहार के वर्गांक ७ का दूना किया, तो १४ हुआ। इसमें शिवनारायण का वर्ग ८ जोड़ दिया तो योग १४+८=२२ हुए, इसमें आठ का भाग देने से शेष ६ यह लहार नगर की काकिणी संख्या हुई। इसमें व्यक्ति की काकिणी ७ से नगर की काकिणी ६ होने पर १ अंक न्यून होने से शिवनारायण को यह नगर वास करने के लिये शुभ है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अब हमने ग्राम एवं व्यक्ति की काकिणी चक्र का अवलोकन किया, तो बाईं ओर स्थान लहार के वर्ग संख्या ७ के दाहिनी ओर तथा ऊपर शिवनारायण की वर्ग संख्या ८ इन दोनों के सम्पात कोष्ठक में देखा तो व्यक्ति की काकिणी ७ तथा नगर की काकिणी ६ लिखी है, उसके दाहिनी ओर उसी कोठे में लाभ लिखा है। इस प्रकार बिना गुणा-भाग के उक्त चक्र से काकिणी तुरन्त देखी जा सकती है।

क्षेत्रफल तथा आय का विचार

विस्तारगुणितं दैर्घ्यं गृहक्षेत्रफलं भवेत्।
तत्पृथक् वसुभिर्भक्तं शेषमायो ध्वजादिकः॥ ३३॥

घर के भूखण्ड का जो विस्तार (चौड़ाई) हो, उसका गुणा उसके दैर्घ्य (लम्बाई) से करने पर उस गृह का क्षेत्रफल होता है। गृह के क्षेत्रफल में आठ का भाग देने पर शेषानुसार ध्वजादि आठ आय होते हैं॥ ३३॥

आठ आयों के शेषानुसार नाम

ध्वजो धूम्रोऽथ सिंहःश्वा सौरभेयः खरो गजः।
ध्वाङ्क्षश्चैव क्रमेणैतदायाष्टकमुदीरितम्॥ ३४॥

१. ध्वज, २. धूम्र, ३. सिंह, ४. श्वान, ५. वृष, ६. खर, ७. गज तथा ८. ध्वाँक्ष (काक)—ये आठ आय शेषानुसार क्रमशः कहे गये हैं॥ ३४॥

ब्राह्मणादि वर्णों के लिये शुभ आय

ब्राह्मणस्य ध्वजो ज्ञेयः सिंहो वै क्षत्रियस्य च।
वृषभश्चैव वैश्यस्य सर्वेषान्तु गजः स्मृतः॥ ३५॥

१. ध्वज आय ब्राह्मणों के लिये शुभ होती है। २. क्षत्रियों के लिये सिंह आय के क्षेत्रफल वाला गृह शुभ फलदायक है। ३. वैश्यों के लिये वृषभ आयवाला गृह विशेष शुभ कहा गया है तथा ४. गज आय सभी वर्णों के लिये शुभफलदायक होती है॥ ३५॥

ध्वजादि आयों के सामान्य फल

कीर्तिःशोको जयो वैरं धनं निर्धनता सुखम्।
रोगश्चैते गृहारम्भे ध्वजादीनां फलं क्रमात्॥ ३६॥

सामान्यतः १. ध्वज आयवाला गृह कीर्तिदायक, २. धूम्र आयवाला घर शोकप्रद, ३. सिंह आयवाला घर जयप्रद, ४. श्वान आयवाला आवास वैर बढ़ानेवाला, ५. वृष आय का मकान धनदायक, ६. खर आयवाला सद्म निर्धनताकारक, ७. गज आयवाला वेश्म सुख देनेवाला तथा ८. ध्वाँक्ष आयवाला आवास रोगदायक होता है॥ ३६॥

व्यक्ति एवं वासस्थान की राशियों का मेलापक

द्विर्द्वादशं निर्धनाय त्रिकोणं असुताय च।
षडाष्टकं मृत्यवे स्याच्छुभदा राशयः परे॥ ३७॥

व्यक्ति (निवासकर्त्ता) की नामराशि से वासस्थान (गृह, ग्राम-नगर एवं साझेदार) की राशियों में यदि द्विर्द्वादश हो तो निर्धनता प्राप्त होती है। यदि दोनों की

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

राशियों में परस्पर त्रिकोण सम्बन्ध हो तो कलहकारक होता है तथा दोनों की राशियों में षडष्टक सम्बन्ध होने पर मृत्युभय अथवा मृत्युतुल्य कष्ट होता है। शेष राशि सम्बन्ध (त्रिरेकादश, चतुर्थ-दशम तथा समसप्तक) शुभ होते हैं॥ ३७॥

विमर्श—जिस प्रकार से वर-कन्या के विवाहार्थ मेलापक किया जाता है, उसमें जन्मराशि की प्रधानता होती है, उसी प्रकार निवासकर्त्ता एवं निवासस्थान (गृह-ग्रामादि) की राशियों में भी मेलापक, दोनों की नामराशियों के आधार पर देखना चाहिये। यहाँ गृह एवं वास्तु में किये जानेवाले मेलापक में जन्मराशि से विचार कभी नहीं करना चाहिये।

जैसे पूर्व में नाम के आदि अक्षर के वर्गों के आधार पर वर्ग मेलापक का कथन है, उसी प्रकार नामराशि (वास्तुशास्त्रीय राशि) के अनुसार, व्यक्ति के लिये गृह-ग्राम-नगर आदि शुभ है, अथवा नहीं—वह देखा जाता है। जैसा कि कहा गया है—

'देशग्रामगृहज्वर व्यवहृतिषु दाने मन्त्रौ।
सेवा काकिणि वर्गसंगरपुनर्भूमेलके नामभम्॥'

ज्योतिषदीपिका नामक ग्रन्थ में भी यही बात कही गयी है—

'काकिण्यां वर्गशुद्धौ च वादे द्यूते स्वरोदये।
मन्त्रे पुनर्भूवरणे नामराशेः प्रधानता॥'

वास्तुशास्त्रीय नक्षत्र एवं राशि—वास्तुशास्त्रीय नक्षत्र एवं राशि मेलापक विचार के लिये प्राचीन महर्षियों ने प्रचलित अवकहडा चक्र से वास्तुशास्त्रीय अवकहडा चक्र को कुछ भिन्न प्रकार का बताया है, जिसके अनुसार १. मेष राशि में अश्विनी, भरणी तथा कृत्तिका—ये तीनों नक्षत्र होते हैं। २. सिंह राशि में मघा, पूर्वा फाल्गुनी तथा उत्तरा फाल्गुनी—ये तीन नक्षत्र पूरे-पूरे लिये जाते हैं। ३. तथैव धनु राशि में मूल-पूर्वाषाढा तथा उत्तराषाढ़ा नक्षत्रों का ग्रहण किया जाता है। ४. इस प्रकार शेष जो १८ नक्षत्र बचते हैं, वे शेष नौ राशियों में दो-दो की संख्या में पूर्णरूपेण समाविष्ट हो जाते हैं। जैसा कि कहा गया है—

'अश्विन्यादि त्रयं मेषे सिंहे प्रोक्तं मघात्रयम्।
मूलादि त्रितयञ्चापे शेष राशि द्विके द्विके॥'

—विश्वकर्मप्रकाश २।७७

'अश्विन्यादि त्रयं मेषे सिंहे प्रोक्तं मघात्रयम्।
मूलादि त्रितयं चापे शेषभेषु द्वयं द्वयम्॥'

—बृ० वा० मा०

'अश्विन्यादि त्रयं मेषे सिंहे प्रोक्तं मघात्रयम्।
मूलादि त्रितयं चापे शेषेषु नवराशयः॥'

—वास्तुसार (बृ० दै० रं० पृ० २९२)

इस प्रकार से गृह मेलापक करने के लिये राशियों के द्विर्द्वादशादि का शुभाशुभ विचार अलग प्रकार के विशेष अवकहडा चक्र द्वारा किया जाता है। आगे के पृष्ठ में यह वास्तुशास्त्रीय अवकहडा चक्र दिया जाता है, जिसका उपयोग कर्त्तापुरुष तथा

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वासस्थान के नाम के आदि अक्षर (पहिले अक्षर) के अनुसार करें। इसमें स्वरों एवं मात्राओं के ह्रस्व एवं दीर्घ में कोई भेद नहीं है अर्थात् अ-आ, तथा क-का को एक ही समझकर चक्र में राशि एवं नक्षत्र देखें।

नाम के प्रथमाक्षर पर आधारित
वास्तुशास्त्रीय अवकहडा चक्र

क्रमांक	वासस्थान के या व्यक्ति के नाम का प्रथम अक्षर	नाम का वास्तुशास्त्रीय नक्षत्र	नाम की वास्तुशास्त्रीय राशि
१	चु-चे-चो, ल-ला	अश्विनी	मेषराशि
२	ली-लू, ले, लो	भरणी	
३	अ-आ-इ-ई-उ-ऊ-ए-ऐ	कृत्तिका	
४	ओ-औ- व-वि षु (ब-बि-बु)	रोहिणी	वृषराशि
५	क-का-कि-की	मृगशिरा	
६	छ-छि, कू, घ, घि, घु, घे, घो, ङ, ङि, ङू	आर्द्रा	मिथुनराशि
७	के-को-ह-हि	पुनर्वसु	
८	हु-हे-हो-ड-डा	पुष्य	कर्कराशि
९	डि-डू डे, डौ	आश्लेषा	
१०	म-मी-मु, मे	मघा	सिंहराशि
११	मो-टा-टी-टु	पूर्वाफाल्गुनी	
१२	टे-टो, पा-पि	उत्तराफाल्गुनी	
१३	पू, ष, ण ठ (ठा-ठि-ठु)	हस्त	कन्याराशि
१४	पे-पो-रा-री	चित्रा	
१५	रू-रे, रो-ता	स्वाति	तुलाराशि
१६	ती, तू, ते, तो	विशाखा	
१७	न-नी, नु, ने	अनुराधा	वृश्चिकराशि
१८	नो, य-यी, यु	ज्येष्ठा	
१९	ये यो-भ-भी	मूल	धनुराशि
२०	भु-ध-फ-ढ	पूर्वाषाढ़ा	
२१	भे-भो-ज-जी, जू-जे, जो	उत्तराषाढ़ा	
२२	ख, खी-खु-खे-खो	श्रवण	मकरराशि
२३	ग-गा-गि-गी-गु-गे	धनिष्ठा	
२४	गो-श-स-शि-सि-शु-सू	शतभिषा	कुम्भराशि
२५	शे-से, शो-सो-द-दा-दि-दी	पूर्वाभाद्रपद	
२६	दु-दू-थ-था-झ-झि-झु-झे-झो	उत्तराभाद्रपद	मीनराशि
२७	च-चा-चि-ची-दे-दो	रेवती	

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्री नारदजी के मत से व्यक्ति एवं वासस्थान की राशि से मेलापक देखने का चक्र

राशि	निवास कर्ता (साधक) व्यक्ति की नाम राशि (कर्ता यजमान की नाम राशियाँ)											
	१. मेष	२. वृषभ	३. मिथुन	४. कर्कट	५. सिंह	६. कन्या	७. तुला	८. वृश्चिक	९. धनु	१०. मकर	११. कुम्भ	१२. मीन
१. मेष	समता	निर्धनता	शुभ	शुभ	अपुत्रता	मृत्युकारक	समता	मृत्युकारक	अपुत्रता	शुभ	शुभ	निर्धनता
२. वृष	निर्धनता	समता	निर्धनता	शुभ	शुभ	अपुत्रता	मृत्युकर	समता	मृत्युकारक	अपुत्रता	शुभ	शुभ
३. मिथुन	शुभ	निर्धनता	समता	निर्धनता	शुभ	शुभ	अपुत्रता	मृत्युकर	समता	मृत्युकारक	अपुत्रता	निर्धनता
४. कर्क	शुभ	शुभ	निर्धनता	समता	निर्धनता	शुभ	शुभता	अनपत्यता	मृत्युकर	समता	मृत्युकर	अनपत्यता
५. सिंह	अपुत्रता	शुभ	शुभ	निर्धनता	समता	निर्धनता	शुभ	शुभता	अनपत्यता	मृत्युकर	समता	मृत्युकर
६. कन्या	मृत्युकर	अपुत्रता	शुभ	शुभ	निर्धनता	समता	निर्धनता	शुभ	शुभता	अनपत्यता	मृत्युकर	समता
७. तुला	समता	मृत्युकर	अपुत्रता	शुभ	शुभ	निर्धनता	समता	निर्धनता	शुभ	शुभता	अनपत्यता	मृत्युकर
८. वृश्चिक	मृत्युकर	समता	मृत्युकर	अपुत्रता	शुभ	शुभ	निर्धनता	समता	निर्धनता	शुभ	शुभ	अनपत्यता
९. धनु	अपुत्रकर	मृत्युकर	समता	मृत्युकर	अपुत्रता	शुभ	शुभ	निर्धनता	समता	निर्धनता	शुभ	शुभ
१०.मकर	शुभ	अनपत्यता	मृत्युकर	समता	मृत्युकर	अपुत्रता	शुभ	शुभ	निर्धनता	समता	निर्धनता	शुभ
११.कुम्भ	शुभ	शुभ	अनपत्यता	मृत्युकर	समता	मृत्युकर	अपुत्रता	शुभ	शुभ	निर्धनता	समता	निर्धनता
१२.मीन	निर्धनता	शुभ	शुभ	अनपत्यता	मृत्युकर	समता	मृत्युकर	अनपत्यता (अपुत्रता)	शुभ	शुभ	निर्धनता	समता

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

राशि मेलापक में ग्रन्थकारों में मतभेद—यहाँ व्यक्ति की नामराशि से नारदजी ने ग्राम की राशि का नवपञ्चम होना अशुभ माना है, परन्तु अन्यों ने त्रिकोण सम्बन्ध को शुभ माना है। इसी प्रकार नारदजी ने दूसरी एवं बारहवीं दोनों राशियों को अशुभ माना है, जबकि आधुनिकों ने द्वितीय को शुभ माना है। नारदजी ने तीसरी एवं ग्यारहवीं राशियों को शुभ माना है, परन्तु आधुनिक ग्रन्थों में उन्हें तीसरी राशि को हानिकर माना है।

परन्तु नारदीयज्योतिषसंहिता एक आर्ष ग्रन्थ है, उसे प्रामाणिक मानना ही होगा। वसिष्ठजी भी नारद की भाँति ही अपना मत प्रकट करते हैं तथा उनके मत में अव्यय अर्थात् सम सप्तक मध्यम फल देता है—

'गृहस्यतत्पतेष्वेकं धिष्ण्यं चेन्निधनप्रदम्।
राशिकूटादिकं सर्वं दम्पत्योरिव विचिन्तयेत्॥
नैःस्वं द्विर्द्वादशे नूनं त्रिकोणे त्वनपत्यता।
षष्ठाष्टके नैधनं स्याद् व्यत्यये मध्यमं स्मृतम्।
परेषु शुभदं प्रोक्तं गेहं तत्कर्तृराशितः॥'

—मुहूर्तसंग्रहदर्पण १९।७०-७१ में वसिष्ठ का वचन

नाम नक्षत्रों से साध्य-साधक के धन-ऋण का ज्ञान

आरभ्य साधकं धिष्ण्यं साध्यं यावच्चतुर्गुणम्।
विभजेत्सप्तभिश्शेषं साधकस्य धनं तदा॥ ३८॥

साधक के नाम नक्षत्र से साध्य के नाम नक्षत्र तक गिने जो संख्या हो, उसे चौगुना करें। उस गुणनफल में सात का भाग दें, जो शेष बचेगा वह साधक (व्यक्ति) का धन होता है॥ ३८॥

वास्तुभूमि के षट्पदार्थों का ज्ञान

विस्तार आयाम गुणो गृहस्य पदमुच्यते।
तस्माद् धनाऽधनायर्क्ष वारांशाः संख्यया क्रमात्॥ ३९॥
धनाधिकं गृहं वृद्ध्यै ऋणाधिकमशोभनम्।
विषमायं शुभायैव समायं निधनाय च॥ ४०॥
धनक्षयं तृतीयर्क्षे पञ्चमर्क्षे परः क्षयः।
आत्मक्षयः सप्तमेऽर्क्षे भवेत्येवं हि भर्तृभात्॥ ४१॥

वास्तुभूमि अथवा गृह के दैर्ध्य एवं विस्तार का गुणा करें, यह गुणनफल उस घर का पद (पिण्ड या क्षेत्रफल) होता है। उस पद को (छह स्थानों में अलग-अलग रखकर फिर उन स्थानों में रखे पद से क्रमशः आठ, तीन, नौ, आठ, नौ, छह से गुणा करें, फिर उस गुणनफल में क्रमशः १२, ८, ८, २७, ७, ९ का भाग दें। लब्धि को छोड़ दें। शेष में क्रमशः उस गृह का धन, ऋण, आय, नक्षत्र, वार तथा अंश प्राप्त होंगे।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि धन अधिक हो तो वह घर कर्त्ता के लिये शुभ होगा। यदि ऋण हो तो वह घर निवासकर्त्ता के लिये अशुभ होता है।

यदि आय विषम संख्यक (१-३-५-७) हो तो शुभ होता है, यदि सम संख्यक आय (२-४-६-८ या शून्य) हो तो अशुभ होता है॥ ३९-४०॥

पूर्वोक्त प्रकार से (गृह के क्षेत्रफल में आठ से गुणाकर उस गुणनफल में २७ का भाग देने से शेष में आया हुआ) आय हुआ। गृह को जो नक्षत्र हो, उस तक व्यक्ति के नाम नक्षत्र से गिनकर नौ का भाग दें। उसमें तृतीय तारा धन नाशक, पाँचवाँ तारा हानिकारक तथा सातवाँ तारा उस कर्त्ता का नाशक होता है॥ ४१॥

वार एवं अंश का फल

सूर्याङ्गारकवारांशा वैश्वानरभयप्रदाः।
इतरेग्रहवारांशाः सर्वकामार्थसिद्धये॥ ४२॥

यदि पूर्वानीत विधि से सूर्य एवं मंगल के वार या अंश आयें तो अग्निभय होता है, शेष ग्रहों (चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि) के वार या अंश हों, तो शुभफल होता है तथा सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं॥ ४२॥

विमर्श—ऊपर श्लोक ३८ में कथित पद को ही पिण्ड भी कहते हैं। ग्रन्थान्तरों में इन धनादि (द्रव्यादि) छह पदार्थों के अतिरिक्त तिथि-योग तथा आयु—इन तीन पदार्थों को मिलाकर कुल नौ पदार्थों का विचार किया जाता है। आगे के पृष्ठों में गृहस्वामी के हाथों से दैर्घ्य (लम्बाई) तथा विस्तार (चौड़ाई) से उत्पन्न क्षेत्रफल (पिण्ड) या पद के आधार पर शुभ आय आदि ज्ञान का चक्र दिया गया है। जैसे कि लम्बाई २१ हाथ तथा चौड़ाई भी २१ हाथ हो तो उसका पिण्ड ४०१ हुआ तथा उसमें आय—१ (ध्वज), वार ७ (शनि), अंश ९ (शुक्र का), द्रव्य—१२, ऋण ३ प्राप्त हुआ। यह सारिणी (चक्र) में स्पष्ट लिखा है इसमें किसी गुणा-भाग की आवश्यकता नहीं है।

अथ दैर्घ्यविस्तारघातरूपपिण्डवशेनायादिबोधकचक्रम्

दैर्घ्यम्	२१	२१	२३	२३	२३	२५	२५	२५	२७	२७	२७
विस्तारः	१९	२१	१९	२१	२३	२१	२३	२५	२३	२५	२७
आयः	७	१	५	३	१	५	७	१	५	३	१
वारः	७	७	६	७	१	७	२	४	३	६	२
अंशः	९	९	३	९	६	९	३	६	९	९	९
द्रव्यम्	१२	१२	४	१२	८	१२	४	८	१२	१२	१२
ऋणम्	५	३	७	१	३	७	५	३	७	१	३
नक्षत्रम्	६	१८	१३	३	२०	१५	१०	५	२७	२७	२७
तिथिः	१२	३	१	९	२	१५	१०	५	३	१५	१२
योगः	३	९	२०	१५	१०	२१	५	१६	२७	२७	२७
आयुः	७२	४८	१६	२४	३२	१२०	४०	८०	४८	१२०	७२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दैर्घ्य	२९	२९	२९	३१	३१	३१	३१	३३	३३	३३	३३
विस्तार	२५	२७	२९	२५	२७	२९	३१	२७	२९	३१	३३
आय	५	७	१	७	५	३	१	३	५	७	१
वार	१	५	२	३	१	६	४	४	३	२	१
अंश	३	९	६	६	९	३	६	९	९	९	९
द्रव्य(धन)	४	१२	८	८	१२	४	८	१२	१२	१२	१२
ऋण	७	५	३	५	७	१	३	१	७	५	३
नक्षत्र	२२	२७	५	१७	२७	१०	२०	२७	१५	३	१८
तिथि	१०	९	८	५	६	७	८	३	६	९	१२
योग	११	२७	१६	२२	२७	५	१०	२७	२१	१५	९
आयु	४०	२४	८	८०	९८	११२	८	४८	९६	२४	७२

दैर्घ्य	३५	३५	३५	३५	३७	३७	३७	३७	३९	३९	३९
विस्तार	२९	३१	३३	३५	३१	३३	३५	३७	३३	३५	३७
आय	७	५	३	१	३	५	७	१	७	५	३
वार	७	७	७	७	५	६	७	१	५	७	२
अंश	६	३	९	६	६	९	३	६	९	९	९
द्रव्य(धन)	८	४	१२	८	८	१२	४	८	१२	१२	१२
ऋण	५	७	१	३	१	७	५	३	५	७	१
नक्षत्र	२०	१३	६	२६	२३	२१	१९	१७	९	१२	१५
तिथि	५	१०	१५	५	१०	३	१०	२	६	१५	९
योग	१०	२०	३	१३	२५	२४	२३	२२	१८	६	२१
आयु(वर्ष)	८०	४०	१२०	८०	५६	४८	४०	३२	९६	१२०	२४

क्षेत्रफल के आधार पर शुभ आयादि बोधक चक्र

दैर्घ्य	३९	४१	४१	४१	४१	४१	४३	४३	४३	४३	४३
विस्तार	३९	३३	३५	३७	३९	४१	३५	३७	३९	४१	४३
आय	१	१	३	५	७	१	१	७	५	३	१
वार	४	४	७	३	६	१	७	४	१	५	२
अंश	९	९	६	३	९	६	३	६	९	३	६
द्रव्य(धन)	१२	१२	८	४	१२	८	४	८	१२	४	८
ऋण	३	३	१	७	५	३	३	५	७	१	३
नक्षत्र	१८	२४	५	१३	२१	२	२५	११	२४	१०	२३
तिथि	३	९	५	१	१२	८	१०	८	६	४	२
योग	९	१२	१६	२०	२४	१	२६	१९	१२	५	२५
आयुवर्ष	४८	२४	८०	१६	७२	८	४०	८	९६	६४	३२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दैर्घ्य	४५	४५	४५	४५	४५	४७	४७	४७	४७	४७	४९
विस्तार	३७	३९	४१	४३	४५	३९	४१	४३	४५	४७	४१
आय	१	३	५	७	१	१	७	५	३	१	१
वार	५	३	१	६	४	५	४	३	२	१	७
अंश	९	९	९	९	९	९	६	३	९	६	३
द्रव्य(धन)	१२	१२	१२	१२	१२	१२	८	४	१२	८	४
ऋण	३	१	७	५	३	३	५	७	१	३	३
नक्षत्र	९	२७	१८	९	२७	३	२६	२२	१८	१४	७
तिथि	१५	१५	१५	१५	१५	९	११	१३	१५	२	७
योग	१८	२७	९	१८	२७	१५	१३	११	९	७	१७
आयु	१२०	१२०	१२०	१२०	१२०	२४	५६	८८	१२०	३२	११२

दैर्घ्य	४९	४९	४९	४९	५१	५१	५१	५१	५१	५१	५३
विस्तार	४३	४५	४७	४९	४१	४३	४५	४७	४९	५१	४३
आय	३	५	७	१	३	१	७	५	३	१	७
वार	७	७	७	७	३	४	५	६	७	१	१
अंश	६	९	३	६	९	९	९	९	९	९	३
द्रव्य(धन)	८	१२	४	८	१२	१२	१२	१२	१२	१२	४
ऋण	१	७	५	३	१	३	५	७	१	३	५
नक्षत्र	८	९	१०	११	१५	२१	२७	६	१२	१८	७
तिथि	११	१५	४	८	३	९	१५	६	१२	३	७
योग	४	१८	५	१९	२१	२४	२७	३	६	९	१७
आयु	५६	१२०	६४	८	४८	२४	१२०	९६	७२	४८	११२

क्षेत्रफल के आधार पर शुभ आयादि बोधक चक्र

दैर्घ्य	५३	५३	५३	५३	५३	५५	५५	५५	५५	५५	५५
विस्तार	४५	४७	४९	५१	५३	४५	४७	४९	५१	५३	५५
आय	१	३	५	७	१	३	१	७	५	३	१
वार	३	५	७	२	४	१	४	७	३	६	२
अंश	९	६	३	९	६	९	३	६	९	३	६
द्रव्य(धन)	१२	८	४	१२	८	१२	४	८	१२	४	८
ऋण	३	१	७	५	३	१	३	५	७	१	३
नक्षत्र	१८	२	१३	२४	८	९	२५	२४	३	१९	८
तिथि	१५	८	१	९	२	१५	१०	५	१५	१०	५
योग	९	१	२०	१३	४	१८	२६	७	१५	२३	४
आयुवर्ष	१२०	८	१६	२४	३२	१२०	४०	८०	१२०	४०	८०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दैर्घ्य	५७	५७	५७	५७	५७	५७	५९	५९	५९	५९	५९
विस्तार	४७	४९	५१	५३	५५	५७	४९	५१	५३	५५	५७
आय	७	१	३	५	७	१	३	१	७	५	३
वार	३	७	४	१	५	२	७	५	३	१	६
अंश	९	९	९	९	९	९	३	९	६	३	९
द्रव्य(धन)	१२	१२	१२	१२	१२	१२	४	१२	८	४	१२
ऋण	५	३	१	७	५	३	१	३	५	७	१
नक्षत्र	२१	१५	९	३	२४	१८	१६	१५	१४	१३	१२
तिथि	१२	९	६	३	१५	१२	१३	१२	११	१०	९
योग	२४	२१	१८	१५	१२	९	८	२१	७	२०	६
आयुवर्ष	७२	२४	९६	४८	१२०	७२	८८	७२	५६	४०	२४

दैर्घ्य	५९	६१	६१	६१	६१	६१	६१	६१	६३	६३	६३
विस्तार	५९	४९	५१	५३	५५	५७	५९	६१	५१	५३	५५
आय	१	५	७	१	३	५	७	१	५	३	१
वार	४	७	६	५	४	३	२	१	७	७	७
अंश	६	६	९	३	६	९	३	६	९	९	९
द्रव्य(धन)	८	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	१२	१२
ऋण	३	७	५	३	१	७	५	३	७	१	३
नक्षत्र	११	१७	२१	२५	२	६	१०	१४	२७	९	१८
तिथि	८	२	३	४	५	६	७	८	९	१२	१५
योग	१९	२२	२४	२६	१	३	५	७	२७	१८	९
आयुवर्ष	८	३२	४८	६४	८०	६९	११२	८	२४	७२	१२०

क्षेत्रफल के आधार पर शुभ आयादि बोधक चक्र

दैर्घ्य	६३	६३	६३	६३	६५	६५	६५	६५	६५	६५	६५
विस्तार	५७	५९	६१	६३	५३	५५	५७	५९	६१	६३	६५
आय	७	५	३	१	५	७	१	३	५	७	१
वार	७	७	७	७	२	३	४	५	६	७	१
अंश	९	९	९	९	६	३	९	६	३	९	६
द्रव्य(धन)	१२	१२	१२	१२	८	४	१२	८	४	१२	८
ऋण	५	७	१	३	७	५	३	१	७	६	३
नक्षत्र	२७	९	१८	२७	२०	७	२१	८	२२	९	२३
तिथि	३	६	९	१२	५	१०	१५	५	१०	१५	५
योग	२७	१८	९	२७	१०	१७	२४	४	११	१८	२५
आयुवर्ष	४८	९६	२४	७२	८०	४०	१२०	८०	४०	१२०	८०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दैर्घ्य	६७	६७	६७	६७	६७	६७	६७	६९	६९	६९	६९
विस्तार	५५	५७	५९	६१	६३	६५	६७	५७	५९	६१	६३
आय	५	३	१	७	५	३	१	५	७	१	३
वार	६	१	३	५	७	२	४	५	१	४	७
अंश	६	९	३	६	९	३	६	९	९	९	९
द्रव्य(धन)	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	१२	१२	१२
ऋण	७	१	३	५	७	१	३	७	५	३	१
नक्षत्र	२३	१५	७	२६	१८	१०	२	९	६	३	२७
तिथि	५	१२	४	११	३	१०	२	९	३	१२	६
योग	२५	२१	१७	१३	९	५	१	१८	३	१५	२७
आयुवर्ष	८०	७२	६४	५६	४८	४०	३२	२४	४८	७२	९६

दैर्घ्य	६९	६९	६९	७१	७१	७१	७१	७१	७१	७१	७१
विस्तार	६५	६७	६९	५७	५९	६१	६३	६५	६७	६९	७१
आय	१	७	१	७	५	३	१	७	५	३	१
वार	३	६	२	२	६	३	७	४	१	५	२
अंश	९	९	९	९	६	३	९	६	३	९	६
द्रव्य(धन)	१२	१२	१२	१२	८	४	१२	८	४	१२	८
ऋण	७	५	३	५	७	१	३	५	७	१	३
नक्षत्र	२४	२१	१८	३	५	७	९	११	१३	१५	१७
तिथि	१५	१	३	६	२	१३	९	५	१	१२	८
योग	२१	२४	९	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
आयुवर्ष	१२०	२४	४८	९६	३२	८८	२४	८०	१६	७२	४८

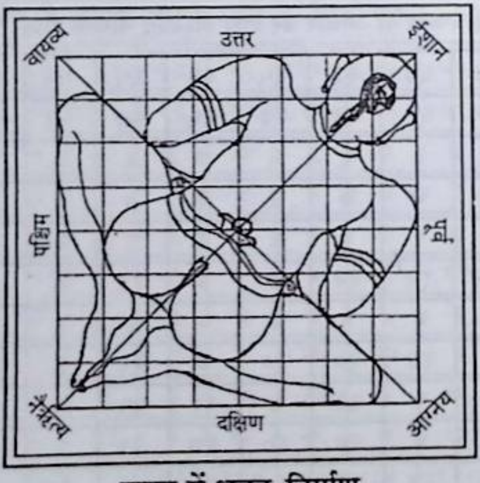

वास्तु में भवन-निर्माण

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अंशेश का स्पष्टीकरण—अंश ९ होते हैं। ग्रह पिण्ड (क्षेत्रफल) को ३ से गुणा कर उसमें नौ का भाग देने से अंशेश प्राप्त होते हैं। शेषानुसार १. सूर्य, २. चन्द्र, ३. मंगल, ४. राहु, ५. गुरु, ६. शनि, ७. बुध, ८. केतु तथा ९. शुक्र होते हैं। यह क्रम विंशोत्तरी दशा-जैसा होता है, जैसा कि कहा गया है—

'अर्कश्चन्द्रः कुजो राहुर्जीवमन्दज्ञकेतवः।
भृगुपुत्रक्रमेणैव अंशाधीशाः प्रकीर्तिताः॥'

वत्स (वास्तुमुख) विचार

नभस्यादिषु मासेषु त्रिषु त्रिषु यथाक्रमात्।
पूर्वादिके शिरो वामपार्श्वेशाया प्रदक्षिणम्॥ ४३॥
चराह्वयो वास्तुपुमान् चरत्येवं महोदरः।
यद्दिङ्मुखो वास्तुपुमान् कुर्यात् तद्दिङ्मुखं गृहम्॥ ४४॥
प्रतिकूलमुखं गेहं रोगशोकभयप्रदम्।
सर्वतोमुखगेहानामेष दोषो न विद्यते॥ ४५॥

१. भाद्रपद (सिंह के सूर्य)—आश्विन (कन्याऽर्क), कार्तिक (तुलाऽर्क) में वास्तु(वत्स) का शिर पूर्व दिशा में होता है। २. मार्गशीर्ष (वृश्चिकेऽर्क), पौष (धनुष्यर्क) तथा माघ (मकरेऽर्क) में वास्तु का शिर अथवा मुख दक्षिण दिशा में रहता है। ३. फाल्गुन (कुम्भेऽर्क), चैत्र (मीनेऽर्क) तथा वैशाख (मेषाऽर्क) में वास्तु का शिर पश्चिम दिशा में रहता है। ४. ज्येष्ठ (वृषाऽर्क), आषाढ़ (मिथुनेऽर्क) तथा श्रावण (कर्केऽर्क) में वास्तु पुरुष का शिर उत्तर दिशा में रहता है। यह वास्तुपुरुष वामपार्श्व के बल शयन करता हुआ क्रमशः पूर्वादि दिशाओं में भ्रमणशील रहता है। यह बड़े पेट वाला है। जिस दिशा में वास्तु का शिर (मुख) हो, उसी दिशा में घर का द्वार (दरवाजा) बनाना चाहिये॥ ४३-४४॥

वास्तुमुख से भिन्न दिशा में यदि घर का दरवाजा बनाया जाय तो रोग, शोक तथा भय प्राप्त होता है। किन्तु यदि घर में चारों दिशाओं में द्वार रखे जायँ तो यह दोष अपना फल नहीं देता है॥ ४५॥

घर की नींव लगाने की विधि

मृत्पेटिका स्वर्णरत्नधान्यशैवालसंयुताः।
गृहमध्ये हस्तमात्रे गर्ते न्यासाय विन्यसेत्॥ ४६॥

घर के मध्यभाग में (अथवा नींव में) मिट्टी की पेटी (ढक्कनयुक्त मिट्टी का लोटा जिसे कुमरिया, चुकरिया, चपटिया, कूलरी, कुल्लड़, कुल्लड़ी आदि कहते

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं)ये स्वर्ण या चाँदी, रत्न, धान्य, शैवाल (शिवार तथा कोयला) को भरकर हाथ भर गहरे गड्ढे (गर्त) में गाड़ देना चाहिये॥ ४६॥

शङ्कुरोपण का स्थान

वास्त्वायामदलं नाभिस्तस्मादब्ध्यङ्गुलत्रयम्।
कुक्षिस्तस्मिन् न्यसेच्छङ्कुं पुत्रपौत्रविवर्धनम्॥ ४७॥

वास्तुपुरुष की कुक्षि में उसके नाभिस्थान में शंकु (खूँटे) गो गाड़ने से पुत्र-पौत्र तथा धन की वृद्धि होती है॥ ४७॥

विमर्श—वास्तुपुरुष की नाभि निर्माणयोग्य भूखण्ड में किस स्थान पर है, इसके निर्णय की विधियाँ जटिल हैं। सरल विधि इस प्रकार है। सूर्य की राशि स्थिति के अनुसार उस सौर मास में (जिसमें घर की नींव लगाने जा रहे हैं) जिस दिशा में वास्तु पुरुष का शिर होता है तथा उसके विपरीत दिशा में वास्तुपुरुष के चरण होते हैं। वह बायीं करवट लेटता है, अतः दाहिनी ओर की दिशा में उसका पेट-छाती आदि होते है। अतः जिस सौर मास में गृहारम्भ हो, उसमें भूखण्ड की उस दिशा से जिसमें वास्तु का शिर हो लेकर पैरों तक की दिशावाले स्थान में उतनी लम्बी (जितना भूखण्ड हो) एक सरल रेखा खींचें तथा उस रेखा के अट्ठाइस समान भाग करें। फिर वास्तु पुरुष के शिर से गणना करने पर जो ग्यारहवाँ भाग हो अथवा पैरों की ओर से गिनने पर सत्रह भाग जोड़कर जो अठारहवाँ भाग हो, उसमें वास्तु पुरुष की नाभि होती है। इस नाभि स्थल में वास्तु पुरुष (भूखण्ड) की लम्बाई के अट्ठाईसवें भाग ($\frac{१}{२८}$) के बराबर लम्बा तथा उसकी चौड़ाई के अट्ठाईसवें भाग के बराबर चौड़ा गड्ढा (गर्त्त) खोदना चाहिये। इस गर्त की गहराई केवल एक हाथ रखें। इसमें ही अग्रलिखित प्रकार से निर्मित शङ्कु (लकड़ी का खूँटा या खूँटी) गाड़ना चाहिये।

उदाहरण—मान लीजिये कि मिथुन के सूर्यों में गृह निर्माण आरम्भ हो रहा है। अतः वास्तु का शिर उत्तर दिशा में तथा पैर दक्षिण दिशा में हुए। अब बायीं करवट लेटने से उसका पेट पूर्व की ओर है। (घर की लम्बाई २५ हाथ तथा चौड़ाई २१ हाथ है) अतः वास्तु के शिर उत्तर दिशा दक्षिण दिशा तक मध्यवर्ती विन्दु से होते हुए एक रेखा खींची गयी फिर उस रेखा को(भूखण्ड) के उत्तर-दक्षिण जो भी लम्बाई या चौड़ाई है, उसमें कुल २८ भाग किये, फिर शिर से दस भाग छोड़कर ग्यारहवें भाग में तथा पैरों से सत्रह भाग छोड़कर अठारहवें भाग में (एक ही बात है) एक चौकोर चिह्न बना दिया। इसमें लम्बाई के अनुरूप दिशा में $\frac{१}{२८}$ भाग लम्बा तथा चौड़ाई के अनुरूप दिशा में $\frac{१}{२८}$ भाग चौड़ा एवं एक हाथ गहरा गड्ढा खोद दिया, उसी में शंकु का निधान कर दिया। (उदाहरण का चित्र देखिये)।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

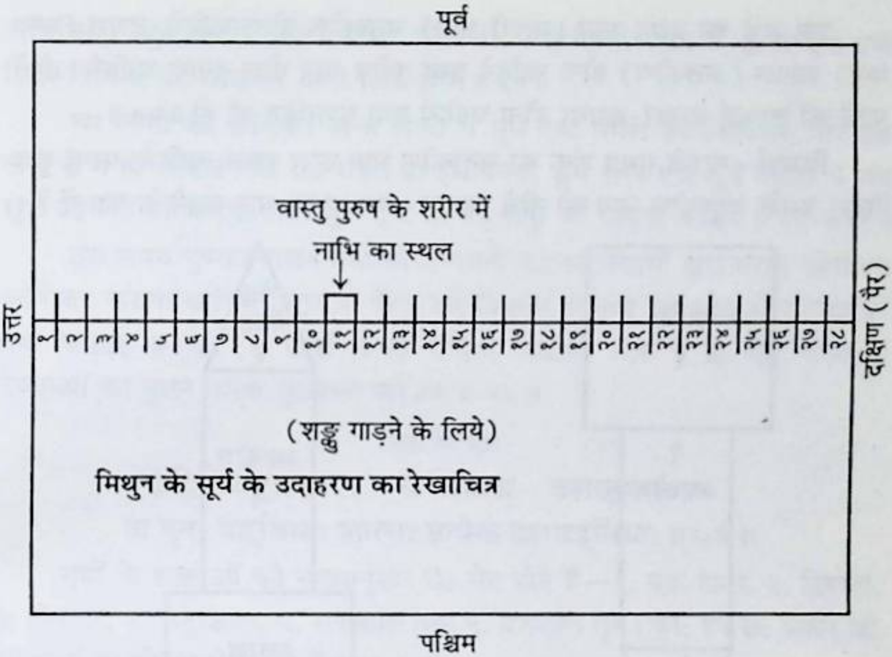

शङ्कु की ब्राह्मणादि वर्णों के लिये माप

चतुस्त्रिंशत् त्रयोविंशत्षोडश द्वादशाङ्गुलैः।
विप्रादीनां शङ्कुमानं स्वर्णवस्त्राद्यलङ्कृतम्॥ ४८॥

ब्राह्मणों के लिये शङ्कु (खूँटे) की लम्बाई चौबीस अंगुल, क्षत्रियों के लिये तेईस अंगुल, वैश्यों के लिये सोलह अंगुल तथा अन्यों के लिये बारह अंगुल होनी चाहिये। इस शङ्कु का निधान स्वर्ण एवं वस्त्रादि से अलंकृत करके करना चाहिये॥ ४८॥

शङ्कु के लिये शुभ काष्ठ

खदिरार्जुनशालोत्थं पूगपत्रतरुद्भवम्।
रक्तचन्दनपालाशरक्तशालविशालजम् ॥ ४९॥
नीपकादम्बककुटजं वैणवं विल्ववृक्षजम्।

खदिर (खैर), अर्जुन (कोह=कहुआ), शालवृक्ष, सुपारी वृक्ष, तेजपात, लाल चन्दन, पलाश, लालशाल, बड़ाशाल, कदम्ब, कुरैया, बाँस, या बेलवृक्ष से शंकु बनाना चाहिये॥ ४९-४९$\frac{1}{2}$॥

शंकु का आकार-प्रकार

शङ्कुं त्रिधा विभज्याथ चतुरस्त्रं ततः परम्॥ ५०॥
अष्टांशञ्च तृतीयांशं अनस्त्रमृजुमव्रणम्।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस शङ्कु का प्रथम भाग (ऊपरी भाग) चतुष्कोण होना चाहिये, दूसरा (मध्य भाग) अष्टास्त्र (अठकोण) होना चाहिये तथा तृतीय भाग गोल बनाना चाहिये। तीनों भागों की लम्बाई बराबर-बराबर होना चाहिये तथा व्रणरहित भी हो ॥ ५० ॥

विमर्श—गाड़ते समय शंकु का चतुष्कोण भाग ऊपर रखना चाहिये, परन्तु कुछ विद्वान् उसके चतुष्कोण भाग को नीचे रखकर ऊपर पतला भाग रखने के पक्ष में हैं।

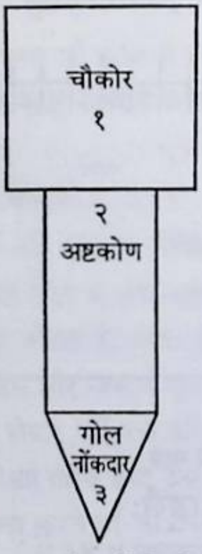

(१) शंकु की स्थिति

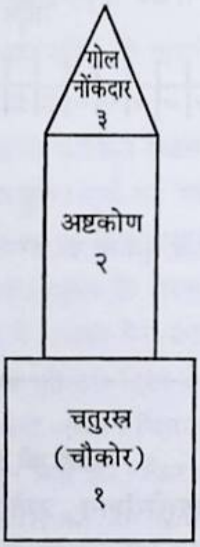

(२) शंकु की स्थिति (मतान्तर से)

शङ्कु के रोपणार्थ शुभमुहूर्त

एवं लक्षणसंयुक्ते परिकल्प्य शुभे दिने॥ ५१॥
षड्वर्गशुद्धसूत्रेण सूत्रिते धरणीतले।
मृदुध्रुवक्षिप्रभेषु रिक्तामावर्जिते दिने॥ ५२॥
व्यर्कार चरलग्नेषु पापे चाष्टमवर्जिते।
नैधने शुद्धिसंयुक्ते शुभलग्ने शुभांशके॥ ५३॥
शुभेक्षिते वा युक्ते लग्ने शङ्कुं विनिक्षिपेत्।
पुण्याहवाचैर्वादित्रैः पुण्यैः पुण्याङ्गनादिभिः॥ ५४॥
स्वत्रिकेन्द्रत्रिकोणस्थैः शुभैस्त्र्यायारिगैः परैः।
लग्नात् षष्ठाय चन्द्रेण दैवार्चनपूर्वकम्॥ ५५॥

ऊपर वर्णित शुभ लक्षणों से युक्त शङ्कु (खूँटे) को शुभ दिन में इष्टकाल साधन करके शुभ लग्न में स्थापित करें॥ ५१॥

उस समय में षड् वर्ग शुद्ध सूत्रसे सूत्रित (मापी गयी) भूमि में (नाभिस्थान में) मृदुनक्षत्रों (मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा) क्षिप्र नक्षत्रों (हस्त, अश्विनी, पुष्य,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अभिजित्), ध्रुव नक्षत्रों (तीनों उत्तरा, रोहिणी) में से किसी नक्षत्र में, अमावस्या तथा रिक्ता तिथियों को छोड़कर अन्य तिथियों में॥ ५२॥

चर लग्नों को छोड़कर अन्य लग्नों में सूर्य तथा मंगल को त्यागकर, पाप ग्रह लग्न में न हो अष्टम भाव ग्रह रहित हो इस प्रकार शुभ लग्न एवं शुभ नवाँश में जब शुभ ग्रह बैठे हों अथवा लग्न शुभ दृष्ट हो तब शंकु को गाड़ना चाहिये॥ ५३-५३$\frac{1}{2}$ ॥

उस समय पुण्याहवाचन तथा सौभाग्यवती पतिव्रता स्त्रियों द्वारा मंगल गीतों का आयोजन कराना चाहिये। लग्न से केन्द्र एवं त्रिकोण में तथा धन भाव में शुभग्रह हों तथा पापग्रह ३। ६। ११ भावों में हों चन्द्रमा ग्यारहवें भाव में हो ऐसे समय में देवताओं का पूजन करके गृहारम्भ करें॥ ५४-५५॥

ग्रहों के भेद

एकद्वित्रिचतुःशालाः सप्तशाला दशाह्वयाः।
ता पुनः षड्विधाः शालाः प्रत्येकं दशषड्विधाः॥ ५६॥

गृहों के शालाओं की संख्यानुसार छः भेद होते हैं—१. एक शाल, २. द्विशाल, ३. त्रिशाल, ४. चतुःशाल, ५. सप्तशाल तथा ६. दशशाल गृह। पुनः इन छः प्रकार की शालाओं के सोलह भेद होते हैं॥ ५६॥

विमर्श—ऊपर श्लोक ५२ में 'षड्वर्ग शुद्ध सूत्र' का प्रयोग करने को कहा है। इसके दो अर्थ हैं प्रथम तो भूखण्ड का माप (क्षेत्रफल) षड्वर्ग शुद्ध कर ले जिसमें क्षेत्रफल के द्वारा प्राप्त १. धन, २. ऋण, ३. आय (ध्वजादि), ४. वार, ५. नक्षत्र तथा ६. अंश—ये ६ वर्ग शुद्ध हो जायँ, उतने ही दैर्घ्य एवं विस्तारवाला पिण्ड ग्रहण करना चाहिये तथा गृह की लम्बाई से छः गुना हों दूसरा अभिप्राय यह है कि सूत्र (वह डोरा या धागा जिससे गृह को नापा जाय) वह निम्न छः गुणों से युक्त होना चाहिये—

१. द्विघ्न—वह सूत्र द्विगुणित (दोहरा) होना चाहिये। इकहरा नहीं।

२. द्विपाश—सूत्र के दोनों छोरों (सिरों) पर पाश (फन्दे) बने होने चाहिये, जिसको कोण शंकुओं में फँसाया अथवा अटकाया जा सके। प्रत्येक छोर पर एक-एक पाश होने से दोनों छोरों पर कुल दो पाश (फन्दे) होने से द्विपाश कहा जाता है।

३. नवीन—नवीन गृहनिर्माण हेतु सूत्र को नया ही लेना चाहिये। पुराना सूत्र प्रयोग करना वर्जित है।

४. सुदृढ़—सूत्र को इतना मजबूत होना चाहिये, कि वह प्रयोग करते समय टूटे नहीं, गृहारम्भ के समय सूत्र का टूट जाना अशुभ होता है।

५. कर्ष चिह्न से युक्त—सूत्र की लम्बाई में किसी एक छोर पर $\frac{3}{4}$वें भाग पर एक चिह्न बना देना चाहिये, उसे 'कर्ष' चिह्न कहते हैं।

६. कोण—आधे भाग पर बना चिह्न कोण कहलाता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस प्रकार दो फन्दों में प्रथम फन्दे को भूखण्ड के एक कोने में गड़े शंकु में फँसा दें तथा उस कोने के चिह्नों में अन्य शंकु फँसाकर भूखण्ड में चतुष्कोण बना दें। जैसा कि कहा गया है—

'द्विघ्नायाममितं द्विपाशमजरत्सूत्रं विधायाङ्कयेत।
त्र्यायामाङ्घ्रिमिते च विस्तृति दलेऽन्ताकर्षकोणाभिधौ।
पाशौ क्षेत्रविरामशङ्कुनिहितौ कृत्वोद्यमा कर्षयेत्।
कोणे शङ्कुरितीतरो विनिमयाद्रज्ज्वन्तयोश्चापरौ॥'

—मुहूर्तमार्तण्ड ६।१४

यदि प्रथम बार सूत्र का प्रस्तार करते समय यदि सूत्र को कोई लाँघ जाय तो पृथ्वी पर उसी दिशा में शल्य होता है, ऐसा वसिष्ठजी का कथन है।

'षड्वर्ग शुद्धसूत्रेण सूत्रिते धरणीतले।
सूत्रिते समये तस्मिन् सूत्रं केनोऽपि लङ्घितम्॥
तदस्थितं विजानीयात् पुरुषस्य प्रमाणतः।
अभ्यक्तो दृश्यते यस्यां दिशि शल्यं समादिशेत्॥
तस्यामेव तदस्थीति सप्त व्यंगुलमानतः।
सूत्रिते समये यत्र श्वा सद्योपरि संस्थितः॥
तदस्थिं तत्र जानीयात् दशान्त्यङ्गुलमानतः।
वृषाजाश्वपशूनां हि त्वेकस्मिन् यत्र संस्थितम्।
तदस्थितत्र जानीयात् षष्ठ्यङ्गुलमितक्षितौ॥
तस्मिन्नवसरे यत्र गृहदाहो भवेद्यदि।
मेषास्थिं तत्र जानीयात् पुरुषाष्टप्रमाणतः॥
सूत्रे विसूत्रिते तस्मिन् भिन्ने कुम्भेऽथवा यदि।
आदिशेन्निधनं तत्र दम्पत्योः क्रमशस्तदा॥'

यदि सूत्र अकस्मात् टूट जाय अथवा वह कुम्भ जिसमें स्वर्णादि धातुओं को भूमि में गाड़ने के लिये रखा जाय फूट जाय तो अशुभ सूचक होता है। सूत्र टूटने से गृहस्वामी की मृत्यु होती है तथा कुम्भ फूटने से गृहस्वामी की पत्नी की मृत्यु होती है। सूत्र के ऊपर कुत्ते का बैठना शल्य का सूचक होता है। यदि उस समय कोई पागल व्यक्ति आ जाय तो भी भूमि में शल्य होता है। यही बात विश्वकर्मप्रकाश में भी कही गयी है।

ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिये सूत्र—ब्राह्मण के गृह निर्माण हेतु कुश द्वारा निर्मित सूत्र, क्षत्रिय के लिये मूंज से बना सूत्र, वैश्य के लिये कपास से निर्मित तथा शूद्रों के भवननिर्माण में शण द्वारा निर्मित सूत्र का प्रयोग करना चाहिये—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'विप्रस्य दर्भजं सूत्रं मौञ्जन्तु क्षत्रियस्य च।
कार्पासञ्च भवेद्वैश्यं शूद्रस्य शणकल्पितम्॥'

—विश्वकर्मप्रकाश

षोडश ग्रहों के नाम

ध्रुवं धान्यं जयं नन्दं खरं कान्तं मनोरमम्।
सुमुखं दुर्मुखं क्रूरं शत्रुस्वर्णप्रदं क्षयम्॥ ५७॥
आक्रन्दं विपुलाख्यञ्च विजयं षोडशं गृहम्।
गृहाणि षण्णवत्येव तेषां प्रस्तारभेदतः॥ ५८॥

१. ध्रुव, २. धान्य, ३. जय, ४. नन्द, ५. खर, ६. कान्त, ७. मनोरम ८. सुमुख, ९. दुर्मुख, १०. क्रूर, ११. शत्रु, १२. स्वर्णप्रद, १३. क्षयप्रद, १४. आक्रन्द, १५. विपुल तथा १६. विजय—ये सोलह प्रकार के होते हैं। प्रस्तार करने पर ६×१६=९६ कुल भेद इन गृहों के हो जाते हैं॥ ५७-५८॥

गुरोरधो लघुः स्थाप्यः पुरस्तादूर्ध्ववन्यसेत्।
गुरुभिः पूरयेत्पश्चात् सर्वलब्धविधिर्विधिः॥ ५९॥
कुर्याद् लघुपदेऽलिन्दं गृहद्वारात्प्रदक्षिणम्।
पूर्वादिगेष्वलिन्देषु गृहभेदास्तु षोडश॥ ६०॥
दिक्षुपूर्वादितः शाला ध्रुवा भूद्वौ कृता गजाः।
शालाध्रुवाङ्कसंयोगः सैकोवेश्म ध्रुवादिकम्॥ ६१॥

सर्वप्रथम प्रथम पंक्ति में चार गुरु चिह्न (ऽ) बनाये, फिर उसमें प्रथम गुरु चिह्न (ऽ) के नीचे लघु चिह्न (।) अंकित करके जैसा ऊपर हो उसके अनुसार गुरु अथवा लघु चिह्न लिखना चाहिये। फिर तीसरी पंक्ति में प्रथम गुरु चिह्न के नीचे लघु चिह्न लिखें तथा पीछे वाम भाग में गुरु चिह्न से पूरा करें। इसी प्रकार पुनः-पुनः तब तक लिखता चला जाय जब तक प्रस्तार में सभी चिह्न लघु न हो जायें। इस भाँति चार दिशा होने\से ४ अक्षरों से १६ भेद होते हैं। प्रत्येक भेद में चारों चिह्नों को प्रदक्षिण क्रम से पूर्वादि दिशा समझकर जहाँ-जहाँ लघु चिह्न पड़े वहाँ-वहाँ घर का द्वार तथा अलिन्द (द्वार के आगे का भाग जिसे ओसारा, चबूतरा या दालान भी कहते हैं) बनाना चाहिये। इस प्रकार पूर्वादि भेदों से सोलह प्रकार के घर होते हैं॥ ५९-६०॥

पूर्व द्वारवाले गृह का ध्रुवांक १ है। दक्षिण द्वारवाले गृह का ध्रुवांक २ है। पश्चिम द्वारवाले गृह का ध्रुवांक ४ तथा उत्तर दिग्द्वारवाले गृह का ध्रुवांक ८ होता है। अब शाला तथा ध्रुवांक के जोड़ने से जो योगफल आये उसमें उतनी ही संख्यावाला मकान जानना चाहिये तथा वह अपने नाम के अनुरूप ही शुभाशुभ फल देता है।

विमर्श—दिशा के ध्रुवांक तथा द्वारों की संख्या में एक जोड़ने से गृह का क्रमांक आ जाता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. ध्रुवगृह—जिसमें केवल ऊर्ध्व दिशा में एक ही द्वार हो या शाला हो उसे ध्रुवगृह कहते हैं; वह शुभ होता है। उसमें रहनेवालों का सुख स्थिर रहता है। इसमें ऊपर से ही प्रवेश करते हैं। ०+१=१

२. जिस गृह में केवल पूर्व की ओर ही द्वार या अलिन्द हो, उसे धान्य गृह कहते हैं। यह धनधान्य से पूरित रहता है।

३. जिसमें दक्षिण दिशा में द्वार एवं अलिन्द हों, वह जय गृह कहलाता है। इसके स्वामी को सर्वत्र सफलता मिलती है।

४. नन्दगृह—जिस गृह में पूर्व+दक्षिण दिशाओं में द्वार हों, वह गृह नन्दगृह कहलाता है। इसमें निवास करनेवाले सदैव आनन्दित रहते हैं। १+२+१=४

५. खर—जिस गृह में पश्चिम दिशा में अलिन्द एवं द्वार हों उस घर को खर कहते हैं, यह अशुभ होता है। इसमें रहनेवाले लोग मूर्ख तथा लड़ने-झगड़नेवाले होते हैं। दिशा ध्रुवांक ४+१=५

६. कान्त—जिसमें पूर्व एवं पश्चिम दोनों दिशाओं में द्वार हों वह 'कान्त' गृह कहा जाता है। इसमें निवास करनेवालों का व्यक्तित्व प्रभावशाली होता है। पूर्व-दिशा ध्रुवांक १+पश्चिम-दिशा ध्रुवांक ४+१=६ संख्यावाले गृह 'कान्त'।

७. मनोरमगृह—इसमें दक्षिण एवं पश्चिम दिशाओं में द्वार होते हैं अतः दक्षिण-दिशा का ध्रुवांक २+४ पश्चिम-दिशा का ध्रुवांक इसमें १ जोड़ने से २+४+१=७ संख्यावाला गृह मनोरम कहलाता है। यह अपने नाम के तुल्य फल देता है।

८. सुमुखगृह—इस गृह में पूर्व-दक्षिण तथा पश्चिम तीनों दिशाओं में एक-एक द्वार होते हैं। पूर्व-दिशा का ध्रुवांक १+दक्षिण दिशा का ध्रुवांक २+पश्चिम का ध्रुवांक ४+१=८ संख्यावाला गृह सुमुख नाम वाला होता है, इसमें निवास करनेवाले व्यक्ति सुदर्शन व्यक्तित्व से युक्त तथा मधुर-भाषी होते हैं।

९. दुर्मुखगृह—इसमें उत्तर दिशा में केवल एक ही द्वार होता है। उत्तर-दिशा का ध्रुवांक ८ है, इसमें एक जोड़ देने से ८+१=९ संख्यावाले गृह की दुर्मुख संज्ञा सिद्ध होती है।

१०. उग्रगृह—इसमें पूर्व दिशा तथा उत्तर दिशा में द्वारशाला एवं अलिन्द होते हैं। पूर्व दिशा का ध्रुवांक १, उत्तर का ध्रुवांक ८ तथा उसमें १ जोड़ने से १+८+१=१० संख्या वाला गृह उग्र कहलाता है। इसमें रहनेवाले क्रोधी होते हैं। इसे 'क्रूर' भी कहते हैं।

११. शत्रुदगृह—इसे रिपुद तथा अरिद भी कहते हैं। इसमें निवास करनेवालों के शत्रुओं की अधिकता होती है, क्योंकि इसमें उत्तर तथा दक्षिण दिशाओं में शाला, अलिन्द तथा द्वार होते हैं। जिसके कारण खल या दुष्ट लोग इसके दाहिने-बायें अकारण ही बने रहते हैं। गोस्वामी तुलसीदासजी महाराज ने कहा है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'बहुरि बंदि खलगन सतिभाएँ।
जे बिनु काजु दाहिनेउ बाएँ॥'

उत्तर दिशा का ध्रुवांक ८ तथा दक्षिण दिशा का ध्रुवांक २ होता है। इसमें १ जोड़ने से ८+२+१=११वें क्रमांक का गृह शत्रुद सिद्ध होता है।

१२. स्वर्णद—इसे स्वर्णद, वित्तद, धनद तथा 'अर्थदंभी' कहा गया है। इस गृह में विपुल समृद्धि रहती है। इस गृह में पूर्व-दक्षिण तथा उत्तर इन तीनों दिशाओं में द्वारादि होने से यह संज्ञा दी गई है। पूर्व दिशा का ध्रुवांक १, दक्षिण का ध्रुवांक २ तथा उत्तर दिशा का ध्रुवांक ८ है। इसमें १ का अंक जोड़ने से १+२+८+१=१२ अंक आने से इस गृह को स्वर्णप्रद नाम दिया गया है।

१३. क्षयगृह—इसे क्षयद, क्षयप्रद, नाश तथा ह्रासद भी कहते हैं। इसमें निवास करने से चल-अचल सम्पत्ति का क्षय होता रहता है। इसमें पश्चिम तथा उत्तर इन दोनों दिशाओं में अलिन्दादि होते हैं। पश्चिम का ध्रुवांक ४ तथा उत्तर का ८ होता है। इसको 'सैक' करने से ४+८+१=१३वें क्रमांक का गृह क्षय नाम सिद्ध होता है।

१४. आक्रन्द—इसमें निवास करनेवालों में रोना-पीटना ही मचा रहता है। इसमें पूर्व-पश्चिम तथा उत्तर इन तीनों दिशाओं में शालादि होते हैं। अतः इन तीनों दिशाओं के ध्रुवांकों में एक का अंक जोड़ने से १+४+८+१=१४ की संख्या आती है। जिसके कारण इस गृह का नाम आक्रन्दगृह सिद्ध होता है।

१५. विपुल गृह—इसमें रहनेवाले के धन-धान्य, सन्तति एवं भृत्यों की वृद्धि होती है। इसमें पूर्व को छोड़कर शेष तीन दिशाओं में शालादि बनाये जाते हैं। दक्षिण का ध्रुवांक २ +, पश्चिम का ध्रुवांक ४ +, उत्तर का ध्रुवांक ८+१=१५वें क्रमांक की संज्ञा विपुल होती है।

१६. विजयगृह—इसमें चारों दिशाओं में द्वारादि निर्मित होते हैं। यह प्रत्येक कार्य में सफलता देता है। चारों दिशाओं के ध्रुवांकों में एक मिलाने से इस गृह की यह संज्ञा सिद्ध होती है। पूर्व १+, दक्षिण २+, पश्चिम ४+, उत्तर ८+१ १६वाँ क्रमांक सिद्ध होता है।

इन ग्रहों में केवल सातवें क्रमांक के गृह का नाम चार अक्षरों का (मनोरम)है। ८।९।११।१२।१४।१५ क्रमांकवाले गृहों के नाम में तीन अक्षर हैं तथा शेष गृहों के नाम में दो अक्षर ही हैं। जैसा कि कहा गया है—

'तिथ्यर्काष्टाष्टिगो रुद्र शक्रे नामाक्षरत्रयम्।
भूद्वित्रीब्धीष्वङ्गदिग्वह्नि विश्वेषु द्वौ नगाब्धयः॥'

सर्वतोभद्रवास्तु—आचार्य वराहमिहिर ने विजय गृह को सर्वतोभद्रवास्तु लिखा है तथा इसे देवताओं एवं राजाओं के लिये उपयोगी बताया है, क्योंकि इसमें चारों दिशाओं में अलिन्द एवं द्वार होते हैं—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'अप्रतिषिद्धालिन्दं समन्ततो वास्तु सर्वतोभद्रम्।
नृपविबुधसमूहानां कार्यं द्वारैश्चतुर्भिरपि॥'

श्रीगर्गाचार्य ने भी इसे 'सर्वतोभद्रवास्तु' संज्ञा दी है—

'अलिन्दानां व्यवच्छेदो नास्ति यत्र समन्ततः।
तद्वास्तु सर्वतोभद्रं चतुर्द्वारसमायुतम्॥'

रुचकवास्तु—सुमुख नामक आठवें गृह को वराह ने 'रुचक' वास्तु कहा है। इसमें उत्तर में द्वार नहीं होता है—

'प्राक् पश्चिमावलिन्दावन्तगतौ तदवधिस्थितौ शेषौ।
रुचके द्वारं न शुभदं उत्तरतोऽन्यानि शस्तानि॥'

नन्द्यावर्तवास्तु—धनद गृह को श्रीवराहमिहिर ने नन्द्यावर्तवास्तु कहा है। इसमें पश्चिम दिशा को छोड़कर शेष तीन (पूर्व-दक्षिण-उत्तर) दिशाओं में अलिन्दादि होते हैं—

'नन्द्यावर्त्तमलिन्दैः शालाकुड्यात् प्रदक्षिणान्तर्गतैः।
द्वारं पश्चिमस्मिन् विहाय शेषाणि कार्याणि॥'

श्री गर्गाचार्य भी इसे यही नाम देते हैं—

'प्रदक्षिणां गतैः सर्वैः शालाभित्तेरलिन्दकैः।
विना परेण द्वारेण नन्द्यावर्त्तमितिस्मृतम्॥'

यह धनद वास्तु क्रमांक १२ का ही दूसरा नाम है।

वर्धमानवास्तु—यह आक्रन्दवास्तु से मिलता-जुलता होता है। श्रीवराह एवं गर्गाचार्य ने इसकी यह संज्ञा दी है—

'द्वारालिन्दोऽन्तगतः प्रदक्षिणोऽन्यः शुभस्ततश्चान्यः।
तस्मिंश्च वर्धमाने द्वारं तु दक्षिणं न कार्यम्॥'
'द्वारालिन्दोऽन्तगतस्तेषां ये त्रयो दक्षिणां गतः।
विहाय दक्षिणं द्वारं वर्धमानमिति स्मृतम्॥'

स्वस्तिक वास्तु—यहाँ नारदजी ने जिसे धान्यगृह (क्रमांक) दो कहा है, उसी की यह संज्ञा है—

'अपरोऽन्तगतोऽलिन्दः प्रागन्तगतौ तदुत्थितौ चान्यौ।
तदवधिविधृतश्चान्यः प्राग्द्वारं स्वस्तिके शुभम्॥'
—बृहत् संहिता ५३।३४

'पश्चिमोऽन्तगतोऽलिन्दः प्रागन्तौ द्वौ तदुत्थितौ।
अन्यस्तन्मध्यविधृतः प्राग्द्वारं स्वस्तिकं शुभम्॥'
—गर्गाचार्य

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वराहमिहिर द्वारा षोडश ग्रहों के नामान्तर—आचार्य वराह ने तथा गर्ग ने नारदादि द्वारा कथित गृहों के सोलह प्रकार के नाम भिन्न दिये हैं तथा फल में कहीं-कहीं अन्तर भी है जैसे कि वर्धमान नामक वास्तु का लक्षण आक्रन्द गृह से मिलता-जुलता होने पर भी वराह ने उसे शुभ वास्तु कहा है। 'आक्रन्द' का अर्थ रोना-चिल्लाना होता है, किन्तु आक्रन्द शब्द का दूसरा अर्थ संस्कृत कोशों एवं अर्थशास्त्र आदि ग्रन्थों में आक्रन्द का अर्थ पड़ोसी राजा होता है, जो अपने मित्र राजा को अन्य राजा की सहायता करने को रोकता है तथा वह राजा भी होता है, जिसकी राजधानी किसी अन्य समीपवर्ती राजधानी के पास होती है। दूसरों की करुण पुकार सुनकर सहायतार्थ दौड़ने वाला व्यक्ति 'आक्रन्दिक' होता है तथा जोर से चिल्लाकर बुलाये हुए व्यक्ति को 'आक्रन्दित' कहा गया है। इस प्रकार इसका अर्थ अच्छा एवं बुरा दोनों प्रकार का प्रतीत होता है। तात्पर्य यह कि कोलाहलयुक्त बड़े कुटुम्ब को भी आक्रन्द कह सकते हैं। जो संकट पड़ने पर एकजुट होकर उसका प्रतिकार करते हैं।

वराहमिहिर ने कुल १५ वास्तु कहे हैं, जिनके नाम भिन्न हैं। इनमें १. नन्द्यावर्त्त, २. वर्धमान् सबके लिये शुभ कहे हैं। ३. स्वस्ति एवं ४. रुचक ये मध्यम तथा 'सर्वतोभद्र' सर्वश्रेष्ठ कहा है। इस प्रकार ये ५ चतुःशाल वास्तु कहे हैं। फिर ६. हिरण्य, ७. सुक्षेत्र, ८. चुल्ली, ९. पक्षघ्न ये चार त्रिशाल वास्तु बताये हैं, जिनमें पक्षघ्न तथा चुल्ली अशुभ होते हैं। तदुपरान्त १०. सिद्धार्थ, ११. यम सूर्य, १२. दण्ड, १३. वात, १४. गृह चुल्ली तथा १५. काच—ये छह त्रिशाल वास्तु हैं—

'उत्तरशाला हीनं हिरण्यनाभं त्रिशालकं धन्यम्।
प्राक्शालया वियुक्तं सुक्षेत्रं वृद्धिदं वास्तु॥
याम्या दीनं चुल्ली त्रिशालकं वित्तनाशकरमेत्।
पक्षघ्नमपरया वर्जितं सुतध्वंसवैरकम्॥
सिद्धार्थमपरं याम्ये यमसूर्यं पश्चिमोत्तरशाले।
दण्डाख्यमुदकपूर्वे वाताख्यं प्राग्युता याम्या॥
पूर्वापरे तु शाले गृहचुल्ली दक्षिणोत्तरे काचम्॥'

द्विशाल वास्तु के छह भेदों के फल इस प्रकार हैं—

'सिद्धार्थेऽर्थावाप्तिः यमसूर्ये गृहपतेर्मृत्युः॥
दण्डबन्धो दण्डाख्ये कलहोद्वेगः सदैव वाताख्ये।
वित्तविनाशश्चुल्यां ज्ञातिविरोधः स्मृतः काचे॥'

रत्नमाला ग्रन्थ का मत—रत्नमाला ग्रन्थ के अनुसार गृह के क्षेत्रफल (पिण्ड) में चार का गुणा करें। इस गुणनफल में १६ का भाग देने से जो शेष बचे, तदनुसार १. ध्रुव, २. धान्य, ३. जय, ४. नन्द, ५. खर, ६. कान्त, ७. मनोरम, ८. सुवक्त्र,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

९. दुर्मुख, १०. उग्र, ११. विपक्ष, १२. धन्य, १३. क्षय, १४. आक्रन्द, १५. विपुल तथा १६. विजय—ये गृहों की संज्ञा होती है—

'गृहपिण्डं युगैर्हत्वा षट् चन्द्रैर्भागमाहरेत्।
शेषाङ्के तु स्मृतं नाम ध्रुवादि क्रमतो बुधैः॥'
ध्रुवञ्च धान्यञ्च जयञ्च नन्दं;
खरञ्कान्तञ्च मनोरमञ्च।
सुवक्त्रसंज्ञं खलु दुर्मुखोग्रं;
क्रूरं विपक्षं धनदं क्षयञ्च॥
आक्रन्दसंज्ञं विपुलाह्वयञ्च;
स्यात्षोडशन्तद् विजयाभिधानाः॥'

इस प्रकार तुलनात्मक रूप से गृहभेदों को समझ लेने से पाठकों को सुविधा रहेगी।

मुख्य गृह से उपकरण गृहों की दिशा का कथन

स्नानागारं दिशि प्राच्यामाग्नेय्यां पाकमन्दिरम्।
याम्यायां शयनागारं नैर्ऋत्यां शस्त्रमन्दिरम्॥ ६२॥
प्रतीच्यां भोजनगृहं वायव्यौ धान्यमन्दिरम्।
कौबेर्यां देवतागारमीशान्यां क्षीरमन्दिरम्॥ ६३॥
एवं कुर्यादिदं स्थानं क्षीरपानाज्यशालिकाः।
शय्यामूत्रास्त्रतद् विद्या भोजनं मङ्गलाश्रयम्॥ ६४॥
धान्यस्त्रीभोगवित्तञ्च शृङ्गारायतनानि च।
ईशान्यादिक्रमस्तेषां गृहनिर्माणादिकं शुभम्॥ ६५॥
एते स्वस्थानशास्तानि स्वस्वायस्वस्वदिश्वपि।

१. घर के भीतर मध्य से पूर्व दिशा में स्नानगृह का निर्माण करें। २. अग्निकोण (पूर्व+दक्षिण के कोने) में पाकशाला (रसोई) बनायें। ३. दक्षिण दिशा में शयनागार (शयनकक्ष) रखें। ४. नैर्ऋत्यकोण में अस्त्र-शस्त्रों का स्थान रखना चाहिये॥ ६२॥

५. इसी प्रकार पश्चिम दिशा में भोजनगृह (भोजन करने का कमरा) बनाना चाहिये। ६. वायव्य कोण (पश्चिम+उत्तर के कोने) में धान्यों का संग्रह, ७. उत्तर में धन-संग्रह तथा ८. ईशान कोण (पूर्व+उत्तर के कोने) में पूजागृह बनाना चाहिये। इसी प्रकार ईशान कोण में पेयजल, दुग्ध, एवं घृत-संग्रह का स्थान बनायें।

अग्निकोण से आरम्भ करके दो-दो घरों के बीच क्रमशः दधिमन्थन घृत रखने का, वर्ज्यस्थान (मल-मूत्र के त्याग का) फिर विद्याभ्यास, स्त्रीसंग के स्थान बनाना चाहिये।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस प्रकार ईशान से लेकर दिशाओं एवं विदिशाओं में (कुल १६ प्रकार की आवश्यकताएँ पूरी करने वाले उपकरण-गृहों का निर्माण करना चाहिये॥ ६३-६५$\frac{1}{2}$॥

विमर्श—इन श्लोकों का स्पष्टीकरण निम्न प्रकार है—

१. देवगृह (पूजागृह)—मानव जीवन में उपासना अति आवश्यक है। भगवान् शंकर स्वयं उपासक हैं तथा उपास्य भी हैं, उनकी दिशा ईशान कोण (पूर्व तथा उत्तर का कोना) है। अत: इसमें अपनी कुल-परम्परानुसार उपासना-स्थल बनवाना चाहिये।

२. श्रीगृह—स्नान-जैसे पवित्र कार्य तथा शारीरिक सौष्ठव एवं सौन्दर्य-प्रसाधनादि हेतु पूर्व दिशा में इसका निर्माण कराना चाहिये। स्नान से अलक्ष्मी का नाश तथा लक्ष्मी का साक्षात्कार होता है।

३. दधिमन्थनगृह—दही एवं मट्ठा—ये दोनों पदार्थ सभी उदर विकारों को दूर कर बुढ़ापे को देर से आने देते हैं। इनसे दीर्घायु की प्राप्ति होती है। बाजार के दही-मट्ठे पर निर्भर रहकर यह उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता है। अत: श्रीमन्तों को अपने आवास में पूर्व दिशा तथा अग्निकोण के बीच में दधिमन्थनगृह बनाना चाहिये, जिसमें दही का निर्माण, मन्थन तथा तक्र निर्माण किया जा सके। रूसी चिकित्सक मैचनीकोह्व ने दही को आँतों में उत्पन्न होनेवाले विष को नष्ट करनेवाला कहा है। चरकादि आचार्यों के अनुसार दही की पाँच अवस्थाएँ होती हैं, उनमें आदि एवं अन्त की तीन अवस्था का दही सेवनयोग्य नहीं होता है—

'आदौ मन्दं ततः स्वादुः स्वाद्वम्लं ततः परम्।
अम्लश्चातुर्थिकं ज्ञेयं अत्यम्लं दधि पंचधा॥'

गाय के दूध-दही मट्ठा एवं घृत विशेष गुणकारी होते हैं। भावप्रकाशादि के अनुसार मट्ठा पृथ्वीलोक का अमृत है—

'न तक्रसेवी व्यथिते कदाचन्न तक्रदग्धा प्रभवन्ति रोगाः।
यथा सुराणाममृतं प्रधानं तथा नराणां भुवि तक्रमाहुः॥'

४. महानस (रसोईघर)—इसे ठीक आग्नेय विदिशा (कोण) में बनाना चाहिये तथा चूल्हा आदि सभी पाककर्म में उपयोगी उपकरणों से सुसज्जित रखना चाहिये।

५. घृत-भण्डार—बुद्धि-आयु तथा लक्ष्मी को बढ़ाने के लिये तथा दुःस्वप्न एवं बुरे विचारों के नाश के लिये मनुष्य को घृत का विशेष रूप से गोघृत का सेवन आवश्यक है। अत: इसका भण्डारण अग्निकोण एवं दक्षिण के बीच करें।

६. शयन-कक्ष—शयन-कक्ष के लिये मुख्य तथा दक्षिण दिशाओं में ही निर्माण कार्य कराना चाहिये। यह कक्ष पर्यावरण के पूर्णतः अनुकूल होना चाहिये।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

७. शौचालय—मलमूत्र विसर्जन एक आवश्यक दैहिक क्रिया है, इसकी निवृत्ति के लिये दक्षिण तथा नैर्ऋत्य कोण के मध्य में कक्ष बनवाना चाहिये।

८. शस्त्रागार—जीवन-रक्षा के लिये शस्त्र भी अति आवश्यक हैं, अत: नैर्ऋत्य-कोण में एक कमरा लाठी, मुद्गर, गदा, भाला, बर्छी, तलवार, गुप्ती, बन्दूक आदि को रखने के लिये बनवाना चाहिये।

९. स्वाध्यायगृह (Study room)—जीवन में प्रतिदिन न्यूनतम एक घण्टा स्वाध्याय अवश्य करना चाहिये। प्राचीन गुरुकुलों में विद्यालय छोड़ते समय विद्यार्थी को उपदेश देते हुए कहा जाता था—'स्वाध्यायान्मा प्रमद:।' कोई व्यक्ति कितना ही उच्च शिक्षित क्यों न हो, परन्तु जीवन को सफल एवं स्वावलम्बी बनाने के लिये स्वाध्याय (अच्छे ज्ञानवर्धक ग्रन्थों का पाठन) अति आवश्यक है। अत: इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु नैर्ऋत्य एवं पश्चिम दिशा के मध्य में कक्ष का निर्माण कराना चाहिये, जिसमें काँच के पल्लों सहित स्टील की आलमारियाँ पुस्तकों के संग्रह के लिये रखना चाहिये। जिसमें पुस्तकें चूहों-दीमकों आदि से सुरक्षित रखी जा सके।

१०. भोजन-कक्ष (Dining room)—पश्चिम दिशा के भाग में भोजनकक्ष का निर्माण प्रशस्त होता है जहाँ बैठकर स्वास्थ्यप्रद परिस्थिति में भोजन किया जा सके।

११. कोपभवन—क्रोध मानवीय दुर्बलता है, अत: इसको सुरक्षित निकाल देना आवश्यक है। इस प्रयोजन के लिये प्राचीन राजा-महाराजाओं के आवासों में कोपभवन बने हुए थे। जिनमें क्रोधित व्यक्ति के प्रविष्ट हो जाने से राज-परिवार में यह सन्देश पहुँच जाता था कि अमुक व्यक्ति असन्तुष्ट है। अत: उसके असन्तोष को दूर कर दिया जाता था। इसमें जाकर रो लेने से मन हलका हो जाता है और व्यक्ति आत्महत्या तथा परहत्या जैसे जघन्य अपराधों से बच जाता है।

आजकल बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण आवासों में भीड़ भरी रहती है। मनुष्य को अपने उद्गार प्रकट करने का अवसर नहीं मिलता है। जिसके कारण समाज में अनेक प्रकार के मनोरोग बढ़ते चले जा रहे हैं। बच्चों-किशोरों, युवकों-प्रौढ़ों तथा वृद्धों आदि सभी आयुवर्ग के लोगों में मानसिक बीमारियाँ दिनानुदिन बढ़ रही हैं। इन सबसे बचने के लिये समृद्ध व्यक्तियों को अपने आवास में कोपभवन भी बनवाना चाहिये, जिससे परिवार में असन्तुष्ट सदस्य का सरलतापूर्वक पता लग सके तथा उसका समाधान हो सके।

१२. धान्यागार—गेहूँ, चावल, जौ, मक्का, ज्वार, बाजरा, चना, मसूर, मटर, मूँग, मोठ, कुल्थी, तिल, सरसों, कुसुम्भा, अलसी, साँवाँ, ककुनी, कूरी आदि धान्यों का संग्रह श्रीमन्तों के घर में आवश्यक है। इन्हें लोहे की कोठियों में भरकर वायव्य कोण में निर्मित धान्यागार में रखना चाहिये।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

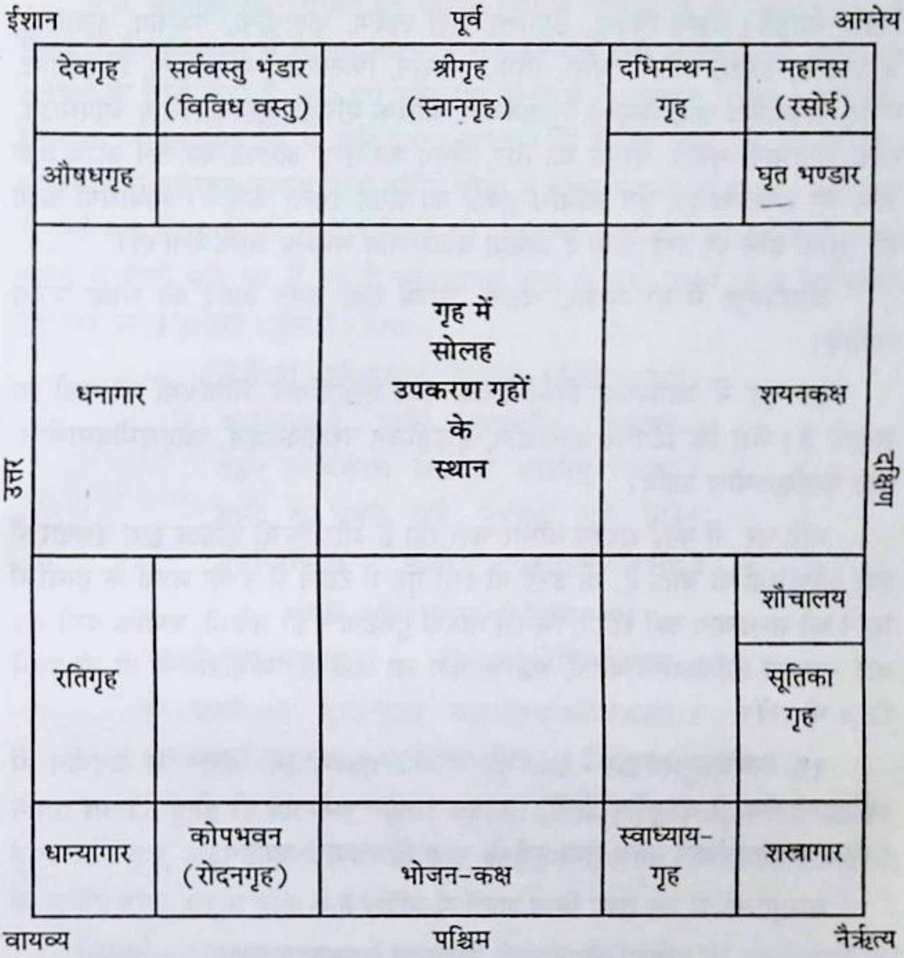

१३. रतिगृह—घर में वायव्य कोण तथा उत्तर दिशा के बीच के स्थान में रतिगृह बनवाना चाहिये। उसका उपयोग नये विवाहित जोड़ों के लिये मधुयामिनी मनाने में होना चाहिये। जब तक स्त्री (पत्नी) गर्भवती न हो, तब तक इस रतिगृह का उपयोग करते रहना चाहिये।

१४. धनागार—घर में उत्तरी भाग में कोषागार बनवाना चाहिये। जिसका उपयोग सोना-चाँदी-रत्न, नकदी तथा आभूषण रखने में एवं तिजोरी रखने में होना चाहिये। इसमें सुदृढ़ लौह कपाट लगवाना चाहिये। आजकल इसे Strong Room कहते हैं। दीपावली को धन एवं कुबेर की पूजा इसी में करनी चाहिये।

१५. औषधिगृह—परिवार में पता नहीं कब कौन अस्वस्थ हो जावे? अथवा किसी रोग के लक्षणों से ग्रस्त हो जाय? अत: छोटे-मोटे रोगों एवं लक्षणों के उपचार के लिये औषधियाँ, उपकरण आदि रखने के लिये अलग से ही औषधिगृह बनवाकर

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रखना चाहिये। उसमें त्रिकटु, त्रिफला, पञ्च लवण, दालचीनी, तेजपात, इलायची, अनारदाना, हल्दी, धनिया, जीरा, सौंफ, लहसुन, फिटकरी, प्याज, हींग, पिपरमिण्ट, कपूर, अजवायन सत, सिरका, गुलाबजल, बोरिक एसिड, सुहागा, जिंक ऑक्साइड, राल, लोहबान, गूगल, एरण्ड का तैल, जैतून का तैल, अलसी का तैल आदि तथा अन्य जो उपलब्ध हो, उन औषधि-द्रव्यों का संग्रह रखना चाहिये। औषधियाँ ताजी हों, पुरानी होने पर उन्हें फेंक दें अथवा यथासम्भव मसाला आदि बना लें।

औषधिगृह में ही अचार, चटनी, मुरब्बे तथा शर्बत आदि का संग्रह करना चाहिये।

इस गृह में आवश्यक होम्योपैथिक तथा एलोपैथिक औषधियाँ भी रखी जा सकती है। जैसे कि टिंक्चर आयोडीन, हाइड्रोजन परआक्साइड, कोट्राइमोक्साजोल, तथा पैरासिटामोल आदि।

यदि घर में कोई सदस्य बीमार चल रहा है और किसी डॉक्टर द्वारा उपचार में उसे औषधियाँ दी जाती हैं, तो उन्हें भी इसी गृह में रखने से उनके बच्चों के हाथों में पड़ने की सम्भावना नहीं रहेगी, जिससे घातक दुर्घटना न हो सकेगी; क्योंकि बच्चे कई बार चुपचाप हानिकारक दवाएँ अज्ञानतावश खा जाते हैं। यदि सम्भव हो तो इसमें फ्रिज भी रखें।

१६. सर्ववस्तुभण्डार—एक गृहस्थ की गृहस्थी में जीवन में उपयोग में आनेवाली सैकड़ों वस्तुएँ होती हैं, जिनका उपयोग जब-तब ही होता है। उन सबके लिये एक कक्ष ईशान कोण तथा पूर्व के मध्य में बनवाना चाहिये।

वास्तुग्रन्थों में यह तथ्य निम्न शब्दों में वर्णित है—

'पूर्वस्यां श्रीगृहं प्रोक्तं आग्नेय्यां स्यान्महानसाम्।
शयनं दक्षिणस्याञ्च नैर्ऋत्यामायुधाश्रयम्॥
भोजनं पश्चिमास्याञ्च वायव्यां धान्यसंचयम्।
उत्तरे द्रव्यसंस्थानं ऐशान्यां देवतागृहम्॥
इन्द्राग्न्योर्मन्थनं मध्ये यमाग्न्योर्घृतमन्दिरम्।
यमराक्षसयोर्मध्ये पुरीषत्यागमन्दिरम्॥
राक्षसजलयोर्मध्ये विद्याभ्यासस्य मन्दिरम्।
तोयेशानिलयोर्मध्ये रोदनस्य च मन्दिरम्॥
कामोपभोगशमनं वायव्योत्तरयोर्गृहम्।
कौबेरेशानयोर्मध्ये चिकित्सामन्दिरं सदा॥
पुरन्दरेशयोर्मध्ये सर्ववस्तुषु संग्रहम्।
सदनं कारयेदेवं क्रमादुक्तानि षोडश॥'

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१७. सूतिकागृह—यद्यपि इन सोलह गृहों में सूतिकागृह का उल्लेख नहीं हैं, परन्तु विश्वकर्मप्रकाश में नैर्ऋत्य कोण में राजाओं एवं धनी व्यक्तियों को सूतिकागृह बनवाने के लिये कहा है अतः इसे शस्त्रागार के पार्श्व में बनवाना चाहिये। आयुर्वेदीय ग्रन्थों में भी सम्पन्न घरों में सूतिकागार बनवाने के निर्देश दिये गये हैं। आजकल शासकीय सूतिकागृह अथवा निजी नर्सिंग होमों में प्रसव कराया जा रहा है। परन्तु वहाँ से कई बार शिशुओं को दूसरे रोगियों की संक्रामक व्याधियाँ लग जाती हैं। इससे बचने के लिये यदि घर में स्थायी सूतिकागार बना लें तथा उसमें योग्य चिकित्सक बुलाकर प्रसव कराना उत्तम है। यथा—

'नैर्ऋत्यां सूतिकागेहं नृपाणां भूतिमिच्छताम्।
आसन्नप्रसवे मासि कुर्याच्चैव विशेषतः॥
तद्वत् प्रसवकाले स्यादिति शास्त्रेषु निश्चयः।
मासे तु नवमे प्राप्ते पूर्वपक्षे शुभे दिने।
प्रसूतिसम्भवे काले गृहारम्भणमिष्यते॥'

गृह के समीप एवं सामने निन्दित वृक्ष

प्लक्षोदुम्बरचूताख्या निम्बस्नुहीविभीतकाः॥ ६६॥
ये कण्टका दुग्धवृक्षा वटाश्वत्थकपित्थकाः।
अगस्त्य शिग्रुतालाख्य तिन्तिणीकाश्च निन्दिताः॥ ६७॥

पाकर, गूलर, आम, नीम, थूहर, बहेड़ा, काँटेदार वृक्ष (बबूल-बेरी आदि), दुग्ध वाले वृक्ष, बड़, पीपल, कैथ, अगस्त्य, सहिंजन, तालवृक्ष, इमली आदि का घर के समीप होना अशुभ होता है॥ ६६-६७॥

विमर्श—वास्तुराजवल्लभ में इन वृक्षों के गृह समीप होने के दुष्परिणामों का वर्णन इस प्रकार किया गया है कि घर के समीप दूधवाले, फलदार तथा काँटेदार वृक्षों को दूर से ही त्याग देना चाहिये। केवल चम्पा, गुलाब, केला, चमेली तथा केतकी का गृह के समीप होना शुभ होता है। ऐसे वृक्ष भी जिनकी छाया एक प्रहर से अधिक समय तक घर के ऊपर बनी रहे शुभ नहीं होते हैं। दूधवाले वृक्ष धन का नाश करते हैं। काँटेदार वृक्ष शत्रुओं का भय करते हैं। फलदार वृक्ष घर के समीप हों, तो सन्तान की हानि होती हैं। घर के भीतर फूल बिखेरने वाले वृक्ष वर्जित होते हैं। यथा—

'वृक्षा दुग्धसकण्टकाश्च फलिनस्त्याज्या गृहाद् दूरतः।
शस्ते चम्पकपाटले च कदली जाती तथा केतकी।
वामादूर्ध्वमशेषवृक्ष् सूर्याछाया न् शस्ता गृहे।
पार्श्वेकस्य हरेर्वीश पुरतो ज्ञानोनुगुण्या क्वचित्॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सदुग्धवृक्षा द्रविणस्य नाशं कुर्वन्ति ते कण्टकितोऽरिभीतिम्।
प्रजाविनाशं फलिनः समीपे गृहे च वर्ज्याः किलधौतपुष्पाः ॥'

घर के दक्षिण-पश्चिम भाग में वृक्षों का विशेष निषेध

वित्तवात्मजहानिः स्यात् पश्चिमे दक्षिणे तथा।
सर्वत्र पनसः शस्तो दक्षिणे सकलाः खलाः ॥ ६८ ॥

ऊपर कहे वृक्ष यदि घर के पश्चिम-दक्षिण भाग में हों तो धन एवं सन्तति को हानि पहुँचाते हैं। कटहल का वृक्ष दक्षिण दिशा में शुभ नहीं होता। शेष दिशाओं में शुभ होता है ॥ ६८ ॥

गृह में स्तम्भों की संख्या का कथन

गृहपादाः गृहस्तम्भाः समाः शस्ताश्च नोऽसमाः ॥ ६९ ॥

घर में लगनेवाले स्तम्भ घर के पैर होते हैं, अतः घर में सम संख्या में (२-४-६-८-१०-१२-१४-१६ आदि) की संख्या में स्तम्भ लगाये जायँ तो शुभ होते हैं। तथा विषम संख्या में अशुभ होते हैं (जैसे कि कोई प्राणि १-३-५-७ पैरों का अशुभ माना जाता है ॥ ६९ ॥

गृह का उत्सेध (ऊँचाई) कथन

नात्युच्छ्रितं नातिनीचं कुड्योत्सेधं यथारुचिः।
गृहस्योपरि गृहादीनामेवं सर्वत्र चिन्तयेत् ॥ ७० ॥

गृह की कुड्य (दीवाल) ऊँचाई न अधिक ऊँची और न कम ऊँची होनी चाहिये। ऊँचाई को आवश्यकता के अनुरूप रखना चाहिये। इसी प्रकार घर के ऊपर दूसरी मंजिल की ऊँचाई आदि भी आवश्यकता के अनुसार रखनी चाहिये ॥ ७० ॥

गृहच्छाद् के आठ प्रकार के मान

गृहादीनां गृहच्छादं क्रमशोऽष्टविधं स्मृतम्।
पाञ्चालमानं वैदेहं कौरवञ्च कुजन्यकम् ॥ ७१ ॥
मागधं शूरसेनञ्च गान्धारावन्तिका स्मृतम्।
तं चतुर्भागविस्तारमुत्सेधं यत्तदुच्यते ॥ ७२ ॥
पाञ्चालमानमतुलं उत्तरोत्तरवृद्धितः।
वैदेहादीनि शेषाणि मानानिस्युर्यथा क्रमात् ॥ ७३ ॥
पाञ्चालमानं सर्वेषां साधारणमतः परम्।

घरों की छत कितनी ऊँचाई पर ढाली जाय, इस सम्बन्ध में प्रान्तभेद से आठ प्रकार के मानों का प्रचलन है—१. पाञ्चाल मान, २. वैदेह मान, ३. कौरव मान,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

४. कुजन्य (कान्यकुब्ज मान) मान, ५. मागध मान, ६. शूरसेन (मथुरा के समीप का) मान, ७. गान्धार मान (अफगानिस्तान में प्रचलित) तथा ८. आवन्तिक मान (उज्जैन में प्रचलित)।

पांचाल मान में घर की ऊँचाई उसकी चौड़ाई से $\frac{१}{४}$ भाग अधिक होती है अर्थात् चौड़ाई तथा ऊँचाई में १ : $\frac{५}{४}$ का अनुपात होता है। यह भूतल (फर्श) से छत तक गिना जाता है। पांचाल मान से वैदेह मान सवाया होता है, वैदेह से कौरव मान सवाया होता है, इस प्रकार इन मानों में क्रमशः उत्तरोत्तर (प्रान्तभेद से स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप) ऊँचाई बढ़ती जाती है।

इनमें पाञ्चाल मान सर्वसाधारण जनों के लिये शुभ है, ब्राह्मणों के लिये घर की ऊँचाई आवन्तिक मान से रखना शुभ होता है। क्षत्रियों के लिये गृह की ऊँचाई गान्धार मान से रखनी चाहिये। वैश्यों के लिये घर की ऊँचाई का नाप कौजन्य मान (कान्यकुब्ज मान=कन्नौज का) से लेना ठीक है। तदनुसार ही छतों में विभिन्न मंजिलों के पानी के बहाव के परनाले भी बनाना चाहिये॥ ७१-७३$\frac{१}{२}$ ॥

विमर्श—इस प्रकार नारदजी ने तत्कालीन विशाल भारतवर्ष में प्रचलित विभिन्न प्रकार की ऊँचाई को आवश्यकतानुसार ग्रहण करने को कहा है, परन्तु वराहमिहिर सामान्य ऊँचाई के सम्बन्ध में कहते हैं कि घर की (कमरे की) चौड़ाई जितने हाथ हो उसके सोलहवें भाग में चार हाथ अधिक जोड़कर घर की ऊँचाई रखना शुभ है। जैसे कि यदि किसी कमरे की चौड़ाई आठ हाथ है तो उसका षोडशांश $\frac{१}{१२}$ हाथ = $\frac{१}{२}$ हाथ हुआ। इसमें चार हाथ जोड़ने पर साढ़े चार हाथ (४$\frac{१}{२}$ हाथ) की ऊँचाई रखना चाहिये। दूसरे मंजिल की ऊँचाई में इस ऊँचाई का द्वादशांश ($\frac{१}{१२}$) कम कर देना चाहिये—

'विस्तारषोडशांशः स चतुर्हस्तो भवेद् गृहोच्छ्रायः।
द्वादश भागेनोनो भूमौ भूमौ समस्तानाम्॥'

चारो वर्णों के लिये मानों की ग्राह्यता

अवन्तिमानं विप्राणां गान्धारं क्षत्रियस्य च॥ ७४॥
कौजन्यमानं वैश्यानां विप्रादीनां यथोत्तरम्।
यथोदितं जलस्त्राव्यं द्वित्रिभूमिकवेश्मनाम्॥ ७५॥

ब्राह्मणों के लिये अवन्ति मान, क्षत्रियों के लिये गान्धार मान, वैश्यों के लिये कौजन्य मान ग्रहण करते हुए जितने मंजिल का ऊँचा मकान हो, उतनी ऊँचाई के जलस्त्राव्य (पानी के परनाले=पाइप) लगाना या बनाना चाहिये॥ ७४-७५॥

विमर्श—भवन की मंजिलों को भूमि कहते हैं, अतः श्लोक ७५ में दुमंजिले भवन को द्विभूमिक (Double story), तिमंजिलों को त्रिभूमिक (Triple story) कहा है। यह प्राचीन संस्कृत भाषा की वास्तुशास्त्रीय शब्दावली है। बहुमंजिला इमारतें

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बहुभूमिक, भूरिभूमिक अथवा मूर्तिभूमिक होती हैं। यदि ध्यानपूर्वक विचार करें तो हम देखेंगे कि आधुनिक वास्तुशास्त्र की अंग्रेजी भाषा की शब्दावली भारतीय वास्तुशास्त्र की ही देन है, जैसे कि मंजिल के लिये प्रचलित Story शब्द संस्कृत के स्तरीय शब्द का ही घिसा हुआ रूप है। यूरोप की सभी भाषाओं में गिनती के शब्द संस्कृत शब्दों के ही अपभ्रंशमात्र है। अंग्रेजी का Multy शब्द मूर्ति शब्द का अपभ्रंश है, जैसे एक व्यक्ति या वस्तु के अनेक चित्र या मूर्तियाँ बन जाती हैं, वैसे ही मूर्ति Multy शब्द एक ही जैसे अनेक रूपों का वाचक हो गया है।

गृह के पर्यायवाची शब्द एवं उनके अपभ्रंशों का विश्वव्यापी प्रसार—गृह, गेह, उधवसित, वेश्म, वेष्ट-वेष्टक, सद्म, सदन, आवास, निकेतन, निशान्त, वस्त्य, भवन, आगार, मन्दिर, ओक, निकाय, निलय, आलय, वास, कूट, शाला, सभा—ये शब्द संस्कृत में सामान्य गृहशब्द के पर्यायवाची हैं। इनमें अयन, आयतन, प्रासाद, हर्म्य तथा धाम भी शामिल हैं, जो विशेष प्रकार के घरों के द्योतक हैं। इन शब्दों से विश्व की विभिन्न भाषाओं में अपभ्रंश रूप में शब्द पहुँचे हैं—

गृह—यह शब्द घिसकर पालि भाषा में गिह, घर, गह आदि रूपों में परिवर्तित हो गया है तथा फारसी में यही 'गाह' (ईदगाह, दरगाह आदि में) तथा 'काह' भी हो गया है (खानकाह जैसे शब्दों में)। अंग्रेजी का रूम (Room) शब्द संस्कृत के गृहम् में 'ग्' वर्ण का लोप होने से बना है।

ओक—ग्रीक भाषा में यह संस्कृत का ओकः (ओकस) शब्द Oikos हो गया है, जिसका अर्थ घर होता है आज का Ecology शब्द इसी से बना है।

वेष्ट-वेष्टक—यह शब्द घर तथा वेष्टम (बेड़ा एवं चहारदीवारी) के लिये प्रयुक्त होता है। अरबी भाषा में यह 'बैत' हो गया है, जो कि घर के लिये प्रयुक्त होता है।

आलय—इसका अर्थ घर, निवास, गृहविभाग, कमरा आदि होता है। जिसमें अनेक आलय माला की भाँति एक साथ संलग्न हों, इसे 'आलयमालिका' कहते हैं। अल्मीरा तथा आलमारी शब्द इसी आलयमाला के अपभ्रंश हैं।

आवास—अंग्रेजी का हाउस (House) इसी का घिसा हुआ रूप है। 'आ' के स्थान में 'हा' हो गया है। क्योंकि दोनों वर्णों का उच्चारण स्थान कण्ठ है—'अकुह विसर्जनीयानां कण्ठः'।

धाम—अंग्रेजी का Dome ; रूसी का दोम तथा लैटिन का Domus शब्द इसी से बने हैं। इसमें Dh के स्थान पर केवल h रह गया है तथा 'आ' स्वर के स्थान पर 'ओ' हो गया है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शाला—अंग्रेजी का हाल (Hall) शब्द इसी का घिसा हुआ रूप है जिसमें 'शा' वर्ण के स्थान पर 'हा' हो गया है। यह ठीक उसी प्रकार है, जैसे सिन्धु से 'हिन्दु' होना।

कुटीगृहम्—कूटगृहम्—इन शब्दों से लैटिन भाषा के Cote, Cottagium, अंग्रेजी का Cottage तथा Cot इसी से व्युत्पन्न हैं।

प्रासाद—यह शब्द प्रासाद→प्लासाद→होकर स्पेनिश भाषा में Plaza हो गया है। पालि भाषा में प्रासाद का घिसकर फसाद हो गया है, किन्तु लैटिन एवं अंग्रेजी में यह 'पालासाद'→पालास→पालेस=Palace हो गया है।

गर्भः तथा गर्भम्—इसका अर्थ किसी गृह का भीतरी कक्ष होता है। गर्भम् शब्द प्रथम गर्भन् होकर फिर गब्भन् हुआ और फिर लैटिन भाषा में Cappana तथा Capanna एवं Cavanna हुआ। यही फ्रेञ्च भाषा में Cabane, Cabin और अंग्रेजी में Cabin बन गया है। बाद में cabinet शब्द भी इसी से बना है। अरबी-फारसी एवं तुर्की में प्रयुक्त, 'काब' शब्द की 'गर्भः' का अपभ्रंश है।

द्वार—घर में प्रवेश द्वार से ही होता है। संस्कृत का द्वार शब्द पालि में द्वार, अवेस्तानी भाषा में द्वारम् , लैटिन में Farum, पुरानी अंग्रेजी में Duru, पुरानी जार्मनिक में Dor, नई अंग्रेजी में Door, ग्रीक भाषा में धूरा तथा धूरु, गौथिक भाषा में Daur, पुरानी हंगेरियन में तूरि, जर्मन में तूर शब्द घिसकर बन गया है। फारसी में यह 'दर' बन गया है। पालि भाषा के ग्रन्थ चरिया पिटक में इसके लिये 'ध्वार' लिखा गया है। पाठक देख सकते हैं कि 'द' अक्षर विभिन्न भाषाओं में परिवर्तित होकर, कहीं 'त' कहीं 'थ' तथा कहीं 'ध' हो गया है। ये चारों तवर्ग के ही अक्षर है।

इतनी बानगी से ही यह सिद्ध हो जाता है कि किसी समय भारतीय वास्तुशास्त्र की तूती समस्त विश्व में बोलती थी। समय ने भारत से ही ज्योतिष एवं वास्तुशास्त्र का ज्ञान प्राप्तकर प्राचीन अमेरिका में भव्य भवनों का निर्माण किया था।

ध्वजादि आयों का अलग-अलग घरों में उपयोग

उष्ट्रकुञ्जरशालानां ध्वजायोऽप्यथवा गजे।
पशुशालाश्वशालानां ध्वजायोऽप्यथवा वृषे।
द्वारे शय्याशनामन्त्रे ध्वजसिंहवृषाः शुभाः॥ ७६॥

उष्ट्रशाला तथा गजशाला बनाने के लिये ध्वज आय अथवा गज आय शुभ होती है। पशुशाला (गोशाला) तथा अश्वशालाओं के निर्माण के लिये वृष या ध्वज आय उत्तम होती है। द्वार-निर्माण, शय्या-निर्माण तथा मन्त्रशाला (पाठशाला आदि) के निर्माण हेतु ध्वज आय, अथवा सिंह आय अथवा वृष आय शुभ होती है। सिंहासन-निर्माण में सिंह आय अतिशुभ होती है॥ ७६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—वर्तमान समय में गजशाला, उष्ट्रशाला तथा अश्वशाला का कोई उपयोग नहीं है, अतः सर्वोपयोगी गोशाला-निर्माण के सम्बन्ध में कुछ वास्तुशास्त्रीय ज्ञान दिया जा रहा है—

गोशाला-निर्माण—गोशाला-निर्माण के लिये प्रथम भूमि का विनिश्चयकर उसके लिये वृष आय अथवा ध्वज आय वाला क्षेत्रफल चयन करें, फिर उसमें गायों को चारा खिलाने वाली चरणी (बनावें)। उसका नाम इस प्रकार रखें, मालिक के हाथ से जितनी लम्बाई, चौड़ाई की चरणी बने, उतनी लम्बाई-चौड़ाई को जोड़ लें तथा उसमें ८ का भाग दें। यदि १ शेष बचे तो पशुओं की हानि हो, दो शेष बचे तो पशुओं को रोग हो, तीन शेष बचने पर पशुलाभ, चार शेष बचे तो पशुक्षय, पाँच शेष बचे तो पशुनाश, छह शेष बचने पर पशुवृद्धि, सात शेष बचे तो पशुभेद हो (पशुओं में झगड़ा हो) तथा आठ या शून्य शेष बचने पर बहुत से पशु होते हैं। यथा—

'स्वामिहस्तप्रमाणेन दीर्घविस्तारसंयुतम्।
अष्टभिश्च हरेद् भायं शेषं चरणिं उच्यते॥
पशुहानिः पशुरोगः पशुलाभः पशुक्षयः।
पशुनाशः पशुवृद्धिः पशुभेदो बहु पशुः॥'

वास्तुपूजाविधि तथा वास्तुमण्डल का निर्माण

वास्तुपूजामहं वक्ष्ये नववेश्मप्रवेशने।
हस्तमात्रा लिखेद्रेखा दशपूर्वा दशोत्तराः॥ ७७॥
गृहमध्ये तण्डुलोपरि एकाशीति पदं भवेत्।
पञ्चोत्तरान्वक्ष्यमाणांश्चत्वारिंशत्सु वा न्यसेत्॥ ७८॥
द्वात्रिंशत् बाह्यतः पूज्यास्तत्रान्तःस्थास्त्रयोदश।
तेषां स्थानानि नामानि वक्ष्यामि क्रमशोऽधुना॥ ७९॥

अब मैं नव गृहप्रवेश के पूर्व की वास्तुपूजाविधि का वर्णन करता हूँ। घर में किसी काठ की सर्वतोभद्र या आयताकार चौकी पर दशरेखा ऊपर से नीचे तथा दश बाएँ से दाएँ खींचें। इस प्रकार ८१ कोष्ठक बन जायेंगे। उनमें ४९ कोष्ठ भीतर तथा ३२ कोष्ठ बाहर की ओर पूजना चाहिये। अब इस ९×९=८१ कोष्ठकों के वास्तुचक्र में विभिन्न वास्तु देवताओं को पूजना चाहिये॥ ७७-७९॥

विमर्श—इन कोष्ठकों में ४९ कोष्ठ भीतर होते हैं, जिनमें मध्य के नव पद में ब्रह्माजी का स्थान होता है, जो शेष देवता कुछ एक पदिक होते हैं तथा कुछ त्रिपदिक होते हैं। अतः वे दो एवं तीन पदों में पूजित होते हैं।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ईशान पूर्व आग्नेय

उत्तर / दक्षिण

१	२	३	४	५	६	७	८	९
३२	३३	३	४	५	६	७	३४	१०
३१	३१	४५	२८	३८	३८	३९	११	११
३०	३०	४४	ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा	४०	१२	१२
२९	२९	४४	ब्रह्मा	ब्रह्मा ३७	ब्रह्मा	४०	१३	१३
२८	२८	४४	ब्रह्मा	ब्रह्मा	ब्रह्मा	४०	१४	१४
२७	२७	४३	४२	४२	४२	४१	१५	१५
२६	३६	२३	२२	२१	२०	१९	३५	१६
२५	२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७

वायव्य पश्चिम नैर्ऋत्य

ईशान पूर्व आग्नेय

उत्तर / दक्षिण

शिखी	पर्जन्य	जयन्त	इन्द्र	सूर्य	सत्य	भृश	अन्तरिक्ष	अनिल
दिति	आप	जयन्त	इन्द्र	सूर्य	सत्य	भृश	सवित्र	पूषा
अदिति	अदिति	आपवत्स	अर्यमा	अर्यमा	अर्यमा	सविता	वितथ	वितथ
भुजग	भुंजग	पृथ्वीधर	ब्र०	ब्र०	ब्र०	विवस्वान्	बृहत्क्षत	बृहत्क्षत
सोम	सोम	पृथ्वीधर	ब्र०	ब्र०	ब्र०	विवस्वान्	यम	यम
भल्लाट	भल्लाट	पृथ्वीधर	ब्र०	ब्र०	ब्र०	विवस्वान्	गन्धर्व	गन्धर्व
मुख्य	मुख्य	राजयक्ष्मा	मित्र	मित्र	मित्र	विबुधाधिप	भृंगराज	भृंगराज
नाग	रुद्र	शोष	असुर	वरुण	कुसुमदन्त	सुग्रीव	जय	मृग
रोग	पपयक्ष्म	शोष	असुर	वरुण	कुसुमदन्त	सुग्रीव	दौवारिक	पिता

वायव्य पश्चिम नैर्ऋत्य

८१ पदों में देवताओं के पूजन के स्थान

बाहर की ओर से ३२ देवताओं के नाम

ईशानकोणतो बाह्याद्द्वात्रिंशत् त्रिदशा अमी।
कृपीटयोनिः पर्जन्यो जयन्तः पाकशासनः॥८०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सूर्यसत्यो भृशाकाशौ वायुः पूषा च नैर्ऋतः।
बृहत्क्षतो दण्डधरो गन्धर्वो भृङ्गराजकः॥ ८१॥
मृगः पितृगणाधीशस्ततो दौवारिकाह्वयः।
सुग्रीवः पुष्पदन्तश्च जलाधीशस्तथासुरः॥ ८२॥
शेषश्च पापो रोगश्च भोगी मुख्य भल्लाट सोम च।
भुजगो अदितिदिती द्वात्रिंशत् त्रिदशा अमी॥ ८३॥

ईशानकोण से आरम्भ करके बाहर के कोठों में क्रमशः बत्तीस देवता इस प्रकार लिखना चाहिये—

१. कृपीटयोनि (अग्नि या शिखी), २. पर्जन्य, ३. जयन्त, ४. पाकशासन, ५. सूर्य, ६. सत्य, ७. भृश, ८. आकाश (अन्तरिक्ष), ९. वायु (अनिल), १०. पूषा, ११. नैर्ऋत्य (वितथ या असत्य), १२. बृहत्क्षत (गृहक्षत), १३. दण्डधर (यम), १४. गन्धर्व, १५. भृङ्गराजक, १६. मृग, १७. पितर (पितृगण या पिता), १८. दौवारिक, १९. सुग्रीव, २०. पुष्पदन्त (कुसुमदन्त), २१. जलाधीश (वरुण), २२. असुर, २३. शोष, २४. पाप (पापयक्ष्मा), २५. रोग, २६. भोगी (सर्प या नागों), २७. मुख्य, २८. भल्लाट, २९. सोम, ३०. भुजग, ३१. अदिति तथा ३२. दिति—ये बत्तीस देवता हैं॥ ८०-८३॥

विमर्श—इन बत्तीस देवताओं में कुछ नाम भ्रम उत्पन्न करते हैं। बृहत्क्षत को अनेक ग्रन्थों में गृहक्षत तथा कहीं-कहीं गर्हक्षत भी लिखा है। इसी प्रकार से भोगी सर्प या नाग जो कि २६वें क्रमांक पर लिखा है, वह अलग देवता हैं और ३०वें क्रमांक का भुजग बिल्कुल अलग देवता हैं। इनको एक ही समझना भूल होगी तथा विद्वानों को इनके वास्तविक नामों पर अनुसन्धान करना चाहिये। नैर्ऋत शब्द का अर्थ राक्षस होता है तथा असुर शब्द का भी अर्थ राक्षस है। इनमें नैर्ऋत ११वाँ देवता तथा असुर २२वाँ हैं। ये दोनों पूर्णतः अलग हैं। यहाँ नैर्ऋत को अन्य ग्रन्थों में वितथ लिखा है। वितथ का अर्थ झूठ, असत्य या व्यर्थ (तथ्यहीन) होता है।

ईशानादि कोणों में समीप देवता

अथेशान्यादि कोणस्थाश्चत्वारस्तत्समीपगाः।
आपः सवितृसंज्ञश्च जयो रुद्रः क्रमादमी॥ ८४॥

पूर्वकथित बत्तीस देवताओं के उपरान्त ईशानादि चारों कोणों में (प्रदक्षिणा क्रम से) ३३. सवितृ, ३४. आप, ३५. जय तथा ३६. रुद्र—ये देवता क्रमशः होते हैं॥ ८४॥

विमर्श—ईशानकोण में शिखि के समीपवर्ती कोष्ठकों आप, आग्नेय में भीतर की ओर अनिल (वायु) से लगा हुआ सवितृ होता है। नैर्ऋत्यकोण में पिता से संलग्न भीतर की ओर जय देवता तथा वायव्य कोण में रोग से भीतर की ओर संलग्न रुद्र देवता होता है। इस प्रकार ये ३२+४=३६ देवता हुए।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मध्य केन्द्र में ब्रह्मा तथा उसके बाह्य देवों के नाम

मध्ये नवपदो ब्रह्मा तस्याष्टौ च समीपगाः।
एकान्तराः स्युः प्रागाद्याः परितो ब्रह्मणः स्मृतः॥ ८५॥
अर्यमा सविता चैव विस्वान् विबुधाधिपः।
मित्रोऽथ राजयक्ष्मा च तथा पृथ्वीधराह्वयः॥ ८६॥
आपवत्सोऽष्टमः पञ्च चत्वारिंशत्सुरा अमी।

इस इक्यासी पद के वास्तु का जो मध्यवर्ती केन्द्र है, उसके नौ पदों में ३७ ब्रह्माजी स्थित होते हैं। ब्रह्माजी के समीप पूर्वादि दिशाओं में एक-एक के अन्तर से कुल आठ देवता स्थापित होते हैं॥ ८५॥

३८. अर्यमा, ३९. सविता, ४०. विवस्वान्, ४१. विबुधाधिप (सरस्वती), ४२. मित्र, ४३. राजयक्ष्मा, ४४. पृथ्वीधर, तथा ४५. आपवत्स—ये कुल पैंतालिस देवता क्रमशः होते हैं॥ ८६½॥

विमर्श—यहाँ ४१वें देवता को विबुधाधिप लिखा है, जिसे कई टीकाकारों एवं विद्वानों ने इन्द्र लिखा है, पर वास्तव में यह पृथक् देवता है। विबुधाधिप का अर्थ यहाँ सरस्वती है। जो विद्या-बुद्धि की अधिष्ठात्री देवता हैं। नैर्ऋत्य कोण में इनका स्थान होता है, इसी कारण सोलह उपकरणगृहों में स्वाध्याय का कक्ष नैर्ऋत्य एवं पश्चिम दिशा के मध्य में रखना बताया गया है।

यहाँ यह भी स्मरणीय है कि वास्तुदेवताओं की संख्या ४५ है और इनमें कोई भी देवता दो बार पूजित नहीं होता है। सभी पैंतालिस देव पृथक्-पृथक् स्वतन्त्र देवता हैं।

एकपदिक देवों का कथन

आपश्चैवापवत्सश्च पर्जन्योऽग्निर्दितिः क्रमात्॥ ८७॥
पदिकानाञ्च वर्गोऽयमेवं कोणेष्वशेषतः।

१. आपादि चार, २. आपवत्सादि चार, ३. पर्जन्यादि चार, ४. अग्नि आदि चार तथा ५. दिति आदि चार देवता कुल बीस देव एक पदवाले होने से पदिक अथवा एक पदिक कहे जाते हैं॥ ८७-८७½॥

विंशति द्विपदिक देवोंका कथन

तन्मध्ये विंशतिर्बाह्या द्विपदास्तेषु सर्वदा॥ ८८॥

पूर्व में नव पद ब्रह्मा तथा एक पदिक देवों के मध्य में जो बीस देवता होते हैं। वे द्विपदिक हैं॥ ८८॥

विमर्श—जयन्त, इन्द्र, सूर्य, सत्य, भ्रंश—ये पाँच पूर्व दिशा में; वितथ, बृहत्क्षत, यम, गन्धर्व तथा भृंगराज—ये पाँच दक्षिण में, सुग्रीव, कुसुमदन्त, वरुण, असुर तथा शोष—ये पाँच देव पश्चिम में एवं मुख्य, भल्लाट, सोम, भुजग तथा अदिति—ये पाँच उत्तर में। इस प्रकार कुल मिलाकर ५×४=२० देव दो-दो पदों (कोष्ठों या खानों) में स्थापित होने के कारण द्विपदिक देव कहे जाते हैं।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चार त्रिपद देवों का कथन

अर्यमा च विवस्वांश्च मित्रः पृथ्वीधराह्वयः।
ब्रह्मणः परितो दिक्षुः चत्वारः त्रिदशाः स्मृताः॥ ८९॥

१. अर्यमा यह ब्रह्मा के पूर्व तीन पदों में स्थित होते हैं। २. ब्रह्मा के दक्षिण में तीन पदों में विवस्वान स्थित होते हैं। ३. ब्रह्मा में पश्चिम में तीन पदों में मित्र का अधिकार है। ४. तथैव ब्रह्मा से उत्तर दिशा में तीन पदों में पृथ्वीधर का अधिष्ठान है। इस प्रकार ये चार देवता त्रिपदिक हैं।

विमर्श—इस प्रकार ब्रह्मा के ९ पद, शिख्यादि एकपदिक के २० पद + जयन्तादि द्विपदिकों के २०×२=४० पद + चार त्रिपदिकों के १२ पद=९+२०+४०+१२=कुल ८१ पदों में सम्पूर्ण ४५ वास्तुदेवता समाविष्ट होते हैं॥ ८९॥

पूजनविधि

ब्रह्माणं च तथैकद्वित्रिपदानर्चयेत्सुरान्।
वास्तुमन्त्रेण वास्तुज्ञो दूर्वादध्यक्षतादिभिः॥ ९०॥
ब्रह्ममन्त्रेण वा श्वेतवस्त्रयुग्मं प्रदापयेत्।
ताम्बूलञ्च ततो दत्त्वा प्रार्थयेद् वास्तुपूरुषम्॥ ९१॥
आवाहनादि सर्वोपचारांश्च क्रमशस्तथा।
नैवेद्यं विविधान्नेन वाद्याद्यैश्च समर्पयेत्॥ ९२॥

इस प्रकार पूर्वोक्त प्रकार से निर्मित वास्तुपीठ में ४५ देवताओं को पूजे, उनमें ब्रह्मा, एकपदिक देव, द्विपदिक देव, त्रिपदिक देव आदि सबकी पूजा वास्तुमन्त्र के साथ दधि, अक्षत आदि अर्पित करके करना चाहिये॥ ९०॥

ब्रह्मा के मन्त्र से उनको दो श्वेतवस्त्र अर्पण करे। फिर आवाहनादि सम्पूर्ण उपचार क्रमशः करना चाहिये। साथ ही विविध प्रकार के नैवेद्य अर्पित कर ताम्बूल अर्पित करें तथा गायन-वादनादि करते हुए अग्रलिखित मन्त्र से वास्तु पुरुष की प्रार्थना करें॥ ९१-९२॥

वास्तुपुरुष की प्रार्थना का मन्त्र

वास्तुपुरुष नमस्तेऽस्तु भूशय्याभिरतः प्रभो।
मद् गृहं धनधान्यादिसमृद्धं कुरु सर्वदा॥ ९३॥

हे वास्तुपुरुष! आपको नमस्कार है। हे प्रभो! आप पृथ्वीरूपी शय्या पर लेटे हुए हैं। आप मेरे इस नवनिर्मित गृह को धन-धान्यादि से सर्वदा समृद्ध करते रहें॥ ९३॥

दक्षिणादान

इति प्रार्थ्य यथाशक्तिः दक्षिणामर्चकाय च।
दद्यात्तदग्रे विप्रेभ्यो भोजनञ्च स्वशक्तितः॥ ९४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस प्रकार से पूजन करने के उपरान्त अर्चक (आचार्य ब्राह्मण) को उन्हीं देवताओं के सम्मुख आसन पर बैठा करके भोजन करायें। अन्य ब्राह्मणों को भी भोजन कराना चाहिये तथा उन्हें दक्षिणा भी देनी चाहिये॥ ९४॥

वास्तुपूजा का फल

अनेन विधिना सम्यग्वास्तुपूजाङ्करोति यः।
आरोग्यं पुत्रलाभञ्च धनं धान्यं लभेत सः॥ ९५॥

इस प्रकार शास्त्रोक्त विधि से जो वास्तुपूजा करता है, उसे आरोग्य, पुत्रलाभ तथा धनधान्य की प्राप्ति होती है॥ ९५॥

विमर्श—यहाँ वास्तुपीठ के निर्माण में दो बातों का उल्लेख आवश्यक है, एक तो गृह-प्रवेश में ८१ कोष्ठ का वास्तुचक्र बनता है, ६४ कोष्ठ का नहीं बनता है। यह ध्यान करें ६४ कोष्ठ का वास्तु तो यज्ञ एवं प्रतिष्ठा में बनता है। इसका ध्यान रखें, तथा वास्तुपीठ में चारों ओर बाह्य परिधि भी बनती है, वह दश रेखाओं के बाहर होती है, उसमें ४५ के अतिरिक्त ईशान क्रम से कोणों के बाहर से चर की आदि का पूजन करते हैं, जिसमें ४८ देवता और बढ़ जाते हैं। इस प्रकार ४५+१८=कुल ६३ देवताओं का पूजन किया जाता है। इस पीठ को पञ्चवर्ण के अलग-अलग रंग के चावलों से बनाते हैं, जिनके रंगों की जानकारी के लिये अगले पृष्ठ में ८१ पद के वास्तु का रंग सहित रेखाचित्र दिया जा रहा है। इस चक्र में १० रेखा पूर्व से पश्चिम तथा दस रेखा उत्तर से दक्षिण होती है। उनके नाम विश्वकर्मप्रकाश के अनुसार निम्न हैं—

'दश पूर्वायिता रेखा दश चैवोत्तरायताः।
सर्वा वास्तुविभागेषु विज्ञेया नवकानव॥
शान्ता यशोवती कान्ता विशाला प्राणवाहिनी।
सती च सुमना नन्दा सुभद्रा सुस्थिता तथा॥
पूर्वापरागता ह्येता उदग्याभ्यामाश्रितास्तथा।
हिरण्याः सुव्रता लक्ष्मीःविभूतिर्विमला प्रिया॥
जया काला विशोका च तथेन्द्रा दशमी स्मृताः।
एकादशीति पदे ह्येता शिराश्च परिकीर्तिताः॥'

—विश्वकर्मप्रकाश २। १८-२१

अर्थात् दश रेखा पूर्व से पश्चिम की ओर होती हैं, उनके नाम क्रमशः १. शान्ता, २. यशोवती, ३. कान्ता, ४. विशाला, ५. प्राणवाहिनी, ६. सती, ७. सुमना, ८. नन्दा, ९. सुभद्रा, तथा १०. सुस्थिता (या सुस्थिरा) होते हैं। इसी प्रकार दश रेखाएँ उत्तर से दक्षिण की ओर क्रमशः १. हिरण्या, २. सुवृता, ३. लक्ष्मी, ४. विभूति, ५. विमला, ६. प्रिया, ७. जया, ८. काला, ९. विशोका तथा १०. इन्द्रा नाम से होती हैं। ८१ पदवाले वास्तु में ये शिराएँ हैं, इनका भी पूजन किया जाता है। जैसे शान्तायै नमः, यशोवत्यै नमः, इस प्रकार से नमस्कारकर पूजन करें।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

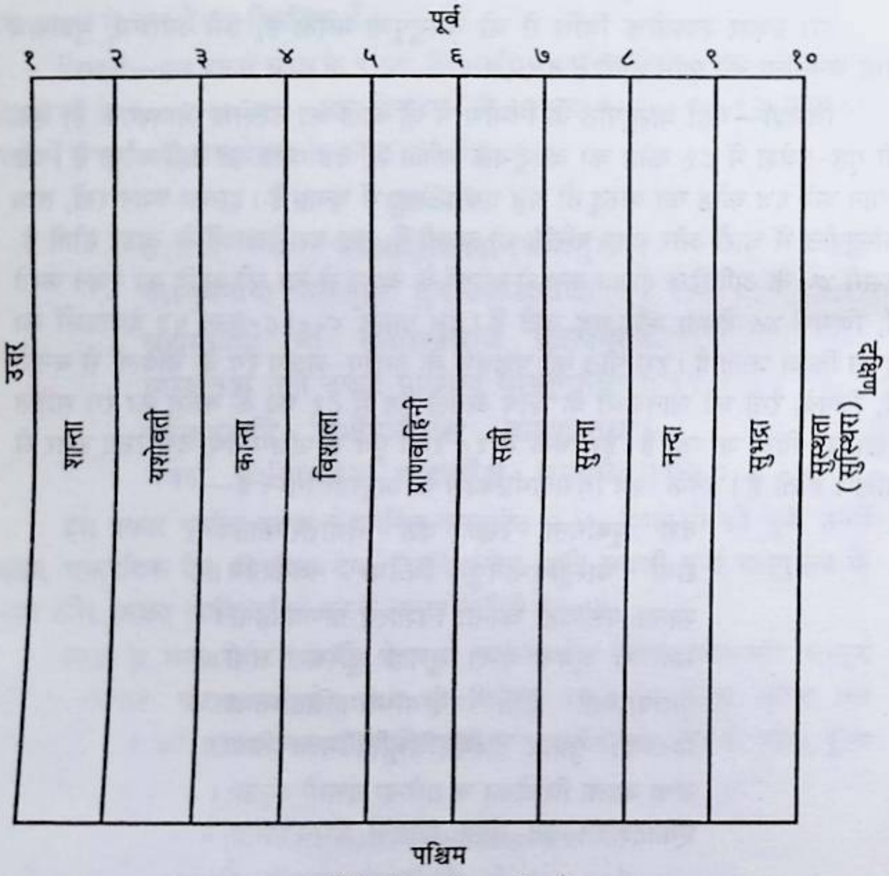

(पूर्व से पश्चिम को दश शिराएँ)

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

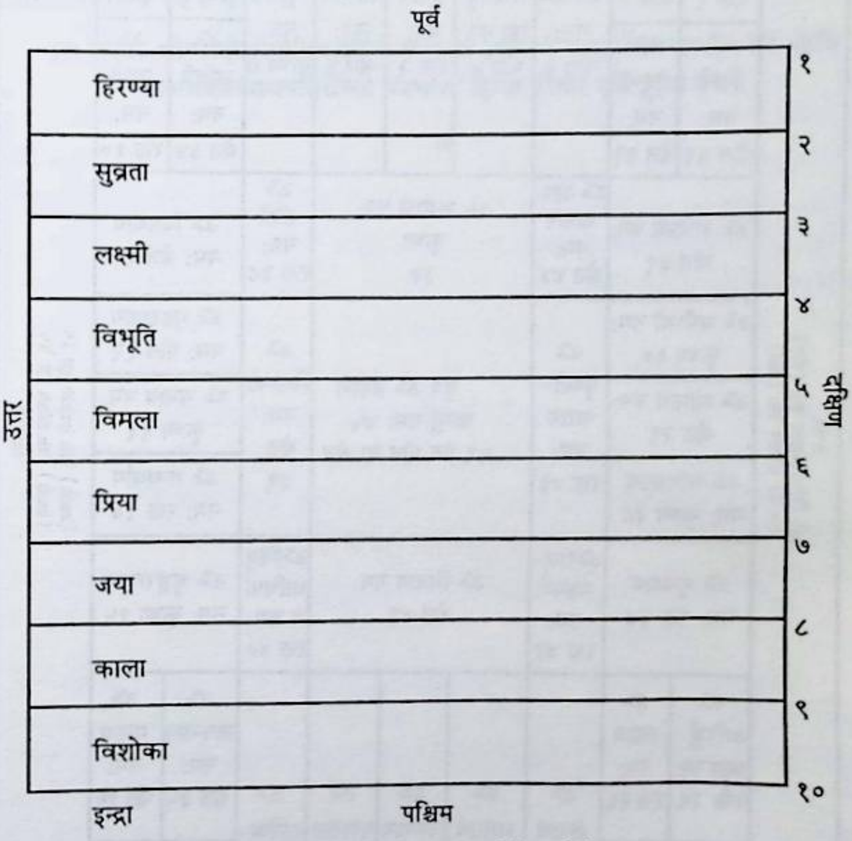

(८१ पद वास्तु में उत्तर से दक्षिण की रेखाओं के नाम)

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अथ गृहवास्तुचक्रम् पूजनार्थम्

पूर्व

६१ ॐ ईशानाय नमः (श्वेत) ॐ चरक्यै नमः ४६ धूम्र

ॐ ब्रह्मणे नमः: रक्त ६२

५४ ॐ इन्द्राय नमः (पीत या रक्त)

५० ॐ स्कन्दाय नमः (रक्त या कृष्ण)

रक्त ५५ ॐ अग्नये नमः ॐ विदार्यै नमः ४७ (रक्त)

<table>
<tr><td>ॐ शिखिने नमः रक्त १</td><td>ॐ पर्जन्याय नमः पीत २</td><td rowspan="2">ॐ जयन्ताय नमः पीत ३</td><td rowspan="2">ॐ लिशायुवाय नमः पीत ४</td><td rowspan="2">ॐ सूर्याय नमः रक्त २</td><td rowspan="2">ॐ सत्याय नमः श्वेत ६</td><td rowspan="2">ॐ भृशाय नमः कृष्ण ७</td><td>ॐ आकाशाय नमः कृष्ण ८</td><td>ॐ वायवे नमः धूम्र ९</td></tr>
<tr><td>ॐ दित्यै नमः पीत ३२</td><td>ॐ अद्भ्यां नमः श्वेत ३३</td><td>ॐ सवित्रे नमः श्वेत ३४</td><td>ॐ पूषणे नमः रक्त १०</td></tr>
<tr><td colspan="2">ॐ अदित्यै नमः पीत ३१</td><td>ॐ आपवत्साय नमः श्वेत ४४</td><td colspan="3">ॐ अर्यम्णे नमः कृष्ण ३७</td><td>ॐ पवित्रे नमः रक्त ३८</td><td colspan="2">ॐ वितथाय नमः श्वेत ११</td></tr>
<tr><td colspan="2">ॐ सर्पेभ्यो नमः कृष्ण १०</td><td rowspan="3">ॐ पृथ्वीधराय नमः रक्त ४३</td><td rowspan="3" colspan="3">वृष ॐ ब्रह्मणे वास्तु नमः ४५
५१ पद पीत या श्वेत</td><td rowspan="3">ॐ विवस्वते नमः श्वेत ३९</td><td colspan="2">ॐ गृहक्षताय नमः पीत १२</td></tr>
<tr><td colspan="2">ॐ सोमाय नमः श्वेत २९</td><td colspan="2">ॐ यमाय नमः कृष्ण १३</td></tr>
<tr><td colspan="2">ॐ भल्लटाय नमः कृष्ण २८</td><td colspan="2">ॐ गन्धर्वाय नमः रक्त १४</td></tr>
<tr><td colspan="2">ॐ मुख्याय नमः रक्त २७</td><td>ॐ राजयक्ष्मणे नमः रक्त ४२</td><td colspan="3">ॐ मित्राय नमः श्वेत ४१</td><td>ॐ विबुधाधिपाय नमः रक्त ४०</td><td colspan="2">ॐ भृङ्गराजाय नमः कृष्ण १५</td></tr>
<tr><td>ॐ अहिर्बुध्न्याय नमः रक्ते २६</td><td>ॐ रुद्राय नमः रक्त २६</td><td rowspan="2">ॐ शेषाय नमः कृष्ण २३</td><td rowspan="2">ॐ असुराय नमः पीत २२</td><td rowspan="2">ॐ वरुणाय नमः श्वेत २१</td><td rowspan="2">ॐ पुष्पदंताय नमः रक्त २०</td><td rowspan="2">ॐ सुग्रीवाय नमः श्वेत १९</td><td>ॐ जयन्ताय नमः श्वेत ३५</td><td>ॐ मृगाय नमः पीत १६</td></tr>
<tr><td>ॐ रोगाय नमः रक्त २५</td><td>ॐ पापाय नमः पीत २४</td><td>ॐ दौवारिकाय नमः रक्त १८</td><td>ॐ पितृभ्यो नमः रक्त १७</td></tr>
</table>

उत्तर ॐ पिलिपिच्छाय नमः (पीत) ६० ॐ सोमाय नमः (श्वेत)

दक्षिण ५६ ॐ यमाय नमः (कृष्ण) ५१ ॐ अर्यम्णे नमः (कृष्ण)

धूम्र ५९ ॐ वायवे नमः ॐ पापराक्षस्यै नमः ४९ (कृष्ण)

५२ ॐ जृम्भकाय नमः (रक्त) ॐ अनन्ताय नमः ६३ (कृष्ण)

५८ ॐ वरुणाय नमः (श्वेत)

५७ ॐ निर्ऋतये नमः (नील) ॐ पूतनायै नमः ४८ (पीत या हरित)

पश्चिम

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रवेश के अयोग्य गृह

अकपाटमनाच्छन्नं अदत्तबलिभोजनम्।
गृहं न प्रविशेदेव विपदामाकरं हि तत्॥ ९६॥

॥ इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां वास्तुविधानाध्यायः नवविंशः ॥ २९ ॥

जो गृह बिना किवाड़ों का, बिना छत का तथा जिसमें वास्तुपूजन एवं ब्राह्मण-भोजन न हुआ हो, उस गृह में प्रवेश नहीं करना चाहिये, क्योंकि वह घर विपत्तियों का घर होता है॥ ९६॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के उन्नीसवें वास्तुविधानाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ २९॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रिंशोऽध्यायः

यात्राध्यायः

यात्रा-मुहूर्त की अनिवार्यता

अथ यात्रा यथा नृणामभीष्टफलसिद्धये।
स्यात्तथा तां प्रवक्ष्यामि सम्यग्विज्ञात जन्मनाम्॥ १॥
अज्ञातजन्मनां नृणां फलाप्तिर्घुणवर्णवत्।
प्रश्नोदयनिमित्ताद्यैस्तेषामपि फलोदयः॥ २॥

जिन मनुष्यों का जन्मकाल ज्ञात है, उनके लिये अभीष्ट कार्य सिद्धिहेतु की जानेवाली यात्राका मुहूर्त एवं विधि कहता हूँ ; परन्तु जिनका जन्म समय ज्ञात नहीं है, उनके लिये भी प्रश्नलग्न के आधार पर तथा शकुनों के आधार पर यात्रा मुहूर्त का वर्णन किया जा रहा है॥ १-२॥

यात्रा में निषिद्ध तिथियाँ

षष्ठ्यष्टमी द्वादशी च रिक्तामापूर्णिमासु च।
यात्रा शुक्लप्रतिपदि निधनायाधनाय च॥ ३॥

षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी, रिक्ता (चतुर्थी, नवमी तथा चतुर्दशी), अमावस्या, पूर्णिमा एवं शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को यात्रा करना मृत्युतुल्य कष्ट तथा निर्धनता देता है॥ ३॥

यात्रा में शुभ नक्षत्र एवं चन्द्रमा

पौष्णोऽर्केन्द्वश्विमित्राग्निहरितिष्यवसूडुषु ।
नवसप्तपञ्चमायेषु यात्राभीष्टफलप्रदा॥ ४॥

रेवती, हस्त, मृगशिरा, अश्विनी, अनुराधा, कृत्तिका, श्रवण, पुष्य, धनिष्ठा—ये नक्षत्र यात्रा के लिये शुभ होते हैं। गोचर में चन्द्रमा यात्री की जन्मराशि से (अथवा नामराशि से) नौवाँ, सातवाँ, पाँचवाँ अथवा ग्यारहवाँ हो तो शुभ होता है॥ ४॥

दिशाशूल

न मन्देन्दु दिने प्राचीं न व्रजेद् दक्षिणां गुरौ।
सितार्कयोर्न प्रतीचीं नोदीचीं ज्ञारयोर्दिने॥ ५॥

१. शनि एवं सोमवार को प्राची (पूर्व दिशा) में दिशाशूल रहता है, २. गुरुवार को दक्षिण दिशा में दिशाशूल होता है, ३. शुक्र एवं रविवार के दिनों में पश्चिम दिशा में दिशाशूल होता है, तथा ४. मंगल एवं बुधवारों में उदीची (उत्तर दिशा) में दिशाशूल होता है। अतः जिस दिन जिस दिशा में दिशाशूल हो, उस दिन उस दिशा में यात्रा नहीं करना चाहिये॥ ५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—हिन्दीभाषी क्षेत्रों में इस चौपाई के माध्यम से जनता दिशाशूल को याद रखती है—

'सोम शनिश्चर पूरब न चालू।
मंगल बुध उत्तर दिश कालू॥ १॥
गुरु कौं दक्षिण करे पयाना।
फिर नहिं समझौ ताकौ आना॥ २॥
रवी शुक्र जो पश्चिम जावे।
हानि होय पथ सुख नहिं पावे॥ ३॥'

यात्रा के भेद—यात्रा तीन प्रकार की होती है—

१. अर्थयात्रा—धन कमाने एवं व्यापार के उद्देश्य से जो यात्रा करनी पड़ती है, वह अर्थयात्रा होती है। नौकरी आदि पर जाने के लिये की जानेवाली यात्रा भी अर्थयात्रा ही होती है। अर्थयात्रा के निम्न दो प्रकार होते हैं—

(क) काम्य अर्थयात्रा—इसमें किसी बड़े उद्देश्य की सिद्धि के लिये यात्रा की जाती है, जिसमें प्रायः समय भी अधिक लगता है। इस प्रकार की यात्रा में मुहूर्त का विचार सूक्ष्मतापूर्वक किया जाना आवश्यक होता है, अन्यथा असफलता ही हाथ लगती है। इसमें शकुन-चन्द्रमा तथा तारा का विचार अवश्य करें।

(ख) नित्य अर्थयात्रा—इसमें नौकरी या व्यापार के लिये प्रतिदिन प्रातःकाल दूसरे नगर या ग्राम को जाना तथा सायंकाल लौटना होता है। इस प्रकार की यात्रा में दिशाशूल आदि का विचार करने की आवश्यकता नहीं होती है। इसमें तो शुभ शकुनों तथा शुभ चौघड़िया मुहूर्त का विचार ही पर्याप्त होता है अथवा अपनी नासिका का जो वाम या दक्षिण स्वर चल रहा हो, उसी पैर को आगे बढ़ाकर यात्रा करने से शुभफल होता है।

२. तीर्थयात्रा—तीर्थयात्रा प्रायः तीन उद्देश्यों के लिये की जाती है।

(क) संस्कार हेतु यात्रा—जब कोई यात्रा बच्चों के मुण्डन, यज्ञोपवीत-संस्कार तथा विवाह हेतु होती है अथवा मनौती के रूप में अपने कुलदेवता के पूजनार्थ अपने निवास से अन्य स्थान के लिये की जाती है, वह संस्कार हेतु तीर्थयात्रा कहलाती है। यह यात्रा यदि देवता के विशिष्ट दिन या पर्व दिन में की जाती है, तब मलमास, खरमास तथा गुरु-शुक्र के अस्त में भी होती है। जैसे कि चार नवरात्रों (चैत्र, आषाढ़, आश्विन, पौष) में विन्ध्यवासिनी या मैहर की यात्रा, श्रीरामनवमी पर अयोध्या की यात्रा, श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी पर मथुरा की यात्रा, शिवरात्रि पर वैद्यनाथ धाम की यात्रा, गंगा दशहरे पर श्रीरामेश्वरम् की यात्रा, ग्रहण के अवसर पर पुष्कर की यात्रा। इन सबमें मास आदि का दोष विचारणीय नहीं होता है। परन्तु यदि यही यात्रा पर्व समय को छोड़कर अन्य समय में करनी हो, अथवा जीवन की प्रथम तीर्थयात्रा हो, तो उसे गुरु-शुक्रास्त, खरमास, तथा मलमासादि में नहीं किया जा सकता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नासिक, गोदावरीतीर्थ तथा श्रीशैल (मल्लिकार्जुन) तीर्थ की यात्रा किसी भी समय कर सकते हैं।

(ख) श्राद्धहेतु तीर्थयात्रा—श्राद्ध हेतु तीर्थयात्रा किसी भी समय की जा सकती है। तथैव गयाश्राद्ध के लिये तीर्थ यात्रा करने में भी मलमासादि का विचार नहीं है। वह सब समय होती है, केवल अन्य शुभ शकुनादि देख लेना चाहिये।

(ग) पर्वस्नानहेतु तीर्थयात्रा—चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण, अर्धोदय योग, कपिला षष्ठी, तथा बारहों संक्रान्तियों पर की जानेवाली यात्रा भी मलमासादि में प्रशस्त होती है।

पर्वस्नान हेतु दो यात्रा होती है, उसके भी पुनः दो भेद होते हैं—१. प्रथम यात्रा, तथा २. नित्य यात्रा। जब कोई अपने जीवन में प्रथम बार पर्वस्नान या तीर्थ की यात्रा कर रहा हो, तो उसे सभी बातों का विचार करके यात्रा करनी चाहिये। परन्तु जो उसके पश्चात् बार-बार पर्वस्नानहेतु जाते हैं, या प्रतिवर्ष जाते हैं, उनके लिये कोई भी विशेष निषेध नहीं होता है। वे शुभ शकुनादि से यात्रा कर सकते हैं।

नक्षत्रशूल तथा सर्वदिग्गमन नक्षत्र

इन्द्रोऽजपादचतुरास्यार्यमर्क्षाणि पूर्वतः।
शूलानि सर्वद्वाराणि मैत्रार्केज्याश्विभानि च॥ ६॥

१. पूर्व दिशा में ज्येष्ठा नक्षत्र में, २. दक्षिण दिशा में पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में, ३. पश्चिम दिशा में रोहिणी नक्षत्र में तथा ४. उत्तर दिशा में उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में शूल होता है। अतः इन नक्षत्रों में इनके शूलवाली दिशाओं में यात्रा नहीं करनी चाहिये।

सर्वदिग्गमन नक्षत्र—अनुराधा, हस्त, पुष्य तथा अश्विनी—ये नक्षत्रसर्वदिग्द्वारी होने से इनमें सभी दिशाओं की यात्रा की जा सकती है।

विमर्श—गर्ग ऋषि ने श्रवण नक्षत्र को भी सर्व दिशाओं की यात्रा करने के लिये शुभ बताया है।

'श्रेष्ठं प्रयाणमश्विन्यां स्याद् धनिष्ठानुराधयो।
पुष्ये पुनर्वसौ हस्ते रेवत्यां श्रवणे मृगे॥'

दिन द्वारा नक्षत्र एवं परिघ दण्ड का कथन

क्रमाद् दिग्द्वारभानि स्युः सप्तसप्ताग्निधिष्ण्यतः।
वाय्वग्निदिग्गतं दण्डं परिघं तु न लंघयेत्॥ ७॥

कृत्तिका आदि सात नक्षत्र पूर्व दिशा में, मघादि सात नक्षत्र दक्षिण में, अनुराधा आदि सात नक्षत्र (अभिजित् सहित) पश्चिम में तथा धनिष्ठादि सात नक्षत्र उत्तर दिशा में होते हैं। इनमें वायव्य कोण से अग्निकोण तक गयी हुई सीधी रेखा परिघ दण्ड कहलाती है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उत्तरद्वारीय पूर्वद्वारीय नक्षत्रों में उत्तर तथा पूर्व दिशा की यात्रा करनी चाहिये, परन्तु दक्षिण-पश्चिम दिशा की यात्रा नहीं करें। इस प्रकार दक्षिण-पश्चिम द्वारवाले नक्षत्रों में उत्तर-पूर्व की यात्रा न करें, अन्यथा परिघ दण्ड का उल्लंघन होता है, जो अशुभ फलप्रद होता है॥ ७॥

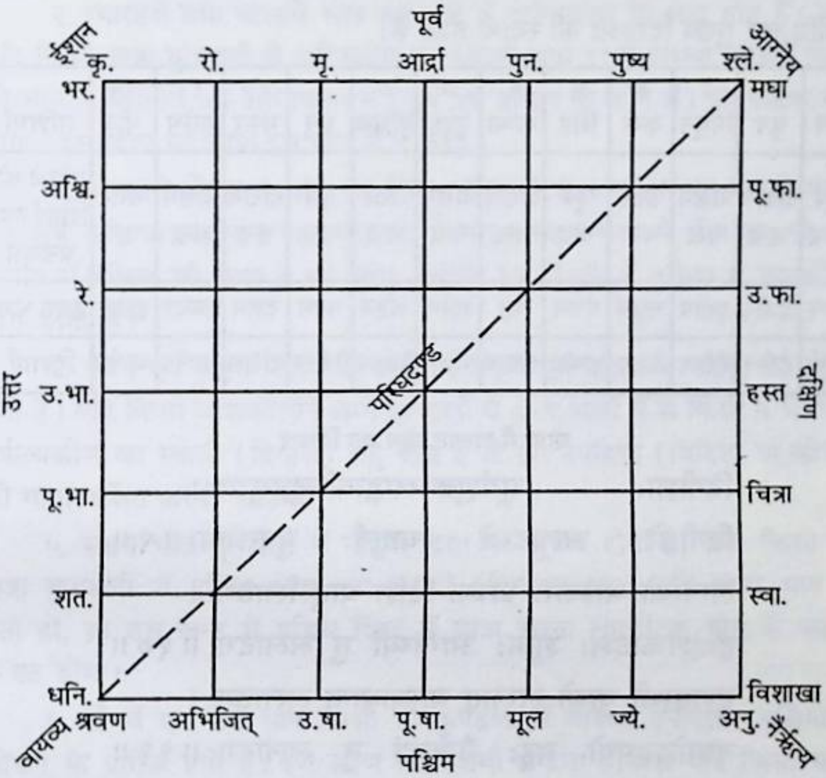

टिप्पणी—टूटी रेखाओं में परिघदण्ड प्रदर्शित है।

कोणों की यात्रा में निर्देश तथा चन्द्रवास

आग्नेय्यां पूर्वदिग्धिष्ण्यैर्विदिशश्चैवमेव हि।

१. यदि अग्निकोण की यात्रा करनी हो, तो पूर्व दिग्द्वारि नक्षत्रों में गमन करें। २. यदि नैर्ऋत्यकोण में गमन करना है, तो दक्षिण दिग्द्वारि नक्षत्रों में यात्रा करें। ३. यदि वायव्यकोण में गमन करना हो, तो पश्चिम दिग्द्वारि नक्षत्रों में गमन करना शुभ होता है। ४. इसी प्रकार ईशानकोण की यात्रा उत्तर दिग्द्वारि नक्षत्रों में शुभ होती है॥ ७$\frac{1}{2}$ ॥

यात्रा में दिग् राशियाँ

दिग्राशयस्तु क्रमशो मेषाद्याश्च पुनः पुनः॥ ८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मेषादि राशियाँ प्रदक्षिण क्रम से पूर्वादि चार दिशाओं की स्वामी होती हैं॥ ८॥

विमर्श—यही चन्द्रमा का वास भी होता है। मेषादि चार राशियाँ पूर्वादि दिशाओं की स्वामी होती है। उसी प्रकार सिंहादि चार राशियाँ क्रमशः पूर्व-दक्षिण-पश्चिम तथा उत्तर दिशाओं की स्वामी होती हैं। तद्वत् धनु आदि चार राशियाँ भी क्रमेण पूर्वादि चार मुख्य दिशाओं की स्वामी होती हैं।

१ मेष	२ वृष	३ मिथुन	४ कर्क	५ सिंह	६ कन्या	७ तुला	८ वृश्चिक	९ धनु	१० मकर	११ कुम्भ	१२ मीन	राशियाँ
पूर्व चन्द्र	दक्षिण चन्द्र	पश्चिम चन्द्र	उत्तर चन्द्र	पूर्व चन्द्र	दक्षिण चन्द्र	पश्चिम चन्द्र	उत्तर चन्द्र	पूर्व चन्द्र	दक्षिण चन्द्र	पश्चिम चन्द्र	उत्तर चन्द्र	राशियों की दिशाएँ तथा चन्द्रवास
लग्न	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पंचम	षष्ठ	सप्तम	अष्टम	नवम	दशम	एकादश	द्वादश	द्वादश भाव
पूर्व	ईशान	ईशान	उत्तर	वायव्य	वायव्य	पश्चिम	नैर्ऋत्य	नैर्ऋत्य	दक्षिण	आग्नेय	आग्नेय	दिशाएँ

यात्रा में ललाट योग का विचार

दिगीशाः सूर्यशुक्राररार्ह्वार्कीन्दुज्ञसूरयः।
दिगीश्वरे ललाटस्थे यातुर्न पुनरागमः॥ ९॥
लग्नस्थो भास्करः प्राच्यां दिशि यातुर्ललाटगः।
द्वादशैकादशः शुक्रः आग्नेय्यां तु ललाटगः॥ १०॥
दशमस्थो कुजो लग्नाद् याम्यायान्तु ललाटगः।
नवमोऽष्टमगो राहुः नैर्ऋत्यां तु ललाटगः॥ ११॥
लग्नात्सप्तमगः सौरिः प्रतीच्यान्तु ललाटगः।
षष्ठपञ्चमगश्चन्द्रो वायव्यान्तु ललाटगः॥ १२॥
चतुर्थस्थानगः सौम्य उत्तरस्यां ललाटगः।
द्वित्रिस्थानगतो जीवो ऐशान्यान्तु ललाटगः॥ १३॥
लालाटगन्तु सन्त्यज्य जीवितेच्छुर्व्रजेन्नरः।

१. सूर्य, २. शुक्र, ३. मंगल, ४. राहु, ५. शनि, ६. चन्द्र, ७. बुध तथा ८. गुरु—ये आठ ग्रह क्रमशः पूर्व, आग्नेय, दक्षिण, नैर्ऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर तथा ईशान—इन आठ दिशाओं (कोणों) के स्वामी होते हैं। यदि दिगीश्वर ग्रह यात्री के ललाट पर हो, तो इस लालाटिक योग में गमन करने पर उसका पुनरागमन नहीं होता है, अर्थात् वह वापस घर नहीं लौट पाता है॥ ९॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. जैसे यदि लग्न में (यात्रा लग्न में) सूर्य बैठा हो तथा उसमें यदि पूर्व दिशा को गमन करें तो लग्न की दिशा पूर्व होने से तथा उसमें पूर्व दिशा के स्वामी ग्रह सूर्य की स्थिति से लालाटिक योग होता है।

२. ग्यारहवें तथा बारहवें भाव कुण्डली में अग्निकोण के भाव होते हैं। अतः यदि किसी यात्रा कुण्डली में अग्निकोण का स्वामी शुक्र ११वें अथवा बारहवें किसी भी भाव में बैठा हो, तो अग्निकोण में (पूर्व एवं दक्षिण के कोने में) लालाटिक योग होगा (इस दिशा की यात्रा इस योग में न करें)।

३. कुण्डली में दशम भाव की दिशा दक्षिण है तथा दक्षिण का स्वामी मंगल है। अब यदि यात्राकालीन लग्न कुंडली में मंगल दशम भाव में बैठा हो, तो इस स्थिति में दक्षिण की यात्रा न की जाय, क्योंकि इस स्थिति में दक्षिण में लालाटिक योग होता है।

४. नवम एवं अष्टम भाव नैर्ऋत्यकोण (दक्षिण एवं पश्चिम के कोने) के प्रतीक होते हैं। यदि किसी यात्राकालीन लग्न कुण्डली में ८-९ भावों में से किसी में भी यदि नैर्ऋत्यकोण का स्वामी (दिगीश) राहु बैठा है तो इस उपदिशा (विदिशा या कोण) की यात्रा वर्जित करनी चाहिये।

५. सप्तम भाव कुण्डली में पश्चिम दिशा का सूचक होता है, अतः किसी भी यात्रा कुण्डली में पश्चिम दिशा का स्वामी (दिगीश्वर ग्रह) यदि सप्तम भाव में बैठा हो, तो उस लग्न में पश्चिम दिशा में यात्रा करना लालाटिक योग के कारण वर्जित होगा।

६. पाँचवें एवं छठें भाव किसी भी कुण्डली में वायव्य उपदिशा (पश्चिमोत्तर कोना) के प्रतीक होते हैं। इस कोण का स्वामी चन्द्रमा होने से यदि किसी यात्रा लग्न से पाँचवें-छठवें भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो उस लग्न में वायव्यकोण की यात्रा लालाटिक योग होने से वर्जित करनी चाहिये।

७. कुण्डली का चतुर्थ भाव उत्तर दिशा का प्रतिनिधि भाव होता है। इस कारण से यदि किसी यात्रा कुण्डली में बुध चतुर्थ भाव में बैठा हो, तो बुध उत्तर दिशा का स्वामी होने से लालाटिक योग बनाएगा। अतः उत्तर की यात्रा इस लग्न में त्यागनी पड़ेगी।

८. बृहस्पति ईशानकोण (पूर्वोत्तर) का स्वामी है तथा द्वितीय-तृतीय भाव कुण्डली में ईशानकोण के प्रतीक होते हैं। अब यदि किसी यात्राकालीन लग्न कुण्डली में द्वितीय भाव अथवा तृतीय भाव में गुरु बैठा हो तो इस कारण से इस दिशा की यात्रा में लालाटिक योग होने से यात्रा त्यागनी चाहिये।

यदि यात्री अपने जीवित रहने की आशा करता है तो उसे लालाटिक योग में ललाट दिशा की यात्रा त्याग देनी चाहिये॥ १०-१३½ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

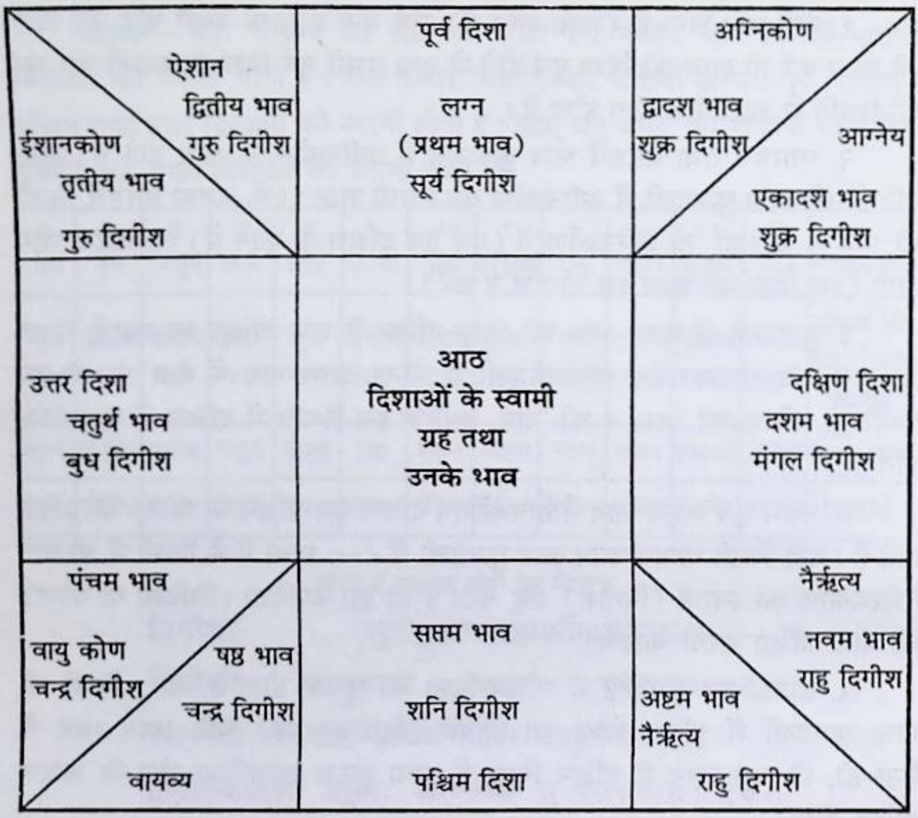

यात्रालग्न में विलोमग्रह की वर्जना

विलोमगो ग्रहो यस्य यात्रालग्नोपगो यदि॥ १४॥
तस्य भङ्गप्रदो राज्ञस्तद्वर्गोऽपि विलग्नगः।

जो ग्रह यात्रा करनेवाले की अथवा राजा की जन्मकुण्डली में विलोम (नेष्ट) हो तथा वही ग्रह यात्रा लग्न में बैठा हो तो उसमें यात्रा नहीं करनी चाहिये। यदि उसमें राजा यात्रा करता है, तो उसका मनोरथ भङ्ग होता है। इसी प्रकार से यात्रा में उस जन्मकालीन नेष्ट ग्रह की राशि तथा नवांश को भी यात्रा में अशुभ होने से वर्जित करना चाहिये॥ १४-१४½॥

युद्धयात्रा में अयन की अनुकूलता

रवीन्द्वयनयोर्यानमनुकूलं शुभप्रदम्॥ १५॥
तदभावे दिवारात्रौ यात्रा यातुर्वधोऽन्यथा।

जब सूर्य तथा चन्द्रमा दोनों उत्तरायण में हों, तो उत्तर-पूर्व इन दो दिशाओं की यात्रा शुभ होती है। यदि ये दोनों दक्षिणायन हों तब दक्षिण या पश्चिम की यात्रा शुभ होती है॥ १५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अब यदि सूर्य एवं चन्द्रमा एक ही अयन में न होकर भिन्न-भिन्न अयनों में हों तो सूर्य जिस अयन में हो उसकी दिशा के अनुकूल यात्रा दिन में करें तथा चन्द्रमा की दिशा के अनुकूल यात्रा रात्रि में करना चाहिये॥ १५½ ॥

सम्मुख शुक्र का निषेध

मूढे शुक्रे कार्यहानिः प्रतिशुक्रे पराजयः॥ १६॥

यदि शुक्रास्त में यात्रा हो तो कार्य में असफलता मिलती है तथा शुक्र यदि सम्मुख हो तो पराजय होती है॥ १६॥

विमर्श—शुक्र पूर्व या पश्चिम दिशा में उदित होता है, अतः उस दिशा की यात्रा करने पर सम्मुख शुक्र का दोष होता है।

सम्मुख शुक्र परिहार

प्रतिशुक्रकृतं दोषं हन्ति शुक्रो ग्रहा नहि।
वसिष्ठः काश्यपेयोऽत्रिर्भरद्वाजः सगौतमः॥ १७॥
एतेषां पञ्च गोत्राणां प्रति शुक्रो न विद्यते।
एकग्रामे विवाहे च दुर्भिक्षे राजविप्लवे॥ १८॥
द्विजक्षोभे नृपक्षोभे प्रतिशुक्रो न विद्यते।

सम्मुख शुक्र के दोष को तो केवल शुक्र ही (यात्रा कुण्डली में अनुकूल स्थान पर होकर) दूर कर सकता है, अन्य कोई ग्रह प्रति शुक्र के दोष को दूर नहीं कर पाता है, इसके अतिरिक्त निम्न स्थितियों में भी शुक्र का परिहार होता है—

१. यदि यात्री का गोत्र वसिष्ठ, कश्यपेय, अत्रि, भरद्वाज तथा गौतम—इन पाँच में से कोई हो तो उसे सम्मुख शुक्र का दोष नहीं होता है।

२. यदि एक ही ग्राम में यात्रा करनी (नव वधू को) अथवा दुर्भिक्ष (अकाल) पड़ जाने पर, हिंसात्मक सत्ता-परिवर्तन के कारण यात्री को उक्त स्थान पर बने रहने से प्राणों का संकट रहने पर, राजनैतिक उथल-पुथल की स्थिति होने पर, ब्राह्मणों (बुद्धिजीवियों के) क्षुभित (आन्दोलनरत) होने पर अथवा क्षत्रियों (सैनिकों) के विद्रोह करने पर सम्मुख शुक्र का दोष (यात्रा में) नहीं होता है॥ १७-१८½ ॥

शुक्र के नीचादि राशि का फल तथा परिहार

नीचगोऽरिगृहस्थो वा वक्रगो वा पराजितः॥ १९॥
यातुर्भङ्गप्रदः शुक्रः स्वांशस्थे च जयप्रदः।

यदि शुक्र यात्रा के समय नीच राशिगत हो (कन्या राशि का हो), वक्री हो अथवा गृहयुद्ध पराजित अथवा पापग्रहों से आक्रान्त हो, तो यात्री को असफलता देता है। परन्तु यदि नीच का या वक्री या पापाक्रान्त शुक्र अपने नवांश (वृष नवांश या तुला नवांश) में हो तो यात्री को सफलता देता है॥ १९-१९½ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—कन्या शुक्र की नीच राशि है, परन्तु यदि शुक्र का तात्कालिक स्पष्ट राश्यादि ५।१३°।२०′।९″ से ५।१६°।४०′।०″ पर्यन्त हो, तो उस समय वृष का नवांश (शुक्र का स्व नवांश) होने से यात्रा करना शुभ होगा तथा अस्त का या वक्री का भी दोष नहीं होगा।

यात्रा की लग्नकुण्डली में शुक्र की अशुभता

स्वेष्टलग्नेऽष्टराशौ वा शत्रुभात्षष्ठगोऽपि वा॥ २०॥
तेषामीशस्य राशौ वा यातुर्मृत्युर्न संशयः।

यदि यात्रा लग्न से शुक्र आठवाँ हो अथवा शत्रुराशि से छठवाँ हो अथवा शत्रुग्रह जिस राशि में बैठा हो, उस राशि के स्वामीग्रह की राशि में शुक्र बैठा हो, तो इस लग्न में यात्रा करनेवाले को मृत्युभय होता है॥ २०-२०½ ॥

लग्नकुण्डली के दोषों का परिहार

जन्मेशाष्टमलग्नेशौ मिथो मित्रव्यवस्थितौ॥ २१॥
जन्मराश्यष्टमर्क्षेषु दोषा नश्यन्ति भावतः।
क्रूरग्रहेक्षितो युक्तो द्विस्वभावोऽपि भङ्गदः॥ २२॥
याने स्थिरोदये नेष्टो शुभयुक्तेक्षितः शुभः।
शीर्षोदये शुभं प्रोक्तं यात्रायां सिद्धिदायकम्॥ २३॥

यदि जन्म लग्नेश तथा जन्मकालीन अष्टमेश आपस में मित्र हों तो शुक्र के ऊपर कहे दोष नष्ट हो जाते हैं तथा अन्य ग्रहों के दोष भी नष्ट होते हैं॥ २१-२१½ ॥

यदि यात्रा में द्विस्वभाव लग्न हो तथा उन पर क्रूर ग्रह बैठे हों अथवा क्रूरग्रहों से दृष्ट हो तो कार्यनाशक होती है। यदि लग्न में स्थिर राशि हो तो शुभ नहीं होती है, परन्तु यदि वह शुभ ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो शुभ फल देती है। यात्रा में शीर्षोदय राशि लग्नें भी शुभफल देती हैं॥ २२-२३॥

पञ्चक विचार

वस्त्वन्त्यर्धादिपञ्चर्क्षे संग्रहे तृणकाष्ठयोः।
याम्यदिग्गमनं शय्या कुर्यान्नो गेहगोपनम्॥ २४॥

जब तक चन्द्रमा धनिष्ठा के उत्तरार्ध से रेवती तक रहते हैं, इन पाँच नक्षत्रों में तृण, काष्ठ (ईंधन, मिट्टी का तेल, कोयला, गैस आदि) का संग्रह नहीं करना चाहिये। दक्षिण दिशा की यात्रा तथा खाट बुनना तथा नयी खाट पर शयन आदि भी नहीं करे। गेहगोपन (घर पर छान, छप्पर, टिन शैड आदि डालना) भी नहीं करना चाहिये॥ २४॥

विमर्श—ज्योतिष ग्रन्थों में पञ्चक नक्षत्रों की मान्यता तीन प्रकार की प्राप्त होती है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. साढ़े चार नक्षत्रों का पंचक—जब तक चन्द्रमा कुम्भ एवं मीन राशियों में रहता है। अर्थात् धनिष्ठा का उत्तरार्ध एवं शतभिषा, पूर्वाभाद्र, उत्तराभाद्र एवं रेवती—इन चार नक्षत्रों के चन्द्रमा में पंचक रहता है। नारदजी को यही मत मान्य है।

२. पाँच नक्षत्रों का पंचक—इस मत के अनुसार धनिष्ठा से प्रारम्भ होकर रेवती सहित पाँच नक्षत्रों में जब तक चन्द्रमा रहता है, तब तक पंचक माना जाता है। जैसा कि कहा गया है—

'कुर्यान्न दारुतृणसंग्रहमन्तकाशायानां
मृतस्य दहनं गृहगोपनञ्च।
शय्यावितानमिह वासव पञ्चके च
केचिद्वदन्ति परतो वसुदेवतोऽर्धात्॥'

३. छह नक्षत्रों का षट्क—ज्योतिषदीपिका तथा ज्योतिःसागर ग्रन्थों के मत से छह नक्षत्रों का षट्क दक्षिण दिशा की यात्रा के लिये वर्जित होता है तथा धनिष्ठा से लेकर रेवती तक का पाँच नक्षत्रों का पंचक तृण-काष्ठादिसंग्रह में वर्जित होता है—

'छेदनं सङ्ग्रहञ्चैव काष्ठादीनां न कारयेत्।
श्रवणादौ बुध षट्कान्न गच्छेद् दक्षिणां दिशे॥
अग्निदाहो भयं रोगो राजपीडा धनक्षयः।
सङ्ग्रहे तृणकाष्ठानां कृते वस्त्रादि पञ्चके॥'

राजमार्त्तण्ड भी पूरे पाँच नक्षत्रों को तृणकाष्ठादिसंग्रह में वर्जित कहता है—

'गृहार्थं तृणकाष्ठादिसङ्ग्रहादग्निभिः कलिः।
रोगो दण्डोऽर्थहानिः स्यात्क्रमाद्वस्वादि पञ्चके॥'

गर्गाचार्य का विशेष मत—गर्गाचार्य ने पंचक दो प्रकार का बताया है—**१. चान्द्र पञ्चक**—जब चन्द्रमा धनिष्ठादि पाँच नक्षत्रों में हो, तब तृणकाष्ठादि का छेदन तथा संग्रह नहीं करना चाहिये। **२. सौर पंचक**—जब सूर्य मघादि पाँच नक्षत्रों (मघा, पू.फा., उ.फा., हस्त तथा चित्रा) में हो, तब भी तृणकाष्ठादि का संग्रह न करें—

'धनिष्ठा पञ्चके चन्द्रे सूर्ये पैत्र्यादि पञ्चके।
छेदनानि न कर्त्तव्यं गृहार्थं तृणकाष्ठयोः॥'

शत्रुनाशक योग

जन्मोदये लग्नगते दिग्लग्ने लग्नगोऽपि वा।
शुभे चतुर्षु केन्द्रेषु याते वायुक्षयो भवेत्॥ २५॥
शीर्षोदये लग्नगते दिग्लग्ने लग्नतोऽपि वा।
शुभवर्गेऽथवा लग्नगते यातुः शत्रुक्षयो भवेत्॥ २६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शीर्षोदये जन्मराशौ लग्नं शुभयुतं तथा।
तयो राशिस्थिते राशौ यातुः शत्रुक्षयो भवेत्॥ २७॥
शत्रुजन्मोदये जन्मराशिश्च निधनं तयोः।
यो राशित वै राशौ यातुः शत्रुक्षयो भवेत्॥ २८॥

१. यदि यात्रा प्रारम्भ के समय वही लग्न हो जो कि यात्री की जन्म लग्न है तथा उसमें शुभ ग्रह बैठे हों, तो उसमें यात्रा करने पर यात्री राजा के शत्रु युद्ध में नष्ट होते हैं।

२. यदि दिग्द्वार लग्न (श्लोक ८ के अनुसार) यात्रा लग्न हो तथा उससे चारों केन्द्रों में शुभ ग्रह बैठे हों, तो इस योग में यात्रा करनेवाले यात्री राजा या सेनापति के शत्रु नष्ट होते हैं।

३. यदि यात्रा लग्न में शीर्षोदय राशि (सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक तथा कुम्भ) हो अथवा दिग्राशि लग्न हो अथवा शुभग्रह की राशि का लग्न (शुभवर्ग में स्थित ग्रह की राशि लग्न) हो तो यात्री का शत्रु नष्ट होता है।

४. शुभग्रह से युक्त जन्मकालीन लग्न की राशि लग्न में यदि यात्री गमन करे अथवा शीर्षोदय राशि शुभयुक्त हो तो शत्रु नष्ट होता है।

५. यदि युद्ध यात्री अपने शत्रु की जन्मलग्न में अथवा उसकी जन्मराशि से आठवीं राशिलग्न में यात्रा करे तो उसका शत्रु नष्ट होता है॥ २४-२८॥

सभी प्रकार की यात्रा में अशुभ लग्न एवं नवांश

वक्रे पन्था मीनलग्ने यातुर्मीनां शकेऽपि वा।
निन्द्यं निखिलयात्रासु घटलग्नं घटांशकः॥ २९॥

यदि यात्रा के समय मीन लग्न हो अथवा मीन लग्न का नवांश हो तो पन्था वक्रमार्ग (टेढ़े-मेढ़े या घुमावदार मार्ग) से यात्रा करता है, अतः इसमें यात्रा करना शुभ नहीं होता है। इसी प्रकार सभी प्रकार की यात्रा में कुम्भ लग्न एवं नवांश वर्जित हैं॥ २९॥

जलराशि लग्नों में करने योग्य कार्य

जलोदये जलांशे वा जलयाने शुभावहाः।
यात्रा नौकादिभिः कुर्यात् सिद्धिं समधिगच्छति॥ ३०॥

जलचर राशियों (कर्क, मीन) के लग्न अथवा नवांश में जलपोत अथवा नौकादि द्वारा यात्रा करना शुभ होता है॥ ३०॥

लग्नादि द्वादश भावों के नाम

मूर्तिः कोशोऽथ धानुष्कं वाहनं मन्त्रसंज्ञकम्।
शत्रुमार्गस्तथाऽयुश्च भाग्यं व्यापारसंज्ञितः॥ ३१॥
प्राप्तिरप्राप्ति रुदयाद् भावाः स्युर्द्वादशैव तु।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. मूर्ति, २. कोश, ३. धानुष्क (शस्त्र-संचालन, पराक्रम), ४. वाहन, ५. मन्त्र, ६. शत्रु, ७. मार्ग, ८. आयु, ९. भाग्य, १०. व्यापार (कर्म), ११. प्राप्ति (आय-लाभ-लब्धि) तथा १२. अप्राप्ति (व्यय)—ये लग्न से लेकर क्रमशः बारह भावों के नाम हैं ॥ ३१-३१½ ॥

यात्रालग्नकुण्डली में ग्रहों का शुभाशुभत्व

हन्ति पापास्तवायवर्जं भावात्सूर्यमहीसुतौ ॥ ३२ ॥
न निघ्नतोरि व्यापारं सौम्याः पुष्यान्त्यरिं विना।
शुक्रोऽस्तं चापि पुष्टोऽपि मूर्तिर्मृत्युश्च चन्द्रमाः ॥ ३३ ॥

पापग्रह (शनि-सूर्य-मंगल-राहु-केतु) तृतीय एवं एकादश भाव को छोड़कर यदि यात्रा लग्न में अन्यत्र बैठे हों तो वे उन भावों के फलों को नष्ट करते हैं। परन्तु तीसरे एवं ग्यारहवें भावों में बैठने पर वे इनके फल को पुष्ट करते हैं, अर्थात् यात्रा को शुभ बनाते हैं ॥ ३२ ॥

सूर्य तथा मंगल छठे एवं दसवें भाव के फल को नष्ट नहीं करते, अपितु उनमें बैठकर उनके फलों को पुष्ट करते हैं। शुभग्रह(गुरु, शुक्र-पापरहित बुध एवं चन्द्र) किसी भी भाव में बैठे हों तो उसके फल को पुष्ट करते हैं, किन्तु ये ही शुभ ग्रह यदि षष्ठभाव में बैठते हैं, तो उसके फल (रोग-शत्रु-ऋण आदि) को पुष्ट न करके नष्ट करते हैं ॥ ३२½ ॥

इसी प्रकार शुभ ग्रहों में शुक्र ग्रह सप्तम भाव में बैठकर उसे पुष्ट नहीं करता, अपितु नष्ट करता है तथैव चन्द्रमा लग्न एवं अष्टम भावों को पुष्ट न करके नष्ट ही करता है ॥ ३३ ॥

यात्रा में अभिजित् मुहूर्त का उपयोग

याम्यदिग्गमनं त्यक्त्वा सर्वकाष्ठासु यायिनाम्।
अभिजित् क्षणयोगोऽयमभीष्टफलसिद्धिदः ॥ ३४ ॥
पञ्चाङ्गशुद्धिरहिते दिवसेऽपि फलप्रदः।

केवल दक्षिण दिशा की यात्रा को छोड़कर शेष सभी दिशाओं के यात्रियों के लिये अभिजित् मुहूर्त (स्पष्ट मध्याह्न से एक घटी पूर्व तथा पश्चात् का समय) शुभ फलप्रद होता है। यह मुहूर्त पंचांग शुद्धिरहित दिन में भी शुभफल देता है ॥ ३४-३४½ ॥

यात्रा में अन्य विचित्र शुभ योग

यात्रायोगे विचित्रास्तान्योगान्वक्ष्येऽतस्ततः ॥ ३५ ॥
फलसिद्धिर्योगलग्नाद् राज्ञो विप्रस्य धिष्ण्यतः।
मुहूर्ततः शक्तितोऽन्येषां शकुनैस्तस्करस्य च ॥ ३६ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यात्रा योगों में अन्य विचित्र योग भी हैं, अतः अब उन्हें भी यहाँ पर कहा जा रहा है। १. राजा लोगों की यात्रा में सफलता योगों के कारण ही मिलती है। २. ब्राह्मणों को शुभ नक्षत्र में यात्रा करने से सफलता मिलती है। ३. वैश्यों को शुभ मुहूर्त में यात्रा करना सफलतादायक होता है तथा लग्न बल भी शुभदायक होता है। ४. चोरों को शकुन बल से यात्रा करने पर सफलता मिलती है ॥ ३६ ॥

यात्रार्थ योग-अधियोग तथा योगाधियोगों का कथन

केन्द्रत्रिकोणे ह्येकेन योगः शुक्रेण सूरिणा।
अधियोगो भवेद् द्वाभ्यां त्रिभिर्योगोऽधियोगकः॥ ३७॥
योगेऽपि यायिनां क्षेम अतियोगे जयो भवेत्।
योगाधियोगे क्षेमं च विजयाय विभूतयः॥ ३८॥

शुक्र-बुध-गुरु इनमें से यदि एक भी ग्रह यात्रा लग्न से त्रिकोण या केन्द्र (३-४-५-७-९-१० भावों) में बैठा हो तो यात्रायोग होता है। यदि इनमें से दो ग्रह के केन्द्र-त्रिकोण में यात्रा की लग्न कुण्डली में स्थित हों तो यात्राधियोग (अधियोग या अतियोग) होता है। यदि यात्रा लग्न से केन्द्र त्रिकोण भावों में बुध-गुरु-शुक्र-तीनों ही शुभ ग्रह बैठे हों तो योगाधियोग (अध्यधियोग) होता है। इनमें यात्रायोग क्षेमकारक, अधियोग जयप्रद तथा योगाधियोग विजय एवं विभूति प्रदान करता है ॥ ३७-३८ ॥

जयलक्ष्मीयोग

व्यापारशत्रुमूर्तिस्थैश्चन्द्रमन्ददिवाकरैः ।
रणे गतस्य भूपस्य जयलक्ष्मी प्रमाणिका॥ ३९॥

यात्रा लग्न से दशम भाव में चन्द्रमा, षष्ठ भाव में शनि तथा लग्न में सूर्य बैठा हो तो इस योग में युद्ध में गमन करनेवाले राजा को विजय तथा शत्रु-सम्पत्ति सुनिश्चित रूप से प्राप्त होती है ॥ ३९ ॥

शलभाग्नियोग

वित्तगतः शशिपुत्रो भ्रातरि वासरनाथः।
लग्नगते भृगुपुत्रे स्युः शलभा इव सर्वे॥ ४०॥

यदि यात्राकालीन लग्न से बुध द्वितीय भाव में, सूर्य तृतीय भाव में तथा शुक्र लग्न में हो तो इस योग में यात्रा करनेवाले राजा की सेना के सामने शत्रु-सैनिक टिड्डी-दल या पतंगों की तरह युद्धाग्नि में गिरकर मर जाते हैं ॥ ४० ॥

लाक्षेवलीयते योग

शुक्रार्कज्ञार्किभौमेषु लग्नं वास्तं त्रिशत्रुषु।
यातस्याग्रे वैरिचमूर्वह्नौ लाक्षेव लीयते॥ ४१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शुक्र, सूर्य, बुध, शनि तथा मंगल—ये पाँचों ग्रह क्रमानुसार हों तो इस योग में यात्रा करनेवाले राजा की सेना के सामने आकर शत्रु की सेना अग्नि में जिस प्रकार लाख जल जाती है उसी प्रकार नष्ट हो जाती है ॥ ४१ ॥

यममन्दिरयोग

लग्नस्थे त्रिदशाचार्ये धनायस्थे परेग्रहे।
गतस्य राज्ञोऽरिसेना प्रयाति यममन्दिरे ॥ ४२ ॥

यदि यात्रा लग्न में बुध बैठा हो तथा शेष ग्रह धनभाव एवं ११वें भाव में हों तो इस योग में यात्रा करनेवाले राजा के शत्रु की सेना यमलोक में पहुँच जाती है ॥ ४२ ॥

पूतनायोग

लग्ने शुक्रे रवौ लाभे चन्द्रे बन्धुस्थिते यदा।
हन्ति यातुः अरिसेनां केशवो पूतना इव ॥ ४३ ॥

यदि यात्रा लग्न में शुक्र हो उससे ग्यारहवें भाव में सूर्य तथा चतुर्थ में चन्द्रमा हो तो इस योग का यात्री राजा शत्रु सेना को इस प्रकार मार डालता है, जैसे श्रीकृष्ण ने पूतना को मार दिया था ॥ ४२ ॥

अभिसारिकायोग

त्रिकोणकेन्द्रगाः सौम्याः क्रूरास्त्राय गता यदि।
यस्य यातुश्च लक्ष्मीर्वै तमैत्यभिसारिका ॥ ४४ ॥

यदि यात्रा लग्न से शुभग्रह त्रिकोण (९-५) तथा केन्द्र (१-४-७-१०) स्थानों में बैठे हों तथा पापग्रह तृतीय एवं ग्यारहवें घर में हो तो उसमें युद्धयात्रा करनेवाले वीर की सेना के साथ शत्रु की सेना भी व्यभिचारिणी स्त्री की भाँति आकर मिल जाती है ॥ ४४ ॥

अस्थिरा रिपुवाहिनीयोग

जीवार्कचन्द्रा लग्नारि रन्ध्रगा यदि गच्छतः।
तस्याग्रे खलमैत्रीव न स्थिरा रिपुवाहिनी ॥ ४५ ॥

यदि गुरु, सूर्य तथा चन्द्रमा क्रमशः लग्न-षष्ठ तथा अष्टम भाव में बैठे हों तो इस योग में यात्रा करनेवाले राजा के सामने शत्रु की सेना उसी प्रकार नहीं टिक पाती है, जिस प्रकार दुष्ट व्यक्ति की मित्रता अधिक समय तक नहीं टिक पाती है ॥ ४५ ॥

शत्रुमेदिनी प्राप्तियोग

त्रिषडायेषु मन्दारौ बलवन्तः शुभा यदि।
यात्रायां नृपतेस्तस्य हस्ते स्याच्छत्रुमेदिनी ॥ ४६ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि यात्रा लग्न से शनि एवं मंगल ३-६-११ में बैठे हों तथा शुभग्रह बलवान् हो तो युद्धयात्री को इस योग में प्रस्थान करने पर शत्रु की भूमि पर अधिकार प्राप्त होता है ॥ ४६ ॥

जययोग

स्वोच्चस्थे लग्नगे जीवे चन्द्रे लाभगते यदि।
गतो राजा रिपून्हन्ति पिनाकी त्रिपुरं यथा॥ ४७॥

यदि उच्चराशि (कर्क) का गुरु यात्रा की लग्न में बैठा हो तथा चन्द्रमा ग्यारहवें भाव में हो तो इस योग में यात्रा करनेवाला राजा अपने शत्रुओं को उसी प्रकार नष्ट करता है, जिस प्रकार भगवान् शंकर ने त्रिपुरासुर को नष्ट किया था॥ ४७॥

पुनः जययोग

मस्तकोदयगे शुक्रे लग्नस्थे लाभगे गुरौ।
गतोराजा रिपुन्हन्ति कुमारस्तारकं यथा॥ ४८॥

यदि यात्रा लग्न में शीर्षोदय राशि हो तथा उसमें शुक्र बैठा हो, साथ ही ग्यारहवें भाव में गुरु बैठा हो तो इस योग में यात्रा करनेवाले राजा शत्रु सेना को उसी प्रकार मारता है, जिस प्रकार कि स्वामी कार्तिकेय तारकासुर का संहार करते हैं॥ ४८॥

शत्रुनाशयोग

जीवे लग्नगते शुक्रे केन्द्रे वापि त्रिकोणगे।
गतो दहत्यरीन् राजा कृष्णवत्यां यथा व्रणम्॥ ४९॥

यदि यात्राकालीन लग्न में गुरु बैठे हों तथा शुक्र केन्द्र अथवा त्रिकोण (१-४-५-७-९-१०) में स्थित हो तो इस योग में युद्धार्थ गमन करनेवाले राजा की सेना शत्रुसेना को इस प्रकार नष्ट करती है, जैसे कि कृष्णवती नदी में स्नान करने से फोड़े-फुंसी नष्ट हो जाते हैं॥ ४९॥

अरिनाशयोग

लग्नगे ज्ञे शुभे केन्द्रे धिष्ण्ये चोपकुले गते।
नृपाः शुष्यन्त्यरीन्ग्रीष्मे ह्रदानीवार्करश्मयः॥ ५०॥

यदि यात्रा लग्न में बुध बैठा हो तथा अन्य शुभ ग्रह केन्द्र स्थानों (१-४-७-१०) में बैठे हों तथा गुरु चतुर्थ भाव में बैठा हो तो इस योग में प्रस्थान करनेवाले राजा लोग अपने शत्रुओं को उसी प्रकार नष्ट कर डालते हैं, जिस प्रकार सूर्य की प्रचण्ड किरणें ग्रीष्मकाल में जलाशयों को सुखा देती हैं॥ ५०॥

रिपुनाशयोग

शुभे त्रिकोणकेन्द्रस्थे लाभे चन्द्रेऽथवा रवौ।
शत्रून्हन्ति गतो राजा त्वन्धकारो यथा रविः॥ ५१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि शुभग्रह लग्न से केन्द्र त्रिकोण में हो तथा ग्यारहवें भाव में सूर्य या चन्द्रमा बैठा हो तो इस योग में युद्धार्थ प्रस्थान करनेवाला राजा अपने शत्रुओं का उसी प्रकार नाश करता है, जैसे कि सूर्य अन्धकार को दूर करता है ॥ ५१ ॥

शत्रुदहनयोग

स्वक्षेत्रगे शुभे चन्द्रे त्रिकोणाय गते गते।
विनाशयत्यरीन्राजा तूलराशिमिवानलः ॥ ५२ ॥

यदि यात्रा लग्न कुण्डली में शुभ ग्रह स्वक्षेत्री हों तथा चन्द्रमा ५-९-११ भावों में हो तो इस योग में युद्धार्थ प्रस्थान करनेवाला राजा शत्रुसेना को उसी प्रकार समाप्त कर देता है, जैसे आग लगने पर रूई का ढेर भस्म हो जाता है ॥ ५२ ॥

रिपुसर्वनाशयोग

इन्दौ खस्थे गुरौ केन्द्रे मन्त्री सप्तमगे गतः।
नृपो हन्ति रिपून् सर्वान् पापं पञ्चाक्षरो यथा ॥ ५३ ॥

यदि यात्रा समय चन्द्रमा दशमस्थ, गुरु केन्द्रस्थ तथा शुक्र सप्तमस्थ हो तो युद्ध यात्री के शत्रुओं का सर्वनाश उसी प्रकार से हो जाता है, जैसे पञ्चाक्षर मन्त्र (नमः शिवाय) सम्पूर्ण पापों को नष्ट कर देता है ॥ ५३ ॥

यात्रालग्न में वर्गोत्तम शुक्र का फल

वर्गोत्तमगते शुक्रेऽप्येकस्मिन्नेव लग्नगे।
हरिस्मृतिर्यथा पापान्हन्ति शत्रून् गतो नृपः ॥ ५४ ॥

यदि यात्रा लग्न में अकेला शुक्र वर्गोत्तम होकर बैठा हो तो ययुत्सु राजा के इस योग में प्रस्थान करने पर शत्रु इसी प्रकार नष्ट होते हैं, जैसे हरिस्मरण से पाप नष्ट होते हैं ॥ ५४ ॥

पुनः रिपुनाशयोग

शुभे केन्द्रत्रिकोणस्थे चन्द्रे वर्गोत्तमे गते।
सगोत्रान्हि रिपून्हन्ति यथा गोत्रांश्च गोत्रभित् ॥ ५५ ॥

यदि शुभग्रह केन्द्र में तथा चन्द्रमा वर्गोत्तम हों तो ऐसी लग्न में प्रस्थान करनेवाले राजा के द्वारा शत्रु उसी प्रकार से नष्ट हो जाते हैं, जैसे इन्द्र के वज्र से पर्वत ॥ ५५ ॥

गरुडभुजङ्गयोग

मित्रभस्थे गुरौ केन्द्रे त्रिकोणस्थेऽथवा सिते।
शत्रून् हन्ति गतो राजा भुजङ्गं गरुडो यथा ॥ ५६ ॥

यदि मित्रराशि का गुरु केन्द्र में अथवा मित्रराशिगत शुक्र त्रिकोण में हो तो ऐसी लग्न में प्रयाण करनेवाले राजा के शत्रु गरुड द्वारा सर्पों के नाश की भाँति नष्ट हो जाते हैं ॥ ५६ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भागीरथी पापयोग

शुभे केन्द्रे त्रिकोणस्थे वर्गोत्तमगते गतः।
विनाशयत्यरीन् राजा पापो भागीरथी यथा॥ ५७॥

जिस यात्रा लग्न में शुभग्रह केन्द्र में तथा त्रिकोण में वर्गोत्तम का होकर स्थित हो तो उसमें प्रस्थान करने पर राजा अपने शत्रुओं को नष्ट करता है, जैसे कि गंगाजी समस्त पापों को नष्ट करती हैं॥ ५७॥

शत्रुयोषाश्रुविन्दुयोग

ये नृपा यान्त्यरीञ्जेतुं तत्र योगौ नृपाह्वयौ।
उपैति शान्तिं कोपाग्निः शत्रुयोषाश्रुविन्दुभिः॥ ५८॥

पूर्व के दो योगों को नृपाह्वय योग भी कहा जाता है। इनमें प्रस्थान करनेवाले राजा की कोपाग्नि शत्रुओं की स्त्रियों के अश्रुविन्दुओं से होती है॥ ५८॥

विजयादशमी का मुहूर्त

बलक्षपक्षदशमी मासीषे विजयाभिधः।
विजयस्तत्र यातृणां सन्धिर्वा न पराजयः॥ ५९॥

इष मास (आश्विन मास) के बलक्ष पक्ष (शुक्लपक्ष) की दशमी तिथि 'विजया दशमी' कहलाती है। इस तिथि पर युद्धार्थ प्रस्थान करनेवाले की विजय होती है। उसे न सन्धि करनी पड़ती है और न पराजय देखनी पड़ती है॥ ५९॥

यात्रा में मनोबल का महत्त्व

निमित्तशकुनादिभ्यः प्रधानं हि मनोदयः।
तस्मान् मनस्विनां यत्नात्फलहेतुर्मनोदयः॥ ६०॥

यात्रादि सभी कार्यों में निमित्त, शकुन तथा योगादि की अपेक्षा मनोदय (आत्मबल या आत्मविश्वास) ही प्रधान होता है, अतः विद्वानों ने फल-प्राप्ति में मनोदय (मनोत्साह) को ही प्रमुख कहा है॥ ६०॥

विमर्श—भूपालवल्लभ ग्रन्थ के अनुसार गर्गाचार्य ने यात्रार्थ उषःकाल प्रशस्त बताया है। बृहस्पति ने शुभ शकुन होने पर यात्रा करने को कहा है। अङ्गिरा ने जब मन उत्साहित हो तब यात्रा को सफलतादायक कहा है तथा जनार्दन ऋषि के मत से ब्राह्मण की आज्ञा प्राप्तकर यात्रा करना चाहिये। यथा—

'उषःकालप्रशस्यते गर्गः शकुनन्तु बृहस्पतिः।
अङ्गिरा तु मनोत्साहं विप्रवाक्यं जनार्दनः॥'

यात्राहेतु प्रतिबन्ध

उत्सवोपनयोद्वाहं शवस्य सूतकेषु च।
अयमासे न कुर्वीत यात्री मर्त्यो जिजीविषुः॥ ६१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि यात्रारम्भ के समय घर में उत्सव, उपनयन (जनेऊ), विवाह आदि मांगलिक कार्य हो, किसी की मृत्यु का सूतक हो अथवा अन्य प्रकार का सूतक हो, तो जब तक इनकी समाप्ति न हो जाय, तब तक जीवन की इच्छावाले मनुष्य को यात्रारम्भ नहीं करना चाहिये ॥ ६१ ॥

यात्रा के समय अपशकुन

महिषीमेषयोर्युद्धे कलत्रकलहान्तरे।
वस्त्रादेस्स्खलिते क्रोधे दुरुक्ते न व्रजेत्क्षुतौ ॥ ६२ ॥

यदि यात्रारम्भ के समय भैंसों या भेड़-बकरी में झगड़ा हो अथवा पत्नी आदि से अथवा घर की स्त्रियों में कलह होने लगे, अथवा पत्नी रजस्वला हो, अथवा प्रस्थान समय यात्री के शरीर का वस्त्र गिर पड़े या गाँठ अथवा बन खुल जाये, चैन खुल जाय, क्रोध आ जाय, गाली-गलौज होने लगे अथवा छींक हो जाय तो यात्रा न करे ॥ ६२ ॥

यात्रा में दिग्दोहद

घृतान्नं तिलपिष्टान्नं मत्स्यान्नं घृतपायसम्।
प्राणादिक्रमशो भुक्त्वा याति राजा जयत्यरीन् ॥ ६३ ॥

१. पूर्व की यात्रा में घृतपक्व अन्न, २. दक्षिण दिशा में तिलपिष्ट अन्न, ३. पश्चिम की यात्रा में मत्स्यान्न (अथवा दही) तथा ४. उत्तर दिशा की यात्रा में घृतमिश्रित खीर खाकर यात्रा करनेवाला राजा अपने शत्रुओं को जीतता है ॥ ६३ ॥

वार दोहद

मार्जिता परमान्नञ्च काञ्जिकं च पयोदधि।
क्षीरं तिलोदनं भुक्त्वा भानुवारादिषुक्रमात् ॥ ६४ ॥

१. रविवार को श्रीखण्ड, २. सोमवार को खीर, ३. मंगलवार को काञ्जी, ४. बुधवार को दूध, ५. गुरुवार को दही, ६. शुक्रवार को दूध तथा ७. शनिवार को तिल और भात खाकर यात्रा करना चाहिये ॥ ६४ ॥

नक्षत्र दोहद

कुल्माषांश्च तिलान्नं च दधिक्षौद्रं घृतं पयः।
मृगमांसञ्च तत्सारं पायसं चाषकं मृगम् ॥ ६५ ॥
शशमांसञ्च षाष्टिक्यं प्रियङ्गुमपूपकम्।
चित्राण्डजं फलं कूर्मं सारीं गोधाञ्च शल्लकम् ॥ ६६ ॥
हविष्यं कृशरान्नञ्च मुद्गान्नं यवपिष्टकम्।
मत्स्यान्नं चित्रितान्नञ्च दध्यन्नं दस्रभात्क्रमात् ॥ ६७ ॥
भुक्त्वा यायाज्जयेच्छुर्यो भूमिनाथो जयत्यरीन्।
अतोऽग्रे विजयार्थं च यात्राविधिः प्रकथ्यते ॥ ६८ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. कुल्माष (उबले हुए गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा, उड़द, मूँग, चना, मोंठ, मसूर, रमास, लोबिया, सोयाबीन आदि अन्न), २. तिलपिट्ठी (तिलकुट, गजक आदि), ३. दही, ४. मधु, ५. घी, ६. दूध, ७. मृगमांस, ८.मृगरक्त, ९. खीर, १०. पपीहा का मांस, ११. मृगमांस, १२. खरगोश का मांस, १३. साठी चावल, १४. प्रियङ्गु, १५. मालपूआ, १६. रंग-बिरंगे अण्डे, १७. फल, १८. कछुवा का मांस, १९. सारिका पक्षी का मांस, २०. गोह का मांस, २१. सेही का मांस, २२. हविष्यान्न, २३. खिचड़ी, २४. मूँग, २५. जौ का सत्तू या पंजीरी, २६. मत्स्यान्न, २७. चित्रितान्न तथा २८. दही-भात, इनका सेवन अश्विनी से लेकर (अभिजित् सहित) अट्ठाइस नक्षत्रों में करना चाहिये ॥ ६५-६७ ॥

विजय की इच्छावाला राजा इन नक्षत्रानुसार दोहदों को खाकर यात्रा करे तो शत्रुओं को जीतता है। अब आगे विजय की सुनिश्चितता के लिये यात्रा-विधि का वर्णन किया जाता है ॥ ६८ ॥

यात्राविधि

हुताशनं तिलैर्हुत्वा पूजयेत्तु दिशीश्वरम्।
प्रणम्य देवभूदेवानाशीर्वादं नृपो लभेत् ॥ ६९ ॥

१. तिलों का हवन करके, २. दिक्पालों का पूजन करके, ३. देवताओं एवं ब्राह्मणों को प्रणाम करके उनका आशीर्वाद (राजा को) ग्रहण करना चाहिये ॥ ६९ ॥

दिगीश्वरपूजन

कृत्वा होमं दारुणञ्च तन्मन्त्रेण कृतं व्रजेत्।
वस्त्रं तद्वर्णगन्धाद्यैरेवं भक्त्या दिगीश्वरम् ॥ ७० ॥

जिस दिशा की यात्रा करनी हो, उस दिशा के स्वामी देवता की पूजा उसके वैदिक मन्त्र से करनी चाहिये तथा दारुण होम करना चाहिये ॥ ७० ॥

पूर्व के दिक्पाल इन्द्र की पूजा

इन्द्रमैरावतारूढं शच्या सह विराजितम्।
वज्रपाणिं स्वर्णवर्णं दिव्यावरणभूषितम् ॥ ७१ ॥

ऐरावत हाथी पर इन्द्राणी शची के साथ विराजमान सुनहरे रंग के दिव्याभूषणों से विभूषित वज्रधारी पूर्वदिशा के दिक्पाल इन्द्र की पूजा करे ॥ ७१ ॥

अग्निकोण के दिक्पाल अग्नि की पूजा

सप्तहस्तं सप्तजिह्वं षडक्षं मेषवाहनम्।
स्वाहाप्रियं रक्तवर्णं स्रुक्स्रुवायुधधारिणम् ॥ ७२ ॥

सात भुजाओं, सात जिह्वा (जीभों), छह नेत्रोंवाले, लालकान्तिवाले, स्रुक् तथा स्रुवारूपी हथियार धारणकर अपनी पत्नी स्वाहा देवी के साथ मेषरूपी वाहन पर बैठे हुए अग्नि की पूजा करे ॥ ७२ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दक्षिण के दिक्पाल यम की पूजा

दण्डायुधं लोहिताक्षं यमं महिषवाहनम्।
श्यामलासहितं रक्तवर्णमूर्ध्वमुखं शुभम्॥ ७३॥

हाथ में दण्डरूपी आयुध धारण किये, लालनेत्र, लालवर्ण, ऊर्ध्वमुख, शुभ तथा अपनी पत्नी श्यामला के साथ में महिष (भैंसा) रूपी वाहन पर सवार दक्षिण के दिक्पाल यम की पूजा करे॥ ७३॥

नैर्ऋत्य के दिक्पाल निर्ऋति की पूजा

खड्गं चर्मधरं नीलं निर्ऋतिं नरवाहनम्।
ऊर्ध्वकेशं विरूपाक्षं दीर्घग्रीवायुतं विभुम्॥ ७४॥

नीली कान्तिवाले, ऊर्ध्वकेश, विरूपाक्ष, सामर्थ्यशाली, तलवार तथा ढाल हाथ में लिये अपनी दीर्घग्रीवा पत्नी के साथ पालकी में बैठे निर्ऋति की पूजा करे॥ ७४॥

पश्चिम के दिक्पाल वरुण की पूजा

नागपाशधरं पीतवर्णं मकरवाहनम्।
वरुणं कलिनाथञ्च रत्नाभरणभूषितम्॥ ७५॥

नागपाशरूपी आयुध से युक्त, पीली कान्ति से युक्त, रत्नाभूषणों से सुसज्जित अपनी काली नामक पत्नी के साथ मगरमच्छ पर सवारी करनेवाले वरुणदेव की पूजा करे॥ ७५॥

वायव्य के दिक्पाल वायु की पूजा

प्राणिनां प्राणरूपञ्च द्विबाहुं दण्डपाणिनम्।
वायुं कृष्णमृगासीनं पूजयेदञ्जनापतिम्॥ ७६॥

जो प्राणियों के प्राणस्वरूप हैं, दो भुजावाले, हाथ में दण्ड धारण किये, अञ्जना के साथ कृष्णवर्ण के मृग पर विराजमान वायव्यकोण की स्वामी वायुदेव की पूजा करे॥ ७६॥

उत्तर के दिक्पाल कुबेर की पूजा

अश्वासीनं कुन्तपाणिं द्विबाहुं स्वर्णसन्निभम्।
कुबेरं चित्रलेखेशं यक्षगन्धर्वनायकम्॥ ७७॥

अपनी पत्नी चित्रलेखा के साथ घोड़े पर सवार, दो भुजाओंवाले, हाथ में भाला लिये, स्वर्णकान्ति से युक्त, यक्षों एवं गन्धर्वों के स्वामी कुबेर की पूजा करे॥ ७७॥

ईशानके दिक्पाल शिव की पूजा

पिनाकिनं वृषारूढं गौरीपतिमनुत्तमम्।
श्वेतवर्णं चन्द्रमौलिं नागयज्ञोपवीतिनम्॥ ७८॥

श्वेतवर्ण के मस्तक पर चन्द्रमा तथा शरीर में सर्पों का जनेऊ पहिने, पिनाक धनुष धारण किये हुए, गौरी के श्रेष्ठ पति जो कि वृषभ पर विराजमान हैं, उनकी पूजा करे॥ ७८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पूजा में ध्यान हेतु दिक्पालों के स्वरूप का प्रदर्शक चक्र

१ दिशा (दिक्)	२ स्वामी (दिक्पाल)	३ उनकी पत्नी का नाम	४ कान्ति	५ आभूषण	६ आयुध	७ वाहन	८ अन्य विशेषताएँ
१. पूर्व (East)	इन्द्र	शची	सुवर्ण-वर्ण	दिव्य	वज्र	ऐरावत हाथी	शतनेत्र, द्विबाहु
२. आग्नेय (South+East)	अग्नि	स्वाहा	रक्तवर्ण	षडक्ष	स्रुक् स्रुवा	मेष (भेड़ा)	सप्तजिह्व, सप्तबाहु
३. दक्षिण (South)	यमराज	श्यामला	रक्तवर्ण	शुभ	दण्ड	महिष (भैंसा)	ऊर्ध्वमुख
४. नैर्ऋत्य (South+West)	निर्ऋति	दीर्घग्रीवा	नीलवर्ण	विरूपाक्ष	खड्ग चर्म (ढाल)	नरवाहन (पालकी)	ऊर्ध्वकेश
५. पश्चिम (West)	वरुण	कालि (काली)	पीतवर्ण	रत्नाभरण	नागपाश	मकर	×
६. वायव्य (North+West)	वायु	अञ्जना	×	×	दण्ड	कृष्णमृग	द्विबाहु, प्राणरूप
७. उत्तर (North)	कुबेर	चित्रलेखा	स्वर्णवर्ण	द्विभुज	कुन्त (भाला)	अश्व	यक्षों-गन्धर्वों के स्वामी
८. ईशान (North+East)	शिव	गौरी	श्वेतवर्ण अनुपम	नागों का यज्ञोपवीत	धनुष	वृष	चन्द्रमौलि

प्रस्थानविधि

अप्रयाणे स्वयं कार्या प्रेक्षया भूभुर्जस्तथा।
कार्यं निर्गमनं छत्रध्वजाश्चाक्षतवाहनैः॥ ७९॥
स्वस्थानान्निर्गमस्थानं धनुषा च शतद्वयम्।
चत्वारिंशद् द्वादशैव प्रस्थितो हि स्वगेहतः॥ ८०॥
दिनान्येकत्र न वसेत् सप्त भूपः परोजनः।
पञ्चरात्रञ्च परतः पुनर्लग्नान्तरं व्रजेत्॥ ८१॥

यदि किसी अनिवार्य कारण से राजा (या सेनापति) स्वयं युद्धयात्रा में न जा सके तो उसे चाहिये कि वह छत्र, ध्वजा, शस्त्र या वाहन आदि में से कोई एक वस्तु स्वयं के आवास से निकालकर जिस दिशा में गमन करना हो उस घर में २०० धनुष

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(चार हाथ की नाप) की दूरी पर प्रस्थान के रूप में रखवा दे। यदि राजा स्वयं प्रस्थान करे तो चालीस धनुष की दूरी तक प्रस्थान करे अथवा बारह धनुष की दूरी तक प्रस्थान करे ॥ ७९-८० ॥

राजा मार्ग में एक ही स्थान पर सात दिन-रात से अधिक विश्राम न करे। अन्य लोग एक ही स्थान पर पाँच अहोरात्र से अधिक विश्राम न करें। यदि इससे अधिक दिनों तक विश्राम किया जाता है तो पुनः ज्योतिषी से शुभलग्न पूछकर उसमें प्रस्थान करना चाहिये ॥ ८१ ॥

यात्रा के स्थगन की परिस्थितियाँ

अकालजेषु नृपतिर्विद्युद्गर्जितवृष्टिषु।
उत्पातेषु त्रिविधेषु सप्तरात्रं तु न व्रजेत् ॥ ८२ ॥

असमय में (चैत्र तथा पौष में) यदि बिजली गरजे तथा वर्षा हो अथवा त्रिविध उत्पात (दिव्य, अन्तरिक्ष तथा भौम) हों तो फिर सात दिन तक यात्रा नहीं करना चाहिये (तदुपरान्त पुनः शुभ मुहूर्त में यात्रा करें) ॥ ८२ ॥

यात्रा-समय शुभाशुभ शकुन

शुभाशुभानि शकुनानि वक्ष्यामि शृणु नारद।
गमने तु शिवाकाककपोतानां गिरः शुभाः ॥ ८३ ॥
वामाङ्गे कोकिला पल्ली पोतकी सूकरी रला।
वानरः काक ऋक्षः श्वा भासः स्युर्दक्षिणाः शुभाः ॥ ८४ ॥
चाषं त्यक्त्वा चतुष्पात्तु शुभदो वामतो गमः।
कृष्णं त्यक्त्वा प्रयाते तु कृकलासो न वीक्षितः ॥ ८५ ॥
वराहशशगोधानां सर्पाणां कीर्तनं शुभम्।
दृष्टमात्रेण यात्रायां व्यस्तं सर्वं प्रवेशने ॥ ८६ ॥
यात्रा सिद्धिर्भवेद् दृष्टे शवे रोदनवर्जिते।
प्रवेशो रोदनयुते शवे स्याच्च शिवप्रदः ॥ ८७ ॥
पतितक्लीबजटिलोन्मत्तवान्तौषधादिभिः।
अभ्यक्तकाष्ठान्यस्थीनि चर्माङ्गारतुषाग्निभिः ॥ ८८ ॥
गुडकार्पासलवणवसातैलतृणोरगैः।
वन्ध्याव्यथितकाणौ च मुक्तकेशो बुभुक्षितः ॥ ८९ ॥
प्रयाणसमये लग्ने दृष्टे सिद्धिर्न जायते।
प्रज्वलाग्निः शुभं वाक्यं कुसुमेक्षुसुरागणाः ॥ ९० ॥
गन्धपुष्पाक्षतच्छत्रचामरान्दोलिका नृपाः।
भक्ष्यं शुभफलं चैवेभोऽश्वाजौ दक्षिणे वृषः ॥ ९१ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मत्स्यं मांसं सुधौतञ्च वस्त्रं श्वेतवृषध्वजः।
पुण्यस्त्री पूर्णकलशरत्नशृङ्गारगोद्विजाः॥ ९२॥
भेरीमृदङ्गपटहशङ्खरागादिनिःस्वनाः।
वेदमङ्गलघोषः स्युर्यायिनां कार्यसिद्धिदाः॥ ९३॥

हे नारद! अब मैं यात्रा-समय के शुभाशुभ शकुनों को बतला रहा हूँ, उन्हें सुनो। प्रयाण-समय पर लोमड़ी, कौवा, कबूतर आदि बोलें तो शुभफल होता है॥ ८३॥

यात्रा के समय यदि कोयल, छिपकली, पोतकी (दुर्गा नामक पक्षी), सूकरी (सुंगरिया), खुट्टबढ़ई नामक पक्षी—ये सब बायीं ओर हों तो शुभ होते हैं। किन्तु वानर, कौवा, रीछ, कुत्ता, भासपक्षी (मुर्गा या गीध) दाहिनी ओर दिखने पर शुभ होते हैं॥ ८४॥

चाष (नीलकण्ठ) दक्षिण भाग में शुभ होता है। सभी चौपाए वाम भाग में शुभ होते हैं। किन्तु काले रंग के चौपाये वाम भाग में शुभ नहीं होते हैं। कृकलास (गिरगिट) का दर्शन यात्रा-समय में शुभ नहीं होता है॥ ८५॥

यदि यात्रा करते समय सूकर, खरगोश, गोह, सर्प आदि शब्द करें अथवा इनके विषय में चर्चा हो तो शुभ फल होता है। परन्तु यात्रा से लौटकर प्रवेश करने के समय इन जीवों का दर्शन शुभ होता है, इनका कीर्तन शुभ नहीं होता है॥ ८६॥

यदि यात्रा समय शव (मुर्दा) जा रहा हो और उसके साथ श्मशान चलनेवाले लोग रुदन नहीं कर रहे हों तो यात्रा सफल होती है। किन्तु युद्धभूमि में प्रवेश करते समय रुदन सहित शव के दर्शन हों तो शुभ होता है॥ ८७॥

यदि प्रस्थान के समय पतित, हिजड़ा, जटाधारी व्यक्ति (साधु नहीं), पागल, वमन करता हुआ रोगी, तेल मालिश किया हुआ व्यक्ति, ईंधन-कण्डा, कोयला, हड्डी, चमड़ा, भूसा, चारा, पुआल, धूमयुक्त अग्नि, गुड़, कपास (रुई), नमक, वनस्पति घी, तेल, चर्बी, (ग्रीस आदि), सर्प, वन्ध्या स्त्री, दुःखी व्यक्ति, काना, खुले हुए केशों वाला, भूखा व्यक्ति दिखायी दे तो अशुभ फल होता है तथा सफलता नहीं मिलती है॥ ८८-८९½॥

जलती हुई अग्नि का देखना, शुभ शब्द का सुनाई पड़ना, पुष्प, ईख, मदिरा अथवा सुन्दरी स्त्री, सुगन्ध, पुष्पमाला, अक्षत, चामर, पालकी, राजसिंहासन, सुन्दर भोज्य पदार्थ, उत्तम फल, दाहिनी ओर हाथी, घोड़ा, बकरा तथा बैल का दिखना, मछली, मांस, धुले वस्त्र, श्वेत बैल, ध्वजा, सौभाग्यवती स्त्री, जलपूर्ण कलश, रत्न, शृङ्गार, गो, ब्राह्मण, भेरी, मृदङ्ग, ढोल, नगाड़ा, डफली, शंख, रागरागिन तथा गाने-बजाने की ध्वनि, वेदध्वनि (शान्तिपाठ, स्वस्तिवाचन आदि)—ये सब यात्रा करने वालों को शुभ फलदायक होते हैं॥ ९०-९३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपशकुन दिखने पर यात्री का कर्त्तव्य

आदौ विरुद्धशकुनं दृष्ट्वा यामीष्टदेवताम्।
स्मृत्वा द्वितीये विप्राणां कृत्वा पूजां निवर्त्तयेत्॥ ९४॥

१. यदि यात्री को प्रथम बार अपशकुन हो तो अपने इष्टदेव का स्मरण करके फिर आगे की यात्रा करनी चाहिये।

२. यदि दूसरी बार भी यात्री को अपशकुन हो तब विद्वान् ब्राह्मणों की पूजा करके पुनः यात्रा आरम्भ करे।

३. किन्तु यदि तीसरी बार भी अपशकुन हो तो यात्रा को स्थगित करके लौट ही आना उचित होता है॥ ९४॥

यात्रा के समय छींक का फल

सर्वदिक्षु क्षुतं नेष्टं गोक्षुतं निधनप्रदम्।
अफलं यद् बालवृद्धरोगीपीनस वैकृतम्॥ ९५॥

यात्रा के समय छींक किसी भी दिशा में हो नेष्ट फल देती है, परन्तु गाय की छींक मृत्युकारक होती है। बालक, वृद्ध, एवं सर्दी-जुकाम के रोगी की छींक निष्फल होती है॥ ९५॥

विजयी राजा का कर्त्तव्य

परस्त्रीद्विजदेवस्वं तत्स्पृशेद् दिग्गजाश्वकान्।
हन्यात् पुर प्राप्तो न स्त्रीर्नित्यं निरायुधान्॥ ९६॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां यात्राध्यायः त्रिंशत्तमः॥ ३०॥

जब राजा विजयी होकर शत्रु की राजधानी में प्रवेश करे तब यदि वह शत्रुराजा परस्त्रियों का स्पर्श करनेवाला (उनका अपमान करनेवाला, उनके सतीत्व को नष्ट करनेवाला हो) अथवा ब्राह्मणों एवं देवालयों की सम्पत्ति का हरण करनेवाला हो अथवा यदि उसने यायी राजा के छोड़े हाथी या घोड़ों को बाँध लिया हो (अथवा टैंकों आदि पर कब्जा किया हो) तो उसे अवश्य ही मार डालना चाहिये।

विजयी राजा को अथवा सैनिकों को उस नगर एवं देश की स्त्रियों तथा शस्त्रविहीन नागरिकों को न तो मारना चाहिये और न उन्हें प्रताड़ित एवं अपमानित करना चाहिये॥ ९६॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के तीसवें यात्राध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ३०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एकत्रिंशोऽध्यायः

प्रवेशाध्यायः

नववास्तुप्रवेश

आदौ सौम्यायने कार्यं नववास्तुप्रवेशनं।
विधाय पूर्वदिवसे वास्तुपूजा बलिक्रियाम्॥ १॥

गृहस्वामी को पूर्व दिवस में वास्तुपूजा, वास्तुबलि आदि सम्पन्न करके तब उत्तरायण में शुभ मुहूर्त में नवभवन में प्रवेश (गृहप्रवेश) करना चाहिये॥ १॥

युद्धयात्रा की निवृत्ति पर राजा का राजधानी में प्रवेश

राज्ञा यात्रानिवृत्तौ च बलिपूजादि कारयेत्।
मृदुध्रुवर्क्षे मन्दार्के विजयी नगरं विशेत्॥ २॥

विजयी राजा को अपनी राजधानी में आकर बलि पूजादिकर मृदु ध्रुव-नक्षत्रों (मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा, रोहिणी) में प्रवेश करना चाहिये॥ २॥

गृहप्रवेश में मास-विचार

माघफाल्गुनवैशाखज्येष्ठमासेषु शोभनः।
प्रवेशो मध्यमो ज्ञेयः सौम्यकार्तिकमासयोः॥ ३॥

१. माघ, फाल्गुन, वैशाख तथा ज्येष्ठ के महीनों में गृहप्रवेश करना शुभ होता है।
२. मार्गशीर्ष तथा कार्तिक मासों में गृहप्रवेश मध्यम होता है॥ ३॥

गृहप्रवेश में विहित नक्षत्र एवं लग्नादि

वस्वीज्यान्त्येन्दुवरुणत्वाष्ट्रमित्रस्थिरोडुषु।
शुभः प्रवेशो देवेज्यशुक्रयोर्दृश्यमानयोः॥ ४॥
व्यर्कारवारतिथिषु रिक्ताऽमा वर्जितेषु च।
दिवा वा यदि वा रात्रौ प्रवेशो मङ्गलप्रदः॥ ५॥
चन्द्रताराबलोपेतो पूर्वोक्तवर्जितेषु च।
स्थिरलग्ने स्थिरांशे च नैधने शुद्धिसंयुते॥ ६॥
त्रिकोणे केन्द्रगत्र्याये सौम्यैस्त्रायायारिगैः खलैः।
लग्नान्त्यष्टमषष्टस्थ वर्जितेन हिमांशुना॥ ७॥
कर्तुर्वा जन्मभे लग्ने ताभ्यामुपचयेऽपि वा।
प्रवेशलग्ने स्याद् वृद्धिरन्यभे शोक निःस्वता॥ ८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मृगशिरा, रेवती, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा, चित्रा, अनुराधा, रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्र—इन नक्षत्रों में तथा गुरु-शुक्र के उदय रहते हुए गृहप्रवेश शुभ होता है।

रविवार एवं मंगलवार को छोड़कर शेष वार शुभ हैं। रिक्ता (४-९-१४) तथा अमावस्या—ये तिथियाँ वर्जित हैं, शेष तिथियाँ शुभ हैं। दिन में अथवा रात्रि में किसी भी समय शुभ लग्न में गृह प्रवेश किया जाय, मंगलप्रद ही होता है॥ ५॥

कर्त्ता को चन्द्रबल एवं ताराबल अपेक्षित है। स्थिर राशि की लग्न, स्थिर नवांश शुभ होता है। अष्टम भाव में कोई भी अशुभ ग्रह न हो, शुभ ग्रह केन्द्र (१-४-७-१०) भावों में हों तथा त्रिकोण (५-९) में हों। पापग्रह तृतीय, षष्ठ तथा एकादश भाव में हो। चन्द्रमा लग्न से ६। ८। १२वें भाव में नहीं होना चाहिये॥ ६-७॥

अथवा कर्त्ता (यजमान) व्यक्ति की जन्म लग्न अथवा जन्मकालीन चन्द्रराशि से किंवा दोनों से उपचय स्थान में (३-६-१०-११) गृहप्रवेश की लग्नराशि हो तब ऐसे मुहूर्त (लग्न) में गृहप्रवेश करने से सब प्रकार से सुख-समृद्धि प्राप्त होती है। यदि इससे भिन्न स्थिति के मुहूर्त में गृहप्रवेश किया जाय तो शोक तथा निर्धनता की प्राप्ति होती है॥ ८॥

गृहप्रवेशविधि

दर्शनीयं गृहं रम्यं विविधैर्मङ्गलस्वनैः।
कृत्वार्कवामतो विद्वान् भृङ्गारं वामतो विशेत्॥ ९॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां प्रवेशाध्यायो एकत्रिंशत्तमः॥ ३१॥

जिस नवीन घर में प्रवेश करना हो उसको चित्र आदि से सुसज्जितकर रमणीय तथा दर्शनीय बनाकर वेदध्वनि, मंगलपाठ (शान्तिपाठ तथा स्वस्ति-वाचन) पूर्वक मंगलवाद्य, एवं गायन करते हुए वामार्क का विचार करके भृङ्गार (जलपूर्ण कलश या गंगासागर या झारी) के ऊपर दीपक रखकर (सपत्नीक) प्रवेश करे॥ ९॥

विमर्श—इस श्लोक में वामरवि अथवा वामार्क का विचार करने को कहा गया है। इस सम्बन्ध में रामदैवज्ञ तथा अन्यों के कथनों को उद्धृत किया जा रहा है—

'वामो रविर्मृत्युसुतार्थलाभतोऽर्के पञ्चमे प्राग्वदनादिमन्दिरे।'

—मु० चि०

'रन्ध्रात् पुत्रात् धनादायात् पञ्चस्वर्के स्थिते क्रमात्।
पूर्वाशादिमुखं गेहं विशेद् वामो भवेद् यतः॥'
'प्रवेशे कलशेऽर्कर्क्षात् पञ्चनागाष्टपट्क्रमात्।
अशुभं च शुभं ज्ञेयं अशुभं च शुभन्तथा॥'

—ग्रन्थान्तर

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इन सब वचनों का सारांश यह है कि—१. यदि घर का मुख्य द्वार पूर्व दिशा की ओर हो तो गृहप्रवेश लग्न से सूर्य की स्थिति अष्टम भाव से लेकर पाँच स्थानों (८, ९, १०, ११ तथा १२वें भाव में से किसी में) हो तो सूर्य वामस्थ माना जाता है।

२. यदि घर का मुख्य द्वार दक्षिण दिशा में हो, तो तब गृह प्रवेश लग्न से पाँचवें भाव से आरंभ कर लगातार पाँच भावों में से किसी में (५-६-७-८-९) सूर्य के होने पर वामस्थ सूर्य होता है।

३. यदि गृह का मुख्य द्वार पश्चिम दिशा में हो द्वितीय भाव से लेकर पाँच भावों (२-३-४-५-६) में किसी में भी सूर्य हो तो वामरवि होने के कारण गृहप्रवेश शुभ होता है।

४. यदि गृह का प्रवेशद्वार उत्तर दिशा में हो तो आयभाव से लेकर पाँच स्थानों तक (११-१२-१-२-३) सूर्य का होना वाम सूर्य कहा जाता है। इस प्रकार प्रवेश के समय सूर्य वाम होना चाहिये। आगे की कुण्डलियों में वामस्थ रवि दिखाया गया है।

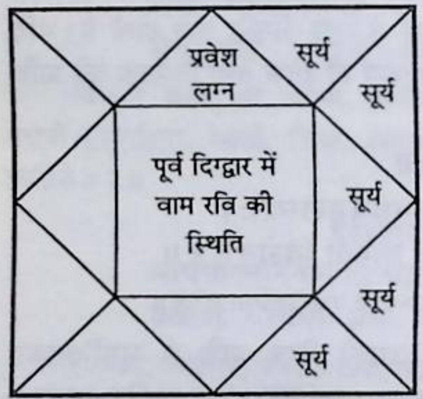

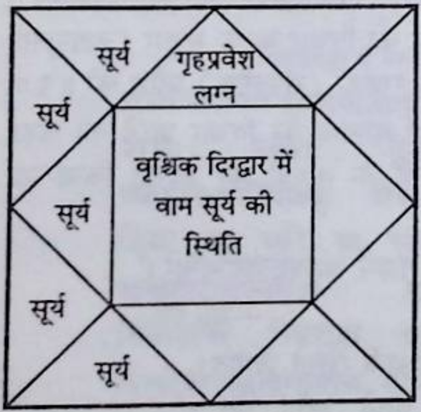

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के इकतीसवें प्रवेशाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ३१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

द्वात्रिंशोऽध्यायः

वर्षाप्रश्नाध्यायः

अतिवृष्टियोग

वर्षाप्रश्ने वारिभेऽब्जे पूर्णे वै लग्नगेऽपि वा।
केन्द्रगे वा शुक्लपक्षे चातिवृष्टिः शुभेक्षिते॥ १॥

जब यह प्रश्न किया जाय कि वर्षा कब होगी, कैसी होगी? तो प्रश्न कुण्डली से इस प्रकार विचार करें। यदि वर्षा प्रश्न में उक्त समय पर गोचर का चन्द्रमा जलराशि (कर्क-वृश्चिक-मकर-कुम्भ-मीन) में हो अथवा लग्न में चन्द्रमा हो अथवा शुक्लपक्ष का चन्द्रमा केन्द्र में बैठा हो, तथा उसपर शुभग्रहों की दृष्टि हो तोअतिमात्रा में वृष्टि होती है॥ १॥

पापदृष्ट चन्द्र तथा शुक्र का फल

अल्पवृष्टिः पापदृष्टे प्रावृट्काले चिराद् भवेत्।
चन्द्रवद् भार्गवे सर्वमेवंविधगुणान्विते॥ २॥

यदि उक्त जलराशिगत चन्द्रमा पर वर्षाकाल में किसी पाप ग्रह की दृष्टि हो तो थोड़ी मात्रा में वर्षा होती है। चन्द्र की भाँति जलचर राशि का शुक्र अधिक वृष्टिकर तथा पाप दृष्ट होने पर अल्प वृष्टिकारक होता है॥ २॥

शुक्र एवं शनि से चन्द्र के समसप्तक का फल

प्रावृषीन्दुः सितात्सप्तमराशिगः शुभवीक्षितः।
मन्दात् त्रिकोणसप्तस्थो यदि वा वृष्टिकृद् भवेत्॥ ३॥

यदि वर्षाऋतु में चन्द्रमा शुक्र से सातवीं राशि पर होकर शुभग्रहों से दृष्ट हो तो वर्षा होती है। अथवा शनि से चन्द्रमा त्रिकोण (नव-पंचम) हो तो भी वर्षा होती है॥ ३॥

बुध-शुक्र की युति का फल

सद्यो वृष्टिकरः शुक्रो यदा बुधसमीपगः।
तयोर्मध्यगते भानौ तदा वृष्टिविनाशनम्॥ ४॥

यदि बुध एवं शुक्र की युति हो तो किसी भी ऋतु में शीघ्र ही (थोड़ी-बहुत) वर्षा होती है, किन्तु यदि बुध एवं शुक्र के मध्य में सूर्य चल रहा हो तो वर्षा में अवरोध होता है॥ ४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शुक्र के वर्षाकारक नक्षत्र

मघादि पञ्चधिष्ण्यस्थः पूर्वास्वातीत्रये परे।
प्रवर्षणं भृगुः कुर्यात् विपरीते न वर्षति॥५॥

यदि मघा-पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, इन हस्त, चित्रा—इन नक्षत्रों में शुक्र पूर्व दिशा में उदित हो तो वर्षाकारक होता है। यदि स्वाति, विशाखा, अनुराधा—तीन नक्षत्रों का शुक्र पश्चिम में उदित हो तो भी वर्षाकारक होता है, अन्यथा वर्षाकारक नहीं होता है॥५॥

सूर्य से आगे-पीछे ग्रहों का फल

पुरतः पृष्ठतो भानोर्ग्रहा यदि समीपगाः।
तदा वृष्टिं प्रकुर्वन्ति न चैते प्रतिलोमगाः॥६॥

यदि अन्य ग्रह सूर्य के समीप आगे या पीछे हों तथा वे मार्गी हों तो वर्षा के सूचक होते हैं, परन्तु वक्रीग्रह सूर्य के समीप आगे-पीछे होने पर वर्षा नहीं होती है॥६॥

शुक्र के चार एवं आर्द्रार्क का फल

सौम्यमार्गगतः शुक्रो वृष्टिकृन्नतु याम्यगः।
उदयास्तेषु वृष्टिः स्याद् भानोरार्द्राप्रवेशने॥७॥

यदि शुक्र उत्तरचारी हो तो वर्षा होती है, किन्तु दक्षिणचारी शुक्र वर्षा नहीं करता है। शुक्र जब उदित अथवा अस्त होता है, तब भी वर्षा होती है। इसी प्रकार सूर्य जब आर्द्रा नक्षत्र में प्रविष्ट होता है तब भी वर्षा होती है॥७॥

आर्द्राप्रवेश का फल

विपत्तिः सस्यहानिः स्यादहन्यार्द्राप्रवेशने।
सन्ध्ययोः सस्यवृद्धिः स्यात्सर्वसम्पन्नृणां निशि॥८॥
स्तोकवृष्टिरनर्घः स्यादवृष्टिः सस्यसम्पदः।
आर्द्रोदये प्रभिन्ने चेद्भवेदीतिर्न संशयः॥९॥
चन्द्रेज्येज्ञेऽथवा शुक्रे केन्द्रे त्वीतिर्विनश्यति।

१. यदि दिन के समय आर्द्रा में सूर्य का प्रवेश हो तो फसलों की हानि होती है। २. यदि दोनों सन्ध्याओं (प्रातः-सायं) के समय में आर्द्रा प्रवेश हो तो फसल भरपूर होती है। ३. रात के समय आर्द्रा में सूर्य के प्रवेश से सभी प्रकार की सम्पन्नता एवं समृद्धि बढ़ती है॥८॥

१. यदि आर्द्रा प्रवेश के समय स्तोकवृष्टि (बूँदा-बाँदी) हो तो महँगाई बढ़ती है। २. यदि आर्द्रा प्रवेश के समय वर्षा न हो तो धन-सम्पत्ति बढ़ती है। ३. यदि सूर्य के आर्द्रा में प्रवेश के समय आर्द्रा नक्षत्र चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र या शनि में से किसी ग्रह से प्रभिन्न (भेदित) हो तो सात प्रकार की ईति (अतिवृष्टि, अनावृष्टि, चूहों की अधिकता,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

टिड्डी का प्रकोप, पक्षियों का प्रकोप, देश में अराजकता, दूसरे देश का अपने देश पर आक्रमण) से जनता में भय होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है॥ ९-९½ ॥

पूर्वाषाढ़ के सूर्य में बादल होने का फल

पूर्वाषाढ़ागतो भानुर्जीमूतैर्परिवेष्टितः॥ १०॥
वर्षत्यार्द्रादिमूलान्तं प्रत्यक्षं प्रत्यहं तथा।

जिस समय पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र पर सूर्य प्रविष्ट हों, उस समय यदि आकाश मेघाच्छादित रहे तो आगे चलकर छह मास के पश्चात् जब सूर्य आर्द्रा में प्रविष्ट होंगे तब से लेकर प्रतिदिन जब तक सूर्य मूलनक्षत्रपर्यन्त (अर्थात् आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा तथा मूल नक्षत्रों में सूर्य के रहनेपर) लगातार (लगभग छह मास) प्रतिदिन वर्षा होती रहती है॥ १०-१०½ ॥

रेवती नक्षत्र के सूर्य में वर्षा होने का फल

वृष्टिश्च पौष्णभे तस्माद् दशर्क्षेषु न वर्षति॥ ११॥

यदि रेवती नक्षत्र में सूर्य प्रवेश के समय वर्षा हो जाय तो रेवती से दस नक्षत्रों तक (अर्थात् रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, तथा श्लेषा के सूर्य तक) वर्षा नहीं होती है॥ ११ ॥

कर्क-सिंह-कन्या सङ्क्रमण के समय बादलों का फल

सिंहं भिन्ने कुतो वृष्टिरभिन्ने कर्कटे कुतः।
कन्योदये प्रभिन्ने चेत् सर्वथा वृष्टिरुत्तमा॥ १२॥

यदि सिंह राशि में सूर्य का सङ्क्रमण हो और उस समय वर्षा या बादल हों तो आगे वर्षा अच्छी होती है। यदि कर्क संक्रमण में वर्षा न हो तो आगे वर्षा नहीं होती है। कन्या संक्रान्ति के समय वर्षा हो तो आगे उत्तम वर्षा होती है॥ १२ ॥

उत्तराभाद्र के सूर्य से भरणी के सूर्यों तक वर्षा एवं बादल का फल

अहिर्बुध्न्यं पूर्वसस्यं परसस्यञ्च रेवती।
भरणी सर्वसस्यञ्च सर्वनाशाय चाश्विनी॥ १३॥

उत्तर भाद्रपद के सूर्य में बादल हो तो पहली फसल नहीं होती, रेवती के सूर्य में बादल हों तो दूसरी फसल बिगड़ जाती है तथा भरणी एवं अश्विनी के संक्रमण की वर्षा सर्वनाशक होती है॥ १३ ॥

गुरु-शुक्र के सम सप्तक का फल

गुरोः सप्तमराशिस्थः प्रत्यग्रो भृगुजो यथा।
तदातिवर्षणं भूरि प्रावृट्काले बलोज्झिते॥ १४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि गुरु एवं शुक्र में सम सप्तक हो, शुक्र का उदय पश्चिम में हो तथा शुक्र निर्बल हो तो वर्षाकाल में पर्याप्त वर्षा होती है ॥ १४ ॥

सूर्य-चन्द्र के मण्डल के साथ मेढक बोलने का फल

आसन्नमर्कशशिनोः परिवेषगतोत्तरा।
विद्युत्प्रपूर्णं मण्डूकास्त्वनावृष्टिर्भवेत्तदा ॥ १५ ॥

यदि सूर्य एवं चन्द्रमा मण्डल में (घेरे में) हों तथा उस समय उत्तर दिशा में बिजली चमके तथा मेढक बोलें तो भारी शब्द के साथ घनघोर वर्षा होती है ॥ १५ ॥

वर्षाकारक प्राकृतिक लक्षण

यदा प्रत्यङ्गताभेकाः स्वसद्मोपरि संस्थिताः।
पतन्ति दक्षिणस्था वा भवेद् वृष्टिः तदाऽचिरात् ॥ १६ ॥
नखैर्लिखन्तो मार्जाराश्चैवं निर्लोभसंस्थिताः।
सेतुबन्धपरा बालाः सद्यो वै वृष्टिहेतवः ॥ १७ ॥
पिपीलिका श्रेणयश्छिन्ना व्यवायः सर्पयोस्तदा।
द्रुमाधिरोहः सर्पाणां प्रतीन्दुर्वृष्टिसूचकाः ॥ १८ ॥
उदयास्तमये काले विवर्णोऽर्कोऽथवा शशी।
मधुवर्णोऽतिवायुश्चेदतिवृष्टिर्भवेत्तदा ॥ १९ ॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां सद्योवृष्टिलक्षणाध्यायः द्वाविंशत्तमः ॥ ३२ ॥

यदि मेढक पश्चिम दिशा अथवा दक्षिण दिशा की ओर से उछल-कूद करने लगें, अपने घरों से निकल पड़ें तो शीघ्र ही वर्षा होती है ॥ १६ ॥

यदि बिल्ली बिना किसी कारण के अपने नखों से भूमि खोदने लगे अथवा बालक अपने खेल-खेल में पुल बनाने लगें तो शीघ्र ही वर्षा होगी—ऐसा जानना चाहिये ॥ १७ ॥

यदि चीटियाँ एकदम से सब दिशाओं में जाने लगें (तितर-बितर होकर चलें), सर्प आपस में आलिंगन करें अथवा सर्प पेड़ों पर चढ़ने लगें तथा चन्द्रमा के सामने दूसरा चन्द्र दिखलायी पड़े तो वर्षा होगी ॥ १८ ॥

यदि उदयास्त के समय सूर्य या चन्द्रमा की कान्ति फीकी हो अथवा उनका रंग मधु-जैसा हो, अधिक वायु चल रही हो तो शीघ्र ही अतिवृष्टि होती है ॥ १९ ॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के बत्तीसवें वर्षाप्रश्नाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई ॥ ३२ ॥

●

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

कूर्मविभागाध्यायः

कूर्म के नौ मण्डलों का कथन

प्राङ्मुखस्य तु कूर्मस्य नवाङ्गेषु धरामिमाम्।
विभज्य नवधाखण्डमण्डलानि प्रदक्षिणम्॥ १॥

यह पृथ्वी कूर्म पर प्रतिष्ठित है, वह कूर्म पूर्व की ओर मुख करके स्थित है। अतः मेदिनी-ज्योतिष में शुभाशुभ फल जानने के लिये कूर्मरूपी भारतवर्ष के नौ विभाग (खण्ड) या मण्डल मान्य किये गये हैं। इन विभागों को प्रदक्षिण क्रम से विभाजित किया गया है॥ १॥

विमर्श—१. पूर्व दिशा में कूर्म का मुख है, फिर २. प्रदक्षिण क्रम से आग्नेय में उसका दाहिना हाथ, ३. दक्षिण दिशा में कूर्म का दक्षिण पार्श्व, ४. नैर्ऋत्यकोण में उसका दाहिना पैर, ५. पश्चिम में कूर्म की पूँछ, ६. वायव्य में बायाँ पैर, ७. उत्तर में वामपार्श्व, ८. ईशान में बायाँ हाथ तथा ९. मध्य में नाभि प्रतिष्ठित है। कूर्म का अर्थ कच्छप (कछुवा Turtle, Tortaise) होता है।

१. कूर्म में नाभिमण्डल के देश

अन्तर्वेदी च पाञ्चालं नीपञ्च हस्तिनपुरम्।
रुद्राक्षं शिवकं भूतं तस्येदं नाभिमण्डलम्॥ २॥

नाभिमण्डल के अन्तर्गत अन्तर्वेदी (मध्यदेश), पाञ्चाल (पंजाब), नीप (नेपाल), हस्तिनापुर (दिल्ली), रुद्राक्ष (लद्दाख), शिवकम् (सिक्किम), भूत (भूटान) ये सब भूभाग आते हैं॥ २॥

विमर्श—वराहमिहिर ने विस्तारपूर्वक नाभिमण्डल के देशों का उल्लेख किया है—

'भद्रारिमेदमाण्डव्यशाल्वनीपोज्जिहानसंख्याताः ।
मरुवत्सघोषयामुनसारस्वतमत्स्यमाध्यमिकाः ॥ १॥
माधुरकोपज्ज्योतिषधर्मारण्यानि शूरसेनाश्च।
गौरग्रीवोद्देहिकपाण्डुगुडाश्वत्थपाञ्चालाः ॥ २॥
साकेतकुरुकालकोटिकुकुराश्च पारियात्रनगः।
औदुम्बरकापिष्ठलगजाह्वयाश्चेति मध्यमिदम्॥ ३॥'

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

२-३. मुखमण्डल तथा दक्षिण बाहुमण्डल के देश

प्राच्यां मगधलाटादिदेशास्तन्मुखमण्डलम्।
स्त्रीकलिङ्गकिराताख्या देशास्तद्बाहुमण्डलम्॥ ३॥

मगध तथा लाटदेश पूर्व दिशा में मुखमण्डल में है तथा स्त्रीदेश, कलिंग तथा किरात ये देश दक्षिण भुजा में (अग्निकोण में) स्थित हैं॥ ३॥

४-५. कूर्म में दक्षिणपादमण्डल के देश

अवन्ती द्रविडा भिल्ला देशास्तत्पार्श्वमण्डलम्।
गौडकोङ्कणशाल्वान्ध्रपौण्ड्रस्तत्पादे मण्डलम्॥ ४॥

अवन्ती, द्रविड, भिल्ल—ये देश एकपार्श्व में तथा गौड, कोंकण, शाल्व, आन्ध्र, पौण्ड्र—ये दाहिने पाद में स्थित हैं॥ ४॥

६-७. पुच्छ एवं वामपाद मण्डल के देश

सिन्धुकाशीमहाराष्ट्रसौराष्ट्राः पुच्छमण्डलम्।
पुलिन्दभीष्मयवनगुर्जराः पादमण्डलम्॥ ५॥

सिन्धु देश, काशी, महाराष्ट्र, सौराष्ट्र—ये पुच्छमण्डल के देश हैं तथा पुलिन्द भीष्म, यवन, गुर्जर—ये पादमण्डल (वामपाद) के देश हैं॥ ५॥

८-९. वामपार्श्व एवं वामबाहु के देश

कुरुकाश्मीरमाद्रेयमत्स्यास्तत्पार्श्वमण्डलम्।
खशाङ्गवङ्गवाह्लीकं काम्बोजाः पाणिमण्डलम्॥ ६॥

कुरु, काश्मीर, माद्रेय, मत्स्य—ये कूर्म के वामपार्श्व के देश हैं। खस, अङ्ग, वङ्ग, वाह्लीक तथा काम्बोज—ये वामहस्त के देश हैं॥ ६॥

कृत्तिकादि तीन-तीन नक्षत्रों के नौ विभाग

कृत्तिकादीनि धिष्ण्यानि त्रीणि त्रीणि क्रमा न्यसेत्।
नाभेर्दिक्षु नवाङ्गेषु पापैर्दुष्टं शुभैः शुभम्॥ ७॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां कूर्मविभागाध्यायो त्रयस्त्रिंशत्तमः॥ ३३॥

इन नौ अंगों में कृत्तिकादि तीन-तीन नक्षत्रों का न्यास करे। इनमें प्रथम तीन नक्षत्र नाभि लिखे, फिर पूर्वादि आठ दिशाओं में क्रमशः तीन-तीन नक्षत्र लिखना चाहिये।

जिस-जिस अंग के नक्षत्रों पर पापग्रहों की युति एवं दृष्टि हो, उनसे सम्बन्धित देशों में अशुभ फल होता है तथा जिन-जिन अंगों के नक्षत्रों पर शुभग्रहों की स्थिति या दृष्टि हो, उन-उन नक्षत्रों से सम्बद्ध देशों में शुभफल होता है॥ ७॥

विमर्श—आचार्य वराहमिहिर ने इन नौ मण्डलों में स्थित देशों का विवरण विस्तारपूर्वक दिया है, उनके अनुसार कृत्तिका आदि तीन-तीन नक्षत्रों का एक-एक

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वर्ग बनाकर मेरु के दक्षिण भाग में स्थित भारतवर्ष को मध्य में स्थित होने की कल्पना करें। फिर अन्य देशों को पूर्व आदि दिशाओं में स्थित मान लें। यथा—

'नक्षत्रत्रयवर्गैराग्नेयाद्यैर्व्यवस्थितैर्नवधा ।
भारतवर्षे मध्यप्रागादिविभाजिता: देशा: ॥'

गर्गाचार्य ने और अधिक स्पष्टतापूर्वक कहा है—उनके शब्दों में १. कृत्तिकादि तीन नक्षत्र मध्यदेश का गण है। अब इनमें पापग्रहों का योग होता है तो मध्यदेश के निवासियों को कष्ट होता है। २. आर्द्रादि तीन नक्षत्र जब पाप पीड़ित होते हैं तो कूर्म के पूर्व भाग में स्थित लोगों को पीड़ा होती है। ३. आश्लेषादि तीन नक्षत्र अग्निकोण के देशों का नाश पापपीड़ित होने पर करते हैं। ४. उत्तरा-फाल्गुन्यादि तीन नक्षत्र दक्षिण के गण में हैं। अत: इनके पापपीड़ित होने पर उक्त विभाग के देशों को पीड़ा होती है। ५. स्वात्यादि तीन नक्षत्रों के पापपीड़ित होने पर नैर्ऋत्य कोण के देश पीड़ित होते हैं। ६. ज्येष्ठादि तीन नक्षत्र जब पापपीड़ित होते हैं, तब पश्चिम भाग की जनता पीड़ित होती है। ७. जब उत्तराषाढ़ा आदि तीन नक्षत्र पापपीड़ित होते हैं, तब वायव्य खण्ड के लोगों को पीड़ा होती है। ८. जब शतभिषादि तीन नक्षत्रों को पापग्रह आक्रान्त करते हैं, तब उत्तर विभाग के देश कष्ट प्राप्त करते हैं। ९. जब रेवती, अश्विनी तथा भरणी नक्षत्रों पर पापग्रहों की स्थिति तथा दृष्टि होती है, तब ईशान विभाग में स्थित देश के लोगों एवं पशु आदि को पीड़ा होती है—

'कृत्तिकाद्यैस्त्रिनक्षत्रैर्भगै: नवभि: क्षिति:।
कल्पिता मध्यदेशादौ प्रागादिक्रमयोगत: ॥ १ ॥
कृत्तिकाद्यस्त्रिनक्षत्रो मध्यदेशे गणो यदा।
पापैरुपहतो हन्ति मध्यदेशाखिलौस्तदा ॥ २ ॥
रौद्राधिको हन्ति पूर्वां सर्पाद्या: पूर्वदक्षिणाम्।
अर्म्णाद्यस्तथा याम्यां स्वात्याद्यो दक्षिणापराम् ॥ ३ ॥
ज्येष्ठाद्य: पश्चिमामाशां वैश्वाद्यश्चापरोत्तराम्।
वारुणाद्यो हन्ति सौम्यां पौष्णाद्य: शूलिनो दिशम् ॥ ४ ॥'

वराहमिहिर ने संक्षेप में नौ विभागों के नौ देशों के नाम देकर सुगमतापूर्वक समझाया है। उनके अनुसार यदि कृत्तिकादि तीन-तीन नक्षत्रों के नौ वर्ग पापपीड़ित हों तो क्रमश: १. पाञ्चाल, २. मगध, ३. कलिङ्ग, ४. अवन्ती, ५. आनर्त्त, ६. सिन्धु तथा सौवीर, ७. हार हौर, ८. मद्रदेश एवं ९. कौणिन्द (कौलिन्द) देश के राजाओं का नाश होता है। अर्थात् इन देशों की सरकारों का पतन होता है। यथा—

'वर्गैराग्नेयाद्यै: क्रूरग्रहपीडितै: क्रमेण नृपा:।
पाञ्चालो मागधिक: कालिङ्गश्च क्षयं यान्ति ॥ १ ॥
आवन्तोऽथानर्त्तो मृत्युं चायाति सिन्धु सौवीर:।
राजा च हारहौरौ मद्रेशोऽन्यश्च कौणिन्द: ॥ २ ॥'

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्पष्टता के लिये दिग्विभाग का चक्र देखें।

८. ईशान रेवती अश्विनी भरणी	२. पूर्व आर्द्रा पुनर्वसु पुष्य	३. आग्नेय आश्लेषा मघा पूर्वाफाल्गुनी
९. उत्तर शतभिषा पूर्वाभाद्रपद उत्तराभाद्रपद	१. मध्य कृत्तिका रोहिणी मृगशिरा	४. दक्षिण उत्तराफाल्गुनी हस्त चित्रा
७. वायव्य उत्तराषाढ़ा श्रवण धनिष्ठा	६. पश्चिम ज्येष्ठा मूल पूर्वाषाढ़ा	५. नैर्ऋत्य स्वाति विशाखा अनुराधा

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के तैंतीसवें कूर्मविभागाध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ३३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चतु:त्रिंशत्तमोऽध्याय:

उत्पाताध्याय:

उत्पातों के लक्षण में मूर्ति के विकार

देवता यत्र नृत्यन्ति पतन्ति प्रज्वलन्ति च।
मुहू रुदन्ति गायन्ति प्रस्विद्यन्ति हसन्ति च॥ १॥
वमन्त्यग्निं तथा धूमं स्नेहं रक्तं पयोजलम्।
अधोमुखाश्च तिष्ठन्ति स्थानात्स्थानं व्रजन्ति च॥ २॥
एवमाद्या हि दृश्यन्ते विकाराः प्रतिमासु च।

१. देवमूर्तियों का नृत्य करना। २. जब देवमूर्ति बिना किसी प्रत्यक्ष कारण के गिर पड़े। ३. या देवमूर्ति जलने लगे। ४. देवमूर्ति बार-बार रोने लगे। ५. गाने लगे। ६. देवमूर्ति के प्रस्वेद (पसीना) निकले। ६. देवमूर्ति हँसने लगे। ७. उनके मुख से अग्नि की ज्वाला निकलने लगे। ८. अथवा देवमूर्ति के मुख से धूम, घी-तेल, रक्त, दूध या जल का वमन होने लगे। ९. अथवा देवप्रतिमा औंधे मुख हो जाय। १०. अथवा देवमूर्ति एक स्थान से दूसरे स्थान में अपने आप चली जाय। इस प्रकार के विकार जब किसी प्रतिमा में प्रकट हों तो उसे उत्पात समझना चाहिये॥ १-२½॥

अन्तरिक्ष एवं भूमि-सम्बन्धी उत्पात

गन्धर्वनगरञ्चैव दिवानक्षत्रदर्शनम्॥ ३॥
महोल्कापतनं काष्ठतृणरक्तप्रवर्षणम्।
गन्धर्वगेहे दिग्धूमं भूकिस्यं दिवानिशि॥ ४॥
अनग्नौ च स्फुल्लिङ्गाश्च ज्वलनञ्च विनेन्धनम्।
निशीन्द्रचापमण्डूकशिखरं श्वेतवायसः॥ ५॥

आकाश में गन्धर्वनगर (आकाश में बादलों में नगर-सा बसा हुआ) दिखायी देना, दिन में नक्षत्रों (तारों) का दिखना, बड़ी-बड़ी उल्काओं का गिरना, आकाशसे काठ, तृण, तथा रक्त (अथवा मछलियों आदि की) की वर्षा होना। गन्धर्वगेह (आकाश) में धुआँ दिखलायी पड़ना, भूकम्प आना, बिना आग के चिनगारियाँ निकलती हुई दिखलायी देना, बिना ईंधन के आग जलती हुई दिखायी देना, रात्रि के समय आकाश में इन्द्रधनुष का दिखायी देना, आकाश से मेढकों की वर्षा होना, आकाश में शिखर तथा श्वेत कौवा दिखायी देना—ये सब उत्पात हैं॥ ३-५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चतुष्पाद-सम्बन्धी उत्पात

दृश्यन्ते विस्फुलिङ्गाश्च गोगजाश्वोष्ट्रगात्रतः।
जन्तवो द्वित्रिशिरसो जायन्ते वा वियोनिषु॥ ६॥

गाय बैल, हाथी, घोड़ा, ऊँट आदि के शरीर से चिनगारियाँ निकलती दिखायी दें। दो-तीन शिर के पशु या बालक का जन्म होना अथवा एक जाति के पशु में दूसरी जाति के पशु का शावक पैदा होना (जैसे कि गाय के शरीर से भैंसे के बच्चे का प्रसव होना)—ये सभी उत्पात हैं॥ ६॥

प्रतिसूर्यादि उत्पात

प्रतिसूर्याश्चतसृषु स्युर्दिक्षु युगपद्रवेः।
जम्बूकग्रामसंवासः केतूनाञ्च प्रदर्शनम्॥ ७॥

१. आकाश में सूर्य के विपरीत दिशा में दूसरा सूर्य (प्रतिसूर्य) दिखलायी पड़ना, एक ही समय एक साथ चारों दिशाओं में इन्द्रधनुष के दर्शन होना—ये सब उत्पात हैं।

२. जम्बुकों (गीदड़ या सियार) का गाँव में निवास करना अथवा अकारण प्रवेश कर जाना भी उत्पात है।

३. धूमकेतुओं का दर्शन भी उत्पात होता है॥ ७॥

पक्षियों-सम्बन्धी उत्पात

काकानामाकुलं रात्रौ कपोतानां दिवा यदि।
अकाले पुष्पिता वृक्षा दृश्यन्ते फलिता यदि॥ ८॥
कार्यं तच्छेदनं तत्र ततः शान्तिर्मनीषिभिः।

१. यदि रात्रि के समय कौवों का कोलाहल तथा दिन के समय कपोतों (कबूतरों) का हल्ला सुनाई पड़े तो उत्पात होता है। २. यदि किसी वृक्ष में असमय में फल लगें तो वह भी उत्पात जानना चाहिये॥ ८॥

अकाल में फल देनेवाले वृक्ष को काट देना चाहिये तथा प्राचीन विद्वानों के अनुसार इन उत्पातों की शान्ति भी करानी चाहिये॥ ८½॥

उत्पातों का सामान्य फल

एवमाद्या महोत्पाता बहवः स्थाननाशदाः॥ ९॥
केचिन्मृत्युप्रदाः केचिच्छत्रुभ्यश्च भयप्रदाः।
मध्याद् भयं पशोर्मृत्युः क्षयोऽकीर्तिः सुखाऽसुखम्॥ १०॥
अनैश्वर्यं चान्नहानिरुत्पातभयमादिशेत्।

इनमें जो इस अध्याय में उत्पात वर्णित है उसमें कुछ उत्पातों के फल स्थाननाश (स्थायी आवास का छूट जाना) होता है। कुछ उत्पात मृत्युकारक होते हैं। कुछ

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उत्पात शत्रुओं से भय उत्पन्न करते हैं। कुछ उत्पात सामान्य लोगों से भी भय देते हैं। पशुओं एवं वाहनों का नाश, क्षय, अपयश, सुख में दुःख, ऐश्वर्यनाश, अन्न की हानि, आदि भय उत्पातों से होते हैं॥ ९-१०½॥

सभी उत्पातों की सामान्य शान्तिहेतु हवन

देवालये स्वगेहे वा ईशान्यां पूर्वतोऽपि वा॥ ११॥
कुण्डं लक्षणसंयुक्तं कल्पयेन्मेखलायुतम्।
गृह्योक्तविधिना तत्र स्थापयित्वा हुताशनम्॥ १२॥

देवालय में अथवा अपने घर में ही उत्पातों की शान्ति का आयोजन कराना चाहिये। हवन के लिये इन पवित्र स्थानों में ईशान कोण अथवा पूर्व दिशा में सुन्दर लक्षणों से युक्त मेखलाओं के सहित कुण्ड बनवाना चाहिये। जब लीप-पोतकर तथा रंगों से सज्जित होकर कुण्ड तैयार हो जाय, तो अपने गृह्यसूत्र की विधि के अनुसार हवनकुण्ड में अग्नि की स्थापना करायें॥ ११-१२॥

होमार्थ आहुतियों की संख्या

जुहुयादाज्यभागान्तं पृथगष्टोत्तरं शतम्।
यत् इन्द्रभयामहे स्वस्तिदाऽघोरमन्त्रकैः॥ १३॥
समिदाज्यश्चरुव्रीहि तिलैर्व्याहृतिभिस्तथा।
कोटिहोमं तदर्धं वा लक्षहोममथापि वा॥ १४॥

आज्यभागान्त तक मन्त्रों से घृत की १०८ आहुतियों के पश्चात् 'यत इन्द्र भयामहे०' स्वस्तिदा, तथा अघोर मन्त्रों से भी आहुतियाँ देना चाहिये। समिधाएँ, घृत, चरु (चावलों की खीर), चावल तथा काले तिल इनसे सप्तव्याहृतिपूर्वक आहुतियाँ देना चाहिये। इन होम-द्रव्यों से कर्त्ता पुरुष को कोटि होम (एक करोड़ की संख्या में आहुतियाँ) अथवा अर्ध कोटि (पचास लाख आहुतियाँ) अथवा लक्षहोम (एक लाख आहुतियाँ) अथवा उसका आधा (पचास सहस्र आहुतियाँ) होम करना चाहिये॥ १३-१४॥

होम की दिनावधि

यथा वित्तानुसारेण तन्न्यूनाधिककल्पना।
एकविंशति रात्रं वा पक्षं पक्षार्धमेव वा॥ १५॥
पञ्चरात्रं त्रिरात्रं वा एकरात्रमथापि वा।
वित्तशाठ्यं न कर्त्तव्यं होमकर्म समाचरेत्॥ १६॥

होमसंख्या एवं दिनावधि को कर्त्ता अपनी वित्तीय सामर्थ्य के अनुसार न्यूनाधिक कर सकता है। २१ दिन, १५ दिन, ७ दिन, पाँच दिन, तीन दिन अथवा एक अहोरात्र

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तक उत्पातों की शान्तिहेतु होमकर्म कराना चाहिये। इस कार्य में कर्त्ता को वित्तशाठ्य नहीं करना चाहिये (अर्थात् पर्याप्त धन होने पर कञ्जूसी नहीं करना चाहिये)॥ १५-१६॥

साङ्गतासिद्धि

दक्षिणाञ्च ततो दद्यादाचार्याय कुटुम्बिने।
गणेशक्षेत्रपालार्कदुर्गाक्षोण्यङ्गदेवताः ॥ १७॥
तासां प्रीत्यै जपः कार्यः शेषं पूर्ववदाचरेत्।
ऋत्विग्भ्यो दक्षिणां दद्यात्षोडशेभ्यः स्वशक्तितः॥ १८॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां उत्पाताध्यायो चतुःत्रिंशत्तमः॥ ३४॥

शान्तिकर्म की साङ्गता एवं सम्पूर्णता की सिद्धि हेतु कुटुम्बी आचार्य को दक्षिणा देनी चाहिये। गणेशजी, क्षेत्रपाल, सूर्य, दुर्गा, चौसठ योगिनी,अंगदेवता (नवग्रहादि) की पूजा करनी चाहिये, उनकी प्रसन्नता के लिये उनके मन्त्रों का जप करना चाहिये। इन देवताओं के निमित्त होमादि भी करें। सोलह ऋत्विजों को भी अपनी शक्ति के अनुसार दक्षिणा देना चाहिये॥ १७-१८॥

विमर्श—आचार्य वराहमिहिर ने अपनी बृहत्संहिता में ४६वें अध्याय में ९९ श्लोकों में सभी प्रकार के उत्पातों के लक्षणों एवं कारणों की मीमांसा विस्तारपूर्वक की है। उन्होंने यह उत्पात-सम्बन्धी ज्ञान श्रीगर्गाचार्य से ग्रहण किया है। उन्होंने समास संहिता में उत्पात की परिभाषा देते हुए लिखा है—

'यः प्रकृतिविपर्यासः सर्वः संक्षेपतः स उत्पातः।
क्षितिगगनदिव्यजातो यथोत्तरं गुरुतरो भवति॥'

अर्थात् जो कुछ भी प्रकृति में विपर्यय उत्पन्न होता है, वह सब ही संक्षेप में 'उत्पात' कहलाता है। यह उत्पात, भूमि, आकाश तथा देवताओं से सम्बन्धित होते हैं। ये सभी उत्पात मनुष्यों के अविनय से होते हैं। अविनय से पाप एकत्रित होते हैं तथा उन पापों के कारण दिव्य, अन्तरिक्ष, भौम—ये तीनों प्रकार के उपद्रव होते हैं। मनुष्यों के अविनय से अप्रसन्न होकर देवतागण उत्पात उत्पन्न करते हैं। उन उत्पातों को विद्वान् ब्राह्मण अपने ज्ञान-चक्षुओं से देखकर उनकी शान्ति का उपाय मनुष्यों को बतलाते हैं। जो मनुष्य उन उत्पातों की शान्ति हेतु नास्तिकता के वशीभूत होकर शान्तिकर्मों का अनुष्ठान नहीं कराते हैं, वे शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं—

'अपचारेण नराणामुपसर्गः पापसञ्चयाद् भवन्ति।
संसूचयन्ति दिव्यान्तरिक्षभौमास्त उत्पाताः॥
मनुजानामपचारादपरक्ता देवताः सृजन्त्येतान्।
तत्प्रतिघाताय नृपः शान्तिं राष्ट्रे प्रयुञ्जीत्॥'

—बृहत् संहिता ४। २-३

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'ततोऽपचारो मर्त्यानामरज्यन्ति देवता:।
ते सृजन्त्यद् भूतान् भावान् दिव्य भूम्यन्तरिक्षजान॥ १॥
त एव सर्वलोकानामुत्पाता देवनिर्मिता:।
विचरन्ति विनाशाय रूपै: सम्बोधयन्ति च॥ २॥
तान् शास्त्रनिर्गमाद्विप्रा: पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषा।
प्रवदन्ति तु मर्त्येषु हितार्थं श्रद्धयान्विता:॥ ३॥
ते तु सम्बोधिता विप्रै: शान्तये मङ्गलानि च।
श्रद्दधाना प्रकुर्वन्ति न ते यान्ति पराभवम्॥ ४॥
ये तु न प्रति कुर्वन्ति क्रियामश्रद्धयान्विता:।
नास्तिक्यादथवा कोपाद्विनश्यन्त्यथवाऽचिरात्॥ ५॥

—गर्गसंहिता

वराहमिहिर के अनुसार जिस घर में मकड़ियों के जाले लगे रहते हैं, प्रात:-सायं देवपूजा नहीं होती है। घर की स्त्रियाँ सदैव लड़ती-झगड़ती रहती हैं, वह घर क्षीणता एवं नाश को प्राप्त होता है—

'अङ्गारगैरिकाद्यैर्विकृतप्रेताभिलेखनं यस्मिन्।
नायक चित्रितमथवा क्षये क्षयं याति न चिरेण॥
लूता पटाङ्ग शबलं न सन्ध्ययो: पूजितं कलहयुक्तं।
नित्योच्छिष्ट स्त्रीकं च यद्गृहं तत् क्षयं याति॥'

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के चौतीसवें उत्पाताध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ३४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पञ्चत्रिंशत्तमोऽध्यायः

शान्त्यध्यायः

त्रिविध उत्पातों का कथन

उत्पातास्त्रिविधा लोके दिवि भौमान्तरिक्षजाः।
तेषां नामानि शान्तिञ्च सम्यक् वक्ष्ये पृथक् पृथक्॥ १॥

उत्पातों के तीन भेद होते हैं—१. दिव्य उत्पात, २. भौम उत्पात, तथा ३. अन्तरिक्षजन्य उत्पात। इन तीनों प्रकार के उत्पातों के नाम तथा उन सबकी पृथक्-पृथक् शान्ति विधि का वर्णन करता हूँ॥ १॥

विमर्श—दैनिक प्रकोप से जो उत्पात होते हैं, उन्हें दिव्य उत्पात कहते हैं। भूमिसम्बन्धी उत्पातों को भौम उत्पात तथा आवासीय उत्पातों को अन्तरिक्ष उत्पात कहा जाता है। अब इन तीन प्रकार के उत्पातों की शान्ति इस अध्याय में अलग-अलग तथा विस्तार से कही जाती है। इसके पूर्ववर्ती अध्याय में उत्पातों की सामान्य शान्ति का वर्णन है, परन्तु इस अध्याय में सभी मुख्य उत्पातों का पृथक्-पृथक् विस्तार से शान्ति का वर्णन होने से इस अध्याय का नाम शान्ति अध्याय है। इस अध्याय में उन उत्पातों की भी शान्ति लिखी जा रही है, जिनका वर्णन या नामोल्लेख पूर्व के अध्याय में भी नहीं है।

काकमैथुन देखने का फल

दिवा वा यदि वा रात्रौ यः पश्येत् काकमैथुनम्।
स नरो मृत्युमाप्नोति यदि वा स्थाननाशनम्॥ २॥

दिन अथवा रात्रि के किसी भी भाग में यदि कोई व्यक्ति काकमैथुन (कौवों का संभोग) देख लेता है तो वह व्यक्ति या तो मर जाता है, अथवा मृत्यु के तुल्य कष्ट प्राप्त करता है अथवा स्थानभ्रष्ट या पदभ्रष्ट हो जाता है॥ २॥

विमर्श—ज्योतिषशास्त्र में मृत्यु का अभिप्राय आठ प्रकार की मृत्यु से होता है—

१. व्यथा, २. दुःख, ३. भय, ४. लज्जा, ५. रोग, ६. शोक, ७. मरण, ८. अपमान—ये आठ मृत्यु के भेद है—

'व्यथा दुःखं भयं लज्जा रोगः शोकस्तथैव च।
मरणं चापमानञ्च मृत्युरष्टविधस्मृतः॥'

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

काकमैथुनदर्शनजन्य अशुभ फल की शान्ति के उपाय

काकघातव्रतञ्चैव विदधीताथवत्सरम्।
पितृदेवद्विजान्भक्त्या प्रत्यहं चाभिवादनम्॥ ३॥
जितेन्द्रियः शुद्धमनाः सत्यधर्मपरायणः।
तद्दोषशमनायेत्थं शान्तिकर्म समाचरेत्॥ ४॥

१. एक वर्ष पर्यन्त काकघास व्रत (प्रतिदिन कौवे को आहारदान करने के पश्चात् स्वयं भोजन) करना चाहिये। २. देवताओं, ब्राह्मणों एवं पितरों का प्रतिदिन अभिवादन करे (उनको प्रणाम करे या चरण-स्पर्श करे)। ३. जितेन्द्रिय तथा शुद्ध मनवाला होकर रहे। सत्य का पालन करे तथा धर्म का पालन करे, साथ ही उक्त दोष की शान्ति के लिये आगे वर्णित विधि से होमादि करे॥ ३-४॥

होमविधि

गृहस्येशानकोणे तु होमस्थानं प्रकल्पयेत्।
स्वगृह्योक्तविधानेन तत्र स्थाप्यं हुताशनम्॥ ५॥
मुखान्ते समिदाज्यान्नैर्होमश्चाष्टोत्तरं शतम्।
प्रतिमन्त्रं त्र्यम्बकेन चाद्य मृत्युञ्जयेन वा॥ ६॥
व्याहृतिभिर्व्रीहितिलैर्जपाद्यन्तं प्रकल्पयेत्।
पूर्णाहुतिञ्च जुह्यात् कर्त्ता शुचिरलङ्कृतः॥ ७॥

अपने घर में भीतर किसी कमरे में अथवा बाहर ईशानकोण में हवनकुण्ड बनावें। उसे आच्छादित करे उस पर मण्डप बनाये। अपने गृह्यसूत्र के विधान से अग्निस्थापन करे॥ ५॥

अग्नि को प्रज्वलितकर उसमें समिधा, घृत, अन्न (तिल, जौ, चावल) से 'त्र्यम्बकं यजामहे०' मन्त्र से अथवा महामृत्युञ्जय मन्त्र से १०८ आहुति का होम करे। व्यहृति मन्त्रों से भी जप के अन्त में होम करना चाहिये। तत्पश्चात् पूर्णाहुति आदि करें। यजमान को पवित्र एवं अलंकृत होकर होम करना चाहिये॥ ५-७॥

विमर्श—इसका तात्पर्य यह है कि पहले त्र्यम्बकादि मन्त्रों का जप करना चाहिये तथा फिर जप की संख्या के अनुसार होमादि कार्य सम्पन्न करें। इससे अच्छा फल मिलता है। सभी हवनों की भाँति यहाँ भी क्षेत्रपाल, योगिनी, नवग्रह, सर्वतोभद्र आदि पीठ बनाकर उनका पूजन तथा उनके मन्त्रों से आहुतियाँ होनी चाहिये, तभी साङ्गता सिद्ध होती है।

आचार्य को गोदान तथा स्वर्णादि दान

स्वर्णशृङ्गीं रौप्यखुरीं कृष्णां धेनुं पयस्विनीम्।
वस्त्रालङ्कारसहितां निष्कद्वादशसंयुताम्॥ ८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तदर्धेन तदर्धेन तदर्धेनाऽथवा पुनः।
यथा वित्तानुसारेण तन्न्यूनाधिककल्पना॥ ९॥
आचार्याय श्रोत्रियाय गां च दद्यात्कुटुम्बिने।

फिर काले रंग की सवत्सा गाय जो कि दूध देती हो, उसके सींग सोने से तथा खुर चाँदी से मढ़वाकर उसे वस्त्रालंकारों से सजाकर उसके साथ ही द्वादश निष्क (४८ तोला=५७५ ग्राम) अथवा उसका आधा अर्थात् ६ निष्क (२४ तोला), अथवा उसका आधा ३ निष्क (१२ तोला) अथवा उसका आधा (छह तोला) स्वर्ण या चाँदी अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार कुटुम्बी वेदपाठी आचार्य को दान करना चाहिये॥ ८-९$\frac{१}{२}$॥

ऋत्विजों को दक्षिणा तथा ब्राह्मण भोजन

ब्राह्मणेभ्यो विशिष्टेभ्यो यथाशक्ति च दक्षिणाम्॥ १०॥
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात् स्वस्तिवाचनपूर्वकम्।
एवं यः कुरुते सम्यक् स तद् दोषात्प्रमुच्यते॥ ११॥

होमादि कार्य में वरण किये गये ऋत्विजों तथा अन्य ब्राह्मणों को भी दक्षिणा देनी चाहिये। तदनन्तर ब्राह्मणों को भोजन कराये, उस समय स्वस्तिवाचन एवं शान्तिपाठ होना चाहिये। जो व्यक्ति इस प्रकार से शान्ति करता है, वह उस दोष से मुक्त हो जाता है॥ १०-११॥

शरीर पर छिपकली गिरने तथा गिरगिट के चढ़ने का फल

पल्ल्याः प्रपतने चैव सरटस्य प्ररोहणे।
शुभाशुभं विजानीयात् तत्तत्स्थाने विशेषतः॥ १२॥

१. यदि छिपकली (पल्ली) ऊपर से शरीर के ऊपर गिर पड़े या कूद पड़े तो उसका शुभाशुभ फल होता है तथा २. सरट (गिरगिट या गिरधौरा या करकेंटा) जमीन से शरीर पर चढ़ जाय तो उसका शुभाशुभ फल होता है॥ १२॥

स्पष्टीकरण—इसका तात्पर्य यह है कि यदि पल्ली (छिपकली) किसी स्त्री-पुरुष के शरीर पर नीचे से चढ़ जाय तो कोई शुभाशुभ फल नहीं होता है। तथैव यदि ऊपर से गिरगिट (सरट) यदि शरीर पर टपक पड़े तो कोई शुभाशुभ फल नहीं होता है।

शरीर के विभिन्न अंगों पर पल्ली पतन तथा सरट प्ररोहण का शुभाशुभ फल

पल्ल्याः प्रपतने पूर्वैः फलमुक्तं शुभाशुभम्।
तथाग्रे प्रवक्ष्यामि सावधानतया शृणु॥ १३॥
शीर्षे राज्यं श्रियं प्राप्तिर्मौलौ त्वैश्वर्यवर्धनम्।
सव्ये भुजे जयः प्रोक्तो ह्यपसव्ये महद्भयम्॥ १४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कुक्षौ दक्षिणभागस्य धनलाभस्तथैव च।
वामकुक्षौ तु निधनं गदितं पूर्वसूरिभिः॥ १५॥
सव्यहस्ते मित्रलाभो दक्षिणहस्ते तु निःस्वता।
उदरे सव्यभागे तु सुपुत्रावाप्तिरुच्यते॥ १६॥
वामभागे महारोगः कट्यां सव्ये महद्यशः।
दक्षकट्यान्तु निधनं मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः॥ १७॥
जान्वोरेवं विजानीयात् सव्यपादे शुभावहम्।
वामपादे तु गमनमिति प्राहुर्महर्षयः॥ १८॥

प्राचीन ऋषियों ने शरीर पर छिपकली गिरने का शुभशुभ जो फल कहा है, उसे हे नारद! तुमसे कहता हूँ। उसे सावधान होकर सुनो॥ १३॥

शिर पर यदि छिपकली गिरे तो राज्य की प्राप्ति होती है। मौलि (माथे=Forehead) पर गिरने से ऐश्वर्य की वृद्धि होती है। बायीं भुजा पर पल्ली पतन विजयप्रद तथा दाहिनी भुजा पर महाभयकारक होता है॥ १४॥

कुक्षि के दक्षिण भाग में पल्लीपतन धनलाभ का सूचक होता है। कुक्षि के वाम भाग में पूर्व के विद्वानों ने छिपकली गिरने को निधन (मृत्यु) कारक कहा है॥ १५॥

व्यक्ति की बायीं हथेली के ऊपर छिपकली गिरने से मित्रों का लाभ होता है तथा दाहिनी हथेली पर गिरने से धनहानि होती है। पेट के वामभाग में छिपकली गिरने से सुपुत्र की प्राप्ति होती है। उदर के दक्षिण भाग में पल्लीपतन महान् रोग उत्पन्न करता है तथा कटि के बायीं ओर गिरने से महान् यश की प्राप्ति होती है। कटि के दक्षिण भाग में गिरे तो मृत्युभय होता है—ऐसा तत्त्वदर्शी मुनियों का मत है॥ १६-१७॥

इसी प्रकार दोनों घुटनो पर छिपकली गिरना भी मृत्युकारक होता है। बायें पैर पर छिपकली गिरे तो शुभफल होता है तथा दाहिने पैर पर गिरने से यात्रा होती है ऐसा महर्षियों ने कहा है॥ १८॥

सरट तथा स्त्रियों में विपरीत फल

स्त्रीणां तु सरटश्चैव व्यस्तमेतत्फलं वदेत्।
फलं प्ररोहणे चैव सरटस्य प्रचारतः॥ १९॥

छिपकली गिरने का जो फल पुरुष के वाम अंग पर होता है, वही फल स्त्री के दक्षिणांग पर जानें तथा पुरुष के दक्षिणाङ्ग का जो फल होता है वही फल स्त्री के वामांग पर छिपकली गिरने का होता है। ऐसा ही विपरीत फल स्त्रियों के शरीर पर सरट (करकेंटा=किरलकांटा) के आरोहण या प्ररोहण का होता है॥ १९॥

अशुभ फल होने पर शान्तिकर्म आवश्यक

सर्वाङ्गेष्वशुभं विद्यात् शान्तिं कुर्यात्स्वशक्तितः।
शुभस्थाने शुभावाप्तिरशुभे दोषशान्तये॥ २०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जिन अंगों का अशुभ फल हो, उन पर गिरने से अपनी शक्तिसामर्थ्य के अनुसार शान्ति कराये तथा शुभफल हो तो कोई बात नहीं, केवल अशुभ की शान्ति करे॥ २०॥

पल्लीपतन में शान्ति विधान

तत्स्वरूपं सुवर्णेन रुद्ररूपं तथैव च।
मृत्युञ्जयेन मन्त्रेण वस्त्रादिभिरथार्चयेत्॥ २१॥
अग्निं तत्र प्रतिष्ठाप्य जुहुयात् तिलपायसैः।
आचार्यो वारुणैः सूक्तैः कुर्यात्तत्राभिषेचनम्॥ २२॥
आज्यावलोकनं कृत्वा शक्त्या ब्राह्मणभोजनम्।
गणेशक्षेत्रपालार्कदुर्गाक्षोण्यङ्गदेवताः ॥ २३॥
तासां प्रीत्यै जपः कार्यः शेषं पूर्ववदाचरेत्।
ऋत्विग्भ्यो दक्षिणां दत्त्वा षोडशभ्यः स्वशक्तितः॥ २४॥

यदि शरीर पर छिपकली गिरी हो तो स्वर्ण की छिपकली बनवाये। यदि गिरगिट चढ़ा हो तो स्वर्ण धातु से गिरगिट का स्वरूप बनवाये तथा साथ ही रुद्र (शंकर) की मूर्ति भी स्वर्ण से बनवाये। फिर उनकी अर्चना-पूजा मृत्युंजय मन्त्र तथा वस्त्रादि से करें॥ २१॥

अग्निस्थापन कर तिल तथा खीर से होम करें और आचार्य अपने यजमान का वरुण सूक्त से अभिषेक करे॥ २२॥

फिर यजमान घी में अपना मुख देखकर अथवा घृत को सूँघकर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराये। साथ ही गणेश, क्षेत्रपाल, योगिनी, सूर्य, दुर्गा, नवग्रह देवता अंगदेवतादिका पूजन-जप भी सम्पन्न करायें। आचार्य तथा सोलह ऋत्विजों को दक्षिणा देकर उनका आशीर्वाद ग्रहण करे। यह सब कार्य वित्तशाठ्य वर्जित होकर अपनी शक्ति के अनुसार करना चाहिये॥ २३-२४॥

घर में बाज या गृद्ध्र के प्रविष्ट होने का फल

आरोहेत गृहं यस्य कपोतारि प्रविश्यते।
स्थानहानिर्भवेत्तस्य यद्वाऽनर्थपरम्परा॥ २५॥
दोषाय धनिनां गेहे दरिद्राणां शिवाय च।
तच्छान्तिस्तु प्रकर्त्तव्या जपहोमविधानतः॥ २६॥

यदि किसी धनी एवं सुखसम्पन्न व्यक्ति के घर पर बाज पक्षी अथवा गीध बैठ जाय अथवा घर में प्रविष्ट हो जाय तो उस गृह के स्वामी की स्थानहानि होती है अथवा अनेक प्रकार के अनर्थ होने लगते हैं। यह स्थिति धनी लोगों को अशुभ फलदायक होती है, परन्तु यदि किसी दरिद्र (कंगाल) के घर में बाज या गीध घुस

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाय अथवा घर के ऊपर बैठे तो उसका कल्याण हो जाता है तथा उसके सभी दुःख-दरिद्रता दूर हो जाते हैं।

अतः धनी व्यक्तियों को शान्ति करानी चाहिये, तभी उनका कल्याण होता है॥ २५-२६॥

विमर्श—श्येन (वाजपक्षी) को कपोतारि कहते हैं, क्योंकि वह कपोत (कबूतर) का शिकार करता है।

श्येन शान्ति विधि

ब्राह्मणान् वरयेत्तत्र स्वस्तिवाचनपूर्वकम्।
षोडशद्वादशाष्टौ वा श्रौतस्मार्त्तक्रियापरान्॥ २७॥
देवाः कपोत इत्यादि ऋग्भिः स्यात्पञ्चभिर्जपः।
कुण्डं कृत्वा प्रयत्नेन स्वगृह्योक्त विधानतः॥ २८॥
ईशान्यां स्थापयेद् वह्निं मुखान्तेऽष्टोत्तरं शतम्।
प्रत्येकं समिदाज्यान्नैः प्रतिप्रणवपूर्वकम्॥ २९॥
यत इन्द्रभयामहे स्वस्ती त्येतेन त्र्यम्बकैः।
त्रिभिर्मन्त्रैश्च जुहुयात् तिलान् व्याहृतिभिः सह॥ ३०॥
कुर्यादेव ततो भक्त्या कर्त्ता पूर्णाहुतिं स्वयम्।
विप्रेभ्यो दक्षिणां दद्याद् दोषशान्तिं ततो जयेत्॥ ३१॥
ब्राह्मणान्भोजयेत् पश्चात् स्वयं भुञ्जीत बन्धुभिः।
एवं यः कुरुते भक्त्या तस्माद् दोषात् प्रमुच्यते॥ ३२॥

ब्राह्मणवरण—श्येन शान्ति हेतु आचार्य सहित स्वस्तिवाचनपूर्वक सोलह अथवा बारह अथवा आठ अथवा कम-से-कम चार ब्राह्मणों का वरण करे। ब्राह्मण श्रौत एवं स्मार्त्त क्रियाओं में निष्णात होने चाहिये॥ २७॥

जप तथा अग्निकुण्ड का निर्माण—'देवाः कपोत' इत्यादि पाँच ऋचाओं का जप ब्राह्मणों द्वारा करायें तथा प्रयत्नपूर्वक हवनकुण्ड का निर्माण करायें॥ २८॥

अग्निस्थापन तथा आहुतिसंख्या—ईशान कोण में कुण्ड में अग्नि की स्थापना कर अग्निमुख में समिधा, घृत तथा अन्न के साथ ॐ को पूर्व में लगाकर 'यत इन्द्र भयामहे', 'स्वस्ति न इन्द्रः' तथा 'त्र्यम्बकं यजामहे०' इन मन्त्रों में से प्रत्येक से १०८ आहुतियाँ दे॥ २९-३०॥

पूर्णाहुति एवं दक्षिणा—फिर कर्त्ता को श्रद्धाभक्तिसहित पूर्णाहुति करके आचार्य एवं ब्राह्मणों को दक्षिणा देना चाहिये। इससे शान्तिकर्म का फल मिलता है॥ ३१॥

ब्राह्मण-भोजन—तत्पश्चात् ब्राह्मणों को भोजन कराके स्वयं भी भोजन करे। जो भक्तिपूर्वक यह अनुष्ठान करता है, वह उस उत्पातजन्य अशुभ फल से बच जाता है॥ ३२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—यदि नगर में रहनेवाले पक्षीगण वन में प्रवेश करें तथा वन में रहनेवाले नगर या ग्राम में प्रवेश करें। इतना ही नहीं वे पक्षी निर्भय होकर प्रवेश करें अथवा दिन में विचरण करनेवाले पक्षी रात्रि में विचरण करने लगें तथा रात्रि में विचरण करनेवाले पक्षी (उल्लू आदि) दिन के समय विचरण करें। अथवा वनवासी पशु-पक्षी सूर्योदय या सूर्यास्त के समय सूर्याभिमुख होकर मण्डल बाँधकर बैठें अथवा समवेत स्वर में कोलाहल करें तो भयप्रद होते हैं।

अथवा यदि श्येन (बाज) रोता हुआ द्वार पर बोले अथवा सियार आकर पुरद्वार पर शब्द करे अथवा राजभवन या धनिक के भवन में जंगली कबूतर अथवा उल्लू प्रवेश करे तो भय प्राप्त होता है। राजप्रासादों में उल्लुओं का प्रवेश भी अशुभ फल-सूचक उत्पात माना जाता है—

'पुरपक्षिणो वनचरा वन्या वा निर्भया विशन्ति पुरम्।
नक्तं वा दिवसचराः क्षपाचरा वा चरन्त्यहनि॥
सन्ध्याद्वयेऽपि मण्डलमाबन्धन्तो मृगा विहङ्गा वा।
दीप्तायां दिश्यथवा क्रोशन्तः संहता भयदाः॥
श्येनाः प्ररुदन्त इव द्वारे क्रोशन्ति जम्बुका दीप्ताः।
प्रविशन्नरेन्द्रभवने कपोतकः कौशिको यदि वा॥'

—बृ०सं० ४६।६६-६८

'श्येनगृद्ध्रबलाकाश्च वामना मुण्डचारिणः।
शब्दायन्त इवात्यर्थं प्रदीप्ताः सङ्घयो यदि॥
रुदन्ति विविधं यत्र तदेवाशु विनश्यति।
यद्यभीक्ष्णं कपोता वा प्रविशन्ति वसन्ति वा॥
राजवेश्मन्युलूका वा तच्छून्यमचिराद् भवेत्॥'

पिंगलापक्षी-मधुमक्खी तथा वाल्मीकिजन्य उत्पात

पिङ्गलायाः स्वरेऽप्येवं मधुवाल्मीकयोरपि।
सम्पूर्ण मङ्गले हानिः शून्यसद्मनि मङ्गलम्॥ ३३॥
प्राकारेषु पुरद्वारे प्रासादाद्येषु वीथिषु।
तत्फलं ग्रामपस्यैव सीमा सीमाधिपस्य च॥ ३४॥
पिङ्गलादिविकारेषु शाकुनसूक्तकं जपेत्।
शान्तिकर्माखिलं कार्यं पूर्वोक्त क्रमेण तु॥ ३५॥

पिंगला पक्षी (उल्लू की जाति का छोटा पक्षी जिसे कोतरी, खूसटी, खुसिटिया, मटामट, कोचर आदि कहते हैं) का किसी घर या मकान पर (जो सम्पन्न व्यक्ति का हो) बोलना, मधुमक्खी का छत्ता लग जाना, अथवा वाल्मीक (बांबी=बंबई) का बन

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाना, ये सब प्रकार के आनन्द-मंगल की हानि करते हैं तथा उस प्रासाद, पुर, प्राकार, वीथी आदि को पूर्णता या उजाड़ देते हैं परन्तु यदि ये उत्पात किसी शून्य गृह में हों (निर्जन मकान या खण्डहर या गरीब के घर में हों तो) तो वह फिर से सम्पन्न तथा सुखी हो जाता है। यह फल ग्रामाधिप तथा सीमाधिप को भी उनके स्थानों में उक्त उत्पात होने पर प्राप्त होता है॥ ३३-३४॥

पिङ्गलादि जन्य उत्पातों में शाकुन सूक्त के जप के साथ पूर्वकथित (श्येन शान्ति में वर्णित) विधि से शान्तिकर्म कराना चाहिये॥ ३५॥

विमर्श—आचार्य वराहमिहिर के अनुसार यदि प्रदोषकाल (सायं सूर्यास्त के एक घटी के उपरान्त तीन घटी का समय) में यदि मुर्गा बोले, हेमन्त तथा शिशिर ऋतु में कोयल बोलती हो। बाज आदि पक्षी मण्डलाकार पंक्ति में उड़ने लगें तो भयकारक होते हैं। इस प्रकार इन मांसभक्षी पक्षियों के झुण्ड गृह, चैत्य, तोरण, द्वार आदि पर टूट पड़ें तो भयकारक होते हैं—

'कुक्कुटरुतं प्रदोषे हेमन्तादौ च कोकिलालापाः।
प्रतिलोम मण्डलचराः श्येनाद्यश्चाम्बरे भयदाः॥
गृहचैत्यतोरणेषु द्वारेषु च पक्षिसम्पातः।
मधुवाल्मीकाम्भोरुह समुद्भवश्चापि नाशाय॥'

शिथिलीजनन उत्पात की शान्ति

उत्पाता ह्यखिला नृणामगम्याः शुभसूचकाः।
तथापि सद्यः फलदं शिथिलीजननं महत्॥ ३६॥
शिथिलीजननं ग्रामे सेतौ वा देवतालये।
तत्फलं ग्रामपस्यैव सीम्नि सीमाधिपस्य च॥ ३७॥
शिथिलीजनने हानिः सर्वे स्थानेषु दिक्षु च।
तद् दोषशमनायैव शान्तिकर्म समाचरेत्॥ ३८॥
स्वर्णेन मृत्युप्रतिमां कृत्वा वित्तानुसारतः।
रक्तवर्णं चर्मदण्डधरं महिषवाहनम्॥ ३९॥
नववस्त्रञ्च सम्वेष्ट्य तण्डुलोपरि पूजयेत्।
तल्लिङ्गेन च मन्त्रेण नैवेद्यं तु यथाविधि॥ ४०॥
पूर्णकुम्भं तदीशान्यां रक्तवस्त्रेण वेष्टितम्।
पञ्चत्वक् पल्लवैर्युक्तं जलं मन्त्रैः समर्पयेत्॥ ४१॥
अग्निसंस्थापनं प्राच्यां स्वगृह्योक्त विधानतः।
प्रत्येकमष्टोत्तरशतमघोरेणैव होमयेत्॥ ४२॥
मन्त्रेण समिदाज्यान्नैः शेषं पूर्ववदाचरेत्।
द्विजाय प्रतिमां दद्यात् सर्वदोषापनुत्तये॥ ४३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जलमन्त्रेण सम्प्रोक्ष्य तत्स्थानं तीर्थवारिभिः।
एवं यः कुरुते सम्यक् स तु दोषात् प्रमुच्यते॥ ४४॥

शिथिलीजनन की परिभाषा—वस्तुओं मूर्तियों, वृक्षों, भवनों आदि का शिथिल होकर चलायमान होना 'शिथिलीजनन' कहलाता है। यों तो सभी अशुभ सूचक उत्पात मनुष्यों के लिये दुर्बोध हैं, परन्तु उनमें से शिथिलीजनन शीघ्र ही अशुभ फल देता है। ग्राम या नगर के देवालय, मूर्ति या पुल आदि का शिथिल हो जाना (मूर्ति का स्थान छोड़ देना) ग्राम के मुखिया के लिये अशुभ फलप्रद होता है। तथैव सीमावर्त्ती देवालय आदि का शिथिलीजनन सीमाधिपति के लिये अशुभफल देता है॥ ३६-३७॥

उन सभी स्थानों तथा दिशाओं में जहाँ पर कि शिथिलीजनन उत्पात होता है, वहाँ हानि होती है। उस दोष की शान्तिहेतु अग्रिम विधि का अनुष्ठान करना चाहिये॥ ३८॥

प्रतिमा-निर्माण—सुवर्ण धातु से मृत्युदेवता (यमराज) की प्रतिमा बनवानी चाहिये, जिसमें अपनी वित्तीय सामर्थ्य के अनुसार ही व्यय करना चाहिये। प्रतिमा रक्तवर्ण की ढाल तथा दण्ड को धारण किये हुए बनवानी चाहिये। उस यमराज की प्रतिमा को नये कपड़े से वेष्टित करके चावलों के ढेर पर रखकर उसकी पूजा करे फिर यमराज के मन्त्र से नैवेद्य आदि अर्पण करे॥ ३९-४०॥

कलशस्थापन—एक जलपूर्ण कलश को ईशानकोण में स्थापित कर उसको रक्त वस्त्र समर्पित करें, उस कलश में पञ्च पल्लव डालकर मन्त्र पढ़कर जल को अभिमन्त्रित करे॥ ४१॥

होम—अपने गृह्यसूत्र के विधानानुसार पूर्वदिशा में हवनकुण्ड में अग्नि स्थापित कर फिर उसमें अघोरमन्त्र तथा यममन्त्र से प्रत्येक की १०८ आहुति हवन करे। हवन में समिधा, घृत, अन्न, तिल आदि का प्रयोग करे। शेष पूर्व की भाँति (आचार्यवरण, ऋत्विजवरण, दक्षिणादान, ब्राह्मण-भोजन) करे। कर्म की समाप्ति पर आचार्य को यमराज की प्रतिमा दान कर दे। जिस स्थान पर उत्पात हुआ है, उस पर कलश का जल छिड़क दे। इस प्रकार विधिपूर्वक करने से उत्पातजन्य दोष शान्त हो जाता है॥ ४३-४४॥

विमर्श—इस सम्बन्ध में वराहमिहिर ने लिखा है कि इन्द्रध्वज, इन्द्रकील, स्तम्भद्वार का गिर पड़ना, तोरण या कपाटों का अचानक टूट जाना, ध्वजा-पताका का अकारण टूटना या गिरना, राजा या मुखिया के लिये मृत्युकारक होता है—

'शक्रध्वजेन्द्रकीलस्तम्भद्वारप्रपातभङ्गेषु ।
तद्वत् कपाटतोरणकेतूनां नरपतेर्मरणम्॥'

इन्द्रलुप्तशान्ति

श्रीरग्निर्बन्धुनाशश्च वित्तहानिर्महद्यशः।
बन्धुलाभः पुत्रहानिः स्त्रीचिन्ता महतो गदः॥ ४५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पूर्वादीनि फलान्येषामिन्द्रलुप्तं च मस्तके।
पञ्चत्वक् पल्लवैश्चैव पञ्चामृतफलोदकैः॥ ४६॥
अभ्यङ्गं मन्त्रितैर्मन्त्रैः स्नानदोषं विमुञ्चति।
एवमेवाग्निदाहेऽपि मस्तके मध्यदूषिते॥ ४७॥
दन्तच्छेदे काकहतं सरटापत्तनेऽपि च।
आशिषो वाचनं कृत्वा ब्राह्मणान्भोजयेच्छुचिः॥ ४८॥
लाभदः स्त्रीजनानां त्वशुभदो व्यत्ययो व्ययः।
दक्षिणे स्फुरणं लाभं वामे स्फुरणमन्यथा॥ ४९॥

यदि किसी समृद्ध व्यक्ति के शिर पर इन्द्रनुमा (बालचर या बालखोरा) हो जाय तो सम्पूर्ण शिर पर पूर्वादि ८ दिशाओं तथा मध्य भाग इस प्रकार ९ भागों की कल्पना करें तथा इन नौ भागों में जिस स्थान के बाल झड़कर इन्द्रलुप्त हो जायँ, उसके अनुसार शुभाशुभ फल (प्रदक्षिण) क्रम से कहें। इसमें शिर के माथेवाले भाग को पूर्व मानना चाहिये।

यदि पूर्वभाग में इन्द्रलुप्त हो तो श्री प्राप्ति होती है, फिर क्रम से अन्य भागों में २. अग्निभय, ३. बन्धुनाश, ४. धनहानि, ५. यशप्राप्ति, ६. बन्धुलाभ, ७. पुत्रहानि, ८. स्त्रीचिन्ता तथा ९. (मध्यभाग में) कोई महान् रोग (बड़ी बीमारी) होती है। इस प्रकार से फल जानना चाहिये॥ ४५-४५½॥

शान्ति-विधान—किसी जल से पूर्ण कलश में पञ्चपल्लव (वट, पीपल, पाकर, ऊमर तथा जामुन के पत्ते) डालकर पञ्चत्वक् (पञ्चवल्कल=वट, ऊमर, पीपल, पाकर तथा वेतस की छाल), पञ्चामृत (गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत, शर्करा तथा मधु), फलोदक (फलों के जल) इन सबको डालकर उस जल को मंत्रों से अभिमंत्रित कर उससे स्नान कराये तो इन्द्रलुप्त का दोष मिट जाता है॥ ४६½॥

इसी प्रकार से शिर के इन ९ भागों में आग से जल जाने पर, कौवा बैठ जाने पर, छिपकली गिरने तथा करकेंटा के चढ़ने का फल भी जानना चाहिये।

इन सबमें भी अभिषेक कराने तथा ब्राह्मणों को भोजन करवाकर उनका आशीर्वाद ग्रहण करने से दोष मिट जाता है॥ ४७-४८॥

अंग फड़कने का फल—पुरुष का दाहिना अंग फड़कना शुभ होता है तथा स्त्री का बायाँ अंग फड़कना शुभ होता है। इसके विपरीत यदि पुरुष का बायाँ अंग फड़के तथा स्त्री का दायाँ अंग फड़के तो अशुभ होता है॥ ४९॥

विमर्श—इन्द्रलुप्त मुख्यतः शिर एवं दाढ़ी-मूँछ के बालों का रोग है, परन्तु यह शरीर से कहीं पर भी त्वचा पर हो सकता है। इसमें प्रथम शिर की त्वचा पर एक धब्बा-सा प्रकट होता है। जिसपर फुंसियों का एक घेरा-सा होता है, जो कुछ काल में

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सूख जाती हैं फिर उनसे छिलका झड़कर उड़ जाता है। रोग उत्पन्न होने के कुछ काल पश्चात् कई गोल-गोल चिह्न प्रकट हो जाते हैं, जिनके ऊपर भूसी लगी रहती है, उस स्थान के बाल उखड़कर नष्ट हो जाते हैं। यह रोग बड़ा हठीला होता है तथा कभी-कभी भौंह, मूँछ, दाढ़ी, सम्पूर्ण शिर इन सबके ही बाल झड़ जाते हैं।

आयुर्वेदानुसार श्री माधवकर के मत से 'वायु सहित पित्त' रोमकूपों में पहुँचकर रोमों को गिरा देता है। फिर रक्तसहित कफ रोमकूपों को बन्द कर देता है, इससे दूसरे रोम की उत्पत्ति नहीं होती है। इसे इन्द्रलुप्त, खालत्य या रुह्या (रुज्या) कहते हैं। यथा—

'रोमकूपानुगं पित्तं वातेन सह मूर्च्छितम्।
प्रच्यावयति रोमाणि ततः श्लेष्मा सशोणितः॥
रुणद्धि रोमकूपांस्तु ततोऽन्येषामसम्भवः।
तदिन्द्रलुप्तं खालित्यं रुह्येति च विभाव्यते॥'

—माधवनिदान ५५। २८-२९

माधवनिदान की संस्कृत टीका के अनुसार इन्द्रलुप्त केवल श्मश्रु (दाढ़ी-मूँछ) में होता है। जब शिर के बाल झड़ते हैं तब उसे खालित्य कहा जाता है तथा रुज्या या रुह्या में वेदना होती है—'इन्द्रलुप्तं श्मश्रूणि भवति। खालित्यं शिरोरुहेष्वेव रुज्या (रुह्या) सवेदनेति॥'

यूनानी हकीम इन्द्रलुप्त को 'दाऽउलहय्यह' तथा 'दाऽउस्सालब' कहते हैं। डॉक्टरों ने इसे Alopecia aeriata (अलोपेसिआ एरियाटा) नाम दिया है। इसका अन्य नाम Alopecia furfurata (एलोपेसिया फरफुराटा) भी है।

अश्वशान्ति हेतु अनुकूल समय

अश्वशान्तिं प्रवक्ष्यामि तेषां दोषापनुत्तये।
भानुवारे च सङ्क्रान्तावयने विषुवद्वये॥ ५०॥
दिनक्षये व्यतीपाते द्वादश्यामश्विभेऽपि वा।
अथवा भास्करे स्वातीसंयुक्ते च विशेषतः॥ ५१॥

अब घोड़ों के दोषों (ऐबों) की शान्ति के लिये मैं अश्वशान्ति का वर्णन कर रहा हूँ, जिसके करने से घोड़ों के दोषों का अशुभ परिणाम नहीं होता है।

यदि रविवार के दिन सूर्य का संक्रमण हो अथवा विषुवदिनों (सायन मेषार्क प्रवेश तथा सायन तुलार्कप्रवेश के दिनों) में अथवा क्षय तिथि एवं व्यतिपात के संयोगवाले दिन में, अथवा द्वादशी के दिन अश्विनी नक्षत्र हो अथवा रविवार के दिन स्वाति नक्षत्र हो तब अश्वशान्ति का आयोजन करना चाहिये॥ ५०-५१॥

मण्डप-निर्माण

ईशान्यां त्वष्टभिर्हस्तैश्चतुर्भिर्वाथ मण्डपम्।
चतुर्द्वारवितानस्त्रक्तोरणाद्यैरलङ्कृतम्॥ ५२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ईशानकोण में यजमान अथवा आचार्य के हाथ की माप से आठ हाथ लम्बा तथा आठ हाथ चौड़ा मण्डप बनाना चाहिये, जिसमें चार द्वार, वितान, तोरण आदि बनाकर उसकी सजावट भी करें॥ ५२॥

वेदी-निर्माण

तन्मध्ये वेदिका तस्य पञ्चविंशांशमानतः।
मण्डपस्य बहिः कुण्डं प्राच्यां हस्तप्रमाणतः॥ ५३॥

१. उस मण्डप के मध्य भाग में वेदिका बनायें। वह वेदी मण्डपके प्रमाण से पच्चीसवें भाग में होनी चाहिये। २. उक्त मण्डप के बाहर पूर्व दिशा में होमार्थ एक हाथ का कुण्ड बनाना चाहिये॥ ५३॥

विमर्श—ऊपर मण्डप-निर्माण ८×८ हाथ = ६४ वर्ग हाथ क्षेत्रफल में बनाने का निर्देश दिया गया है, उसके पच्चीसवें भाग के तुल्य मण्डप मध्य में बनाने का निर्देश है। एक हाथ में २४ अंगुल होते हैं तथा एक अंगुल में ८ यव होते हैं। इस प्रकार ७ अंगुल तथा ५ यव के लगभग लम्बाई तथा इतनी ही चौड़ाई की वेदी बनानी चाहिये जिसका क्षेत्रफल लगभग ५९ अंगुल तथा ३ यव के लगभग होगा।

अश्वशान्ति हेतु हवनकुण्ड मण्डप के भीतर न बनाकर बाहर ही पूर्व दिशा में बनाया जायेगा।

आचार्यादि का वरण

वरयेच्छ्रोत्रियान् विप्रान् स्वस्तिवाचनपूर्वकम्।

शान्ति कार्य हेतु वेदपाठी ब्राह्मणों का वरण करना चाहिये तथा उनसे स्वस्तिवाचन तथा पुण्याहवाचन आदि करना चाहिये॥ ५३½॥

विमर्श—यहाँ मूल में 'श्रोत्रिय' शब्द प्रयुक्त हुआ है, जो ब्राह्मण वेदशास्त्र का अध्ययन किये होता है; वह श्रोत्रिय कहा जाता है—'छन्दो वेदमधीतेति श्रोत्रियः।' ब्राह्मण कुल में जन्म लेने मात्र से कोई व्यक्ति मात्र 'ब्राह्मणब्रुव' (कहलाने मात्र के लिये ब्राह्मण) होता है। संस्कारों के द्वारा वह 'द्विज' हो जाता है। विद्याभ्यास से विप्र कहलाता है, परन्तु जो एक साथ ब्राह्मण, द्विज तथा विद्याभ्यस्त (वेदाध्यायी) तीनों ही होता है, उसे श्रोत्रिय कहा जाता है, जैसा कि कहा गया है—

'जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते।
विद्याभ्यासी भवेद् विप्रः श्रोत्रियस्त्रिभिरुच्यते॥'

श्रोत्रिय की अन्य परिभाषा इस प्रकार है—

'एकां शाखां सकल्पाञ्च षड्भिरङ्गैरधीत्य च।
षट्कर्म निरतो विप्रः श्रोत्रियो नाम धर्मवित्॥'

अर्थात् जो विप्र वेद की किसी एक शाखा का षडङ्गों के साथ अभ्यास करता है तथा षट्कर्मों (विद्या पढ़ना-विद्या पढ़ाना, यज्ञ करना-यज्ञ कराना, दान देना-दान लेना) में निरत रहता है, उसे श्रोत्रिय कहते हैं।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यहाँ ब्राह्मणों की संख्या नहीं कही गयी है, परन्तु 'विप्रान्' शब्द बहुवचन है, अतः कम-से-कम चार ब्राह्मण होना चाहिये। वैसे तो यजमान की सामर्थ्य हो तो षोडश संख्या में ब्राह्मणों का वरण करना अभीष्ट होता है।

सूर्यपुत्र रेवन्त का ध्यान

सूर्यपुत्रं हयारूढं पञ्चवक्त्रं त्र्यम्बकम्॥ ५४॥
शुक्लवर्णत्वचाखड्गं रैवन्तं द्विभुजं स्मरेत्।

सूर्य के पुत्र रेवन्त जो कि पाँच मुखवाले हैं, तीन नेत्रवाले हैं, तथा जिनका श्वेत वर्ण है, जो त्वचा (ढाल) तथा तलवार अपनी दोनों भुजाओं में लिये हैं, उनका ध्यान करें॥ ५४-५४½ ॥

विमर्श—रेवन्त या रैवन्त सूर्य के पुत्र तथा घोड़ों के अधिष्ठाता देवता हैं।

रेवन्त की प्रार्थना

सूर्यपुत्र नमस्तेऽस्तु नमस्ते पञ्चवक्त्रक॥ ५५॥
नमो गन्धर्वदेवाय रैवन्ताय नमो नमः।

हे सूर्यपुत्र! आपको नमस्कार है। हे पञ्चमुख! आपको नमस्कार है। हे गन्धर्वदेव रेवन्त! आपके लिये नमस्कार है, नमस्कार है॥ ५५-५५½ ॥

विमर्श—प्राचीन काल में घोड़े के लिये देवता लोग 'हय' शब्द का, गन्धर्व लोग 'वाजि' शब्द का, असुर लोग 'अर्व' शब्द का तथा मनुष्य लोग अश्व शब्द का प्रयोग करते थे। ये चारों संस्कृत में पर्यायवाची शब्द हैं। घोड़ा शब्द संस्कृत के 'घोटक' शब्द से घिसकर बन गया है।

रेवन्त का पूजन

मन्त्रेणानेन रैवन्तं वस्त्रगन्धाक्षतादिभिः॥ ५६॥
विधिवद् वेदिकामध्ये तण्डुलोपरि पूजयेत्।

इस 'सूर्यपुत्र .... नमो नमः' मन्त्र से विधिपूर्वक वेदी के मध्य में चावलों की ढेरी पर वस्त्र, गन्ध, अक्षतादि के द्वारा रेवन्त का पूजन करना चाहिये॥ ५६-५६½ ॥

पञ्चगणों की पूजा

कार्यास्तत्रगणाः पञ्च रौद्रशाक्राश्च वैष्णवाः॥ ५७॥
स गाणपति सौराश्च रैवन्तस्य समन्ततः।

उसी वेदी पर १. रुद्रगण, २. इन्द्रगण, ३. वैष्णवगण, ४. गाणपत्यगण तथा ५. सूर्य के गणों को रेवन्त के चारों ओर स्थापितकर उनका पूजन करे॥ ५७-५७½ ॥

चतुर्वेदपूजा

ऋग्वेदादिचतुर्वेदान्यजेद् द्वारेषु पूर्वतः॥ ५८॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. पूर्व के द्वार पर ऋग्वेद का, २. दक्षिण के द्वार पर यजुर्वेद का, ३. पश्चिम के द्वार पर सामवेद का तथा ४. उत्तर के द्वार पर अथर्ववेद का पूजन करना चाहिये ॥ ५८ ॥

कलशस्थापन

रक्तवर्णान् पूर्णकुम्भान् वस्त्रगन्धाद्यलंकृतान्।
पञ्चत्वक् पल्लवोपेतान्पञ्चामृतसमन्वितान् ॥ ५९ ॥

शान्ति मण्डप के १३ स्तम्भों पर लाल रंग के कुम्भों (कलशों) को वस्त्र, गन्ध आदि से सजाकर उनके भीतर जल, पंचवल्कल, पंचपल्लव तथा पञ्चामृत पूर्ण कर दें ॥ ५९ ॥

चारों द्वारों पर चार ऋत्विजों का पूजन

द्वारेषु स्थाप्य तल्लिङ्गैर्मन्त्रैर्विप्रान्प्रपूजयेत्।
एवं तु पूजामाचार्यः कृत्वा गृह्यविधानतः ॥ ६० ॥

पूर्व द्वार पर ऋग्वेदीय का, दक्षिण द्वार पर यजुर्वेदीय का, पश्चिम द्वार पर सामवेदीय ब्राह्मण का तथा उत्तर द्वार पर अथर्ववेदीय ब्राह्मण का पूजन करे।

आचार्य अपने गृह्यसूत्र एवं वेदशाखा के अनुसार पूजन सम्पन्न करायें ॥ ६० ॥

अग्निस्थापन

स्थापयेत्तु व्याहृतिभिः तस्मिन् कुण्डे हुताशनम्।
ततस्तदाज्यभागान्ते मुख्याहुतिमतन्द्रितः ॥ ६१ ॥

फिर व्याहृति मन्त्रों द्वारा हवनकुण्ड में अग्नि की स्थापना कर उसे प्रज्वलित कर आज्यभाग आहुति देकर फिर प्रधान आहुति देनी चाहिये ॥ ६१ ॥

होम मन्त्र एवं आहुति संख्या

अग्नये स्वाहेति हुत्वा घृतेनादौ प्रयत्नतः।
एवं तु पूजामन्त्रेण ह्याद्यन्तु प्रणवेन च ॥ ६२ ॥
पलाशसमिदाज्यान्नैः शतमष्टोत्तरं हुनेत्।
प्रत्येकं जुहुयाद् भक्त्या तिलान्व्याहृतिभिस्तथा ॥ ६३ ॥

प्रयत्नपूर्वक 'अग्नये स्वाहादि' मन्त्रों से प्रारम्भ में घृत की आहुतियाँ देनी चाहिये। इसी प्रकार पूजा के मन्त्र के आदि एवं अन्त में ॐ लगाकर पलाश की समिधा, घृत, तिलादि के साकल्य से १०८ आहुतियाँ देना चाहिये। पुनः प्रत्येक मन्त्र में 'भूः' 'भुवः', 'स्वः' आदि व्याहृतियाँ लगाकर फिर तिलों से होम करे ॥ ६२-६३ ॥

होम की दिनावधि

एकरात्रं त्रिरात्रं वा नवरात्रमथापि वा।
अनेन विधिना कुर्याद् यथाशक्त्या जितेन्द्रियः ॥ ६४ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इस विधि से अपनी सामर्थ्य के अनुसार यजमान को एक-तीन या नौ दिनों तक हवन कराना चाहिये। इस कार्य को यजमान जितेन्द्रिय होकर करे॥ ६४॥

जपादि कथन

जपादिपूर्वकं सम्यक्कर्त्ता पूर्णाहुतिं हुनेत्।
ततो मङ्गलघोषैश्च नैवेद्यञ्च समर्पयेत्॥ ६५॥

यजमान (कर्त्ता) जप करके जप के दशमांश की संख्या में हवन पूर्णाहुति करें। फिर उसकी दशमांश संख्या में तर्पण्यादि करके मंगलगीत वाद्यों के साथ नैवेद्य (भोग) समर्पित करे॥ ६५॥

हुतशेष से जयन्त को वलिदान

ततस्ते हुतशेषेण सम्यक्वक्तुं मोदकैर्द्विजाः।
प्रादक्षिण्यं व्रजन्तोऽश्वाञ्जयन्तबलिमुत्तमम्॥ ६६॥
जीमूतस्येत्यनुवाकेन चतुर्दिक्षु विनिक्षिपेत्।

तब चारों द्वार के ब्राह्मणों को घोड़ों के चारों ओर चारों दिशाओं में हुतशेष पदार्थ तथा चार कलशों के जल से जयन्त बलि सम्पन्न करना चाहिये। 'जीमूतस्येति' अनुवाक को पढ़कर यह कार्य कराये। बलि को चारों दिशाओं में फेंक दे॥ ६६-६६½॥

दक्षिणादान

आचार्याय ततो दद्याद् दक्षिणां निष्कपञ्चकम्॥ ६७॥
तदर्धं वा तदर्धं वा यथाशक्त्यनुसारतः।
ऋत्विग्भ्यो दक्षिणां दद्याद् धेनुं वस्त्रं धनादिकम्॥ ६८॥

फिर आचार्यों को पाँच निष्क (२० तोला) सोना दक्षिणा में दें अथवा उसका आधा या चतुर्थांश अपनी सामर्थ्य के अनुसार दें। अन्त में शेष ऋत्विज ब्राह्मणों को भी दक्षिणा, गो, वस्त्र तथा धनादि से सन्तुष्ट करें॥ ६७-६८॥

विधिपूर्वक अश्वशान्ति कराने का फल

ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात् शान्तिवाचनपूर्वकम्।
एवं यः कुरुते सम्यगश्वशान्तिमनुत्तमाम्॥ ६९॥
सोऽश्वाभिवृद्धिं लभते वीरलक्ष्मीं न संशयः।
मानोन्नतिर्भवेत्तस्य वाहनैः सुखवर्धते॥ ७०॥
यज्ञेनानेन सन्तुष्टा धातृविष्णुमहेश्वराः।
आदित्याद्याः ग्रहास्सर्वे प्रीतास्युः पितरोगणाः॥ ७१॥
लोकपालाश्च सन्तुष्टा पिशाचा डाकिनीगणाः।
भूतप्रेताश्च गन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगाः॥ ७२॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां शान्तिरध्यायः पञ्चत्रिंशत्तमः॥ ३५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सबसे अन्त में ब्राह्मण-भोजन तथा शान्तिपाठ करायें। इस प्रकार से जो व्यक्ति अश्वशान्ति करता है, उसे अश्वों-वाहनों आदि के साथ लक्ष्मी की भी प्राप्ति होती है, इसमें संशय नहीं है। उसे सम्मान मिलता है, सफलता मिलती है तथा वाहनों का सुख मिलता है॥ ६९-७०॥

इस अनुष्ठान से ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सूर्यादि ग्रह, पितरगण, लोकपाल, पिशाच, शाकिनी, डाकिनी, भूत, प्रेत, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस आदि के समूह प्रसन्न तथा सन्तुष्ट हो जाते हैं॥ ७१-७२॥

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के पैंतीसवें शान्त्यध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ३५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

षट्त्रिंशत्तमोऽध्यायः

मिश्रकाध्यायः

उल्का पिण्डों का वर्णन

स्वर्गाच्युतानां रूपाणि यान्युल्कास्तानि वै भुवि।
धिष्ण्योल्काविद्युदशनितारा: पञ्चविधाः स्मृताः॥ १॥

स्वर्ग (आकाश या अन्तरिक्ष) से जो पिण्ड पृथ्वी पर गिरते हैं, उनके रूप पाँच प्रकार के होते हैं। जिन्हें १. धिष्ण्या, २. उल्का, ३. विद्युत्, ४. अशनि तथा ५. तारा कहते हैं॥ १॥

विमर्श—ये पाँचों प्रकार के उल्का पिण्ड अपने नामों के अनुसार गुण धर्मों को धारण करते हैं—

१. धिष्ण्या—'धिष्ण्या' शब्द व्याकरण के अनुसार 'धृष्' धातु में 'ण्य' प्रत्यय लगकर बनता है। यहाँ जो ऋकार है उसके स्थान पर इकार होकर 'धृष्ण्या' शब्द 'धिष्ण्या' बन गया है। 'धृष्' धातु भ्वादिगण की परस्मैपदी धातु है, यह धातु चुरादिगण में भी पायी जाती है। इसका अर्थ संहत होना तथा क्षति पहुँचाना आदि होता है। धिष्ण्या में घनत्व एवं कठोरता अधिक होती है, जिसके कारण यह पृथ्वी पर गिरकर भी नष्ट नहीं होती है। यह आकार में भी बड़ी होती है तथा आकाश से गिरते समय ऐसी मालूम होती है, जैसे कोई प्रज्वलित हवनकुण्ड आकाश से गिर रहा है अथवा हवनकुण्ड में होमी गयी सामग्री जलती हुई जिस प्रकार एक कठोर ज्वलनशील पिण्ड के आकार में घनीभूत-सी दिखती है; वैसी ही यह भी आकाश से भूमि पर गिरती हुई दिखायी देती है। यह सबसे बड़े आकार का ज्वलनशील पिण्ड होता है।

२. उल्का—यह शब्द 'उष्+कक्+टाप' है अर्थात् 'उष्' धातु में कक् प्रत्यय लगकर दीर्घ हो जाता है तथा 'ष्' के स्थान पर 'षस्यलः' नियम के अनुसार 'ल' बन जाता है। जिसके कारण मूल रूप में 'उष्का' शब्द होकर फिर 'उल्का' बन गया है। भ्वादिगण की 'उष्' धातु का अर्थ जलाना या मार डालना होता है। उल्का को उल्कोल्का भी कहते हैं। उल्का धिष्ण्या से आकार में छोटी होती है। यह आकाश में मशाल के समान जलती हुई प्रतीत होती है, उल्का का अर्थ 'मशाल' भी होता है।

३. अशनि—'अश्' धातु में अनि प्रत्यय जुड़ जाने से अशनि शब्द बनता है, जिसका अर्थ खाना होता है, यह वज्र की भाँति आघात करती है। यह जब आकाश से गिरती है, तो चक्र की भाँति घूमती हुई तथा धीरे-धीरे गिरती है। इन्द्र के वज्र का नाम भी अशनि है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

४. विद्युत्—'विशेषेण द्योतते इति विद्युत्'। अर्थात् जो विशेष चमक उत्पन्न करती है, उसे विद्युत् कहते हैं। 'द्युत्' धातु के पूर्व 'वि' उपसर्ग लगकर अन्त में 'क्विप्' प्रत्यय जुड़ जाने से 'विद्युत्' शब्द बनता है। इसकी गति वक्र होती है, यह जैसे आकाश में बिजली चमकती है, उसी प्रकार से शीघ्रता से चमकती तथा गिरती है।

५. तारा—'तार' शब्द में टाप् प्रत्यय लगकर तारा शब्द बन जाता है। जबकि 'तृ' धातु में 'णिच्' एवं 'अच्' प्रत्यय जुड़ने से तारा शब्द बनता है। यह आकार में तारा (Star) की भाँति दिखने से तारा कहलाती है।

पाँचों प्रकार की उल्का के फल देने का समय

सम्यक् पञ्च विधानाञ्च वक्ष्यते लक्षणं फलम्।
पाचयन्ति त्रिभिः पक्षैर्धिष्ण्योल्काशनिसंज्ञिताः॥ २॥
विद्युत् षड्भिरहोभिश्च तारास्तद्वत् फलप्रदाः।

इन पाँचों प्रकार की उल्काओं के लक्षण तथा फल कहता हूँ। इनमें धिष्ण्या, उल्का तथा अशनि—ये तीनों तीन पक्ष (४५ दिन) के भीतर अपना अशुभ फल देती हैं। विद्युत् एवं तारा—ये दोनों छह दिन में अपना फल देती हैं॥ २-२½ ॥

फल की मात्रा का कथन

फलपाककरीतारा धिष्ण्याख्यार्धा फलप्रदा॥ ३॥
उल्का विद्युदशनि सम्पूर्णफलदा नृणाम्।

तारा अपना पूर्ण फल देती है। विद्युत् केवल आधा फल देती है। उल्का, विद्युत् तथा अशनि भी मनुष्यों को अपना पूरा फल देती है॥ ३-३½ ॥

अशनि का लक्षण

अश्वेभोष्ट्रपशुनृषु वृक्षक्षोणीषु च क्रमात्॥ ४॥
विदारयन्ति पतितं स्वनेन महताऽशनिः।

अशनि अश्व, गज, उष्ट्र, पशु तथा मनुष्यों पर पड़ती है, वृक्षादि को विदीर्ण कर देती है। यह बड़ी जोर की आवाज करती है॥ ४-४½ ॥

विमर्श—अन्य ग्रन्थों में भी अशनि के लक्षण इसी प्रकार हैं—

'नरेभतुरगाश्वाश्मवृक्षेषु च पतेत्सदा।
ज्वलन्ती चक्रवद् दृश्या त्वशनी रवसंयुता॥'
—काश्यपसंहिता

'अशनिः महता स्वनेन नृगजाश्वमृगाश्मवेश्मतरुपशुषु।
निपतति विदारयन्ती धरातलं चक्रसंस्थाना॥'
—बृ० संहिता

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'अशनिः प्राणिषु निपतति दारयति धरातलं बृहच्छब्दा।'

—समाससंहिता

विद्युत् का लक्षण

जनयिनी च संत्रासं विद्युद् व्योम्नि त्विव स्फुटम्॥ ५॥

विद्युत् संत्रास उत्पन्न करती हुई चमक के साथ स्फोट (तड़तड़ या कड़कड़ शब्द) करती है॥ ५॥

विमर्श—विद्युत् वक्र होकर लपलपाती हुई गिरती है, इसमें तीव्रता होती है। इसके लक्षण ग्रन्थान्तरों में इस प्रकार हैं—

'विद्युत् त्रासकरी भीमा शब्दयन्ती तटतटा।
बृहच्छीर्षाति सूक्ष्मा च जीवेषु च पतेत्सदा॥'

—काश्यपसंहिता

'विद्युत् सत्ववत् त्रासं जनयन्ती तटतटस्वना सहसा।
कुटिल विशाला निपतति जीवेन्धनराशिषु ज्वलिता॥'

—बृहत् संहिता

'विद्युत् तटतटशब्दा ज्वालामालाकुला पतति॥'

—समाससंहिता

धिष्ण्या के लक्षण

चक्रा विशालज्वलिता पतन्ती वनराजिषु।
धिष्ण्यान्त्यपुच्छा पतति ज्वलिताङ्गारसन्निभा॥ ६॥

विशाल चक्र के आकार में जलती हुई, वन में गिरती हुई-सी जलते हुए अंगार-जैसी तथा पूँछयुक्त होने से धिष्ण्या कहलाती है॥ ६॥

विमर्श—काश्यप के अनुसार धिष्ण्या दश धनुष के आकार जितनी विशाल होती है, यह दो हाथ से छोटी नहीं होती है। यही अभिप्राय अन्यों ने भी व्यक्त किया है—

'धनूंषि दश या दृश्या सा च धिष्ण्या प्रकीर्तिता।
ज्वलिताङ्गारसदृशी द्वौ हस्तौ सा प्रमाणतः॥'

—काश्यपसंहिता

'धिष्ण्या कृशाल्यपुच्छा धनूंषि दश दृश्यतेऽन्तराभ्यधिकम्।
ज्वलिताङ्गारनिकाशा द्वौ हस्तौ सा प्रमाणेन॥'

—बृहत् संहिता

तारा के लक्षण

हस्तद्वयप्रमाणा सा दृश्यते च समीपतः।
ताराब्जतनुवच्छुक्ला हस्तदीर्घाम्बुजारुणा॥ ७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तारा दो हाथ की चन्द्रमा के समान शुक्ल वर्ण की ऐसी पास आने पर दिखती हैं किन्तु पास आने पर एक हाथ की तथा लाल कमल के रंग-जैसी दिखती है॥ ७॥

विमर्श—कश्यप के अनुसार उसकी गति ऊपर-नीचे तथा तिरछे तीनों प्रकार की होती है—

'पद्म ताम्रा कृतिश्चैव हस्तमात्रायता गता।
तिर्यगूर्ध्वमह्यो याति सोह्यमानेव तारका॥'

—काश्यपसंहिता

वराहमिहिर ने भी उसकी तीनों प्रकार की गतियों को लिखा है—

'ताराहस्तं दीर्घा शुक्ला ताम्राब्जतन्तुरूपा वा।
तिर्यगूर्धश्चोर्ध्वं वा याति वियत्युह्यमानेव॥'

—बृहत् संहिता

उल्का के लक्षण एवं विविध आकार

ऊर्ध्वं वाप्यथवा तिर्यगधो वा गगनान्तरे।
उल्काशिरो विशाला तु पतन्ती वर्धते तनुम्॥ ८॥
दीर्घपुच्छा भवेत्तस्या भेदाः स्युर्बहवस्तथा।
पीडाश्चोष्ट्राहिगोमायुखुरगोगजदंष्ट्रिकाः ॥ ९॥
कपिगोधाधूमनिभा विविधा पापदा नृणाम्।
अश्वेभचन्द्ररजतवृषहंसध्वजोपमाः ॥ १०॥
वज्रशंखशुक्तिकाब्जरूपाः शिवसुखप्रदाः।
पतन्तीह स्वरा वह्नौ राजराष्ट्रक्षयाय च॥ ११॥
यद्यम्बरे निपतति लोकस्याप्यति विभ्रमः।
यद्यर्केन्दू संस्पृशति तत्र भूमिप्रकम्पनम्॥ १२॥
परचक्रागमभयं जनानां क्षुज्जलाद् भयम्।
अर्केन्द्वोरपसव्योल्का पौरेतरविनाशदा॥ १३॥

उल्का आकाश में ऊपर की ओर जाती हुई अथवा नीचे की ओर गिरती हुई अथवा तिरछी जाती हुई चलती है तथा टूटते ही विस्तृत हो जाती है, इसका शिर विशाल होता है॥ ८॥

विमर्श—उल्का के बहुत से भेद होते हैं, जो आगे के श्लोकों में बताये गये हैं। अन्य ग्रन्थों के अनुसार उल्का के सामान्य लक्षण निम्न प्रकार होते हैं—

'उल्का मूर्धनि विस्तीर्णा पतन्ती वर्धतेत्तु सा।
तनु पुच्छा नृमाना तु बहुभेदसमावृता॥'

—काश्यपसंहिता

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'उल्का शिरसि विशाला निपन्ती वर्धते प्रतनुपुच्छा।
दीर्घा च भवति पुरुषं भेदा बहवो भवन्त्यस्याः॥'
—बृहत् संहिता

उल्का की पूँछ विशाल होती है, उसके अनेक प्रकार एवं आकार होते हैं। यदि उल्का ऊँट, सर्प, सियार, गधा, गाय, हाथी के दाँत आदि जैसी हो तो जिसके आकार की है, उसी प्राणी को पीड़ा होती है॥ ९॥

यदि उल्का बन्दर, गोह, धूम (धुआँ) के समान अनेक आकारोंवाली हो तो अशुभफल देती है, किन्तु यदि अलग आकार घोड़ा, हाथी, चन्द्रमा, चाँदी, बैल, हंस, ध्वज, वस्त्र, शंख, सीप,कमल आदि के समान हो तो शुभफल करती है॥ १०-१०½॥

यदि उल्का अग्नि में गिर जाय शासक एवं जनता दोनों को कष्ट होता है॥ ११॥

यदि उल्का धरती की ओर न आकर आकाश में ही बिखर जाय, तो लोगों को इधर से उधर व्यर्थ का भ्रमण करना पड़ता है। यदि उल्का सूर्य अथवा चन्द्रमा का स्पर्श करे तो भूकम्प आता है। दूसरे देश का आक्रमण अपने राज्य या राष्ट्र पर होता है। लोगों को जल एवं अन्न की कमी से त्रास होता है। यदि उल्का सूर्य चन्द्रमा के दाहिनी ओर होकर गिरे तो पुर (राजधानी) से दूर रहनेवालों की हानि करती है। ग्रामीण लोग कष्ट पाते हैं॥ १२-१३॥

विमर्श—अन्य ग्रन्थकारों का मत भी इसी प्रकार का है—

'आयुधप्रेतसदृशी जम्बुकोष्ट्रखराकृतिः।
धूम्रवर्णा तु पापाख्या विशीर्णा यातु मध्यमा॥
ध्वजपद्महंसाभा पर्वताभ्रसमप्रभा।
श्रीवृक्षशङ्खसदृशी या चोल्का सा शिवप्रदा॥'
—काश्यपसंहिता

'ध्वजझषगिरिकरिकमलेन्दुतुरगसन्तप्तरजतहंसाभाः ।
श्रीवृक्षवज्रशङ्खस्वस्तिकरूपाः शिव सुभिक्षाः॥
अम्वर मध्याद् बह्वयो निपतन्त्यो राज्यराष्ट्रनाशाय।
बम्भ्रमती गगनोपरि ब्रिभ्रमाख्याति लोकस्य॥
संस्पृशती चन्द्रार्कौ तद् विस्तृता वा सभू प्रकम्पा च।
परचक्रागमनृपभयदुर्भिक्षा वृष्टिभयजननी॥
पौरे तरघ्नमुल्कापसव्यकरणं दिवाकर हिमांश्वोः।
उल्काशुभदा पुरतो दिवाकर विनिःसृता यातुः॥'

सूर्य-चन्द्र के उदय में पूर्वी क्षितिघ्न की उल्का का फल

उदयास्तमयेऽर्केन्द्वोः परतोल्का शुभप्रदा।
सितरक्ता पीतसिता सोल्का नेष्टा द्विजातिभिः॥ १४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि सूर्योदय अथवा चन्द्रोदय में उनके साथ ही उल्कापात हो तो शुभफल होता है। श्वेत उल्का ब्राह्मणों का, लाल उल्का क्षत्रियों का, पीली उल्का वैश्यों का तथा असित (काले) रंग की उल्का शूद्रों का नाश करती है॥ १४॥

उल्का के पुच्छ भाग की दिशा का फल

सितोदितो भये पार्श्वे पुच्छे दिक्षु विदिक्षु च।
विप्रादीनामनिष्टानि पतितोल्कादिभान्यपि॥ १५॥

यदि उल्कापात उत्तर दिशा में हो तो ब्राह्मणों को हानिकारक होता है। यदि पूर्व में गिरे तो क्षत्रियों को अशुभफल होता है। यदि दक्षिण में गिरे तो वैश्यों की हानि होती है। तथैव पश्चिम में गिरने पर शूद्रों को हानि करती है॥ १५॥

राजाओं के लिये शुभफलदायक उल्का

तारा कुन्दनिभा स्निग्धा भूभुजां तु शुभप्रदा।
नीलाश्यामारुणा चाग्निवर्णोक्ता साऽशुभप्रदा॥ १६॥

जो उल्का कुन्दपुष्प के समान श्वेत तथा स्निग्ध हो, वह राजा के लिये शुभ होती है किन्तु नील, श्याम, अरुण तथा अग्निवर्ण हो तो वह अशुभ फल देती है॥ १६॥

सन्ध्यादि समय के उल्कापात का फल

सन्ध्यायां वह्निपीडा च दलिता राजनाशिनी।
नक्षत्रग्रहणे देवस्तद्वर्णानामनिष्टदा॥ १७॥

यदि सन्ध्याकाल (सायं) उल्कापात हो तो अग्निभय होता है। यदि वह तारा खण्डित हो जाय तो शासन-व्यवस्था में परिवर्तन होता है। यदि वह उल्का किसी नक्षत्र या गृह का आघात करे, तो उस नक्षत्र एवं राशि स्वामी ग्रह से सम्बन्धित व्यक्ति को कष्ट देती है॥ १७॥

विमर्श—इस सम्बन्ध में वराहमिहिर के विचार इस प्रकार हैं—

शुक्ला रक्ता पीता कृष्णा चोल्का द्विजादि वर्णघ्नी।
क्रमशंश्चैतान् हन्युर्मूर्धोरः पार्श्वपुच्छस्थाः॥ १॥
उत्तरदिगादि पतिता विप्रादीनामनिष्टदा रूक्षा।
ऋज्वी स्निग्धाखण्डा नीचोपगता च तद् वृद्ध्यै॥ २॥
श्यावारुणनीला सृग्दहना सितभस्मसन्निभा रूक्षा।
सन्ध्यादिनजा वक्रा दलिता च परागमभयाय॥ ३॥
नक्षत्र ग्रह घातेस्तद् भक्तीनां क्षयाय निर्दिष्टा।
उदये घ्नती रवीन्दू पौरैतर मृत्यवेऽस्ते वा॥ ४॥

—बृ० सं०

कश्यप ऋषि भी उल्का के द्वारा पीड़ित ग्रह-नक्षत्रों से सम्बन्धित मनुष्यों को पीड़ाकारक मानते हैं—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'नक्षत्राणि ग्रहाश्चैव यद्युल्का ध्वस्तधूमिताः।
तद्देशनाथनाशाय लोकानां सम्भ्रमाय च॥'

पीड़ित नक्षत्र से सम्बन्धित राज्य एवं राष्ट्र भी पीड़ित होते हैं।

उल्का से हत नक्षत्रों का फल

स्थिरधिष्ण्येषु पतिता स्त्रीणां चोक्ता भयप्रदा।
क्षिप्रभेषु विशां पीडा भूपतीनां चरेषु च॥ १८॥
मृदुभेषु द्विजातीनां दारुणं दारुणेषु च।
उग्रभेषु च शूद्राणां परेषां मिश्रभेषु च॥ १९॥

१. यदि स्थिर नक्षत्रों (उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्र तथा रोहिणी) इन नक्षत्रों की योगतारा के समीप उल्कापात हो तो स्त्रियों को भय होता है।

२. यदि क्षिप्र नक्षत्रों (हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्) में उल्कापात हो तो वैश्यों को पीड़ा होती है।

३. यदि चर नक्षत्रों (स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा) में उल्कापात हो तो राजनीतिज्ञों एवं प्रशासकों को पीड़ा होती है।

४. यदि मृदु नक्षत्रों (मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा) में उल्कापात हो तो द्विजाति (ब्राह्मणों) को पीड़ा होती है।

५. यदि दारुण नक्षत्रों (मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा तथा आश्लेषा) में उल्कापात हो तो दारुण लोगों (शिकारी, निर्दयी, मछुवारे आदि) को पीड़ा होती है।

६. यदि उग्र नक्षत्रों (पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वा भाद्रपद, भरणी, मघा) में उल्कापात हो तब शूद्रों को पीड़ा होती है।

७. यदि मिश्र नक्षत्रों (विशाखा, कृत्तिका) में उल्कापात हो तो वर्णसंकर लोगों जातियों (जैसे एंग्लो इंडियन) आदि को पीड़ा होती है॥ १८-१९॥

विमर्श—वराहमिहिर ने नक्षत्रों के वर्ग न लिखकर सीधे उनके नाम ही लिख दिये हैं यथा—

'भाग्यादित्य धनिष्ठामूलेषुल्का हतेषु चोराणाम्।
विप्र क्षत्रिय पीडा पुष्यानिल विष्णु देवेषु॥
ध्रुव सौम्येषु नृपाणामुग्रेषु सदारुणेषु चोराणाम्।
क्षिप्रेषु कलाविदुषां पीडा साधारणे च हते॥'

इनके अनुसार साधारण नक्षत्रों का उल्कापात साधारण के लिये अनिष्टप्रद होता है (यही अर्थ अभीष्ट है)।

स्थानानुसार उल्कापात का फल

राज्यराष्ट्रस्वनाशाय प्रासादप्रतिमासु च।
गृहेषु स्वामिनां पीडा नृपाणां पर्वतेषु च॥ २०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दीक्षितानां दिगीशानां कर्षकाणां स्थलेषु च।
प्राकारे परिखायां वा द्वारि तत्पौरमध्यमे॥ २१॥
परचक्रागमभयं राज्यं पौरजनक्षयः।
गोष्ठे गोस्वामिनां पीडा शिल्पिकानां जलेषु च॥ २२॥

१. यदि देवालय अथवा देवमूर्तियों पर उल्कापात हो तो राज्य एवं राष्ट्र की हानि होती है।

२. यदि घरों पर उल्कापात हो तो उनके स्वामियों को पीड़ा होती है।

३. यदि पर्वतों पर उल्कापात हो तो राजाओं को पीड़ा होती है।

४. यदि परती भूमि पर उल्कापात हो तो दीक्षितों (यज्ञकर्ता एवं साधु-संन्यासियों) को पीड़ा होती है।

५. यदि खेतों में उल्कापात हो तो किसानों को पीड़ा होती है।

६. यदि नगर की चहारदीवारों, परिखा (किले के बाहर की खाईं), नगरद्वार, अथवा नगर के मध्य भाग में उल्कापात हो तो नगर को बाहरी लोगों से भय होता है, नागरिकों को कष्ट होता है।

७. यदि गोशालादि पर उल्कापात हो तो गोपाल को कष्ट होता है।

८. यदि जल में उल्का का पतन हो तो शिल्पी लोगों को कष्ट होता है॥ २०-२२॥

विमर्श—वराहमिहिर ने इस विषय को स्पष्ट करते हुए लिखा है—

'कुर्वन्येताः पतिता देवप्रतिमासु राजराष्ट्रभयम्।
शक्रोपरि नृपतीनां गृहेषु गृहस्वामिनां पीडाम्॥
आशाग्रहोपघाते तद् देश्यावाँखले कृषिरतानाम्।
चैत्यतरौ सम्पतिता सत्कृतपीडां करोत्युल्का॥
द्वारिपुरस्य पुरक्षयमथेन्द्र कीले जनक्षयोऽभिहितः।
ब्रह्मायतने विप्रान् विनिहन्याद् गोमिनो गोष्ठे॥'

आकारादि के अनुसार उल्कापात का फल

राजहन्त्री तन्तुनिभा चेन्द्रध्वजसमाथवा।
प्रतीपगा राजपत्नीं तिर्यगा च चमूपतिम्॥ २३॥
अधोमुखी नृपं हन्ति ब्राह्मणामूर्ध्वगा तथा।
वृक्षोपमा पुच्छनिभा जनसंक्षोभकारिणी॥ २४॥
प्रसर्पिणी वा सर्पवत् सा गणानामनिष्टदा।
वर्तुलोल्का पुरं हन्ति छत्राकारा पुरोहितम्॥ २५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वंशगुल्मलताकारा राष्ट्रविद्राविणी तथा।
सूकरव्यालसदृशा खण्डाकारा च पापदा॥ २६॥
इन्द्रचापनिभाराज्यं मूर्छिता हन्ति तोयदम्॥ २७॥

जो उल्का तन्तु के समान पतली हो अथवा इन्द्रध्वज के समान हो तो वह राजा का नाश करती है, अगर वह उल्टी होकर गिरे तो राजपत्नी के लिये घातक होती है। यदि तिरछी होकर गिरे तो सेनाध्यक्ष अथवा प्रतिरक्षा मन्त्री के लिये घातक होती है॥ २३॥

यदि उल्का अधोमुख होकर गिरे तो प्रधान शासक का नाश होता है, यदि वह ऊपर की ओर चली जाय तो ब्राह्मणों (बुद्धिजीवियों) की हानि होती है। यदि उसका आकार वृक्ष के समान अथवा पूँछ के समान हो तो जनता को कष्ट होता है॥ २४॥

जो उल्का सर्प की भाँति लहराती हुई गिरे, वह गणों (शासकीय कर्मचारियों) के लिये घातक प्रभाव करती है। यदि वृत्ताकारवाली उल्का गिरे तो राजधानी की हानि होती है। यदि छत्र (छाता) के आकार की उल्का का पतन हो तो राजपुरोहित (प्रधान न्यायाधीश) की हानि होती है॥ २५॥

जो उल्का बाँस, गुल्म (झाड़ी), लता (बेल) के समान आकारवाली होती है, वह राष्ट्र की हानि करती है। यदि सूअर, सर्प तथा खण्डित आकारवाली उल्का का पतन हो तो जनता में पापकर्म होते हैं॥ २६॥

जो उल्का इन्द्रध्वज के समान हो, वह राज्य को नष्ट करती है। जो उल्का कान्तिहीन हो वह वर्षा की हानि एवं सिंचाई के साधनों को नष्टकर जल की हानि भी करती है॥ २७॥

विमर्श—देवर्षि नारदजी के फल-कथन का समर्थन वराहमिहिर ने निम्न शब्दावली में किया है—

'क्ष्वेडास्फोटित वादित गीतोत्क्रुष्टस्वना भवन्ति यदि।
उल्कानिपातसमये भयाय राष्ट्रस्य स नृपस्य॥
यस्याश्चिरं तिष्ठति खेऽनुषङ्गो तण्डाकृतिः सा नृपतेर्भयाय।
या चोह्यते तन्त घृतेव खस्थाः यावा महेन्द्रध्वजतुल्यरूपाः॥
प्रेष्ठिनः प्रतीपगा तिर्यगा नृपाङ्गनाम्।
हन्त्यधोमुखी नृपान् ब्राह्मणावथोर्ध्वगा॥
बर्हिपुच्छरूपिणी लोकसङ्क्षयावहा।
सर्पवत् प्रसर्पती योषितमनिष्टदा॥
हन्ति मण्डलापुरं छत्रवत् पुरोहितम्।
वंशगुल्मवत्स्थिता राष्ट्रदोषकारिणी॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्यालसूकरोपमा विस्फुलिङ्गमालिनी।
खण्ड खण्डशोऽथवा गतास्वना च पापदा॥
सुरपतिचाप प्रतिमा राज्यं नभसि विलीना जलदान् हन्ति।
पवन विलोमा कुटिलं याता न भवति शस्ता विनिवृत्ता च॥
अभिभवति यतः पुरं बलं वा भवति भयं तत एव पार्थिवस्य।
निपतति च यया प्रदीप्ता जयति रिपून चिरायत्तया प्रयातः॥'

कश्यपजी ने कहा है कि यदि कोइ राजा (या सेनापति) जब युद्धयात्रा के लिये प्रस्थान कर रहा हो, तो उस समय तीव्र प्रकाश तथा घनघोर आवाजवाली उल्का जिस दिशा में गिरे, उसी दिशा में राजा को प्रस्थान करने पर युद्ध में विजय प्राप्त होती है—

'पार्थिवे प्रस्थिते दीप्ता पतत्युल्का महास्वनाः।
तां दिशां सिद्ध्यते सिद्धिं विजयं लभतेऽचिरात्॥'

—कश्यपसंहिता

सूर्य एवं चन्द्रमा के परिवेष (मण्डलों) का कथन

किरणा वायुनिहता उच्छ्रिता मण्डलीकृताः।
नानावर्णाकृतयस्ते परिवेषाः शशीनयोः॥ २८॥

वायु से सूर्य या चन्द्रमा की किरण निहत होकर ऊपर को उठकर मण्डलाकार हो जाती है। उन्हें परिवेष या मण्डल कहते हैं, वे अनेक रंग की किरणों से युक्त होते हैं।

विमर्श—कभी-कभी सूर्य एवं चन्द्रमा के चारों ओर वृत्ताकार कुछ चौड़ा-सा एक घेरा दिखायी पड़ता है। चाँदनी रात में चन्द्रमा के आसपास यह परिवेष आसानी से दिखायी देता है। सूर्य का परिवेष दिन में होता है। अतः दिन में अपने काम में व्यस्तता के कारण लोग सूर्य का परिवेष नहीं देख पाते हैं। वास्तव में परिवेष का निर्माण वायुमण्डल में व्याप्त जलवाष्प एवं धूलिकणों में किरणों के प्रवेश के कारण होता है, जिनके कारण एक चक्र-जैसा घेरा बन जाता है—

'सम्मूर्च्छितारवीन्द्वोः किरणाः पवनेन मण्डलीभूताः।
नानावर्णाकृतयस्तन्वभ्रे व्योम्नि परिवेषाः॥'

—बृ० सं० ३४।१

परिवेषों के विभिन्न रंग

ते रक्तनीलपाण्डुरकपोताभ्राश्च कापिलाः।
सपीतशुकवर्णाश्च प्रागादिदिक्षु वृष्टिदाः॥ २९॥

१. यदि पूर्वदिशा में स्थित परिवेष रक्तवर्ण का हो तो वर्षा का सूचक होता है। २. यदि नील वर्ण का परिवेष अग्निकोण में हो तो वर्षा होती है। ३. यदि पाण्डुर वर्ण का परिवेष दक्षिण दिशा में हो तो वर्षा का सूचक होता है। ४. यदि कबूतर के रंग का

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

परिवेष नैर्ऋत्य कोण में हो तो वृष्टिप्रद जानना चाहिये। ५. बादलों के रंग का परिवेष पश्चिम में होने पर वृष्टिदायक होता है। ६. कपिल वर्ण का परिवेष वायव्य कोण में होने पर वृष्टिकारक होता है। ७. पीले रंग का उत्तर दिशा का मण्डल वृष्टिप्रद होता है। ८. इसी प्रकार ईशान कोण में सुवापंखी रंग का मण्डल दिखने पर वर्षा होती है ॥ २९ ॥

विमर्श—जब सूर्य या चन्द्रमा पूर्व कपाल में होंगे, तब वह ईशान-पूर्व या अग्निकोण में अपने उत्तरी या दक्षिणी शर एवं क्रान्ति के कारण रहेंगे। पश्चिम कपाल में वे अपनी क्रान्ति एवं शर के अनुसार नैर्ऋत्य-पश्चिम तथा वायव्य में होंगे। इसी प्रकार से उनकी उत्तर तथा दक्षिण स्थिति को समझें। वराहमिहिर ने इन रंगों के देवता क्रमशः इन्द्र, यम, वरुण, निर्ऋति, वायु, शिव, ब्रह्मा तथा अग्नि कहे हैं—

'ते रक्त नील पाण्डुर कापोताभ्रभ शबल हरित शुक्लाः।
इन्द्र यम वरुण निर्ऋति श्वसनेश पितामहाग्नि कृताः ॥'

विभिन्न आकार-प्रकार एवं वर्णों के परिवेष का फल

मुहुर्मुहुः प्रलीयन्ते न सम्पूर्णफलप्रदाः।
शुभास्तु कपिलाः स्निग्धाः क्षीरतैलाम्बुसन्निभाः ॥ ३० ॥
चापशृङ्गाटकरथक्षतजाभारुणाः शुभाः।
अनेकवृक्षवर्णाश्च परिवेषा नृपान्तकृत् ॥ ३१ ॥
अहर्निशं प्रतिदिनं चन्द्रार्कावरुणो यदा।
परिविष्टो नृपवधं कुरुतो लोहितौ यदा ॥ ३२ ॥
द्विमण्डलश्चमूनाथं नृपघ्नोऽथ त्रिमण्डलम्।

जो परिवेष बार-बार बनकर मिट जाय, उसका फल अल्प होता है। कपिल, स्निग्ध, दूधियारंग, तेलियारंग, जलीय रंग के परिवेषों का फल शुभ होता है ॥ ३० ॥

धनुष, श्रृंगाटक, रथ आदि के आकार के तथा रक्ताभ वर्ण के लाल परिवेष शुभ होते हैं। वृक्षों के रंग के तथा अनेक रंग के परिवेष राजा का नाश करते हैं ॥ ३१ ॥

यदि कुछ दिनों लगातार दिन में सूर्य पर तथा रात में चन्द्रमा पर मण्डल बनता रहे तथा उसका रंग लाल हो तो प्रधान शासक की मृत्यु होती है ॥ ३२ ॥

यदि एक साथ दो मण्डलों (परिवेषों) का निर्माण दिखायी पड़े (अर्थात् एक मण्डल के बाहर दूसरा मण्डल बन जाय) तो सेनापति को नष्ट करता है। तीन मण्डल राजा को नष्ट करते हैं ॥ ३२½ ॥

परिवेषगत शनि का फल

परिवेषगतः सौरिः क्षुद्रधान्यविनाशकृत् ॥ ३३ ॥

यदि परिवेष में शनिग्रह भीतर आ जाय तो क्षुद्र धान्यों (सावाँ, कोदो, ककुनी, कूरी, मोंठ, खेसारी, कुल्थी, आदि) का नाश होता है ॥ ३३ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

परिवेषगत मंगलादि का फल

रणकृद् भूमिजो जीवः सर्वेषामभयप्रदः।
ज्ञः सस्यहानिदः शुक्रो दुर्भिक्षकलहप्रदः॥ ३४॥

१. यदि मंगल परिवेष में हो तो युद्ध, एवं अराजकता फैलती है। २. यदि बुध परिवेश में हो तो फसल की हानि होती है। ३. यदि गुरु परिवेष के भीतर आ जाय तो सब निर्भय होते हैं। ४. यदि शुक्र के चारों ओर मण्डल हो तो दुर्भिक्ष एवं कलह होता है॥ ३४॥

परिवेषगत राहु-केतु के फल

परिवेषगतः केतुर्दुर्भिक्षकलहप्रदः।
पीडां नृपवधं राहुगर्भच्छेदं करोति च॥ ३५॥

१. राहु को यदि परिवेष घेर लेता है तो दुर्भिक्ष एवं कलह होता है। २. यदि केतु पर परिवेष हो तो राजा की मृत्यु तथा रानी का गर्भपात करता है॥ ३५॥

विमर्श—यतः राहु-केतु पिण्ड एवं विम्बवाले ग्रह नहीं हैं किन्तु छाया ग्रह हैं। भारतीय पंचांगों में उनका मध्यम स्पष्ट राश्यादि लिखा रहता है, अतः राहु-केतु जिस राशि या नक्षत्र के जिस भाग में हों, उस पर यदि परिवेष हो तो राहु-केतु पर परिवेष जाना चाहिये। वराहमिहिर ने परिवेषगत ग्रहों का फल इस प्रकार कहा है—

'परिवेषमण्डलगतो रवितनयः क्षुद्रधान्यनाशकरः।
जनयति च वातवृष्टिं स्थावरकृषिकृन्निहन्ता च॥
भौमे कुमार बलपति सैन्यानां विद्रवोऽग्नि शस्त्रभयम्।
जीवे परिवेषगते पुरोहितामात्यनृपपीडा॥
मन्त्रि स्थावर लेखक परिवृद्धिश्चन्द्रजे सुवृष्टिश्च।
शुक्रे यायि क्षत्रिय राज्ञी पीडा प्रियश्चात्रम्॥
क्षुदनल मृत्युनराधिप शस्त्रेभ्यो जायते अयं केतौ।
परिविष्टे गर्भभयं राहौ व्याधौ नृपभयञ्च॥'

परिवेषगत दो तथा तीन ग्रहों का फल

द्वौ ग्रहौ परिवेषस्थौ क्षितीश कलहप्रदौ।
कुर्वन्ति कलहानर्घं परिवेष गतास्त्रयः॥ ३६॥

१. यदि परिवेष के अन्तर्गत एक साथ कोई भी दो ग्रह हों तो राजनीतिज्ञों में कलह होता है। २. यदि तीन ग्रह एक साथ परिविष्ट हों तो गृहयुद्ध तथा महँगाई की वृद्धि होती है॥ ३६॥

परिवेषगत चार-पाँच ग्रहों का फल

चत्वारः परिवेषस्था नृपस्य मरणप्रदाः।
परिवेषगताः पञ्च जलप्रलयदा ग्रहाः॥ ३७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१. यदि चार ग्रह पर परिवेष हो तो राजा का मरण होता है। २. यदि पाँच ग्रहों पर परिवेष लगा हो तो जलप्रलयदायक (अशुभ फलकारक) होते हैं॥ ३७॥

विमर्श—महर्षि कश्यप ने दो से अधिक ग्रहों के परिवेष में होने का फल इस प्रकार लिखा है—

'परिवेषाभ्यन्तरगौ द्वौ ग्रहौ यायि नागरौ।
युद्धञ्च भवति क्षिप्रं घोररूपं सुदारुणम्॥
मण्डलान्तरिता पञ्च जगतः सङ्क्षयावहाः।
अथ ताराग्रहस्यैव नक्षत्राणामधायिवा॥
परिवेषो यदा दृश्यस्तदा नरपतेर्वधः।
यदि केतूदयो नस्यादन्यथा तद्वदेत्फलम्॥'

—काश्यपसंहिता

वराहमिहिर ने पाँच ग्रहों के परिवेष में जगत् को प्रलय की भाँति कष्ट लिखा है। अर्थात् अतिवृष्टि का कष्ट होता है—

'युद्धानि विजानीयात् परिवेषाभ्यन्तरे द्वयोर्ग्रहयोः।
दिवसकृतः शशिनो वा क्षुद्वृष्टि भयं त्रिषु प्रोक्तम्॥
याति चतुर्षु नरेन्द्रः सामात्य पुरोहितो वशं मृत्योः।
प्रलयमिव विद्धि जगतः पञ्चादिषु मण्डलेषु॥'

परिवेषगत वक्रीग्रह का फल

एवं वक्रग्रहास्तेषामेवं फलनिरूपणम्।
नृपहानिः कुजादीनां परिवेषे पृथक् पृथक्॥ ३८॥

यदि भौमादि पञ्च ताराग्रहों में एक भी ग्रह वक्री होकर परिवेषगत हो तो राजा की हानि होती है॥ ३८॥

दो या अधिक नक्षत्रों के परिवेष का फल

परिवेषोऽपि धिष्ण्यानां फलमेव द्वयोस्त्रिषु।

यदि एक साथ दो या तीन नक्षत्र परिवेषगत हों तो राजा का नाश करते हैं॥ ३८½॥

प्रतिपदादि चार तिथियों में परिवेष का फल

परिवेषो द्विजातीनां नष्टः प्रतिपदादिषु॥ ३९॥

यदि प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया तथा चतुर्थी इन चार चान्द्र तिथियों में सूर्य या चन्द्रमा पर परिवेष हो तो अशुभ फल होता है॥ ३९॥

विमर्श—वराहमिहिर के अनुसार प्रतिपदादि चार तिथियों का परिवेष क्रमशः ब्राह्मणादि चारों वर्णों को कष्ट देता है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'विप्रक्षत्रियविट्शूद्रहा भवेत् प्रतिपदादिषु क्रमशः ॥'

पञ्चमी आदि तिथियों के परिवेष का फल

पञ्चम्यादिषु तिसृषु ह्यशुभो नृपतेस्तथा।
अष्टम्यां युवराजस्य परिवेषोऽप्यभीष्टदः॥ ४०॥
ततस्तिसृषु तिथिषु नृपाणामशुभप्रदः।
पुरोहितस्य द्वादश्यां विनाशाय भवेदसौ॥ ४१॥
सैन्यक्षोभस्त्रयोदश्यां नृपरोधमथापि वा।
राजपत्न्यश्चतुर्दश्यां परिवेषो गदप्रदः॥ ४२॥
परिवेषः पञ्चदश्यां क्षितीशानामनिष्टदः।

१. पञ्चमी आदि तीन तिथियों में परिवेष हो तो राजा के लिये अशुभ होता है।

२. यदि अष्टमी में परिवेष हो तो युवराज के लिये शुभ होता है॥ ४८॥

३. यदि नवमी-दशमी-एकादशी में परिवेष हो तब राजाओं को अशुभ फल करता है।

४. द्वादशी तिथि का परिवेश राजपुरोहित का नाश करता है॥ ४१॥

५. त्रयोदशी तिथि में मण्डल होने पर सेना का प्रकोप होता है।

६. चतुर्दशी तिथि का परिवेष रानी को रोगप्रद होता है॥ ४२॥

७. पूर्णिमा तिथि का परिवेष भी राजाओं एवं राजनीतिज्ञों के लिये अशुभ फल देता है॥ ४२½॥

परिवेष में रेखा के अनुसार शुभाशुभ फल

परिवेषस्य मध्ये वा बाह्ये रेखा भवेद्यदि॥ ४३॥
स्थायिनां मध्यमा नेष्टा यायिनां पार्श्वसंस्थिता।
प्रावृड्ऋतौ च शरदि परिवेषो जलप्रदा॥ ४४॥
प्रायेणान्येषु ऋतुषु तदुक्त फलदायिनः॥ ४५॥

१. यदि परिवेष के मध्य भाग में रेखा दिखायी पड़े तो अथवा बाहर रेखा हो तो स्थायी राजा (प्रतिरक्षा करनेवाले = Defender) को मध्यम फल होता है। २. पार्श्वस्थित रेखा यायी (आक्रमणकारी) के लिये नेष्ट फल देती है॥ ४३-४३½॥

यदि वर्षाऋतु में परिवेश हो तो शुभफल होता है तथा जलवृष्टि होती है, परन्तु अन्य ऋतुओं में जैसा उसका फल पूर्व में वर्णित है, उसका विचार करना चाहिये॥ ४४-४५॥

विमर्श—वराहमिहिर के अनुभव के अनुसार परिवेष के भीतर की रेखा देशवासियों को फल देती है। बाहर की गगनेच्छु राजाओं को फल देती है। मध्य की रेखा आक्रन्द को फल देती है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इन्द्रधनुष के लक्षण

नानावर्णांशवो भानोः साभ्रवायुः विघट्टिताः।
यद् व्योम्नि चापसंस्थानमिन्द्रचापं प्रदृश्यते॥ ४६॥

अभ्र (Cloud) तथा वायु (Air) के संयोग से सूर्य की (सप्तरंगी) किरणें विघट्टित होकर आकाश में धनुष का रूप धारण कर लेती हैं, उसे इन्द्रधनुष (Rainbow) कहा जाता है॥ ४६॥

वायु एवं अभ्र के विघट्टित होने का कारण

अथवा शेषनागेन्द्र दीर्घनिःश्वाससम्भवम्।

अथवा शेष नागेन्द्र के दीर्घश्वास-प्रश्वास में वायु एवं अभ्र विघट्टित होकर इन्द्रधनुष की उत्पत्ति होती है॥ ४६½॥

विमर्श—वायु के दबाव को न्यूनाधिक करनेवाली शक्ति को शेष नागेन्द्र कहा गया है।

विविध प्रकार के इन्द्रधनुष के फल

विदिक्षुजं दिक्षुजञ्च तद् दिङ् नृपविनाशनम्॥ ४७॥
पीतपाटलनीलैश्च वह्निशस्त्रास्त्रभीतिजम्।
वृक्षजं व्याधिदं चापं भूमिजं सस्यनाशनम्॥ ४८॥
अवृष्टिदं जलोद्भूतं वल्मीके युद्धभीतिदम्।
अवृष्टौ वृष्टिदं चैन्द्र्यां दिशि वृष्ट्यामवृष्टिदम्॥ ४९॥
सदैववृष्टिदं पश्चाद् दिशोरितरयोस्तथा।
रात्र्यामिन्द्रधनुः प्राच्यां नृपहानिर्भवेद्यदि॥ ५०॥
याम्यां सेनापतिं हन्ति पश्चिमे नायकोत्तमम्।
मन्त्रिणं सौम्यदिग्भागे सचिवं कोणसम्भवम्॥ ५१॥
रात्र्यामिन्द्रधनुः शुक्लवर्णाढ्यं विप्रपूर्वकम्।
हन्ति यद् दिग्भवं स्पष्टं तद्दिगीशनृपोत्तमम्॥ ५२॥
अवनीगाढमच्छिन्नं प्रतिकूलधनुर्द्वयम्।
नृपान्तकृद्यदि भवेदानुकूल्यं न तच्छुभम्॥ ५३॥

१. यह इन्द्रधनुष जिस दिशा (पूर्व-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण) में अथवा विदिशा (ईशान-आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य) में दिखायी पड़े, उसी दिशा के शासक को नष्ट करता है॥ ४७॥

२. यदि इन्द्रधनुष का रंग पीला, पाटल अथवा नील वर्ण का हो तो अग्निभय, तथा शस्त्रास्त्रभय देता है। ३. यदि यह वृक्षों के ऊपर दिखे तो रोगकारक होता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

४. यदि इन्द्रधनुष भूमि पर (क्षितिज से लगा हुआ) दिखे तो फसलों की हानि होती है ॥ ४८ ॥

५. यदि इन्द्रधनुष जल में दिखायी दे तो वर्षा नहीं होती है। ६. वल्मीक (बांबी) पर दिखे तो युद्ध का भय होता है। ७. पूर्व दिशा का इन्द्रधनुष अवृष्टिकारक होता है। ८. यदि वर्षा होते समय पूर्व में इन्द्रधनुष दिखे तो वर्षा रुक जाती है ॥ ४९ ॥

९. पश्चिम दिशा का इन्द्रधनुष सदैव वर्षा करता है। १०. उत्तर तथा दक्षिण का इन्द्रधनुष भी वर्षा करता है। ११. यदि रात्रि के समय पूर्व दिशा में इन्द्रधनुष के दर्शन हों तो राजा के लिये हानिप्रद होता है ॥ ५० ॥

१२. यदि रात के समय दक्षिण दिशा में इन्द्रधनुष दिखे तो सेनापति के लिये हानिकर होता है। १३. यदि रात्रिकाल में पश्चिम में इन्द्रधनुष के दर्शन हों तो किसी बड़े नायक (किसी विभाग के मन्त्री) की हानि होती है। १४. उत्तर तथा ईशान कोण में रात्रि में इन्द्रधनुष का दिखना राजा के मन्त्री के लिये हानिकारक होता है ॥ ५१ ॥

१५. यदि रात्रि के समय पूर्व दिशा में शुक्लवर्ण का इन्द्रधनुष दिखलायी पड़े तो ब्राह्मणों (बुद्धिजीवियों) को हानि करता है। १६. जिस दिशा में स्पष्ट इन्द्रधनुष दिखता है, उस दिशा के शासक को क्षति उठानी पड़ती है ॥ ५२ ॥

१७. अखण्ड रूप से दिखनेवाला इन्द्रधनुष पृथ्वी पर शुभ फल करता है। १८. यदि एक साथ दो इन्द्रधनुष दिखलायी पड़ते हैं तो वे राजसत्ता के लिये घातक होते हैं, उनका फल शुभ नहीं होता है ॥ ५३ ॥

गन्धर्व नगर का फल

गन्धर्वनगरं दिक्षु दृश्यतेऽनिष्टदं क्रमात्।
भूभुजां वा चमूनाथसेनापतिपुरोधसाम् ॥ ५४ ॥
सितरक्तपीतकृष्णं विप्रादीनामनिष्टदम्।
रात्रौ गन्धर्वनगरं धराधीशविनाशनम् ॥ ५५ ॥
इन्द्रचापाग्निधूमाभं सर्वेषामशुभप्रदम्।
चित्रवर्णं चित्ररूपं प्राकारध्वजतोरणम् ॥ ५६ ॥
दृश्यते चेन्महायुद्धमन्योऽन्यं धरणीभुजाम् ॥ ५७ ॥

१. यदि पूर्वदिशा में गन्धर्व नगर दिखायी दे तो राजा का नाश होता है। २. यदि दक्षिण में दिखे तो सेनापति का नाश होता है। ३. यदि पश्चिम दिशा में गन्धर्वनगर दिखे तो मन्त्री का नाश होता है। ४. यदि उत्तर दिशा में दिखायी दे तो राजपुरोहित का नाश होता है ॥ ५४ ॥

श्वेतरंग का गन्धर्वनगर ब्राह्मणों को, लाल रंग का क्षत्रियों को, पीले रंग का वैश्यों को तथा काले रंग का शूद्रों के लिये अशुभ होता है। यदि रात के समय में गन्धर्वनगर दिखे तो राजा के लिये अनिष्टप्रद होता है ॥ ५५ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गन्धर्वनगर का रंग इन्द्रधनुष की भाँति सतरङ्गा हो अथवा अग्निवर्ण हो, अथवा धूम्रवर्ण हो तो वह सभी के लिये अशुभ फलप्रद होता है। चितकबरा, रंग-बिरंगा या प्राकार (परकोटा) ध्वज या तोरण के आकार का गन्धर्वनगर यदि दिखायी दे तो राजाओं में परस्पर युद्ध होता है॥ ५६-५७॥

विमर्श—आकाश में कभी-कभी सूर्यकिरणों तथा बादलों के संयोग से भवन या नगर आदि बने हुए दिखायी देते हैं, उन्हें गन्धर्वनगर कहते हैं। गाँव के लोग उसे हरिचन्दपुर भी कहते हैं।

प्रतिसूर्य का फल

प्रतिसूर्यनिभः स्निग्धः सूर्यः पार्श्वे शुभप्रदः।
वैदूर्यसदृशः स्वच्छः शुक्लो वापि सुभिक्षकृत्॥ ५८॥
पीताभो व्याधिदः कृष्णो मृत्युदो युद्धदारुणः।
माला चेत्प्रतिसूर्याणां शश्वच्चौरभयप्रदा॥ ५९॥
जलदोदक्प्रतिसूर्यो भानोर्याम्येऽनिलप्रदः।
उभयस्थोऽम्बुभयदो नृपहोपर्यधो नृहा॥ ६०॥
परा भवन्ति तीक्ष्णांशोः प्रतिसूर्याः समन्ततः।
जगद्विनाशमाप्नोति तथा शीतद्युतेरपि॥ ६१॥

जो बिल्कुल सूर्य के समान ही हो तथा सूर्य के पार्श्व में ही दिखे—ऐसा प्रतिसूर्य (सूर्य का प्रतिरूप) शुभ फल देता है। यदि प्रतिसूर्य वैदूर्यमणि के समान स्वच्छ श्वेतवर्ण का हो तो सुभिक्षकारक होता है॥ ५८॥

यदि प्रतिसूर्य का वर्ण पीला हो तो जनता में रोगों का प्रकोप होता है। काले रंग का प्रतिसूर्य घोरयुद्ध का सूचक होता है। यदि बादलों में प्रतिसूर्यों की माला (अनेक प्रतिसूर्यों की शृंखला) दिखे तो निरन्तर चोरों, डाकुओं का भय बना रहता है॥ ५९॥

यदि उत्तर दिशा में प्रतिसूर्य दिखे तो वर्षा होती है। दक्षिण का प्रतिसूर्य वायु चलाता है। आमने-सामने दो दिशाओं में प्रतिसूर्य दिखे तो राजा को हानिकर होता है तथा सूर्य के नीचे दूसरा प्रतिसूर्य दिखायी दे तो जनता को कष्ट होता है॥ ६०॥

यदि सूर्य के चारों ओर प्रतिसूर्य प्रकट होकर सूर्य की कान्तिं को फीका कर दे तो संसार को हानि उठानी पड़ती है। इसी प्रकार चन्द्रमा के प्रति चन्द्र का फल जानना चाहिये॥ ६१॥

विमर्श—सूर्योदय या सूर्यास्त के समय अरुण वर्ण या सूर्य के ही रंग का दूसरी ओर सूर्य के समान ही जो विम्ब या कुछ दिखता है, उसे प्रतिसूर्य कहते हैं। अंग्रेजी में प्रतिसूर्य के लिये Mock sun तथा Parhelion तथा प्रतिचन्द्र के लिये Mock moon तथा Para selene शब्दों का प्रयोग होता है। प्रतिसूर्य के सम्बन्ध में आधुनिक विज्ञान का कथन कुछ इस प्रकार है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'Mock suns—Images of the sun not ususally very well defined seen towards sunset at the same altitude as the sun and 22° from it on each side. They are portions of the 22° ice halo formed by ice crystals which, far some reasons, are arranged with their axes vertical. Also parhelia.'

—Chambers Dictionary of Science and Technology.

निर्घात का फल (बिजली गिरने का फल)

वायुनाभिहतो वायुर्गगनात्पतितः क्षितौ।
यदा दीप्तः खग्रसतः स निर्घातोऽतिदोषकृत्॥ ६२॥
निर्घातोऽर्कोदये नेष्टः क्षितीशानां विनाशदः।
आयामात् प्राक् पौरजनशूद्राणाञ्चैव हानिदः॥ ६३॥
आमध्याह्ने तु विप्राणां नेष्टो राजोपजीविनाम्।
तृतीययामे वैश्यानां जलजानामनिष्टदः॥ ६४॥
चतुर्थे चार्थनाशाय सन्ध्यायां हन्ति सङ्करान्।
आद्ये यामे सस्यहानिर्द्वितीये तु पिशाचकान्॥ ६५॥
हन्त्यर्धरात्रे तुरगांस्तृतीये शिल्पिलेखकान्।
चतुर्थयामे निर्घातः पतन् हन्ति तदा जनान्॥ ६६॥
भीषजर्जरशब्दः स तत्र तत्र दिगीश्वरम्॥ ६७॥

जब वायु से वायु का प्रतिघात होता है तो विद्युत् उत्पन्न होकर आकाश से पृथिवी पर गिरती है (यह निर्घात = बिजली गिरना कहा जाता है)। निर्घात अपनी गुरुता के कारण प्रदीप्त होता है, वह अत्यन्त दोषकारक होता है अर्थात् निर्घात जितना जोरदार होगा, उतना ही अशुभ होता है॥ ६२॥

दिन के विभिन्न प्रहरों में निर्घात का फल—यदि सूर्योदय के समय निर्घात हो तो राजा लोगों को अशुभ होता है, यदि प्रथम प्रहर के अन्तिम भाग में निर्घात हो नगर के शूद्रों के लिये हानिकारक होता है॥ ६३॥

यदि मध्याह्न से तृतीय प्रहर की समाप्ति के पूर्व निर्घात हो तो वह ब्राह्मणों तथा शासकीय कर्मचारियों को अशुभ फल देता है। दिन के तीसरे प्रहर के अन्त का निर्घात वैश्यों को तथा जलचर जीवों को हानिप्रद होता है॥ ६४॥

चौथे प्रहर में होनेवाला निर्घात आर्थिक संकट पैदा करता है। सन्ध्या समय का निर्घात वर्णसंकरों के लिये हानि करता है॥ ६४½॥

रात्रि के समय में निर्घात का फल—रात्रि के प्रथम प्रहर का निर्घात किसानों को, दूसरे प्रहर का पिशाचों (कच्चा मांस खानेवाले कबीलों) को, आधी रात का

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

निर्घात घोड़ों को, तीसरे प्रहर का शिल्पी तथा लिपिकारों एवं लेखकों को, चौथे प्रहर का सभी जनता को कष्ट देता है। भयंकर जर्जर शब्दवाला निर्घात जिस दिशा में गिरे उसी दिशा के शासक को नष्ट करता है॥ ६५-६७॥

दिग्दाह के फल

दिग्दाहः पीतवर्णश्चेत् क्षितीशानां भयप्रदः।
देशनाशायाग्निवर्णोऽरुणवर्णोऽनिलप्रदः ॥ ६८॥
धूमः सस्यविनाशाय कृष्णः शस्त्रभयप्रदः।
प्राग्दाहः क्षत्रियाणां च नरेशानामनिष्टदः॥ ६९॥
आग्नेय्यां युवराजस्य शिल्पिनामशुभप्रदः।
पीडां व्रजन्ति याम्यायां मूकवैश्यनराधमाः॥ ७०॥
नैर्ऋत्यां दिशिचौराश्च पुनर्भूप्रमदां नृणाम्।
प्रतीच्यां कृषिकर्त्तारो वायव्यां पशुजातयः॥ ७१॥
सौम्ये विप्रादि चैशान्यां वैश्यानां खण्डिनोऽखिलाः।
दिग्दाहः स्वर्णवर्णाभो लोकानां मङ्गलप्रदः॥ ७२॥

कभी-कभी जहाँ धरती एवं आकाश मिलते दिखायी देते हैं, उस स्थान अर्थात् क्षितिज पर तथा आकाश में दिशाओं में आग-सी लगी प्रतीत होती है, दिशाओं का रंग लाल-पीली लपटों-जैसा हो जाता है। कभी कुछ थोड़ी बहुत आँधी भी चलती है, इस प्राकृतिक उपद्रव को दिग्दाह कहते हैं।

जब पीले रंग का दिग्दाह होता है, तब राजाओं (राजनेताओं एवं सत्ताधीशों) को भय होता है। यदि अग्निवर्ण का दिग्दाह हो, तब देश का नाश होता है। अरुणवर्ण का दिग्दाह पवन-प्रवाह में तीव्रता उत्पन्न करता है॥ ६८॥

यदि दिशाओं में धूम्रवर्ण प्रतीत हो या धुवां-सा उठ रहा है, ऐसा लगता हो तो खेती को हानि पहुँचती है। काले रंग का दिग्दाह शस्त्रभय का सूचक होता है। यदि केवल पूर्व दिशा में दिग्दाह हो तो क्षत्रियों एवं राजाओं को अशुभ फल मिलता है॥ ६९॥

अग्निकोण का दिग्दाह युवराज तथा शिल्पीजनों को नेष्ट फल देता है। दक्षिण दिशा का दिग्दाह मूर्खों, वैश्यों तथा पाखण्डियों को पीड़ित करता है॥ ७०॥

नैर्ऋत्य कोण में होनेवाला दिग्दाह चोरों, डाकुओं, तस्करों एवं आतङ्कवादियों का नाश करता है। (नैर्ऋत्य कोण राक्षसों की दिशा होती है) नैर्ऋत्य कोण का दिग्दाह पुनर्भू स्त्रियों एवं पुरुषों (वे स्त्री-पुरुष जिनके जीवनसाथी की मृत्यु अथवा विवाह-विच्छेद के उपरान्त दूसरा विवाह करते हैं) के विनाश का भी सूचक होता है। पश्चिम का दिग्दाह किसानों एवं वायव्य का पशुपालकों को अशुभ फल देता है॥ ७१॥

उत्तर का दिग्दाह ब्राह्मणों के लिये; ईशानकोण का पाखण्डी साधुजनों के लिये अशुभफल करता है। सुनहरे रंग का दिग्दाह संसार का कल्याण करता है॥ ७२॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रजो लक्षण एवं फल

सितेन रजसाछन्नादिग्ग्रामवनपर्वताः।
यथा तथा भवन्त्येते निधनं यान्ति भूमिपाः॥ ७३॥
रजःसमुद्भवो यस्यां दिशि तस्यां विनाशनम्।
तत्र तत्रापि जनानां हानिदः शस्त्रकोपतः॥ ७४॥

जब आकाश श्वेत वर्ण या पाण्डुरवर्ण की धूल से पर्वतों, दिशाओं एवं ग्रामों सहित आच्छादित हो जाता है तो इस प्रकार की सफेद आँधी से प्रभावित क्षेत्रों के शासकों की हानि होती है॥ ७३॥

जिस-जिस दिशा में आँधी आती है, उसी-उसी दिशा के ग्रामादि को हानि पहुँचती है। वहाँ के मनुष्यों एवं प्राणियों को कष्ट प्राप्त होता है॥ ७४॥

विमर्श—धूलि भरी आँधी को 'रज' कहते हैं।

काले रंग की आँधी तथा सूर्योदय समय की आँधी का फल

मन्त्रीजनपदानाञ्च व्याधिदं चासितं रजः।
अर्कोदयेष विजृम्भन्ति गगनं स्थगयन्ति च॥ ७५॥

१. यदि काले रंग की रज (आँधी) चले तो वह मन्त्रीजनों तथा जनपदों को रोगपीड़ित करती है, (महामारी) फैलाती है। २. यदि सूर्योदय के समय आँधी चले तथा सम्पूर्ण आकाश को आच्छादित कर ले तो (दिनानुसार आगे लिखा फल होता है)॥ ७५॥

सूर्योदय से सूर्यास्त तक दिन संख्यानुसार रजो व्याप्ति का फल

दिनद्वयञ्च त्रिदिनमत्युग्रभयदं रजः।

यदि सूर्योदय से प्रारम्भ होकर सायंकाल तक एक दिन, दो दिन अथवा तीन दिन तक लगातार आँधी की धूल आकाश में छायी रहे तो उग्रभय उत्पन्न होता है॥ ७५½॥

सूर्यास्त से पूरी रात भर आँधी छायी रहने पर रात्रि की संख्यानुसार फल

रजो भवेदेकरात्रं नृपं हन्ति निरन्तरम्॥ ७६॥
परचक्रागमं न स्यात् द्विरात्रं सततं यदि।
क्षामडामरमातङ्कस्त्रिरात्रं सततं यदि॥ ७७॥
ईतिदुर्भिक्षमतुलं यदि रात्रचतुष्टयम्।
निरन्तरं पञ्चरात्रं महाराजविनाशनम्॥ ७८॥
ऋतावन्यत्र शिशिरात्सम्पूर्णफलदं रजः॥ ७९॥

यदि एक रात भर आकाश में धूलयुक्त आँधी चलती रहे तो राजा की मृत्यु होती है॥ ७६॥

यदि लगातार दो रात्रि तक आँधी चले तो पर चक्र का आगमन (दूसरे देश की सेना का आक्रमण अथवा उसके द्वारा प्रायोजित आतङ्की कार्य) होता है। यदि तीन रात्रि तक लगातार धूल उड़े तो जनता में चोर-डाकुओं का भय होता है॥ ७७॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यदि चार रातों तक आँधी चले तो सात प्रकार की ईतियों (अतिवृष्टि, अनावृष्टि, चूहों का प्रकोप, टिड्डों का प्रकोप, पक्षियों का प्रकोप, स्वचक्र=गृहयुद्ध, तथा पर चक्र=दूसरे देश का आक्रमण) तथा अकाल का भय होता है। यदि लगातार प्रतिदिन पाँच रात्रियों में आँधी चले तो महाराज (केन्द्रीय सत्ता) का नाश होता है॥ ७८॥

परन्तु शिशिर ऋतु को छोड़कर अन्य ऋतुओं में चलनेवाली आँधी का फल ऊपर कहा गया है। शिशिर ऋतु में चलने वाली आँधी का शुभाशुभ फल नहीं होता है॥ ७९॥

भूकम्प का कारण

भूभारखिन्ननागेन्द्रदीर्घनिःश्वाससम्भवः ।
भूकम्पः सोऽपि जगतामशुभाय भवेत्तदा॥ ८०॥

पृथ्वी के भार से जब शेषनाग खिन्न होते हैं, तथा वे दीर्घ निःश्वास लेते हैं, उनके जोर-जोर से श्वास लेने से भूकम्प (Earthquake) होता है, वह जगत् के अशुभ के लिये होता है॥ ८०॥

विमर्श—पृथ्वी के भीतर के केन्द्रीय बल तथा गुरुत्वाकर्षण शक्ति का नाम ही शेषनाग है। यह शक्ति पृथ्वी को सन्तुलित रखती है। मनुष्य तथा अन्य प्राणियों के द्वारा पृथ्वी के पर्यावरण के साथ जो छेड़छाड़ की जाती है, उसके परिणामस्वरूप शेषनाग क्षुभित होते हैं, फलस्वरूप पृथ्वी की भीतरी चट्टानों के खिसकने से भूकम्प आता है। ग्रीक भाषा में भूकम्प को Seismos (शेष मॉस) कहते हैं, जो संस्कृत के 'शेष मूर्च्छं' या 'शेष मुर्च्छं' का अपभ्रंश रूप है। वह शब्द शेषनाग की मूर्च्छा को सूचित करता है। इसी शब्द से आज का Seismology (सेस्मोलोजी = भूकम्प विज्ञान) शब्द बना है।

दिन-रात में प्रहर-क्रम से भूकम्प का फल

यामक्रमेण भूकम्पो द्विजातीनामनिष्टदः।
अनिष्टदो क्षितीशानां सन्ध्ययोरुभयोरपि॥ ८१॥

दिन तथा रात में प्रहर के क्रम से १. ब्राह्मण, २. क्षत्रिय, ३. वैश्य, ४. शूद्र के लिये अशुभ फलप्रद होता है। रात्रि के प्रहरों में भी इसी क्रम से फल होता है। प्रातः तथा सायं की सन्ध्याओं में होनेवाला भूकम्प शासकों के लिये अनिष्टप्रद होता है॥ ८१॥

वायव्य मण्डल के नक्षत्रों में भूकम्प का फल

अर्यमाद्यानि चत्वारि दस्त्रेन्द्वदितिभानि च।
वायव्यमण्डलं त्वेतदस्मिन्कम्पो भवेद्यदि॥ ८२॥
नृपसस्यवणिग्वेश्याशिल्पवृष्टिविनाशदः ।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, अश्विनी, मृगशिरा तथा पुनर्वसु—इन सात नक्षत्रों में चन्द्रमा के होते हुए यदि भूकम्प हो तो इस वायव्य मण्डल में होनेवाले भूकम्प के उपरान्त राजा, फसल, व्यापारी, वेश्या, शिल्पकर्म तथा वर्षा की हानि होती है॥ ८२-८२½ ॥

अग्निमण्डल में भूकम्प का फल

पुष्यद्विदैवभरणी पितृभाग्याऽनलाजपात्॥ ८३॥
आग्नेयमण्डलं त्वेतदस्मिन् कम्पो भवेद्यदि।
नृपवृष्ट्यर्घनाशाय हन्ति शबरतङ्गणान्॥ ८४॥

पुष्य, विशाखा, भरणी, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, कृत्तिका तथा पूर्वाभाद्रपद—इन सात नक्षत्रों का आग्नेय मण्डल होता है। यदि इनमें से किसी नक्षत्र में भूकम्प होता है तो राजा का नाश, वृष्टि का नाश, महँगाई की वृद्धि तथा शबर एवं तङ्गण देशों का नाश होता है॥ ८३-८४॥

वासवमण्डल के भूकम्प का फल

अभिजिद्धातृवैश्वेन्द्रवसुवैष्णवमैत्रभम् ।
वासवं मण्डलं त्वेतदस्मिन् कम्पो भवेद्यदि॥ ८५॥
राजनाशाय कोपाय हन्ति माहेयदर्दुरान्।

अभिजित् , रोहिणी, उत्तराषाढ़ा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, श्रवण तथा अनुराधा—इन सात नक्षत्रों का वासव मण्डल अथवा ऐन्द्रमण्डल या माहेन्द्रमण्डल होता है। इनमें से किसी भी नक्षत्र में भूकम्प आने पर राजा का नाश एवं राजाओं में वैरभाव होता है तथा माहेय एवं दर्दुर देशों का नाश होता है॥ ८५-८५½ ॥

वारुणमण्डल के नक्षत्रों का फल

मूलाहिर्बुध्न्यवरुणाः पौष्णाप्यार्द्राहि भानि च॥ ८६॥
वारुणं मण्डलं त्वेतदस्मिन् कम्पो भवेद्यदि।
राजनाशकरो हन्ति पौण्ड्रचीनपुलिन्दकान्॥ ८७॥

मूल, उत्तराभाद्रपद, शतभिषा, रेवती, आप्य (पूर्वाषाढ़ा), आर्द्रा तथा आश्लेषा में सात नक्षत्र वारुण मण्डल के हैं। इनमें भूकम्प होने पर शासक का नाश तथा पौण्ड्र, चीन एवं पुलिन्द—इन देशों में जन, धन की हानि होती है॥ ८६-८७॥

भूकम्पादि के फल की अवधि

प्रायेण निखिलोत्पाताः क्षितीशानामनिष्टदाः।
षड्भिर्मासैश्च भूकम्पो द्वाभ्यां दाहफलप्रदाः॥ ८८॥
अनुक्तः पञ्चभिर्मासैस्तदानीं फलदं रजः॥ ८९॥

प्रायः सभी उत्पात राजाओं के लिये अशुभ होते हैं। भूकम्प का फल उसके आने के छह मास के भीतर प्राप्त होता है। दिग्दाह का फल दो मास के भीतर होता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आँधी का फल तथा अन्य उत्पातों का फल पाँच मास के भीतर प्रकट होता है ॥ ८८-८९ ॥

क्षयाधिमास का कथन

असङ्क्रान्तिर्द्विसङ्क्रान्तिः संसर्पाहस्पती समौ।
मासौ तु बहवश्चान्द्रास्त्वधिमासः परः क्षयः ॥ ९० ॥

१. जिस अमान्त चान्द्रमास में एक भी संक्रान्ति न हो, वह संसर्प अथवा अधिमास (Extra calculary lunar month) कहलाता है।

२. जिस अमान्त चान्द्रमास में सूर्य की दो संक्रान्तियाँ होती हैं, उसे अहस्पति (अंहस्पति) अथवा क्षय मास कहते हैं ॥ ९० ॥

ग्रहों के प्रभाव की भूमियों का कथन

हिमाद्रिगङ्गयोर्मध्ये सुरार्चितवसुन्धरा।
गोदावरीकृष्णवेण्योर्मध्ये काव्यवसुन्धरा ॥ ९१ ॥
विन्ध्यगोदावरीमध्ये भूमिः सूर्यसुतस्य च।
विन्ध्याद्रिगङ्गयोर्मध्ये या भूमिः सा बुधस्य च ॥ ९२ ॥
या वेण्यालङ्कयोर्मध्ये धरात्मजवसुन्धरा।
समुद्रयन्त्रितक्षोणीनाथौ सूर्यहिमद्युती ॥ ९३ ॥

१. बृहस्पति के अधिकार में हिमालय तथा गङ्गा की मध्यवर्ती भूमि है। २. शुक्र के आधिपत्य में गोदावरी तथा कृष्णा नदी के मध्य का भूभाग है ॥ ९१ ॥

३. विन्ध्याचल तथा गोदावरी के मध्य की भूमि शनि के अधिकार में है। ४. गंगा तथा विन्ध्याचल के मध्य का भूभाग बुध के स्वामित्व का है ॥ ९२ ॥

५. जो भूमि वेणी नदी तथा लंका के मध्य की है, वह मंगल के अधिकार में है तथा समुद्रतटवर्ती भूमि सूर्य एवं चन्द्रमा के अधिकार में है ॥ ९३ ॥

तैलाभ्यङ्गपूर्वक स्नान के पर्व

इषमासि चतुर्दश्यामिन्दुक्षयतिथावपि।
ऊर्जादौ स्वातिसंयुक्ते तदा दीपावली भवेत् ॥ ९४ ॥
तैले लक्ष्मीर्जले गङ्गा दीपमाल्यां तिथौ भवेत्।
अलक्ष्मीपरिहारार्थमभ्यङ्गस्नानाचरेत् ॥ ९५ ॥
इन्दुक्षये च सङ्क्रान्तौ वारे पाते दिनक्षये।
तत्राभ्यङ्गे ह्यदोषाय प्रातः पापापनुत्तये ॥ ९६ ॥

अमान्त मास के प्रचलन की दृष्टि से जो आश्विन मास कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के दिन भले ही अमावस्या का क्षय हो जाय, पूर्णिमान्त मास पद्धति के अनुसार वही तिथि कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी होती है, उसमें अथवा अमावस्या में जब स्वाति नक्षत्र का संयोग हो तब दीपावली होती है। तैल में लक्ष्मी का तथा जल में उस दिन गङ्गाजी का

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

निवास होता है। अतः अलक्ष्मी (दरिद्रता) दूर करने के लिये प्रथम तैल मालिश करके फिर जल से स्नान करना चाहिये॥ ९४-९५॥

क्षीण चन्द्रमा (कृष्ण चतुर्दशी तथा अमावस्या) के दिन, संक्रान्ति के दिन, व्यतीपात योग में, क्षयतिथि में प्रातःकाल तैलाभ्यङ्गपूर्वक स्नान करने से समस्त पापों का नाश होता है॥ ९६॥

जयन्तीयोग

मासि भाद्रपदे कृष्णे रोहिणी सहिताष्टमी।
जयन्ती नाम सा तत्र रात्रौ जातो जनार्दनः॥ ९७॥
उपोष्य जन्मचिह्नानि कुर्याज्जागरणञ्च यः।
अर्धरात्रयुताष्टम्यां सोऽश्वमेधफलं लभेत्॥ ९८॥
रोहिणीसहिताष्टम्यां श्रावणे मासि वा तयोः।
श्रावणे मासि वा कुर्याद् रोहिणी सहिता तयोः॥ ९९॥

पूर्णिमान्त मास गणना पद्धति के अनुसार हिन्दीभाषी प्रान्तों में प्रचलित पञ्चाङ्गों के अनुसार भाद्र कृष्णपक्ष में रोहिणी नक्षत्र के सहित जो अष्टमी तिथि होती है, उसमें अर्धरात्रि में जनार्दन (विष्णु भगवान्) श्रीकृष्ण के रूप में जन्मे थे। उस दिन व्रत रखकर जन्म के चिह्न करके (जन्मदिन मनाते हुए) रात्रि में जागरण करना चाहिये। जो अर्धरात्रि से युक्त अष्टमी तिथि में ऐसा करता हूँ, उस श्रद्धालु को अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है॥ ९७-९८॥

अथवा अमान्त पद्धति के चान्द्रमास के अनुसार (दक्षिण भारतादि में) उसी दिन श्रावण कृष्ण अष्टमी मानी जाती है, उसमें रोहिणी के संयोग से व्रत करना चाहिये॥ ९९॥

विमर्श—यह व्रत सम्पूर्ण भारत में एक ही दिन होता है, परन्तु दक्षिण भारत के पंचांग अपने मान से उसे श्रावण कृष्ण कहते हैं। जबकि वह पक्ष उत्तरी भारत के पंचांगों में भाद्रकृष्ण कहा जाता है। देवर्षि नारद ने समझाने के लिये दोनों को लिख दिया है।

ज्येष्ठा-पूजन

मासि भाद्रपदे शुक्ले पक्षे ज्येष्ठर्क्षसंयुते।
रात्रौ तस्मिन्दिने कुर्याज्ज्येष्ठायाः परिपूजनम्॥ १००॥

भाद्रमास के शुक्लपक्ष की अष्टमी के समीप जब ज्येष्ठा नक्षत्र का चन्द्रमा हो, उस दिन की रात्रि में ज्येष्ठा का पूजन करना चाहिये॥ १००॥

शिवरात्रि व्रत तथा विभिन्न व्रतों में तिथि की ग्राह्यता

अर्धरात्रयुता यत्र माघकृष्णचतुर्दशी।
शिवरात्रिव्रतं तत्र सोऽश्वमेधफलं लभेत्॥ १०१॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नक्तव्रतेषु सा ग्राह्या प्रदोषव्यापिनी तिथिः।
पूजाव्रतेषु सर्वेषु मध्याह्नव्यापिनी स्मृतः॥ १०२॥
एकभुक्तोपवासेषु या विंशघटिकात्मिका।
पिष्टान्नप्राशनेष्वेव लवणाम्लविवर्जिता॥ १०३॥

माघकृष्ण चतुर्दशी (उत्तरी भारत के अनुसार वही फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी होती है) को अर्धरात्रियुता ग्रहण करना चाहिये। उसमें शिवरात्रि व्रत करने से अश्वमेध का फल प्राप्त होता है॥ १०१॥

रात्रि के व्रतों में अन्य तिथियों को प्रदोषव्यापिनी लेना चाहिये। परन्तु पूजा-सम्बन्धी व्रत की तिथि को मध्याह्नव्यापिनी लेने का विधान है॥ १०२॥

जिन व्रतों में एक समय भोजन किया जाता है। सूर्योदय से २० घटी (आठ घण्टों) तक रहनेवाली तिथि को ग्रहण करने का विधान है। एक वक्त में जो भोजन लिया जाय। आटा की पीठी तथा खटाई एवं नमक से बने हुए पदार्थ नहीं खाना चाहिये॥ १०३॥

विमर्श—शिवरात्रि व्रत संसार का प्राचीनतम व्रत है। महाभारत के युद्ध से पूर्व जब भारतीय ऋषि-मुनि सम्पूर्ण विश्व में भ्रमण करते थे, तब विश्व के अधिकांश भाग में वैदिक धर्म, वैदिक संस्कृति तथा वैदिक भाषा (संस्कृत) का ही प्रचार-प्रसार था, तब विश्व भर में गणेश, सूर्य, शिव, विष्णु तथा शक्ति की पूजा होती थी। यूरोप की धार्मिक राजधानी वेटिकनसिटी (रोम) के प्रधान चर्च में जहाँ पर पोप का निवास है, उसके प्रांगण में आज भी प्रस्तर के बड़े शिवलिंग स्थित हैं। वहाँ भी शिवरात्रि का पर्व धूमधाम से मनाया जाता था, किन्तु ईसाइयत के प्रचार के साथ यह प्रथा लुप्त हो गयी। यह शिव-पार्वती के विवाह का उत्सव है, जो कि दिव्य प्रेम पर आधारित महान पर्व है, जिसने आज 'वैलेंटाइन डे' का विकृत रूप ले लिया है तथा भारत की वर्तमान युवा पीढ़ी, जिसे लार्ड मैकाले की शिक्षा-पद्धति की घुट्टी पिलायी गयी है, वह तो आज इस उत्सव को मनाने के लिये पागल होकर तैयार रहती है। जिसके कारण उपद्रव होने लगे हैं।

क्या है वैलेण्टाइन दिवस?

यह प्राचीन शिवरात्रि पर्व का ईसाई पादरियों द्वारा प्रचलित भौंड़ा एवं विकृत रूप है। आइये, इस बात की पड़ताल करें! आजकल का यह 'वैलेण्टाइन दिवस' यूरोप तथा पश्चिम के ईसाई देशों में १४ फरवरी को मनाया जाने वाला उत्सव है। 'चैम्बर्स इंग्लिश डिक्शनरी' के अनुसार यह पहले १५ फरवरी को मनाया जाता था, बाद में चर्च ने १४ फरवरी को इसे मनाने का आदेश दे दिया। तब से यह १४ फरवरी को ही मनाया जाता है। ईसा की सोलहवीं शताब्दी के पूर्व यह पर्व 'फीस्ट आफ

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ल्यूपर कालिया' कहलाता था, जो कि वंशवृद्धि या सृजन या प्रजनन का पर्व था। किंवदन्ती के अनुसार वैलेण्टाइन नाम के दो सन्त थे, परन्तु उनके सम्बन्ध में कोई विशेष विवरण प्राप्त नहीं होता है। वास्तव में वे दो सन्त तो शिव एवं शिवा (पार्वती) के अतिरिक्त कोई और नहीं हैं। 'चेम्बर्स इंग्लिश डिक्शनरी' में लिखा है—

'St. Valentin day—14 February—A day on which special greetings are sent to sweet hearts or people to whom one is attracted. Originally this day was 15th February, on the feast of lupercalia the festival of fertility, but was moved forward to 14th February. The feast of Saint Valentine commemorating two Christian martyrs of this name to be acceptable to the Church.'

ऊपर लिखे उद्धरण से इस उत्सव का सम्बन्ध सृष्टि की उत्पत्ति से है। क्योंकि भगवान् शिव ने कामदेव को जला दिया था, तब उसकी पत्नी रति ने अपने पति को जीवित करने की प्रार्थना की थी। कामदेव के भस्म हो जाने से सृष्टि-कार्य रुक गया था। तब शिव एवं शिवा ने लोककल्याण के लिये अनुग्रहपूर्वक विवाह किया, उसी की स्मृति में यह शिवरात्रि पर्व प्रारम्भ हुआ। यही कारण है कि प्राचीन यूरोप में भी इसे भारतीय पुराण एवं इतिहास की परम्परानुसार सृजन का पर्व ही माना जाता रहा है। इसका आयोजन अमान्तमान की चान्द्रमास पद्धति से माघ कृष्णपक्ष की चतुर्दशी में होता है, जिसे उत्तर भारतीय पंचांग (पूर्णिमान्त पद्धति से) फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी लिखते हैं। वह चान्द्रमास की पूर्णिमान्त पद्धति से १४वीं तारीख हुई। अगले दिन अमावस्या अर्थात् पंचदशी यानी १५वीं तारीख होती है। चतुर्दशी में व्रत रखा जाता है तथा अमावस्या के दिन पारणा होता है। उस दिन भारत के हिन्दूजन व्रत के पारणा हेतु शुद्ध घृत का भोजन बनाकर साधुओं, ब्राह्मणों, भिक्षुओं, यतियों आदि को जिमाते हैं तथा स्वयं भी पारणा करते हैं। अतः पूर्व का दिन व्रत में तथा अगला अमावस्या का दिन पारणा के भोज या दावत (Feast) का होता है। यूरोप में यही सन्त वैलेण्टाइन का भोज या दावत का दिन कहा जाता है।

ईसाइयत के प्रचलन में आने तथा रोमन साम्राज्य के पूर्व से भी समूचे यूरोप में भारतीय पद्धति का पंचाङ्ग प्रचलित था, जिसके अनुसार चान्द्रमासों के अनुसार ही वहाँ की जनता पर्व-त्यौहार मनाती थी। यह तथ्य यूरोप के ऐतिहासिक प्रमाणों से सिद्ध होता है। बाद में जब यूरोप में जूलियन सौर कलेण्डर प्रचार में आया तो चान्द्र तिथियों के स्थान पर सौर तारीखों के अनुसार पर्व त्यौहार मनाने का प्रचलन हुआ और धर्मगुरु इस सम्बन्ध में मनमानी व्यवस्था देने लगे। महाभारत के युद्धोपरान्त जब यूरोप के साथ भारत के धार्मिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध भिन्न-भिन्न हो गये। जिससे पर्व त्यौहारों के मूल उद्देश्य से वहाँ की जनता भटक गयी, बाद में ईसाई पंथ के प्रचार से

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यह संस्कृति नष्ट होती चली गयी। ऊपर के अंग्रेजी उद्धरणीय जो दो वैलेण्टाइन सन्त (Two saints) कहे गये हैं। वे वास्तव में शिव+पार्वती ही हैं, जो अभिन्न हैं।

भगवान् शिव तथा पार्वती शाश्वत प्रेम के प्रतीक हैं। शिवपुराण तथा कालिदास दोनों ने ही शिव एवं पार्वती को वाणी एवं अर्थ की भाँति अभिन्न माना है—

'वागर्थाविवसम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ॥'

गोस्वामी तुलसीदासजी ने इसी प्रकार से राम एवं सीता को तथा कृष्णभक्तों ने राधा एवं कृष्ण को अभिन्न ही माना है। संत कबीर कहते हैं कि प्रेम की गली इतनी संकरी होती है कि उसमें मैं तथा तुम—ये दो एक साथ नहीं समा सकते हैं—

'यह तो घर है प्रेम का खाला का घर नाहिं।
प्रेमगली अति सांकरी तामें दोऊ न समाहिं॥'

अस्तु जिनके आराध्यदेव शिव-पार्वती, राम-सीता तथा राधा-कृष्ण हैं, वे प्रेम के तत्त्व को समझ सकते हैं तथा प्रेम कर सकते हैं। इनकी कथाएँ मन की पवित्रता तथा सदाचार के साथ श्रवण-मनन-निदिध्यासन करने से ही प्रेम तत्त्व को समझा जा सकता है, अन्यथा नहीं। मीराबाई ने इस तत्त्व को समझाया।

यही शिवरात्रि उन दिनों 'वारुण मन्त दिवस' कहलाता था। यही वारुणमन्त शब्द घिसकर लैटिन भाषा में वालेण्टाइन हो गया है। संस्कृत शब्द 'वारुणम्' का अर्थ जल होता है तथा मन्त प्रत्यय का अर्थ है युक्त। अतः वारुण मन्त का एक अर्थ 'जल से युक्त' होता है। 'जलधाराप्रियः शिवः', अर्थात् भगवान् शिव जलधाराप्रिय हैं। संस्कृत वाङ्मय में वरुण शब्द ईश्वर के लिये तथा शिव, विष्णु, सूर्य आदि के लिये भी प्रयुक्त होता है, अतः यह दिन ईश्वरभक्ति का दिन है। आजकल का इस्लामी तीर्थस्थल काबा जो कि मक्का नगर (अरब देश) में स्थित है, हरिहरेश्वर भगवान शिव ही हैं प्राचीन अरब के लोग इस्लाम के प्रचार के पूर्व शिवरात्रि के दिन ही उसकी विशेष पूजा अर्चना करते थे, तब 'जिलहिज्ज' का महीना सदैव फाल्गुन या फरवरी मास में ही पड़ता था। क्योंकि उन दिनों वहाँ भी भारतीय पंचांग का प्रचलन था। जिसके कारण मलमास की व्यवस्था थी और महीने ऋतुओं से सम्बद्ध थे।

'वृणोति सर्वमावृणोति इति वरुणः'। संस्कृत में भगवान् शिव को बभ्रुवर्य (भस्म धारियों में श्रेष्ठ) कहते हैं। बभ्रुवर्य का अर्ध भ्रंश ही फ्रेब्रुवर्य या फेब्रुअरी (फर्बरी) हो गया है। आज भी एकाध वर्ष को छोड़कर प्रतिवर्ष यह शिवरात्रि का पर्व फरवरी मास में ही पड़ता है।

प्रेम का पर्यायवाची लव (Love) नहीं है। यह संस्कृत की 'लुभ्' धातु से बना है, तथा अंग्रेजी में संज्ञा तथा क्रिया दोनों ही रूपों में प्रयुक्त होता है। लोग मानने लगे हैं कि किसी वस्तु में अपना मन ललचा गया तो उसमें प्रेम हो गया। अतः यह लव प्रेम

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नहीं लोभ (Love) है जो कि पाप का मूल है। प्रेम वह है, जिसमें अपने प्रेय को कष्ट न पहुँचे। प्रेम बहुत ऊँची भावना है। आज लव (लोभ) के कारण ही चारों ओर बलात्कार, अश्लीलता तथा मारकाट मची है।

क्या कभी इस बात पर सोचा है? कि आज रेडियो, टीवी से लेकर गली-कूँचे तक में प्यार-प्यार सुनायी पड़ता है, परन्तु समाचार पत्रों के पन्ने खूनखराबे से रँगे रहते हैं। अतः होश में आओ। पश्चिम की भौड़ी नकल में हम इस लव तथा वैलेण्टाइन डे के भँवर में पड़कर विनाश की ओर जा रहे हैं। प्रेम को समझने के लिये शिवरात्रि का व्रत रखें तथा पर्व मनायें। यही कल्याणकारी है। प्रेम केवल देता है, बदले में कुछ भी चाहता नहीं है, यहाँ तक कि प्रेम भी नहीं। वह किसी को कष्ट या धोखा नहीं देता है। भगवान् वारुणमन्त ही सब कुछ हैं। यथा—

'स वरुणः सायमग्निर्भवति स मित्रो भवति प्रातरुद्यन्।
स सविता भूत्वान्तरिक्षेण याति स इन्द्रो भूत्वा तपति मध्यतो दिवम्॥'

(अथर्ववेदसंहिता १३-३-१३)

स्कन्दपञ्चमी

आषाढसितपञ्चम्यामसम्प्राश्य उपोषितः।
अर्चयेत्षण्मुखं देवमृणरोगविमुक्तये॥ १०४॥

आषाढ़ शुक्लपक्ष की पंचमी को निराहार रहकर के उपवास करे तथा ऋण एवं रोग की मुक्ति के लिये छह मुखवाले स्वामी कार्तिकेय की पूजा करे॥ १०४॥

विमर्श—यह व्रत पञ्चमी विद्धा षष्ठी में किया जाता है।

नागपञ्चमी

तथैव श्रावणे शुक्लपञ्चम्यां नागपूजनम्।
पयः प्रदानं सर्पेभ्यो भयरोगविमुक्तये॥ १०५॥

उसी प्रकार से श्रावण शुक्ल पञ्चमी को भय एवं रोगमुक्ति हेतु एकान्त स्थान में (घर के कोने में) नाग को दुग्धदान करें तथा दीवाल पर नाग का चित्र बनाकर पूजा करें॥ १०५॥

विमर्श—प्रत्यक्ष में सपेरे द्वारा लाये सर्प को दूध पिलाने से उस सर्प की मृत्यु हो जाती है। यह घृणित कार्य तथा अपराध है, अतः यह पूजन इस भावना से किया जाय कि सर्प हमारे मित्र हैं तथा पर्यावरण के लिये आवश्यक है।

गणेशचतुर्थीव्रत

मासि भाद्रपदे शुक्लचतुर्थ्यां गणनायकम्।
पूजयेन्मोदकाहारैः सर्वविघ्नोपशान्तये॥ १०६॥

भाद्रशुक्ल चतुर्थी को सभी विघ्नों की शान्ति हेतु लड्डुओं का भोग लगाकर श्रीगणेशजी का पूजन करना चाहिये॥ १०६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सूर्यसप्तमी

माघशुक्ले च सप्तम्यां योऽर्चयेद् भास्करं नरः।
आरोग्यं श्रियमाप्नोति घृतपायसभक्षणैः॥ १०७॥

जो व्यक्ति माघ शुक्ल सप्तमी को सूर्य भगवान् की पूजा करता है तथा घृत एवं खीर का भोजन करता है, वह आरोग्य तथा लक्ष्मी को प्राप्त करता है॥ १०७॥

वैशाख मास के दान

व्यजनोपानहौ छत्रं दधिचान्नकपात्रिकाम्।
वैशाखे विप्रमुख्येभ्यो धर्मप्रीत्यै प्रयच्छति॥ १०८॥
कनकान्दोलिकाच्छत्रचामरैः स्वर्णभूषितैः।
सह दिव्यान्नपानाभ्यां दत्त्वा स्वर्गमवाप्नुयात्॥ १०९॥

वैशाख मास में प्रतिदिन जो विद्वान् ब्राह्मणों को व्यजन (पंखा), जूता, छाता, दही, अन्न, थाली, स्वर्ण से बनी पालकी, स्वर्णच्छत्र तथा स्वर्ण जटित चामर (चँवर) एवं दिव्य अन्नपान धर्म प्रेम के साथ दान करता है, वह स्वर्ग प्राप्त करता है॥ १०८-१०९॥

दुर्गानवमी

अश्वयुङ्मासि शुक्लायां नवम्यां भक्तितोऽर्चयेत्।
लक्ष्मीं सरस्वतीं शस्त्रान् विजयी धनवान्भवेत्॥ ११०॥

जो व्यक्ति आश्विन शुक्ल नवमी को लक्ष्मी, सरस्वती तथा शस्त्र (काली) की पूजा भक्तिपूर्वक करता है, वह धनवान् तथा विजयी होता है॥ ११०॥

कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा को वृषोत्सर्ग का फल

कार्तिक्यामथ वैशाख्यामुपोष्य वृषमुत्सृजेत्।
शिवप्रीत्यै भक्तियुतः स नरः स्वर्गभाग्भवेत्॥ १११॥

जो व्यक्ति कार्तिकी अथवा वैशाखी पूर्णिमा को वृष (साँड़) का उत्सर्जन (लोकार्पण) भगवान् शिव की प्रसन्नता के लिये भक्तिपूर्वक करता है, उस व्यक्ति को स्वर्ग मिलता है॥ १११॥

मास शून्य राशियाँ तथा लग्नें

घटान्त्योक्षनृयुग्मेष कन्याकीटतुलाधनुः।
कुलीरमृगसिंहाश्च चैत्राद्याः शून्यराशयः॥ ११२॥

कुम्भ, मीन, वृष, मिथुन, मेष, कन्या, वृश्चिक, तुला, धन, कर्क, मकर, सिंह इस क्रम से ये राशिलग्नें चैत्रादि क्रम से बारह मासों में शून्य (निष्फल) राशियाँ होती हैं॥ ११२॥

तिथि शून्य (दग्ध) लग्नें

तुलामृगौ प्रतिपदि तृतीयायां हरिर्मृगः।
पञ्चम्यां मिथुनं कन्या सप्तम्यां चापचन्द्रभे॥ ११३॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

नवम्यां हरिकीटौ द्वावेकादश्यां गुरोर्गृहे।
त्रयोदश्यां झषवृषौ दिनदग्धाश्च राशयः॥ ११४॥
मासदग्धाह्वयान् राशीन् दिनदग्धांश्च वर्जयेत्॥ ११५॥

प्रतिपदा को तुला-मकर, तृतीया को सिंह-मकर, पञ्चमी को मिथुन-कन्या, सप्तमी को धनु-कर्क, नवमी को सिंह-वृश्चिक, एकादशी को धनु-मीन, त्रयोदशी को मीन-वृष—ये तिथि (दिन) दग्धा राशियाँ हैं॥ ११३-११४॥

जो राशियाँ दिनदग्धा हैं तथा आगे कही गयी दिनदग्धा राशियाँ हैं, उन्हें शुभ कार्यों में त्याग देना चाहिये॥ ११५॥

मासशून्य तिथियाँ

अष्टमी नवमी चैत्रे पक्षयोरुभयोरपि।
वैशाखे द्वादशी शून्या पक्षयोरुभयोरपि॥ ११६॥
ज्येष्ठे त्रयोदशी शुक्ला कृष्णपक्षे चतुर्दशी।
आषाढ़े कृष्णपक्षेऽपि षष्ठीशुक्लेऽथ सप्तमी॥ ११७॥
श्रावणेऽपि द्वितीया च तृतीया पक्षयोर्द्वयोः।
प्रौष्ठपदे सिते कृष्णे द्वितीया प्रथमा तथा॥ ११८॥
सिते कृष्णेऽप्याश्वयुजि दशम्यैकादशी तथा।
कार्तिके च सिते पक्षे चतुर्दशी शराऽसिते॥ ११९॥
मार्गेऽद्रिनागसंज्ञेऽपि पक्षयोरुभयोरपि।
पौषे पक्षद्वये चैव चतुर्थी पञ्चमी तथा॥ १२०॥
माघे तु पञ्चमी षष्ठी शुक्ले कृष्णे यथाक्रमम्।
तृतीया च चतुर्थी च फाल्गुने सितकृष्णयोः॥ १२१॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां मिश्रका-(प्रकीर्णका)-ऽध्यायः षट्त्रिंशत्तमः॥ ३६॥

चैत्रमास की दोनों पक्षों की अष्टमी तथा नवमी शून्य तिथि होती है। वैशाख में दोनों पक्षों की द्वादशी शून्य होती है॥ ११६॥

ज्येष्ठ मास में केवल शुक्लपक्ष की त्रयोदशी तथा कृष्णपक्ष की चतुर्दशी, आषाढ़ कृष्ण की षष्ठी तथा शुक्ल की सप्तमी शून्य होती है॥ ११७॥

श्रावण मास की दोनों पक्षों की द्वितीया शून्य होती है तथा भाद्रपद के उभय पक्ष में प्रतिपदा तथा द्वितीया शून्य होती हैं॥ ११८॥

आश्विन मास में उभय पक्ष की एकादशी, कार्तिक शुक्ल में चतुर्दशी तथा कृष्णपक्ष में पञ्चमी शून्य होती है॥ ११९॥

मार्गशीर्ष में दोनों पक्षों की सप्तमी, अष्टमी तथा पौषमास में दोनों पक्षों की चतुर्थी पंचमी शून्य होती है॥ १२०॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

माघ शुक्ल की पंचमी, कृष्ण की षष्ठी शून्य होती है। फाल्गुन में शुक्ल तृतीया तथा कृष्ण चतुर्दशी शून्य होती है॥ १२१॥

मासशून्य राशियों का चक्र

चैत्र	वैशाख	ज्येष्ठ	आषाढ़	श्रावण	भाद्र	आश्विन	कार्तिक	मार्ग०	पौष	माघ	फाल्गुन	मास
कुम्भ	मीन	वृष	मिथुन	मेष	कन्या	आश्विन	वृश्चिक	धनु	कर्क	मकर	सिंह	शून्यराशि

तिथिशून्य लग्नों का चक्र

प्रतिपदा	तृतीया	पञ्चमी	सप्तमी	नवमी	एकादशी	त्रयोदशी	पञ्चदशी	विषम तिथि
तुला-मकर	सिंह-मकर	मिथुन-कन्या	धनु-कर्क	सिंह-वृश्चिक	धनु-मीन	मीन-वृष	×	शून्यराशि

मासशून्य तिथियों का चक्र

चैत्र	वैशाख	ज्येष्ठ	आषाढ़	श्रावण	भाद्र	आश्विन	कार्तिक	मार्ग०	पौष	माघ	फाल्गुन	मास
८-९	१२	१४	६	२-३	१-२	१०-११	५	७-८	४-५	६	४	तिथिकृष्णपक्ष
८-९	१२	१३	७	२-३	१-२	१०-११	१४	७-८	४-५	५	३	तिथिशुक्लपक्ष

इस प्रकार श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता ग्रन्थ के छत्तीसवें मिश्रका (प्रकीर्णका)-ध्याय की महर्षि अभयकात्यायनविरचित 'अभया' हिन्दी टीका पूर्ण हुई॥ ३६॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सप्तत्रिंशत्तमोऽध्यायः

श्राद्धलक्षणाध्यायः

शवदाहमुहूर्त

चतुर्दशी तिथिर्नन्दा भद्रा शुक्रारवासरौ।
सितेज्ययोरस्तमयं द्व्यङ्घ्रिभं विषमाङ्घ्रिभम्॥ १॥
शुक्लपक्षञ्च सन्त्यज्य पुनर्दहनमुत्तमम्।
वसूत्तरार्धतः पञ्चनक्षत्रेषु त्रिजन्मसु॥ २॥
पौष्णब्रह्मर्क्षयोः पौनर्दहनं कुलनाशनम्।
दिनोत्तरार्धे तत्कर्त्तुश्चन्द्रताराबलान्विते॥ ३॥
पापग्रहे बलयुते शुक्रलग्नांशवर्जिते।
तत्पुनर्दहनं चोक्तं श्राद्धकालमथोच्यते॥ ४॥

शवदाह (प्रेतदाह) कर्म में चतुर्दशी, नन्दातिथि (प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशी), तथा भद्रातिथि (द्वितीया, सप्तमी, द्वादशी) श्रेष्ठ हैं। गुरु, मंगल, शुक्र—ये वार श्रेष्ठ हैं। शवदाह कार्य तो गुरु एवं शुक्र के अस्त होने पर भी होता है।

शवदाह में जिन नक्षत्रों के चरण राशियों में विषम संख्या में विभाजित होते हैं (अर्थात् एक राशि में एक चरण तथा दूसरी राशि में शेष तीन चरण अथवा पूर्वराशि में तीन चरण तथा पश्चाद्वर्त्ती राशि में एक चरण शामिल रहता हो) उनको श्राद्धकर्म में त्याग देना चाहिये। इस अर्थ में कृत्तिका, पुनर्वसु, उत्तरा फाल्गुनी, विशाखा, उत्तराषाढ़ा, पूर्वाभाद्र—ये छह नक्षत्र विषम चरणोंवाले होने से प्रेतदाह में त्याग देना चाहिये।

यदि धनिष्ठा में उत्तरार्ध से लेकर रेवती पर्यन्त साढ़े चार नक्षत्रों में किसी की मृत्यु हो जाय अथवा त्रिपुष्कर योग में मृत्यु हो जाय अथवा द्विपुष्कर योग में मृत्यु हो तो पुत्तल-विधान की विधि से दाहकर्म करना उचित है, अन्यथा कुल का नाश होता है। रेवती एवं रोहिणी ये नक्षत्र यद्यपि चार चरणोंवाले हैं, अतः दाहकर्म में ग्राह्य हैं, किन्तु इनमें भी पुत्तल-विधान के साथ दाहकर्म करना उचित है।

जब दाहकर्त्ता को अपराह्न समय में चन्द्र तारा का बल प्राप्त हो, दाहकालीन लग्न में शुक्रग्रह न हो तथा पापग्रह बली हो तब ऐसे मुहूर्त में शवदाह करना श्रेष्ठ होता है॥ १-४॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विमर्श—आवश्यकता में क्षण नक्षत्रों का उपयोग करना चाहिये। पुत्तल-विधान में कुशों के पाँच या तीन पुत्तलों का (जैसा आवश्यक हो) दाह शव के साथ किया जाता है।

सपिण्डीकरण श्राद्ध का समय

सपिण्डीकरणं कार्यं वत्सरे वार्द्धवत्सरे।
त्रिमासे वा त्रिपक्षे वा मासि वा द्वादशेऽह्नि वा॥ ५॥

सपिण्डीकरण श्राद्ध को बारहवें दिन (अथवा तेरहवें दिन) अथवा एक मास होने पर अथवा डेढ़ मास (त्रिपक्ष) में अथवा तीन मास में, अथवा छह मास में अन्यथा एक वर्ष की पूर्ति होने पर अवश्य ही कर डालना चाहिये॥ ५॥

एकोद्दिष्ट श्राद्ध का समय

एष्वेव कालेष्वेतानि ह्येकोद्दिष्टानि षोडश।

ऊपर कहे गये सपिण्डी श्राद्ध के समय में ही एकोद्दिष्ट श्राद्ध भी सम्पन्न कर लेना चाहिये॥ ५½॥

पिण्डदान में निषिद्ध काल

कृत्तिकासु च नन्दायां भृगोर्वारे त्रिजन्मसु॥ ६॥
पिण्डदानं न कर्त्तव्यं कुलक्षयकरं यतः।

कृत्तिका नक्षत्र, नन्दातिथि, शुक्रवार तथा त्रिपाद नक्षत्रों में पिण्डदान नहीं करना चाहिये, क्योंकि ऐसा करना कुलक्षयकारक होता है॥ ६-६½॥

साधारण श्राद्ध हेतु निषिद्ध तिथ्यादि

त्रिजन्मसु त्रिपाद्भेषु नन्दायां भृगुवासरे॥ ७॥
धातृपौष्णभयोः श्राद्धं न कर्त्तव्यं कुलक्षयात्।

त्रिपुष्कर योग में, त्रिपाद नक्षत्रों में, नन्दा तिथियों में, शुक्रवार में, रोहिणी तथा रेवती में सामान्य श्राद्ध भी नहीं करना चाहिये, क्योंकि ऐसा करना कुलक्षयकारक होता है॥ ७-७½॥

एकोद्दिष्ट श्राद्ध में निषिद्ध काल

नन्दासु च भृगोर्वारे कृत्तिकायां त्रिजन्मसु॥ ८॥
रोहिण्याञ्च मघायाञ्च कुर्यान्नापरपाक्षिकम्।

नन्दातिथि (१-६-११), भृगुवार, कृत्तिका, रोहिणी तथा मघा नक्षत्र तथा त्रिपुष्कर योग में अपरपाक्षिक श्राद्ध (एकोद्दिष्ट) नहीं करना चाहिये॥ ८-८½॥

सकृन्महालय श्राद्ध में मुहूर्त का विचार नहीं

सकृन्महालये कार्यं न्यूनश्राद्धेऽखिलेषु च॥ ९॥
अतीतविषये चैव ह्येतत्सर्वं विचिन्तयेत्।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महालय (कनागत या आश्विन कृष्णपक्ष) के श्राद्धों में मुहूर्त का विचार नहीं करना चाहिये। वह तो मृत व्यक्ति की दाह की तिथि में ही सम्पन्न करना चाहिये, परन्तु अन्य सभी श्राद्धों में मुहूर्त का विचार अवश्य ही करना चाहिये॥ ९-९½॥

महालय में एक बार श्राद्ध अति आवश्यक

नभस्य मासे सम्प्राप्ते कृष्णपक्षे समागते॥ १०॥

तत्र श्राद्धं प्रकुर्वीत सकृद्वा चेद् शक्तिमान्।
विशिष्टदिवसे कर्त्तुश्चन्द्रताराबलान्विते॥ ११॥

भाद्रमास के कृष्णपक्ष (उसी को उत्तर भारत में आश्विन कृष्णपक्ष कहते हैं) में भले ही कोई निर्धन व्यक्ति हो परन्तु उसे पूरे सोलह दिन तक अथवा एक दिन अवश्य ही श्राद्ध करना चाहिये। इस एक दिन के महालय श्राद्ध (कनागत श्राद्ध) को आगे बताये गये विशिष्ट दिवसों में (श्राद्ध के शुभ योगों में से किसी में) जिस दिन कर्त्ता को चन्द्रबल तथा ताराबल प्राप्त हो, उस दिन करना चाहिये॥ १०-११॥

चतुर्दशी की विशेषता तथा नन्दा की वर्जना

नन्दाश्च तिथयो निन्द्या भूतायां शस्त्रघातिनाम्।

महालय के दिनों में जिस व्यक्तियों को केवल एक ही दिन श्राद्ध करना हो, उसे नन्दा तिथियाँ (प्रतिपदा, षष्ठी तथा एकादशी) छोड़कर आगे कहे योगों में श्राद्ध करना चाहिये। चतुर्दशी तिथि में केवल उनका श्राद्ध करे, जो शस्त्रादि के आघात अथवा दुर्घटना में मरे हैं। शेष तिथियों में उत्तम श्राद्धयोग आगे वर्णित है॥ ११½॥

महालय (कनागत) में द्वितीया-तृतीया तथा चतुर्थी का फल

द्वितीया मध्यमा ज्ञेया तृतीया भरणीयुता॥ १२॥

पूज्या यदि चतुर्थी वा श्रीप्रदा पितृकर्मणि।

१. यदि महालय में द्वितीया तिथि में श्राद्ध किया जाय तो वह मध्यम फल देनेवाली है।

२. भरणीनक्षत्र से युक्त तृतीया महालय श्रेष्ठ में शुभ होती है।

३. यदि भरणी नक्षत्रयुक्त तृतीया में श्राद्ध किया जाय तो लक्ष्मीयोग होता है॥ १२-१२½॥

आनन्द श्राद्ध योग

आनन्दयोगः पञ्चम्यां याम्यर्क्षस्थे दिवाकरे॥ १३॥

भोजयेद्यः पितृंस्तत्र पुत्रपौत्रधनं लभेत्।

यदि महालय के दिनों में पञ्चमी तिथि के दिन भरणी नक्षत्र हो तो आनन्द योग होता है। इसे आनन्द श्राद्ध योग कहते हैं। इसमें श्राद्ध करने से पितर तृप्त होकर पुत्र-पौत्र तथा धन प्रदान करते हैं॥ १३-१३½॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महालय में सप्तमी, अष्टमी तथा नवमी में श्राद्ध का फल

यशस्करी सप्तमी स्यादष्टमी भोगदायिनी॥ १४॥
श्राद्धकर्त्तुश्च नवमी सर्वकामफलप्रदा।

१. महालय में सप्तमी तिथि यशप्रदायक होती है। २. अष्टमी तिथि का श्राद्ध भोगप्रदायक होता है। ३. नवमी तिथि का श्राद्ध सभी कामनाओं को पूर्ण करता है॥ १४-१४½ ॥

पितृकल्याण श्राद्धयोग

सूर्ये कन्यागते चन्द्रे रौद्रनक्षत्रगे यदा॥ १५॥
सप्तम्यां तथाष्टम्यां नवम्याञ्च तिथौ तथा।
योगोऽयं पितृकल्याणः पितॄनस्मिन्प्रपूजयेत्॥ १६॥

जब सूर्य कन्या राशि में तथा चन्द्रमा आर्द्रा नक्षत्र में हो साथ ही सप्तमी-अष्टमी तथा नवमी इन तीन तिथियों में से कोई तिथि हो तो पितृकल्याणयोग होता है। इसमें पितरों का पूजन करना चाहिये॥ १५-१६॥

पितृकल्याणयोग के श्राद्ध का फल

इह सम्पदमाप्नोति पश्चात्स्वर्गभवाप्यते।

जो पितृकल्याणयोग में पितृश्राद्ध तथा पूजन करता है, उसे लोक में सम्पत्ति तथा परलोक में स्वर्ग मिलता है॥ १६½ ॥

अमृतसंज्ञक योग

दशम्यां पुष्यनक्षत्रे सुयोगोऽमृतसंज्ञकः॥ १७॥
अर्चयेद्यः पितृंस्तत्र नित्यं तृप्तास्तु तस्य ते।

आश्विन कृष्ण दशमी के दिन यदि पुष्य नक्षत्र हो तो अमृतसंज्ञक योग होता है। इसमें पितृगणों का श्राद्ध एवं अर्चन करने से उन्हें (पितरों को) नित्य (वर्ष भर तक) तृप्ति रहती है॥ १७-१७½ ॥

द्वादशी श्राद्ध का फल

सर्वसम्पत्प्रदाः कर्त्तुर्द्वादशी तिथिरुत्तमा॥ १८॥

महालय (आश्विन कृष्णपक्ष) में द्वादशी तिथि श्राद्धकर्त्ता के लिये सभी सम्पत्तियों को प्रदान करनेवाली उत्तम तिथि कही गयी है॥ १८॥

त्रयोदशी एवं चतुर्दशी का श्राद्ध में निषेध

त्रयोदश्यां चतुर्दश्यां हानिर्धनकलत्रयोः।

महालय तथा अन्य दिनों में श्राद्धकर्म में त्रयोदशी तथा चतुर्दशी धन एवं स्त्री की हानि करती है॥ १८½ ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गजच्छायायोग का फल

अनन्तपुण्यफलदा गजच्छाया त्रयोदशी॥ १९॥

किन्तु गजच्छाया योग से युक्त त्रयोदशी में श्राद्ध करने से अनन्त पुण्यफल मिलता है तथा कोई हानि नहीं होती है॥ १९॥

विमर्श—ऊपर के श्लोकानुसार त्रयोदशी श्राद्ध में वर्जित है, परन्तु गजच्छाया युक्त त्रयोदशी श्राद्ध में शुभ होती है। जब चन्द्रमा मघा में तथा सूर्य हस्त नक्षत्र में हो तथा उसमें त्रयोदशी तिथि हो तब गजच्छाया योग होता है—

'यदेन्दुः पितृदैवत्ये सूर्यश्चैव करे स्थितः।
त्रयोदशी तिथौ स्यातां गजच्छायेति कीर्तिता॥'

श्राद्धकर्म में अमावास्या का फल

श्राद्धकर्मण्यमावास्या पक्षश्राद्धफलप्रदा॥ २०॥

अमावास्या में श्राद्ध करने पर पूरे पक्ष भर श्राद्ध करने का फल प्राप्त होता है॥ २०॥

नक्षत्र श्राद्ध का फल

पौष्णद्वये पुष्यचतुष्टे च हस्तत्रये मैत्रचतुष्टये च।
सौम्यद्वये च श्रवणत्रये च श्राद्धप्रदाता बहुपुत्रवान्स्यात्॥ २१॥

इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहितायां श्राद्धलक्षणाध्यायो सप्तत्रिंशत्तमः॥ ३७॥

रेवती, अश्विनी, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, मृगशिरा तथा चित्रा इन नक्षत्रों में श्राद्ध करनेवाला मनुष्य बहुत पुत्रों से युक्त होता है॥ २१॥

टीकाकारकृत देशकालादि वर्णन

अङ्गाङ्गे नभलोचने वत्सरे वैक्रमे शुभे।
कर्कमासे शुक्लपक्षे आदित्ये पञ्चमी दिने॥ १॥
उत्तराफाल्गुनी ऋक्षे शिवयोगे च वाडवे।
सर्वार्थसिद्धियोगे च कन्यायाञ्चन्द्रसंस्थिते॥ २॥
नागपञ्चमी दिवसे बरहाग्रामे सुस्थिते।
ब्रह्मविद्याश्रमे पुण्ये प्राच्यां सिन्धुनदीतटात्॥ ३॥
जनपदे लहाराख्ये जिलाभिण्डेति संज्ञके।
मध्यप्रदेशे भारते जम्बूद्वीपे मनोहरे॥ ४॥
संहिता नारदीयाख्या ज्योतिषे वेदलोचने।
'अभया' टीका तस्या हिन्द्यां भाषायां मया॥ ५॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

साहबदासेन गौडेन अभयकात्यायनेन वा।
नाथूरामस्य तनयेन दिवसेऽद्य पूर्णता॥ ६॥
मोदन्तु पाठका सर्वे प्रमोदन्तु च पण्डिता।
पितृगणाश्च तुष्यन्तु प्रसीदन्तु सुहृज्जना॥ ७॥

॥ शुभं भवतु॥

॥ इति श्रीनारदीयज्योतिषसंहिता सम्पूर्णा॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

परिशिष्ट

संहिता ज्योतिष में कुण्डली के द्वादशभावों से विचारणीय विषय

जिस प्रकार जातक के शुभाशुभ का विचार कुण्डली के द्वादश भावों से होता है, उसी प्रकार से संहिता स्कन्ध में राष्ट्र का शुभाशुभ फल कुण्डली के बारह भावों से करते हैं। मेष संक्रान्ति के समय की कुण्डली से राष्ट्र के सम्पूर्ण वर्ष भर का शुभाशुभ फल विचार किया जाता है। इसी प्रकार से कर्क संक्रान्ति, तुला संक्रान्ति तथा मकर संक्रान्ति के समय की कुण्डली बनाकर त्रैमासिक राष्ट्रीय फलादेश का विचार किया जाता है। अमान्तकाल तथा पूर्णिमान्तकाल की कुण्डलियों से राष्ट्र के पाक्षिक फल का विचार तथा प्रत्येक संक्रान्ति के समय की कुण्डलियों से मासिक फल का विचार किया जाता है। सूर्य तथा चन्द्रग्रहण जितने भूभाग में दिखते हैं, उतने में ही उनका फल होता है। अत: ग्रहणकाल की कुण्डलियों से वहाँ के शुभाशुभ फल का विचार किया जाता है। इसके अतिरिक्त देश एवं प्रान्तों की राशि के अनुसार गोचरफल में ग्रहों के राष्ट्र की राशि से द्वादशभाव में स्थिति के अनुसार जो फल होता है, उसका भी विचार करते हैं। आगे राष्ट्रीय कुण्डली से बारह भावों से किन-किन बातों का विचार किया जाता है, इसे लिखा जा रहा है।

१. लग्नभाव (प्रथम भाव)—वर्षलग्न (मेषार्ककालीन) में पड़नेवाली राशि एवं ग्रहों के राष्ट्र का आरोग्य, स्वास्थ्य, सुख, शान्ति, जनता, सामान्य स्थिति, आन्तरिक सुरक्षा, कानून एवं व्यवस्था की स्थिति, शासन-व्यवस्था, राष्ट्रीय विकास, राष्ट्र का सम्मान, राजनेताओं की सफलता, अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में राष्ट्र का प्रभाव और स्थिति तथा अन्तरराष्ट्रीय आर्थिक-सांस्कृतिक-व्यापारिक एवं सैन्य समझौतों का विचार किया जाता है।

२. द्वितीय भाव—राष्ट्रीय ज्योतिष में कुण्डली के द्वितीय भाव से उसकी राशि एवं ग्रहों की स्थिति एवं हानि तथा गोचर संचार से राष्ट्रीय आर्थिक स्थिति, व्यापार, बैंकिंग-व्यवस्था, वित्तीय कम्पनियाँ, राष्ट्रीय बचत, मुद्रा-विनिमय, आर्थिक व्यवहार, रिजर्व बैंक, स्वर्ण की जमा राशि, खाता, राजस्व की वसूली, विदेशीमुद्रा, भुगतान-सन्तुलन, कराधान, अन्न-संग्रह आदि का विचार किया जाता है।

३. तृतीय भाव—तृतीय भाव से राष्ट्र के पराक्रम, रेलवे, मोटर, यातायात, यात्रा के साधन, डाक-विभाग, कोरियर, तार, रेडियो, टी०वी०, फोन, मोबाइल, दूर-संचार के अन्य साधन, स्टॉक एवं शेयर बाजार की गतिविधियाँ, राष्ट्र के लेखक, विचारक,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कवि एवं साहित्यकार, पत्र-पत्रिकाएँ, संवाददाता, पत्रकार, हॉकर, पुस्तकें एवं ग्रन्थ-भण्डार, पुस्तकालय, वाचनालय, फसल को हानि पहुँचानेवाले जीवजन्तु (पक्षी, टिड्डी, चूहे, इल्ली, माहू आदि) का विचार किया जाता है।

४. चतुर्थ भाव—कृषिकार्य, बागवानी, सामाजिक वानिकी योजना, वृक्षारोपण, फसल, ऋतु, मौसम, सिंचाई के साधन, कृषिभूमि, राष्ट्रीय आवास योजनाएँ, नगरीय विकास, नगर विकास प्राधिकरण, सड़क-निर्माण, पुल-निर्माण, जल-यातायात, प्रतिपक्षी राजनैतिक दल आदि का विचार किया जाता है।

५. पञ्चम भाव—शिक्षण संस्थान, शिक्षा विभाग, प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च तथा विश्वविद्यालयीय शिक्षा आदि से सम्बन्धित संस्थान, नृत्य-संगीत, गीत-मल्लविद्या-व्यायामशाला-स्काउट आदि की शिक्षा, छात्र-छात्राएँ, स्वाध्यायी छात्र, शोधकार्य, शोधकर्त्ता विद्वान्, वैज्ञानिक, जन्म-मृत्यु का अभिलेख, शेयर बाजार, मनोरंजन के स्थान, सट्टा-जूआ आदि का विचार राष्ट्रीय कुण्डली के पाँचवें भाव से करते हैं।

६. षष्ठ भाव—संक्रामक रोग, कुपोषण, प्रदूषण, रतिजन्य रोग, शत्रुदेश, दूसरे देश द्वारा जैविक-आणविक तथा रासायनिक आयुधों का प्रयोग, आतङ्कवाद, जलसेना, थलसेना, चिकित्सा-पद्धतियाँ, चिकित्सा के संस्थान, अस्पताल, विशाल जलपोत, अकुशल श्रमिक वर्ग, अस्त्र-शस्त्रों के भण्डार, परमाणु-परीक्षण, राष्ट्रीय ऋण, विदेशी सहायता, विदेशी जासूस आदि का विचार राष्ट्रीय ज्योतिष में छठे भाव से करते हैं।

७. सप्तम भाव—राष्ट्रीय कुण्डली में सातवें भाव से देश के साथ अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्ध अन्य देशों के साथ राजनैतिक एवं व्यापारिक समझौते, विदेशी व्यापार, युद्ध, शान्तिभंग, सैन्य-सन्धि, राजनैतिक-सन्धि, सुरक्षा-सन्धि, दूसरे राष्ट्रों के साथ सीमा-विवाद, राष्ट्रीय नागरिकों के दाम्पत्य-सम्बन्ध, विवाह, तलाक, राजनैतिक कार्यवाही, पुलिस कार्यवाही, नागरिकता-सम्बन्धी कार्यों का विचार करते हैं।

८. अष्टम भाव—विदेशी आक्रमण के खतरे, सैन्य सुरक्षा, देश के नागरिकों की मृत्युदर, नागरिकों की औसत आयु, राष्ट्र के वन, दुर्गम स्थान, सीमावर्ती स्थान, नागरिकों में आत्महत्या के आँकड़े, लड़ाई-झगड़े, खूनखराबे, सामूहिक संघर्ष, दंगे-फसाद, धारा १४४, दुर्घटनाएँ, राष्ट्रीय कठिनाइयाँ, कानून एवं व्यवस्था की चुनौतियाँ, राष्ट्रीय कर्ज का पटाना, ऋणमुक्ति, राष्ट्रीय देनदारी आदि का विचार राष्ट्रीय कुण्डली में आठवें भाव से करते हैं।

९. नवम भाव—राष्ट्रीय-धर्म, सदाचार, राष्ट्रीय चरित्र, नैतिकता, राष्ट्रभक्ति, समाजभक्ति, लोक-कल्याण, न्याय-व्यवस्था, भ्रष्टाचार-निवारण, धर्मोपदेशक, धर्मगुरु, साधु-सन्त, प्राचीनग्रन्थ, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, वैज्ञानिक शोधकार्य, विमानन-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कार्य, विमानयात्रा, हवाई यात्रा, विमानन कम्पनियाँ, उड्डयन संस्थान, वैज्ञानिक उन्नति, राष्ट्रीय परामर्शदाता आदि का विचार नवम भाव से करते हैं।

१०. दशम भाव—देश का सर्वोच्च शासक, राष्ट्र का प्रथम नागरिक, सत्तारूढ़ दल अथवा सत्तातन्त्र, शासन-प्रशासन अधिकारी, राज्यमानप्राप्त व्यक्ति, राष्ट्र के लोकप्रिय नेता, जन प्रतिनिधि संसद, विधानसभा, राज्यसभा, राजपत्र अधिनियम तथा अध्यादेश के क्रियान्वयन का विचार दशम भाव से होता है।

११. एकादश भाव—राष्ट्रीय ज्योतिष में ग्यारहवें भाव से राष्ट्रीय आय, बाहरी सहायता, मित्रदेश, मित्र मंडल के संगठन के सदस्य देश, राष्ट्रीय मुद्दों पर बहस आदि का विचार ग्यारहवें भाव से होता है।

१२. द्वादश भाव—राष्ट्रीय कुण्डली के बारहवें भाव से दण्ड-व्यवस्था, कारागार, सुधारगृह, अपराधी लोग, विदेशी जासूस, घर के भेदिये, राष्ट्रीय एकता के लिये घातक व्यक्ति, कानून एवं व्यवस्था के लिये खतरनाक व्यक्ति, समूह आदि, गुप्तशत्रु, भ्रष्टाचारी, कालाबाजारी और करचोरी करनेवाले, वित्तीय घाटा, राष्ट्रीय ऋण का भुगतान आदि का विचार होता है।

राष्ट्रीय ज्योतिष में ग्रहों का प्रभाव

१. सूर्य—सूर्य राष्ट्रीय ज्योतिष में राष्ट्र के प्रधान शासक, उच्चाधिकारी, प्रशासनिक सेवा, प्रधान न्यायाधीश, सर्वोच्च न्यायालय आदि का कारक होता है।

२. चन्द्रमा—चन्द्रमा जनता, सामाजिक संगठनों, देश का महिला वर्ग, सुकुमार नागरिक, जलीय उत्पाद, समुद्री उत्पाद, सिंचाई के साधन, नदी-समुद्र आदि का कारक होता है।

३. मंगल—मंगल सेनापति, सैनिक, स्काउट, पुलिस, गृहविभाग, सुरक्षा, प्रतिरक्षा, अभिरक्षा, डाक्टर, सर्जन, खदान, खनिज, अग्निकाण्ड, झगड़ा तथा युद्ध का कारक होता है।

४. बुध—बुध देश के लेखक, वैज्ञानिक, ग्रन्थकार, पुस्तक प्रकाशक, पत्र-सम्पादक, रेडियो, टी.वी., राजदूत, वकील, व्यापार, कम्प्यूटर, व्यापारिक प्रबन्ध, गणितज्ञ, ज्योतिषी, लेखाकार, सांख्यिकी तथा बुद्धिजीवियों का कारक होता है।

५. गुरु—यह देश के तर्कशास्त्री, धर्मगुरु, धर्मोपदेशक, दार्शनिक, साहूकार, धनाढ्य व्यक्ति, सोना, चाँदी, बैंक, वित्तीय संगठन, वकील, न्यायाधीश, धार्मिक अनुष्ठान करानेवाले लोगों का तथा तपस्वियों का कारक होता है।

६. शुक्र—यह राष्ट्र के अन्न, दुग्ध उत्पादक, फल, मेवा, शक्कर, गुड़, विवाह, उत्सव, प्रजनन, चित्रकारी, फैशन, कला-कौशल, फोटोग्राफी आदि का कारक होता है।

७. शनि—शनि खेती, मजदूरी, कृषक, श्रमिक, भारवाहक, कुली, वृद्ध नागरिक, खदान, खनिज पदार्थ, तेल, चमड़ा, पेट्रोलियम, लोहा आदि का कारक होता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

देश एवं प्रदेश की राशियों का निर्धारण

जिस प्रकार व्यक्ति के नाम से उसकी राशि का निर्धारण होता है, उसी प्रकार से किसी देश या राष्ट्र की राशि का निर्धारण नहीं किया जा सकता है। वाराही संहिता में भारत-जैसे विशाल देश के अनेक विभाग करके उनकी राशियों का तथा नक्षत्रों का निर्धारण किया गया है। नारदसंहिता में भी किया गया है। इसे कूर्म विभाग कहते हैं। भारतीय ज्योतिर्विद उसी प्रकार से विचार करते हैं। आधुनिक ज्योतिर्विदों ने अनेक देशों की राशियों का निर्धारण किया है। उसमें कुछ मतभेद भी हैं, परन्तु पाठकों के लाभार्थ उसकी कुछ बानगी यहाँ दी जा रही है।

१. मेष राशि—डेनमार्क, इंगलैण्ड, जर्मनी, फिलीस्तीन (इजराइल), सीरिया, जापान, पोलैण्ड—इन देशों की राशि मेष मान्य की गयी है। बर्मिंघम, नेपल्स तथा फ्लोरेंस शहरों की भी राशि मेष है।

२. वृष राशि—आयरलैण्ड, ईरान, जार्जिया, एशिया माइनर, साइप्रस, श्वेतरूस, काकेसस, पार्सलीग आदि भूभाग वृष राशि के हैं।

३. मिथुन—अमेरिका, आरमीनिया, त्रिपोली, वेल्स, इंगलैण्ड का पश्चिमी भाग, लोम्बार्डी, बेलजियम, सार्डीनिया, मिश्र तथा त्रिपोली—ये मिथुन राशि के भूभाग हैं।

४. कर्क—स्काटलैण्ड, हॉलैण्ड, न्यूजीलैण्ड, उत्तर पश्चिम अफ्रीका तथा मारीशस ये कर्क के क्षेत्र हैं।

५. सिंह—फ्रांस, इटली, सिसली, बसरा प्रदेश, उत्तरी रोमानिया, पोर्निया, टायर प्रदेश, आल्पस प्रदेश, सिडोन का समीपवर्ती भूभाग—ये सब सिंह राशि के अन्तर्गत हैं।

६. कन्या—यूरोपीय तुर्किस्तान, स्विट्जरलैण्ड, असीरिया, इराक, वेस्टइण्डीज, पाकिस्तान, क्रोशिया, साइलीसिया, बेबीलोनिया तथा कुर्दिस्तान ये क्षेत्र कन्या के हैं।

७. तुला—हिन्दचीन, चीन, तिब्बत, बर्मा, आर्हेन्तीना, ऑस्ट्रिया, उत्तरी मिस्र, लिवोनिया—ये सब भूभाग तुला राशि के प्रभाव के देश हैं।

८. वृश्चिक—नार्वे, उत्तरी सीरिया, क्वींसलैण्ड, ट्रांसवाल,अलजीरिया, कटा-लोनिया, बवेरिया, मोरक्को—ये सब भूभाग वृश्चिक राशि के प्रभाव के देश हैं।

९. धनु—ऑस्ट्रेलिया, सऊदी अरब, हंगरी, स्पेन, मेटागास्कर, फेलिक्स, इरिट्रिया तथा मोरेविया के भूभागों की धनु राशि है।

१०. मकर—भारत, अफगानिस्तान, मकदूनिया, अल्बानिया, बोस्निया, यूनान, बल्गारिया, मेक्सिको तथा मराकश—इनके भूभाग मकर राशि के प्रभाव के हैं।

११. कुम्भ—अबीसीनिया, परसिया, लालरूस, स्वीडन, सर्बिया, लिथुएनिया इनकी राशि कुम्भ हैं।

१२. मीन—पुर्तगाल, तथा सहारा मरुस्थल।

भारतीय ज्योतिषी इन राशियों का विचार निरयण पद्धति से तथा पाश्चात्य सायन मत से करते हैं।

॥ समाप्तोऽयं ग्रन्थः ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

श्लोकानुक्रमणिका

	अ. श्लो.
अकपाटमनाच्छन्नम्	२९।९६
अकारादिषु वर्गेषु	२९।२८
अकालजेषु नृपतिः	३०।८२
अखिलर्क्षं पञ्चगव्यम्	२७।८४
अग्नये स्वाहेति हुत्वा	३५।६२
अग्निजा विश्वरूपाख्या	२।१३९
अग्निं तत्र प्रतिष्ठाप्य	३५।२२
अग्निसंस्थापनं प्राच्यां	३५।४२
अग्न्याधानं प्रतिष्ठा च	४।१६
अग्न्याधानास्त्रशस्त्रोग्र	६।६
अजैकपाच्चूतवृक्षो	६।७०
अज्ञातजन्मनां नृणां	३०।२
अज्ञात्वा द्विविधान्वेधान्	१२।९
अणोरणुतरः साक्षात्	१।१
अतिचौर्यमतिक्रोधो	२९।१४
अतिथिस्वजनैस्सार्द्धम्	३।२२
अतिवृष्टिः कालयुक्ते	३।६८
अतिव्याध्यर्दिताः लोकाः	३।२०
अतीतविषये चैव	३७।१०
अतीव बलवाञ्श्चैव	२४।१८
अत्यन्तवृद्धिरधिके	२९।५
अथ यात्रा यथा नृणाम्	३०।१
अथर्वविद्याशस्त्राग्नि	४।८
अथवा प्रस्थान	३६।३
अथवा शेषनागेन्द्र	३६।४७

	अ. श्लो.
अथेशान्यादि कोणस्था	२९।८४
अथोत्तरायणे शुक्र	२६।१
अदितीन्दु मघाश्लेषा	७।९
अद्रिबाणाब्धयस्तर्क	५।१६
अधोमुखी नृपं हन्ति	३६।२४
अनग्नौ च स्फुलिङ्गाश्च	३४।५
अनर्घ्यामयरोगेभ्यो	३।६२
अनलाब्देऽनलभयम्	३।६६
अनातङ्कं व्याधिभयम्	२९।१५
अनावृष्टिर्धूम्रनिभः	२।८१
अनावृष्टिः सौम्यवर्षे	२।६७
अनिष्टदाः पङ्गुसुताः	२।१३७
अनिष्टदो धूमकेतुः	२।१३१
अनुक्तः पञ्चभिर्मासैः	३६।८९
अनुक्ताः स्वल्पदोषाः	२७।८८
अनृतव्यसनद्यूत	६।१२
अनेकसस्यसम्पूर्णा	२।७५
अनेन विधिना सम्यग्	२९।९५
अनैश्वर्यं चान्नहानि	३४।११
अन्तर्वेदी च पाञ्चालं	३३।२
अन्धको मन्दसंज्ञश्च	११।१३
अन्नं च पायसं भक्ष्यम्	११।११
अन्यथा पुंश्चली वन्ध्या	१५।६
अन्यदिक्षु प्लवं तेषाम्	२९।४
अन्य यन्त्र प्रयोगा ये	२७।१११

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.
अन्योऽन्यं नृपसंक्षोभम्	३।७०
अपि भूरिगुणोऽन्यार्थे	२७।९९
अपि शुक्रेज्यसंयुक्तः	२७।८२
अपि सर्वगुणोपेतास्ते	२७।८१
अप्रबुद्धो हृषीकेशो	२७।२७
अब्दे भाद्रपदे लोके	२।७७
अब्देश्वरो चमूपो वा	२।४
अब्देश्वरश्चमूपो वा	२।५
अब्देश्वरश्चमूपो वा	२।६
अब्देश्वरश्चमूपो वा	२।७
अब्देश्वरश्चमूपो वा	२।८
अब्देश्वरश्चमूपो वा	२।९
अब्देश्वरश्चमूपो वा	२।१०
अभिजिद्धातृवैश्वेन्द्र	३६।८५
अभ्यक्तो भानुवारे यः	५।९
अभ्यङ्गं मन्त्रितैर्मन्त्रैः	३५।४७
अमायाः पितरः प्रोक्ताः	४।२
अमारिक्ताष्टमीषष्ठी	१५।१
अमावास्या च नवमी	४।२२
अमृतास्वादनाद्राहुः	२।११२
अयुग्मराशिगौ चेत्तौ	२७।११
अयुग्मे दिवसे भार्यां	१६।१०
अरिक्ता पर्वदिवसे	१८।२
अरियोनिभवो वृक्षो	६।७१
अरिष्टवृक्षो रविभात्	६।६७
अर्कार्किभौमवारे	६।५७
अर्चयेच्छुरिकां सम्यक्	२५।५
अर्चयेद्यः पितृंस्तत्र	३७।१८
अर्थपत्रक्षयं तस्य	४।२७
अर्थहानिश्चार्थवृद्धिः	२५।१२
अर्थेशानामर्थहानिः	२।११७
अर्द्धरात्रयुता यत्र	३६।१०१
अप्रयाणे स्वयं	३०।७९
अर्धार्कास्तमनात्संध्या	११।१९
अर्यमा च विवस्वांश्च	२९।८९
अर्यमाद्यानि चत्वारि	३६।८२
अर्यमाभगसंज्ञश्च	९।२
अर्यमार्कत्वष्ट्रमरुत्	६।२
अर्यमा राक्षसब्राह्मौ	९।५
अर्यमा सविता चैव	२९।८६
अल्पवृष्टिः पापदृष्टे	३२।२
अवनीगाढमच्छिन्नं	३६।५३
अवन्ती द्राविड़ाभिल्ला	३३।४
अवृष्टिदं जलोद्भूतं	३६।४९
अशत्रवो जना धात्री	२।९४
अश्वयुङ्मासि शुक्लायां	३६।११०
अश्वशान्तिं प्रवक्ष्यामि	३५।५०
अश्वासीनं कुन्तपाणिं	३०।७७
अश्वेभमेषसर्पाहि	२७।१५३
अश्वव्यग्नीन्दु	६।५३
अष्टधा राशिकूटं च	२७।१३९
अष्टमी द्वादशी षष्ठी	४।२०
अष्टमी नवमी चैते	३६।११६
अष्टमी शुक्रवारे तु	१०।१७
अष्टमे पुत्र उत्कृष्टो	१६।४
अष्टमे शुद्धिसंयुक्ते	२२।७
अष्टांशं च तृतीयांशं	२९।५१
अष्टादशे सप्तदशे	२।४२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.
अष्टादशं सामुदायं	२४।१२
असंक्रान्तिर्द्विसंक्रान्तिः	३६।९०
अस्य शास्त्रस्य सम्बन्धो	१।५
अहः संक्रमणे कृत्स्नं	११।१६
अहर्निशं प्रतिदिनं	३६।३२
अहिर्बुध्न्यं पूर्वसस्यं	३२।१३
अहिर्बुध्न्यार्यमाग्नेय	२।५३
आक्रन्दं विपुलाख्यं च	२९।५८
आग्नेयमण्डलं त्वेतद्	३६।८४
आग्नेय्यां पूर्वदिग्धिष्ण्यै	३०।८
आग्नेय्यां युवराजस्य	३६।७०
आचार्यसौम्यकाव्यानां	२४।१३
आचार्याय श्रोत्रियाय	३५।१०
आजनेः पञ्चमे वर्षे	२४।२
आज्यावलोकनं	३५।२३
आढ्या पुत्रवती मान्या	१५।२९
आत्मानं सन्ध्ययोर्हन्ति	२७।१७२
आदित्यभौमयोर्नन्दा	१०।१५
आदौ विरुद्धशकुनं	३०।९४
आदौ सम्पूर्णफलदं	१४।१८
आदौ सौम्यायने कार्यम्	३१।१
आद्यब्देश चमूनाथ	३।७७
आद्यष्षष्ठो	५।१९
आधानादष्टमे वर्षे	२४।१
आनन्दः कालदण्डश्च	१०।७
आनन्ददा धराजस्त्रं	३।४२
आनन्दवत्सरे सर्वे	३।६४
आन्वीक्षिकीसु निरताः	३।१८
आपञ्चम्यांस्तु तिथयः	२४।१०

	अ. श्लो.
आपवत्सोष्टमः पञ्च	२९।८७
आमध्याह्ने तु विप्राणां	३६।६४
आयामेषु चतुर्दिक्षु	२९।१२
आयुधं वाहनाहारो	११।१२
आरभ्य साधकं	२९।३८
आरभ्योद्वाहदिवसात्	२७।१८१
आरोहेत गृहं यस्य	३५।२५
आर्द्रादिपितृभान्तेषु	२।५१
आवाहनादि सर्वोपचारांश्च	२९।९२
आषाढसितपञ्चम्यां	३६।१०४
आषाढाद्वयमूलेन्द्र	२।३१
आषाढ़े कार्तिके मासि	४।३४
आसन्नमर्कशशिनो	३२।१५
आहवे निहताः सर्वे	३।७३
इक्षुधान्यवणिक्पण्य	१४।५
इति प्रदक्षिणं द्वारं	२९।१८
इति प्रार्थ्य यथाशक्तिः	२९।९४
इति मर्त्यगणो ज्ञेयः	२७।१४३
इन्दुक्षये च संक्रान्तौ	३६।९६
इन्दुभात्खदिरो जातः	६।६५
इन्दोर्नशत्रुरर्कज्ञौ	२७।१५०
इन्दौ खस्थे गुरौ केन्द्रे	३०।५३
इन्द्रचापाग्निधूमाभं	३६।५६
इन्द्रचापनिभाराज्यं	३६।२७
इन्द्रः प्रजापतिर्मित्रः	८।३
इन्द्रमैरावतारूढं	३०।७१
इन्द्राग्निमित्रमार्तण्ड	२।५९
इन्द्रोऽजपादचतुरास्या	३०।६
इषमासि चतुर्दश्यां	३६।९४

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.
इषोर्जमासयो:	२ । ६४
इह सम्पदमाप्नोति	३७ । १७
ईक्षते वा चैकविंशम्	२४ । २७
ईतिदुर्भिक्षमतुलं	३६ । ७८
ईशानकोणतो बाह्या	२९ । ८०
ईशान्यां त्वष्टभिर्हस्तै:	३५ । ५२
ईशान्यां स्थापयेद्वह्निं	३५ । २९
ईश्वराब्दे स्थिरा: क्ष्मेशा:	३ । २७
उक्तानुक्ताश्च ये दोषा	२७ । १३५
उग्रं च सन्धित्रितयं	२७ । ५९
उग्रकेन्द्रगते केतौ	२४ । ३४
उच्चगे नीचगे	२७ । ६३
उच्चस्थो गुरुरेकोऽपि	२७ । १३८
उत्तरात्रयमित्रेन्द्र	६ । ४८
उत्पातग्रहणादूर्ध्वं	२७ । ३०
उत्पातरूपा: केतूनां	२ । १२५
उत्पातास्त्रिविधा लोके	३५ । १
उत्पाता ह्यखिला नृणां	३५ । ३६
उत्सवोपनयोद्वाह	३० । ६१
उदयास्तमयं याति	२ । १०३
उदयास्तमये काले	३२ । १९
उदयास्तमयेऽर्केन्द्वो:	३६ । १४
उदयास्तसमये भानु:	२ । २६
उदयास्तसमये भानो:	२ । २४
उदयास्तशुद्धिहीनो	२७ । ४४
उदित: श्रवणे पुष्ये	२ । ४४
उद्वाहेऽखिलवार	२२ । ११
उपोष्य जन्मचिन्हानि	३६ । ९८
उल्का विद्युदशनि	३६ । ४
उष्ट्रकुञ्जरशालानां	२९ । ७६
ऊर्ध्वं वाप्यथवा तिर्यग्	३६ । ८
ऋतुकालानुरूपोऽर्क:	२ । २७
एकद्वित्रिचतु: शाला	२९ । ५६
एकभुक्तोपवासेषु	३६ । १०३
एकरात्रं त्रिरात्रं वा	३५ । ६४
एकराशौ पृथक्धिष्ण्ये	२७ । १४०
एकर्क्षेत्वेक राशौ च	२७ । १४१
एकस्मिन्नेव मासे तु	२ । १२०
एकस्मिन्वासरे तिस्र:	४ । ३६
एकादशस्थ: शुक्रो वा	२७ । १३२
एकादश्यामिन्दुवारो	१० । १६
एकाधिपे मित्रभावे	२७ । १४७
एको यथा तोयबिन्दु:	२७ । १०१
एते नवांशा: संग्राह्या	२७ । ८६
एतेषां पञ्चगोत्राणां	३० । १८
एते स्वस्थानशास्तानि	२९ । ६६
एवं कुर्यादिदं स्थानं	२९ । ६४
एवं लक्षणसंयुक्तं	२७ । १८०
एवं वक्रग्रहास्तेषां	३६ । ३८
एवं विधां तामारोहेन्	२७ । ११६
एवं स्त्रीणां भर्तृलब्धि:	२७ । १२
एवमाद्यास्ततस्तेषां	२७ । ८९
एवमाद्या हि दृश्यन्ते	३४ । ३
एषां तु नवमानानां	३ । २
एष्वेव कालेष्वेतानि	३७ । ६
ऐशान्यां भार्गवसुता:	२ । १३६
ओजराश्यंशगे चन्द्रे	१६ । ८
कनकान्दोलिकाच्छत्र	३६ । १०९

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.		अ. श्लो.
कपिगोधाधूमनिभा	३६।१०	कुरुकाश्मीरमाद्रेय	३३।६
करोति रुदितं केन्द्र	२४।३३	कुर्यात्कपालवत्ताम्र	२७।१०३
करोति सुतसौभाग्य	२७।११९	कुर्यादेव ततो भक्त्या	३५।३१
कर्कटे शुभदं प्रोक्तं	२९।२६	कुर्याल्लघुपदेऽलिन्दं	२९।६०
कर्तरीयोगदुष्टं	२७।६१	कुर्वन्त्यायुर्धनारोग्यं	२७।११७
कर्तव्यं क्षौरनक्षत्रे	२२।१०	कुलटा दुर्भगा दुष्टा	१५।९
कर्तव्यं मङ्गलेष्वादौ	२३।१	कुलशीलवयोरूप	२७।१७
कर्तुर्वा जन्मभे	३१।८	कुलीरवृषचापान्त्य	१५।३
कलाविज्ञानसिद्धिश्च	१४।३	कुलीरसिंहयो: कीट	२७।५७
कल्यादिस्यात्कृष्णपक्षे	४।३१	कुल्माषांश्च तिलान्नं च	३०।६५
काकघातव्रतं चैव	३५।३	कृत्तिकादीनि धिष्ण्यानि	३३।७
काकानामाकुलं रात्रौ	३४।८	कृत्तिकासु समुद्भूतो	२।१४१
कारयेत्कन्यका गेहे	२७।१६	कृत्वा होमं दारुणं च	३०।७०
कार्तिक्यामथ वैशाख्यां	३६।१११	कृषिवाणिज्यगोधान्य	६।१३
कार्पासगुडतैलेक्षु	३।७६	कृषिवाणिज्यधान्याश्म	४।१२
कार्मुके च महाहानि:	२९।२७	कृषिवाणिज्यपश्वम्बु	१४।११
कार्यहानिर्मुखेमृत्यु:	८।६	कृषिवाणिज्ययानाश्च	१४।७
कार्यं तच्छेदनं तत्र	३४।९	कृष्ण: शौरि: स्ववारेषु	५।१५
कार्येणाप्यधिक: षड्भि:	२७।१०५	केचिन्मृत्युप्रदा: केचिद्	३४।१०
किरणा वायुनिहता	३६।२८	केतु: पञ्चदशे दण्ड	१०।२
कीर्ति: शोको जयो	२९।३६	केतुना संयुते चन्द्रे	२७।६७
कुङ्कुमाभौ वसन्तर्तौ	२।१७	केन्द्रत्रिकोणे ह्येकेन	३०।३७
कुक्षौ दक्षिणभागस्य	३५।१५	कौजन्यमानं वैश्यानां	२९।७५
कुजाद्यैर्निहिते शृङ्गे	२।३७	क्रकचं हि प्रवक्ष्यामि	१०।४
कुजाष्टमे महादोषो	२७।५५	क्रमाच्छिशिरवासन्त	३।८०
कुजे त्रयोदशे ऋक्षे	२।४०	क्रमादभ्युदिते चन्द्रे	६।५२
कुण्डं लक्षणसंयुक्तं	३४।१२	क्रमादिग्द्वारभानि स्यु:	३०।७
कुद्वयग्न्याब्धिसुताष्टांका	१२।६	क्रियते यदि वै मोहाद्	२१।७
कुनवांशो महापातो	२७।४७	क्रूरग्रहाणामेकोऽपि	१८।६

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.
क्रूरविद्धयुतं धिष्ण्यं	२७। ८५
क्रूरो विधुयतो वापि	६। ६०
क्रोधनाब्दे मध्यवृष्टिः	३। ७५
क्रोध्यब्दे सततं रोगाः	३। ५४
क्लेशः क्वचिन्न प्रेक्ष्यन्ते	३। २१
क्वचिद्वृद्धिः क्वचिद्धानिः	३। १७
क्वचिद्वृष्टिः क्वचित्सस्यं	२। ७४
क्षीणेन्द्वर्कार्किभूपुत्रा	१४। १४
क्षेमः सुभिक्षदाः श्वेताः	२। १३५
क्षौरास्त्रशस्त्रवाणिज्य	६। २१
खड्गं चर्मधरं नीलं	३०। ७४
खड्गपुत्रिकयोर्मानं	२५। १०
खादिरार्जुनशालोत्थं	२९। ४९
खमार्गणा वेदपक्षाः	२७। ७४
खरगोरथनौयानं	६। ३१
खराब्दे सततं सम्यग्	३। ४१
खशवाह्लिकवङ्गेषु	११। ७
गङ्गायाः स्नानतो भक्त्या	२७। १२९
गणयेत्संख्यया चैक	२७। १५८
गणेशभद्रधनदः	७। ५
गण्डान्तः कर्त्तरीरिः	२७। ४५
गण्डोवृद्धिर्ध्रुवाश्चैव	७। ३
गन्धपुष्पाक्षतच्छत्र	३०। ९१
गन्धर्वनगरं दिक्षु	३६। ५४
गन्धर्वासुरपैशाच	२७। १६१
गीर्वाणपूर्वगीर्वाणाः	३। ३७
गुडकार्पासलवण	३०। ८९
गुणान्विता धर्मरता	१५। ८
गुणाधिकतरे लग्ने	२८। १८
गुणाधिकः स्वल्पदोषः	२७। १००
गुरुशुक्रावनावृष्टिः	२। १०४
गुरोः सप्तमराशिस्थः	३२। १४
गुरोरधो लघुस्थाप्यः	२९। ५९
गुरौ भृगौ वा शाखेशे	२४। २१
गृहपादाः गृह	२९। ६९
गृहप्रवेशवैवाह	३। ७९
गृहमध्ये तण्डुलोपरि	२९। ७८
गृहस्येशानकोणे तु	३५। ५
गृहादीनां गृहच्छादं	२९। ७१
गोचरं वा वेधजं	२७। ३५
गोयुग्मकर्ककन्यान्त्य	१४। १३
गौडमालवयोस्त्याज्याः	२७। ९८
ग्रस्तास्ते त्रिदिनं पूर्वं	२७। ३१
ग्रस्तोदितवास्तमितौ	२। १२१
ग्रहणं निखिलं कार्यम्	३। ३
ग्रहयोगावलोकाभ्यां	१४। १७
ग्रहसंस्थापनं सूर्ये	२९। २५
ग्रहेषु विषमस्थेषु	१२। १२
घटान्त्योक्षनृयुग्मेष	३६। ११२
घृतान्नं तिलपिष्टान्नं	३०। ६३
घोरा ध्वांक्षी महोदर्यो	११। १
चक्रा विशालज्वलिता	३६। ६
चतुरस्त्रीकृते क्षेत्रे	२९। ११
चतुर्थमनुरन्ध्राङ्क	४। २१
चतुर्थमभिजिल्लग्नं	२७। १६३
चतुर्थस्थानगः सौम्यः	३०। १३
चतुर्थे चार्थनाशाय	३६। ६५
चतुर्थे मासि षष्ठे वा	१८। १

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.		अ. श्लो.
चतुर्थे सुखदा: सौम्या:	२८। १२	चैत्रेऽब्दे मध्यमावृष्टि:	२। ७१
चतुर्दशी तिथिर्नन्दा	३७। १	चैत्रे भाद्रपदे चैव	४। ३२
चतुर्नाडी त्वहल्यायां	२७। १५९	चौराश्च प्रबला: स्त्रीणां	२। ७०
चतुष्पात्तै तिले नागे	११। १०	चौलाङ्कुरार्पण मौञ्जी	१। १३
चतुस्त्रिद्व्योङ्घ्रि	२७। १५७	च्यवनो यवनो गर्ग:	१। ३
चतुस्त्रिंशत्	२९। ४८	छत्राकृतिर्देशहन्ता	२। २३
चत्वार: परिवेषस्था	३६। ३७	छिद्रेऽर्कमण्डले दृष्टे	२। २२
चत्वारिंशत्क्रमात्	२। ६१	जघन्यास्तोयमार्द्रा	६। ५१
चन्द्रताराबलं वीक्ष्य	२७। ३६	जानानां भीतिरीतिश्च	२। ८७
चन्द्रताराबलाध्याय:	१। १२	जन्मत: स्वायगोक्षास्ते	१२। ५
चन्द्रताराबलोपेते	२८। ६	जन्मराश्यष्टमर्क्षेषु	३०। २२
चन्द्रताराबलोपेतो	३१। ६	जन्मराश्युदयश्चैव	२७। ७३
चन्द्रस्य द्वादशावस्था	१३। ६	जन्मसम्पद्विपत्क्षेम	१३। ३
चन्द्रस्य बलमाधारं	१४। २०	जन्मत्रिपञ्चसप्ताख्या	१३। ४
चन्द्रस्य सदृशो यत्र	२। २१	जन्मोदये लग्नगते	३०। २५
चन्द्रेज्येज्ञेऽथवा शुक्रे	३२। १०	जपादिपूर्वकं सम्यग्	३५। ६५
चरस्थिरमृदुक्षिप्र	२०। ३	जलदोदक् प्रतिसूर्यो	३६। ६०
चरस्थिरमृदुक्षिप्र···	२१। ३	जलमन्त्रेण संप्रोक्ष्य	३५। ४४
चरस्थिराखिलं कर्म	४। १५	जलेशसार्वमाहेन्द्र	२। १०७
चराह्वयो वास्तुपुमान्	२९। ४४	जलोदये जलांशे वा	३०। ३०
चापशृङ्गाटकरथक्षत	३६। ३१	जान्वोरेवं	३५। १८
चाषं त्यक्त्वा चतुष्पात्तु	३०। ८५	जामित्र शुद्ध्येकविंशन्	२७। ४२
चित्रकर्मा भोगिनी च	१५। १७	जितेन्द्रिय: शुद्धमना:	३५। ४
चित्रलेख्यासवक्षेत्र	४। ५	जीमूतस्येत्यनुवाकेन	३५। ६७
चित्रादित्याश्वि	६। ३७	जीवार्कचन्द्रा	३०। ४५
चित्राश्रवणवैरिंचि	६। ४०	जीवे नैस्त्वं सिते हानि:	५। १०
चित्रोत्तरादितीज्यान्त्य	२६। २	जीवे कन्यागते वृष्टि:	२। ९०
चूडाकर्म न कर्तव्यं	२२। २	जीवे चापगते भीति	२। ९३
चैत्राद्येष्वपि मासेषु	२। १	जीवे तुलागते सर्वं	२। ९१

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.
जीवे लग्नगते शुक्रे	३०।४९
जुहुयादाज्यभागान्तं	३४।१३
ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः	२७।९४
ज्ञस्येन्दुरर्कशुक्रौ च	२७।१५१
ज्ञात्वा बलाबलं सम्यक्	२।११
ज्ञो द्व्यब्धिअर्यष्टखायेषु	१२।४
ज्येष्ठे त्रयोदशी शुक्ला	३६।११७
झषालिकर्कटा विप्रा	२७।१५६
तं विलोक्य तत्सूनुः	१।८
तच्छेदखण्डान्यायाः स्युः	२५।८
ततश्छायां स्पृशेद्यत्र	२९।८
ततस्तिसृषु तिथिषु	३६।४१
ततस्ते हुतशेषेण	३५।६६
ततोऽजपादहिर्बुध्न्यः	६।३
ततोऽतिबलिनी होरा	२७।३८
तत्तन्मासैर्द्वादशभि	३।७
तत्र तत्र विजानीयात्	२९।२३
तत्र श्राद्धं प्रकुर्वीत	३७।११
तत्पक्षौ दैवपैत्राख्यौ	३।८५
तत्पराच्छतगो भागः	२७।१७६
तत्स्वरूपं सुवर्णेन	३५।२१
तथा च संक्रमो	१५।३३
तथैव श्रावणे शुक्ल	३६।१०५
तदन्त्यपादजो नैव	२७।१७३
तदभावे दिवारात्रौ	३०।१६
तदर्द्धं वा तदर्द्धं वा	३५।६८
तदर्द्धेन तदर्द्धेन	३५।९
तद्वदेव फलं सौम्ये	२।११६
तन्दुलस्थे स्वर्णयुते	२७।१०८

	अ. श्लो.
तन्मध्यमत्स्यैर्विदितः	२९।१०
तन्मध्ये वेदिका तस्य	३५।५३
तर्कचन्द्रा वेदपक्षाः	२७।७७
तल्लग्नं वर्जयेद्यस्मात्	२७।१०२
तस्माच्छुभांशगे चन्द्रे	२४।२३
तस्माद् गोमिथुनान्	२४।२९
तस्मिन्जन्ममुहूर्तेऽपि	१९।१
तस्य भङ्गप्रदो राज्ञः	३०।१५
तस्यास्तच्छीजलब्धिस्तु	२७।२
तस्यास्तु लक्षणं वक्ष्ये	२५।६
ताम्बूलफलपुष्पाद्यैः	२७।४
ताम्रपात्रे जलैः पूर्णे	२७।१०७
ताराबलेन शीतांशु	११।२८
तासां प्रीत्यै जपः	३५।२४
तासां प्रीत्यै जपः	३४।१८
तिथिर्वारं च नक्षत्रं	१।११
तिथिवारोद्भवाः नेष्टा	१०।२१
तिथीनामपराः संज्ञाः	४।३
तिथेः पञ्चदशो भागः	४।३८
तिथ्यर्क्षवारनिन्द्या	१६।७
तिर्यक्पञ्चोर्ध्वगाः पञ्च	२७।९२
तिलोपरि लिखेच्चक्रं	११।२७
तुर्ये पुत्र भवे	१६।३
तुलागोकर्कटे लग्ने	२७।९
तुलामृगौ प्रतिपदि	३६।११३
तुलासंक्रान्तिवारेशो	२।३
तृतीयपञ्चमसप्ताय	२७।८
तृतीये पञ्चमाब्दे	२२।१
तृतीये बीजनक्षत्रे	२३।२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.
ते रक्तनीलपाण्डुर	३६।२९
तेषामीशस्य राशौ वा	३०।२१
तेषां लग्नोदये कर्तु	२५।३
ते सर्वे विलयं यान्ति	२७।१३१
तैलस्त्रीसंगमं चैव	४।१८
तैले लक्ष्मीर्जले गङ्गा	३६।९५
तोयबन्धनमोक्षास्त्र	१४।१०
त्याज्य: सूर्यस्य संक्रांति:	२७।५१
त्रपुसीसायसोऽश्मास्त्र	५।७
त्रयोदशस्युर्मिलने	१०।५
त्रयोदश्यां चतुर्दश्यां	३७।१९
त्रयोदश्यादि चत्वारि	२४।३६
त्रिकोण केन्द्रगा:	३०।४४
त्रिकोणे केन्द्रगत्र्याये	३१।७
त्रिधा विभज्य दिवसं	२४।१४
त्रिंशांशो बलवांस्तस्मात्	२७।३९
त्रिनाडीभिर्दशभिश्च	७।८
त्रिंशद्भिश्चन्द्रभगणो	३।८२
त्रिषडायगतै: पापै:	२४।३०
त्रिषडायेषु मन्दारौ	३०।४६
त्रिषूत्तराषु रोहिण्यां	२।४७
त्रिस्कन्धो दर्शनीय:	१।१६
त्रेतादिर्माधवे शुक्ला	४।३०
त्र्यायारिषु कुजो श्रेष्ठो	१२।३
दक्षिणां च ततो	३४।१७
दग्धयोगाश्च विज्ञेया	१०।१८
दण्डायुधं लोहिताक्षं	३०।७३
दन्तच्छेदे काकहतं	३५।४८
दद्यात्तद् दोषनाशाय	६।५८

	अ. श्लो.
दम्पत्योर्जन्मभे	२७।१४५
दम्पत्योर्द्वादशं	२७।७२
दम्पत्योरष्टमं	२७।७०
दर्शषष्ठ्यां प्रतिपदि	४।२३
दर्शनीयं गृहं रम्यं	३१।९
दशमस्थो कुजो लग्नाद्	३०।११
दशमैकादशे ऋक्षे	२।३९
दशम्यादेश्चतसृषु	२८।४
दस्रादितीज्यचन्द्रेन्दु	२२।५
दस्रेन्द्वदिति तिष्येषु	६।३८
दस्रवारुणनैर्ऋत्य	२।५४
दिक्साधनाय तन्मध्ये	२९।७
दिक्षुपूर्वादित: शाला	२९।६१
दिगीशा: सूर्यशुक्रार	३०।९
दिनक्षये व्यतीपाते	३५।५१
दिनद्वयं च त्रिदिनम्	३६।७६
दिनान्येकत्र न वसेत्	३०।८१
दिनेषु यस्य देवस्य	२८।३
दिवा चेन्मेषसंक्रान्ति:	११।५
दिवा मुहूर्ता: रुद्राहि	९।१
दिवा वा यदि वा रात्रौ	३५।२
दीक्षितानां दिगीशानां	३६।२१
दीप्यते वसुधा वीर	३।३६
दीप्यन्ते सततं भूपा	३।५१
दीर्घपुच्छा भवेत्तस्या:	३६।९
दु:शीला स्वैरिणी वंध्या	१५।५
दु:स्थानस्थ ग्रहकृता:	२७।१३७
दुर्भिक्षाग्निमहद्भीति:	२।८३
दुर्मत्यब्दे दुर्मतयो	३।७१

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.
दुर्मुखाब्देऽग्निरोगाःस्युः	३।४६
दुर्मुहूर्तो वारदोषः	२७।४६
दुश्चरित्रा क्लेशिन्या	१५।२१
दृढ़व्रता धर्मवती	१५।३०
दृश्यते चेन्महायुद्ध	३६।५७
दृश्यन्ते विस्फुलिङ्गाश्च	३४।६
दृश्यमाने गुरौ शुक्रे	२४।४
दृष्टेऽर्कमण्डले व्याधि	२।१२
दृष्टैर्जीवार्कचन्द्राद्यैः	२४।२६
देवता यत्र नृत्यन्ति	३४।१
देवाः कपोत इत्यादि	३५।२८
देवीन्द्राणि नमस्तुभ्यं	२७।२१
देवोऽपि तन्न जानाति	२७।१७७
देशकालोपयाताद्यैः	२०।२
दोषदुष्टो हि कालःस	१४।२४
दोषसंघान्निहन्त्येव	२७।१२३
दोषाः नाशं ययुः सर्वे	२७।१३०
दोषाय धनिनां गेहे	३५।२६
दोषा विनाशमायान्ति	२७।१२६
दौर्भाग्यं गुरुणा	२७।६६
द्यूनकेन्द्रभगं शुक्रं	२७।११८
द्वात्रिंशद्वाद्यतःपूज्या	२९।७९
द्वादशे धर्मकृत्पुत्रो	१६।५
द्वारेषु स्थाप्य तल्लिङ्गै	३५।६०
द्विजक्षोभे नृपक्षोभे	३०।१९
द्विजादींश्च क्रमाद्धंति	२।१२२
द्वितीयं मध्यम श्रेष्ठं	२७।१४२
द्वितीये नेष्टदाः पापाः	२८।११
द्विमण्डलश्चमूनाथं	३६।३३

	अ. श्लो.
द्विरामाः खाग्नयः	२७।७५
द्विर्द्वादशं निर्धनाय	२९।३७
द्वीभाऊर्जादिमासाः	२।६५
द्वौ ग्रहौ परिवेषस्थौ	३६।३६
धनक्षयं तृतीयर्क्षे	२९।४१
धनत्रिकोणकेन्द्रस्थैः	२५।४
धनत्रिकोणकेन्द्रस्थैः	२२।८
धनधान्यवती भोग	१५।२५
धनलाभो वृषेऽत्यन्तं	२५।९
धनाधिकं गृहं वृध्यै	२९।४०
धनुर्मीनद्वयोर्मन्त्री	२७।५३
धर्मे पापा घ्नन्ति	२८।१६
धातृचन्द्रादितीज्याख्य	९।३
धातृज्येष्ठा	६।५४
धातृपौष्णभयोः श्राद्धं	३७।८
धात्री धात्रीव लोकानां	३।२६
धान्यस्त्रीभोगवित्तं च	२९।६५
धान्यार्धवृष्टिसम्पूर्णा	२।९६
ध्रुवं धान्यं जयं नन्दं	२९।५७
धूम्रगर्दभयोर्नैव	२५।१४
ध्वजतोरणसंग्राम	६।९
ध्वजो धूम्रोऽथ	२९।३४
न कदाचिद्दशर्क्षेषु	२७।२४
नक्तव्रतेषु सा ग्राह्या	३६।१०२
नक्षत्रसंस्थिता दिव्याः	२।१२७
नक्षत्रेशाः क्रमाद्दस्र	६।१
नखैर्लिखन्तो मार्जारा	३२।१७
न जन्ममासे जन्मर्क्षे	२७।२८
न ददाति शुभं किञ्चित्	१२।७

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.
नन्दन्तीह जना: सर्वे	३।३३
नन्दातिथि: शुक्रवारे	१०।१५
नन्दाश्च तिथयो निन्द्या	३७।१२
न निघ्नतोरि व्यापारं	३०।३३
नभस्य इष ऊर्जश्च	२।८३
नभस्यादिषु मासेषु	२९।४३
न मन्देन्दु दिने प्राचीं	३०।५
नमो गन्धर्वदेवाय	३५।५६
नवम्यां हरिकीटौ	३६।११४
नववस्त्रं च संवेस्ष्ट्य	३५।४०
न व्यापारे	२१।६
न शक्या लक्षितुं	२।१२३
नश्यते वारिधाराभि:	३।४३
नागपाशधरं पीतवर्णं	३०।७५
नागेभैरावताश्चैव	२।९८
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं	२९।७०
नानावर्णांशवो भानो:	३६।४६
ना शक्तास्ते फलं दातुं	२७।१२०
नाशयत्यखिलान्दोषान्	२७।१२२
नास्तं गते सिते जीवे	२७।२५
निन्द्यर्क्षे तिथिवारेषु	१५।३४
निमित्तमात्रं दैवज्ञ:	२७।१७८
निमित्तशकुनादिभ्य:	३०।६०
निर्घातोऽर्कोदये नेष्ट:	३६।६३
निर्द्वेष्या भूरिविभवा	१५।१६
निर्द्वेष्या रोगसंयुक्ता	१५।१३
निर्माणे पत्तनग्राम	२९।१
निविष्टी वाणिजे विष्ट्यां	११।९
निवृत्तवैरा: क्षितिपा:	२।६८
निशिरात्रिचरान्	११।४
निस्तंडुलत्वं लांगूले	६।४६
निहन्ति निखिलं पापं	२७।१२७
नीचकर्मरता दुष्टा	१५।१९
नीचराशिगत: स्वस्य	१२।११
नीपकादम्बकुटजं	२९।५०
नृत्यगीतादिवादित्र	५।६
नृत्यशिल्पकलागीत	५।४
नृपसंक्षोभमत्युग्रं	३।६३
नृपसस्यवणिग्वेश्या	३६।८३
नृपाभिषेकमाङ्गल्य	५।१
नेष्टत्रयं षट् च शुभं	११।२६
नैवं कदाचिदुद्वाहो	२७।१७१
नैवोद्वाहो ज्येष्ठपुत्री	२७।२९
नोत्कटे भूपिते नैव	२२।९
पक्षं पक्षाधर्मर्केन्दू	२।२५
पञ्चदशदिने	१६।६
पञ्चदशे षोडशर्क्षे	२।४१
पञ्चम्यादिषु तिसृषु	३६।४०
पञ्चरात्रं त्रिरात्रं वा	३४।१६
पञ्चाङ्गमस्य संशुद्धि:	२७।४८
पञ्चाङ्गशुद्धिदिवसे	२७।१४
पञ्चाङ्ग शुद्धिरहिते	३०।३५
पञ्चास्यमृगयोश्चैव	२७।१४९
पट्टबन्धनचौलान्न	२२।६
पट्टबन्धनयानोग्र	१४।१
पतन्ति करकोपेता:	३।३५
पतितक्लीबजटिलो	३०।८८
पतिप्रिया पुत्रवती	१५।११

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.		अ. श्लो.
पतिभक्ता पुत्रवती	१५ । १०	पिङ्गलादिविकारेषु	३० । ३५
पदिकानां च वर्गोऽयम्	२९ । ८८	पिङ्गलाब्दे तु सततं	३ । ६७
पद्मोदराभः शरदि	२ । १८	पिङ्गलायाः स्वरेऽप्येवम्	३५ । ३३
पनसो विश्वभाज्जातो	६ । ६९	पिण्डदानं न कर्त्तव्यम्	३७ । ७
परकार्यरता दीना	१५ । १४	पितामहोक्तान्	२७ । ४३
परचक्रागमं न स्याद्	३६ । ७७	पितृकर्मत्वमावास्या	४ । १९
परचक्रागमभयं	३६ । १३	पितृद्विदैवधातॄणां	२ । ४६
परचक्रागमभयं राज्यं	३६ । २२	पिनाकिनं वृषारूढं	३० । ७८
परभर्तृरता प्रेष्या	१५ । १२	पिपीलिकाश्रेणयश्छिन्ना	३२ । १८
परस्त्रीद्विजदेवस्त्वं	३० । ९६	पिशाचांश गृहारम्भे	२९ । २१
पराभवन्ति तीक्ष्णांशोः	३६ । ६१	पीडा स्यात्कार्तिके वर्षे	२ । ६६
परा भवाब्दे राजानः	३ । ५६	पीतपाटलनीलैश्च	३६ । ४८
परार्द्धयुञ्जि क्रमशः	६ । ५०	पीताग्निश्यामहरित	२ । ८०
परिवेषः पञ्चदश्यां	३६ । ४२	पीताभः कृष्णवर्णोऽपि	२ । १९
परिवेषगतः केतुः	३६ । ३५	पीताभो व्याधिदः कृष्णो	३६ । ५९
परिवेषोऽपि धिष्ण्यानां	३६ । ३९	पीतैर्नृपसुतः श्वेतैः	२ । १५
पर्यायत्वेन विज्ञेया	४ । ४	पुंग्रहाः सूर्यभौमार्याः	१६ । ११
पर्ववास्तूपवासादि	३ । ५	पुण्येऽह्निलक्षणोपेतं	२७ । ३
पलाशसमिदाज्यान्नैः	३५ । ६३	पुण्यैर्निमित्तैः शकुनैः	२७ । १३
पल्ल्याः प्रपतने चैव	३५ । १२	पुत्रपौत्रान्विता भोग	१५ । २६
पल्ल्याः प्रपतने पूर्वं	३५ । १३	पुत्रार्थी पुरुषं त्यक्त्वा	१६ । ९
पशुवास्तुमहीसेवा	४ । १०	पुत्रोद्वाहात्परं पुत्री	२७ । १६८
पश्चात्पराहः संक्रान्तिः	११ । २१	पुरतः पृष्ठतो भानोः	३२ । ६
पश्चात्प्रागुदितः शुक्रः	२७ । २६	पुरन्दरो लोहितश्च	३ । १५
पश्चिमे दक्षिणे चैव	२९ । १९	पुरहर्म्यगृहाराम	६ । ३३
पाञ्चालमानमतुलं	२९ । ७३	पुष्यं पर कृतं	६ । ५९
पाञ्चालमानं सर्वेषां	२९ । ७४	पूज्यां यदि चतुर्थी वा	३७ । १३
पापग्रहे बलयुते	३७ । ४	पूर्णः क्षीणः शशी तत्र	२८ । १३
पिंगलः कालयुक्तश्च	३ । १३	पूर्णः क्षीणोऽपि वा चन्द्रः	२८ । १४

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.		अ. श्लो.
पूर्णकुम्भं तदीशान्यां	३५।४१	प्रतिसूर्याश्चतसृषु	३४।७
पूर्णानन्दाख्ययोस्तिथ्यो:	२७।५६	प्रतीच्यां भोजनगृहम्	२९।६३
पूर्वं तु सस्यसंपूर्तिः	२।७६	प्रत्यर्क परिवेषेन्द्र	२७।९०
पूर्वस्यां दिशि जलदः	२।१०१	प्रत्युद्वाहो नैव कार्यो	२७।१७०
पूर्वात्रयाग्निमूलाहि	६।२७	प्रत्येकमष्टशतं	१५।३५
पूर्वात्रये चरन् सौम्यो	२।५५	प्रदक्षिणक्रमात्तेषाम्	२९।१३
पूर्वादीनि फलान्येषां	३५।४६	प्रभवः विभवः शुक्लः	३।८
पूर्वार्द्ध युञ्जि षट्कानि	६।४९	प्रभूतपयसो गावः	२।८८
पूर्वाह्णे नृपतीन्हन्ति	११।३	प्रयाणसमये लग्ने	३०।९०
पूर्वाह्ने सौम्यखेटेन	२१।४	प्रवर्षणं मेघगर्भो	३।४
पृच्छकस्य भवेल्लग्नादिन्दुः	२७।५	प्रवर्षणं सस्यवृद्धिः	२।११८
पौष्णद्वये	३७।२१	प्रवहन्ति जलं स्वच्छं	३।३०
पौष्णभत्र्युत्तरामैत्र	२७।३३	प्रवासनष्टाख्यमृता	१३।८
पौष्णब्रह्मर्क्षयो:	३७।३	प्रवेशवस्त्रसीमन्त	६।१७
पौष्णेकेद्वशिवमित्राग्नि	३०।४	प्रवेशस्थापनं क्षौरं	६।२५
प्रचुराः पित्तरोगाः स्युः	३।५८	प्रवेशस्थापनोद्वाह	६।२०
प्रचुराः शैत्यरोगाःस्युः	३।५९	प्रसर्पिणी वा सर्पवत्सा	३६।२५
प्रच्छन्नपापा दुष्पुत्रा	१५।२३	प्रसादस्थापनं यान	४।१३
प्रजायां मध्यमसुखं	३।६५	प्रसिद्धविषये गर्भे	१७।१
प्रजावती धर्मरता	१५।१५	प्रहरार्धप्रमाणास्ते	५।१८
प्रतरन्त्युडुपोपायैः	३।३४	प्राकारेषु पुरद्वारे	३५।३४
प्रतिकूलमुखं गेहम्	२९।४५	प्राकृताद्यासुगतिषु	२।६०
प्रतिशुक्रकृतं दोषं	३०।१७	प्राकृतायां गतो	२।६२
प्रतिष्ठाक्षौरसीमन्त	६।२३	प्रागर्धरात्रात्पूर्वाह्णे	११।२०
प्रतिष्ठाभूषणोद्वाह	६।८	प्राङ्मुखस्य तु कूर्मस्य	३३।१
प्रतिष्ठायानसीमन्त	६।१०	प्राच्यानां तु कलिङ्गानाम्	२७।१६४
प्रतिष्ठोद्वाहसीमन्त	६।१६	प्राच्यां मागधलाटादि	३३।३
प्रतिष्ठोपनयोद्वाह	६।१८	प्राजापत्य ब्राह्मदैवा	२७।१६०
प्रतिसूर्यनिभः स्निग्धः	३६।५८	प्राणिनां प्राणरूपं च	३०।७६

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.
प्रातर्दृष्टे जले वृद्धिः	२९ । ६
प्राप्तिरप्राप्ति	३० । ३२
प्रायेण निखिलोत्पाताः	३६ । ८८
प्रायेणान्येषु	३६ । ४५
प्रावृषीन्दुः सितात्सप्त	३२ । ३
प्रासादशैलवृक्षेषु	२ । १४२
प्लवंगः कीलकः सौम्यः	३ । १२
प्लवंगाब्दे सस्यहानिः	३ । ५७
फलसिद्धिर्योगलग्नाद्	३० । ३६
फाल्गुन्योरुदितो भौमो	२ । ४३
बन्धकी बन्धुविद्वेष्या	१५ । २८
बन्धनाग्निप्रदानोग्र	४ । १७
बन्धूकविम्बक्षतज	२ । १३३
बलप्रदस्य खेटस्य	५ । १२
बलक्षपक्षदशमी	३० । ५९
बलाहका न मुञ्चन्ति	३ । २९
बवादिवणिजान्तानि	८ । ४
बहुधान्यः प्रमाथी च	३ । ९
बहुधान्ये च बहुभिः	३ । २८
बहुपुत्रा धनवती	१५ । २७
बहुवित्तवती न स्यात्	१५ । १८
बालस्य बलहीनोऽपि	२४ । ३
बालिका मूलऋक्षे तु	२७ । १७४
बिलप्रवेशगणित	६ । २८
बुधे धनिष्ठार्यमभं	१० । १९
बुधेन्दुजीवशुक्राणां	५ । १३
वृहस्पतिः केन्द्रगतः	२७ । ९१
ब्रह्मदण्डाह्वयः केतुः	२ । १३६
ब्रह्ममन्त्रेण वा श्वेत	२९ । ९१

	अ. श्लो.
ब्रह्मविष्णुमहेशार्य	६ । ३२
ब्रह्मा सूर्यो वसिष्ठोऽत्रि	१ । २
ब्रह्माणं च तथैकद्वि	२९ । ९०
ब्रह्मेंद्विन्द्रधनाधीश	२ । ११५
ब्राह्मं दैवं मानुषं च	३ । १
ब्राह्मणस्य ध्वजो	२९ । ३५
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्	३५ । ३२
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्	३५ । ११
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्	३५ । ६९
ब्राह्मणान्वरयेत्तत्र	३५ । २७
भचक्रगतिरार्क्षं स्यात्	३ । ६
भवेत्भत्रितयं मूर्ध्नि	६ । ४५
भस्मीकरोति तान्दोषान्	२७ । १३४
भाजितं गजसंख्यैश्च	२५ । ७
भाद्रकृष्णे त्रयोदश्याम्	४ । ३५
भान्यतः साभिजित्येक	२७ । ९३
भान्वेकरेखामतयोः	७ । १२
भाव्याभाव्या दम्पत्योः	२७ । ११०
भीषजर्जरशब्दः स	३६ । ६७
भुक्त्वा यायाज्जयेच्छु	३० । ६८
भुशुण्डिभिन्दिपालासि	११ । ८
भूकम्पः सूर्यभात्सप्तमर्क्षे	१० । १
भूभारखिन्ननागेन्द्र	३६ । ८०
भूमिजः सर्वधिष्ण्यानाम्	२ । ४८
भूषणैः पुष्पताम्बूलैः	२७ । १५
भृगु षष्ठाह्वयो दोषो	२७ । ५४
भेरीमृदङ्गपटह	३० । ९३
भेपूपकुलसंज्ञेषु	६ । ५६
भोजयेद्यः पितृंस्तत्र	२७ । १४

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.		अ. श्लो.
मघा मध्यगतो भौमः	२ । ४५	माघे तु पञ्चमी षष्ठी	३६ । १२१
मघादिपञ्चधिष्ण्यस्थः	३२ । ५	माघेऽब्दे सततं सर्वे	२ । ६९
मङ्गलानि स्थिराण्येव	१४ । २	माणिक्यमुक्ताफलं	१२ । १३
मणिहारसुवर्णाभा	२ । १३२	मार्गेऽद्रिनागसंज्ञेऽपि	३६ । १२०
मत्स्यं मांसं सुधौतं च	३० । ९२	मार्जिता परमान्नं च	३० । ६४
मदोद्धतानां भूपानां	२ । ९२	माषमात्रत्र्यंशयुतं	२७ । १०४
मधुपुष्पाम्लपिशित	२९ । २	मासदग्धाह्वयान् राशीन्	३६ । ११५
मधुरं कटुकं तिक्त	२९ । ३	मासान्ते पञ्चदिवसान्	२७ । ३२
मध्यदेशे विवर्ज्यानि	२७ । ९७	मासि भाद्रपदे कृष्णे	३६ । ९७
मध्यन्दिनगते भानौ	२७ । १६५	मासि भाद्रपदे शुक्ल	३६ । १०६
मध्यन्दिनगते भानौ	२७ । १६६	मासि भाद्रपदे शुक्ले	३६ । १००
मध्यमार्गेषु तिसृषु	२ । १००	मासेऽष्टके चतुर्थर्भिर्वा	१८ । ४
मध्ये नवपदं ब्रह्म	२९ । २०	मित्रभस्थे गुरौ केन्द्रे	३० । ५६
मध्ये नवपदो ब्रह्मा	२९ । ८५	मित्रभाद्बकुलो जातो	६ । ६८
मन्त्रीजनपदानां च	३६ । ७५	मित्रमानसपद्माख्य	१० । ८
मन्त्रेण समिदाज्यान्नैः	३५ । ४३	मित्रेन्दुत्वाष्ट्रहस्तार्द्रा	६ । २९
मन्त्रेणानेन पूर्वोक्त	२७ । १०९	मुखान्ते समिदा	३५ । ६
मन्मथाब्देऽखिला लोका	३ । ४५	मुखे पञ्च गले त्वेका	८ । ५
मयूरपत्रसङ्काशो	२ । २०	मुहुर्मुहुः प्रलीयन्ते	३६ । ३०
मस्तकोदयगे शुक्रे	३० । ४८	मुहूर्त्तमानं द्वे	९ । ४
महावादित्रनृत्याद्यैः	२३ । ४	मूर्तिः कोशोऽथ	३० । ३१
महिषीमेषयोर्युद्धे	३० । ६२	मूर्ध्नि चैकं मुखे त्रीणि	२ । १०८
महोल्कापतनं काष्ठं	३४ । ४	मूलेन्द्राहिभं तीक्ष्णं	६ । ३६
मागधं शूरसेनं च	२९ । ७२	मृगः पितृगणाधीशः	२९ । ८२
माघफाल्गुनवैशाख	२७ । १३	मृण्मयेष्वथवा	२३ । ५
माघफाल्गुनवैशाख	३१ । ३	मृत्पेटिका स्वर्णरत्न	२९ । ४६
माघशुक्ले च सप्तम्यां	३६ । १०७	मृत्युः षडाष्टके पञ्च	२७ । १४६
माघादिमासौ द्वौ द्वौ च	३ । ८१	मृदुध्रुवक्षिप्रचर	६ । ४१
माघे व सप्तमी शुक्ला	४ । ३३	मृदुध्रुवक्षिप्रभेषु	६ । ४४

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.		अ. श्लो.
मृदुभेषु द्विजातीनां	३६। १९	या पूर्णिमा	४। २८
मेषराशिगते	२। ८५	यामाग्निरौद्र	१५। ३२
मेषसंक्रान्तिवारेशो	२। २	याम्यक्रमेण भूकम्पो	३६। ८१
मौञ्जी प्रतिष्ठाश्च	४। ७	याम्यदिग्गमनं	३०। ३४
यः करोति दशम्यां च	४। २६	याम्यशृङ्गोन्नतश्चन्द्रो	२। २८
यज्ञध्वजास्त्रभवन	२। १२६	याम्यं शृङ्गोन्नता श्रेष्ठः	२। ३५
यज्ञपौष्टिकमाङ्गल्यं	५। ५	याम्यां सेनापतिं हन्ति	३६। ५१
यज्ञाध्ययनसंक्रान्ति	१। ६	याम्याग्निधातृवायव्य	२। ५६
यज्ञेनानेन सन्तुष्टा	३५। ७१	यावच्चरणकं भुक्तं	२७। ८३
यत इन्द्रभयामहे	३५। ३०	यावच्छान्तिं प्रकुर्वीत	१५। ३६
यत्र स्यादिन्दु	१०। १३	यावन्तो दिवसाः केतुः	२। १२८
यथा वित्तानुसारेण	३४। १५	या वेण्या लङ्क्योर्मध्ये	३६। ९३
यदा प्रत्यङ्गता भेकाः	३२। १६	युगं स्यात्पञ्चभिर्वर्षैः	३। १४
यदा वाराधिपतिः	२१। ५	युगस्य पञ्चवर्षेशाः	३। १६
यदि लग्नगतश्चन्द्रः	२७। ६	युग्मेऽब्दे जन्मतः स्त्रीणां	२७। २२
यद्यम्बरे निपतति	३६। १२	युद्धातिवायुदुर्भिक्षं	२। १०५
यमेन्द्राहितोयेशा	२। ३४	ये कण्टका दुग्धवृक्षा	२९। ६७
यस्मिन्दिने महापातः	२७। ८७	ये दिव्याः केतवस्तेऽपि	२। १२९
यस्मिन्मासे पौर्णमासी	३। ८४	ये दोषास्तान्निहन्त्येव	२७। १२८
यस्य खेटस्य यत्कर्म	५। २१	ये नृपा यान्त्यरीञ्जेतुं	३०। ५८
यातुर्भङ्गप्रदः शुक्रः	३०। २०	योगश्चतुर्गुणः पञ्च	२७। ३७
यात्राप्रतिष्ठा सीमन्त	६। ११	योगान्तिकाम्बु विश्वाख्य	२। ५८
यात्राप्रवेशनं सद्यो	१। १४	योगेऽपि यायिनां	३०। ३८
यात्रासिद्धिर्भवेद् दृष्टे	३०। ८७	योगेशायमविष्णिवन्दु	७। ४
यादृशेन्दुना भानोः	११। २२	रक्तवर्णान् पूर्णकुम्भान्	३५। ५९
या दृश्यते दीप्ततारा	६। ६३	रक्तवर्णो रविश्चन्द्रो	५। १४
यानस्थापनवाहनादि	४। ११	रक्ताक्षिवत्सरे सस्य	३। ७४
याने स्थिरोदये	३०। २३	रक्षोगणः पितृत्वाष्ट्र	२७। १४४
यानोपनयनोद्वाह	४। ९	रजः समुद्भवो यस्यां	३६। ७४

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.		अ. श्लो.
रजोदर्शनतोऽस्पृष्ट	१६ । १	लग्नस्थो भास्करः प्राच्यां	३० । १०
रणकृद् भूमिजो जीवः	३६ । ३४	लग्नात्पञ्चमगः पापः	२७ । ७
रत्न धारणमात्रेण	१२ । १४	लग्नाभिमुखयोः पाप	२७ । ६०
रविमंडलगैर्धूमैः	२ । १३	लग्नात्सप्तमगः सौरिः	३० । १२
रविवारे क्रमादेते	१० । १०	लग्ने शुक्रेरवौ	३० । ४३
रविःस्थिरःचरश्चन्द्रः	५ । ८	लग्ने ह्यभ्युदयो येषां	१४ । २२
रवेरयनसंक्रान्तिः	११ । २५	लंकोदयात् स्याद्वारादि	५ । ११
राक्षसाख्यः चरस्थैर्य	१० । ९	लाङ्गुले कमठे चक्रे	७ । १३
राक्षसो युद्धहरणाद्	२७ । १६२	लाभदः स्त्रीजनानां	३५ । ४९
राजनाशाय कोपाय	३६ । ८६	लाभस्थानगताः सर्वे	२८ । १७
राजराष्ट्रस्वनाशायः	३६ । २०	लालाटगं तु सन्त्यज्य	३० । १४
राजहन्त्री तन्तुनिभा	३६ । २३	लिखेदूर्ध्वगतामेकां	७ । १०
राज्ञा यात्रा निवृत्तौ	३१ । २	लोकपालाश्च सन्तुष्टा	३५ । ७२
रात्र्यामिन्द्रधनुः	३६ । ५२	लोकेन्दुवसबो	५ । १७
रामाग्नि ॠतु	६ । ६१	वंशगुल्मलताकारा	३६ । २६
राशयः सकलाः श्रेष्ठाः	२८ । ७	वक्रकृद्रविजस्येह	२ । १११
राशिः स्वभावजं	२८ । ८	वक्रे पन्था मीनलग्ने	३० । २९
रिक्तां दिनक्षयं नन्दां	२१ । २	वक्ष्ये शुभाशुभफल	१ । ९
रुग्णा पतिव्रता	१५ । ३	वज्रशंखशुक्तिकाब्ज	३५ । ११
रेखाया सोत्तरा साध्या	२९ । ९	वमन्त्यग्निं तथा धूमं	३४ । २
रोगो लाभस्तथा हानिः	२ । ११०	वयश्च वाऽवश्चैव	९ । १
रोहिणीसहिताष्टम्यां	३६ । ९९	वरयेच्छ्रोत्रियान् विप्रान्	३५ । ५४
रोहिण्यां च मघायां च	३७ । ९	वरस्य मृत्युः परमो	२७ । ५०
लग्नत्रिभागो द्रेष्काणो	२७ । ४०	वराहशशगोधानां	३० । ८६
लग्नं सर्वगुणोपेतं	१४ । २३	वरेण धातुरर्केन्दू	२ । ११३
लग्नगे ज्ञे शुभे केन्द्रे	३० । ५०	वर्गेशाः क्रमशो ज्ञेयाः	२९ । २९
लग्नलग्नांशकौ स्वस्व	२७ । ४९	वर्गोत्तमगते लग्ने	२७ । १३६
लग्नस्थाः सूर्यचन्द्रार	२८ । १०	वर्गोत्तमगते शुक्रे	३० । ५४
लग्नस्थे त्रिदशाचार्यो	३० । ४२	वर्षत्यार्द्रादिमूलान्तं	३२ । ११

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.
वर्षाप्रश्ने वारिभेऽब्जे	३२।१
वसुश्रवणविश्वेन्दु	२।५०
वस्त्रभूषणवाणिज्य	६।१९
वस्त्राभिषेकलोहाश्म	६।१५
वस्त्रोपनयनं क्षौरं	६।२४
वस्त्रोपनयनक्षौरः	६।४
वस्वादित्यम्बुषस्वाती	६।३५
वस्वीज्यांत्येन्दुवरुण	३१।४
वस्त्वन्त्यर्धादि	३०।२४
वह्निर्विरञ्चिर्गिरिजा	४।१
वापीकूपतऽागादि वारि	१४।४
वापीकूपतडागादिविष	६।५
वामपादे तथा त्रीणि	२।१०९
वामभागे महारोगः	३५।१७
वामवेधविधानेना	१२।८
वामाङ्गे कोकिला	३०।८४
वायुनाभिहतो वायु	३६।६२
वारुणं मण्डलं त्वेतद्	३६।८७
वारेषु वर्जनीयास्ते	९।६
वास्तुपुरुष नमस्तेऽस्तु	२९।९३
वास्तुपूजामहं वक्ष्ये	२९।७७
वास्त्वायामदलं	२९।४७
वाह्लीके कुरुदेशे	२७।९६
विकारिणो विकार्यब्दे	३।४९
विकृतिः प्रकृतिंयाति	३।४०
विचित्रा वसुधा चित्र	३।३२
विचित्रितां चित्रकुम्भैः	२७।११४
विज्ञेयमेकविंशर्क्षा	१०।३
वित्तगतः शशिपुत्रो	३०।४०

	अ. श्लो.
वित्तवात्मजहानिः	३९।६८
विदारयन्ति पतितं	३६।५
विद्याशिल्पौषधीकर्म	१४।६
विद्युत्षड्भिरहोभिश्च	३६।३
विधिवद् वेदिकामध्ये	३५।५७
विध्यते जन्मतो	१२।२
विना वसन्तऋतुना	२४।३५
विनाशयति धर्मांशु	२७।१२१
विनैतदखिलं श्रौतस्मार्त	१।७
विनोत्पातेन शशिजः	२।४९
विन्ध्यगोदावरी मध्ये	३६।९२
विपत्तिः सस्यहानिः	३२।८
विपरीते त्वनावृष्टिः	२।१०२
विपरीतोदितश्चन्द्रो	२।३०
विप्राशीर्वचनैः पुण्य	२७।११५
विरोधकृद्वत्सरे तु	३।६१
विरोधं सततं कुर्वन्	३।३९
विलम्बवत्सरे राज	३।४८
विलासिनी सहस्राद्यैः	२७।२०
विवादविषशस्त्राग्नि	६।१४
विवाहकृषिवाणिज्य	६।२२
विवाह मौञ्जी यात्रा च	४।६
विवाहव्रतबन्धाश्च	६।२६
विवाहश्चैकजकन्यानां	२७।१६९
विवाहादिषु कार्येषु	२७।७८
विवाहादि शुभे	२७।८०
विवाहे बलमावश्यं	२७।३४
विविधैरन्नपानाद्यैः	३।३१
विशाखादिचतुर्वर्ग	१०।२०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.		अ. श्लो.
विशाखामैत्रयोर्याम्य	२ । ३२	व्याहृतिभिर्व्रीहि	३५ । ७
विषाग्निबन्धनस्तेयं	५ । ३	व्रतीशिशुर्धनाढ्यश्च	२४ । १९
विष्कम्भप्रीतिरायुष्मान्	७ । १	व्रतोद्वाहप्रयाणश्च	१४ । ९
विष्कम्भवज्रयोः तिस्रः	७ । ७	व्रतोद्वाहाभिषेकाम्बु	१४ । १२
विष्णुत्रयाश्वमित्राज	२४ । ११	व्रतोपवासवैवाह	४ । १४
विस्तार आयामगुणो	२९ । ३९	शंखमुक्ताम्बुरजत	५ । २
विस्तारगुणितं दैर्घ्यं	२९ । ३३	शकुनिः चतुष्पान्नगो	८ । २
वृक्षगुल्मलतादीनां	२ । ७३	शक्रजा ऋक्षसदृशाः	२ । १४०
वृषराशिगते जीवे	२ । ८६	शत्रुजन्मोदये जन्म	३० । २८
वृषवृक्षोऽश्विभाद्याम्य	६ । ६४	शत्रुषडाष्टके कुम्भ	२७ । १४८
वेदवेदाग्नि	६ । ६२	शरद्ग्रीष्मवसन्तेषु	२४ । ५
वेलाहीने यस्य हानिः	२ । ११९	शशमांसं च षाष्टिक्यं	३० । ६६
वैदूर्यं भास्करादीनां	१२ । १३	शशाङ्के पापसंयुक्ते	२७ । ६४
वैरं बभ्रूरंगमेष	२७ । १५५	शश्वद्विश्वावसावब्दे	३ । ५५
वैशाखे धनवान्वेद	२४ । ७	शाकं गुडं च लवणं	१३ । ५
वैशाखे धर्मनिरताः	२ । ७२	शाखाधिपतिवारश्च	२४ । २२
वैशाखे श्रावणे पौषे	२ । ६३	शार्वरी वत्सरे सर्व	३ । ५०
वैश्वदेवे भृगुसुते	१० । १२	शिथिलीजननं ग्रामे	३५ । ३७
व्यक्ते गर्भे	१७ । २	शिथिलीजनने हानिः	३५ । ३८
व्यजनोपानहौ छत्रं	३६ । १०८	शिरस्यर्वाक्तना रेखा	२९ । २२
व्यतीपाते च संक्रान्तौ	४ । २५	शीर्षे राज्यं	३५ । १४
व्यत्ययेनागतं शेषं	२९ । ३२	शीर्षोदये जन्मराशौ	३० । २७
व्ययाष्टरिपुगे	२७ । ६२	शीर्षोदये लग्नगते	३० । २६
व्यर्कारचरलग्नेषु	२९ । ५३	शुक्रस्येन्दुरविज्ञार्की	२७ । १५२
व्यर्कारवारतिथिषु	३१ । ५	शुक्रार्कज्ञार्किभौमेषु	३० । ४१
व्याघातशूलपरिघ	७ । ११	शुक्रेन्दू युग्मराशीस्थौ	२७ । १०
व्याधिदाः सप्तमे पापाः	२८ । १५	शुक्रे वाचार्यसंयुक्ते	२४ । २०
व्याधिप्रदा मृत्युसुता	२ । १३४	शुक्रोऽपहाय वै द्यूनं	२७ । १२४
व्यापारशत्रुमूर्तिस्थै	३० । ३९	शुक्लपक्षं च सन्त्यज्य	३७ । २

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.
शुक्लपक्षादिदिवसे	१३।१
शुक्लपक्षे द्वितीया च	२४।८
शुक्लपक्षे शुभश्चन्द्रो	१३।२
शुक्लवर्णत्वघाखड्गं	३५।५५
शुद्धेऽष्टमे जन्मलग्नात्	१८।३
शुभकृद्वत्सरे सर्व	३।५२
शुभग्रहयुते चन्द्रे	२७।६८
शुभग्रहेषु धीधर्म	१८।५
शुभयुक्तेक्षिताः	२७।४१
शुभलग्ने शुभांशे च	२०।४
शुभलग्ने शुभांशे च	२४।२५
शुभानवांशाश्च	२४।२८
शुभाशुभानि	३०।८३
शुभाशुभाप्तेः कालस्य	२।१२४
शुभे केन्द्रत्रिकोणस्थे	३०।५५
शुभे केन्द्रे त्रिकोणस्थे	३०।५६
शुभेक्षिते वा युक्ते	२९।५४
शुभे त्रिकोणकेन्द्रस्थे	३०।५१
शुभोऽर्को जन्मतः	१२।१
शूद्रविट्तस्करक्ष्माप	११।२
शून्यचन्द्रा	२७।७६
शूलत्रयेऽपि नवकं	६।४३
शेषश्च पापो रोगश्च	२९।८३
शेषाकुलाकुलस्तारा	६।५५
शेषाणामङ्गुलानञ्च	२५।११
शैलोद्यानवनाराम	३।४४
शोभनाख्ये हायने तु	३।५३
श्रवणादितिनक्षत्रे	२४।२४
श्रवणानिलहस्तार्द्रा	२।१०६

	अ. श्लो.
श्राद्धकर्त्तुश्च नवमी	३७।१५
श्राद्धकर्मण्यमावास्या	३७।२०
श्रावणेऽपि द्वितीया च	३६।११८
श्रीखण्डागरु	२७।१७९
श्रीप्रदं सर्वगीर्वाण	२८।१
श्रीमुखेऽब्दे दुग्धपूर्णा	३।२३
श्रीयुक्ता सुभगा	१५।४
श्रीरग्निर्बन्धुनाशश्च	३५।४५
श्रेष्ठा त्वेकादशी षष्ठी	२४।९
श्वानः कपिर्बभ्रुयुग्मं	२७।१५४
षड्वर्गशुद्धसूत्रेण	२९।५२
षण्मासवृद्ध्या ग्रहणं	२।११४
षष्ट्यष्टमी द्वादशी च	३०।३
षष्ठ्यां तैलं तथाष्टम्यां	४।२४
षष्ठिघ्नं चन्द्रनक्षत्रं	१३।७
षष्ठिभिर्हरते	२७।७९
षष्ठमास्यष्टमे वापि	२१।१
षोडशर्तुनिशाः	१६।२
सकलत्रात्मजाञ्छश्च-	३।१९
स गाणपति सौराश्च	३५।५८
संक्षिप्तादितिभाग्यार्यं	२।५७
स चेन्दुः शुभदः सर्व	१४।२१
संक्रान्तेर्परतो भानोः	११।२३
संक्रान्तिर्ग्रहणर्क्षं वा	११।२४
संज्ञा ह्युक्ताः	१।१०
सदाऽजस्रं रमयति	३।२५
सदैववृष्टिदं पश्चात्	३६।५०
सद्यो वृष्टिकरः शुक्रो	३२।४
सन्तानार्थगुणैरन्यै	१५।२२

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitlzation by eGangotri

	अ. श्लो.
सन्ध्यायां वह्निपीडा च	३६ । १७
सन्ध्यासूपप्लवे	१५ । २
सप्तत्रिंशद्भिरध्यायैः	१ । १५
सपिण्डीकरणं कार्यं	३७ । ५
सप्तम्यां तथाष्टम्यां	३७ । १६
सप्तम्यामर्कवारश्चेत्	१० । ६
सप्तहस्तं सप्तजिह्वं	३० । ७२
सप्ताष्टनवमर्क्षेषु	२ । ३८
समण्डलं चतुर्दिक्षु	२७ । ११३
समिदाज्यं चरुर्ब्रीहि	३४ । १४
समे वर्षे समे	२७ । १८३
समोक्षघटयोः कर्क	२ । २९
सम्पद्वृद्धिर्महाभीति	२९ । १७
संपूज्य प्रार्थयित्वा तां	२७ । १८
संप्राप्य पौष्णभात्	२ । ३३
सम्यक्पञ्चविधानां	३६ । २
सम्यग्गृहाण्यलंकृत्य	२३ । ३
सम्वत्सर शरीरः स्यात्	२ । ८२
सम्वर्तकेतुः	२ । १४४
सराशिः शुभयुक्तोऽपि	२७ । ७१
सर्पधिष्ण्यान्नागवृक्षो	६ । ६६
सर्वजित्सर्वधारी च	३ । १०
सर्वत्र प्रथमं लग्नं	१४ । १९
सर्वदिक्षु क्षुतं नेष्टं	३० । ९५
सर्वधारीवत्सरेऽस्मिन्	३ । ३८
सर्वलक्षणसंयुक्तां	२७ । १९
सर्वसस्यैश्च सम्पूर्णा	३ । ७२
सर्वाश्रमाणामाश्रेयो	२७ । १
सवैधृतौ व्यतीपातौ	७ । ६

	अ. श्लो.
सव्यहस्ते	३५ । १६
साधारणेऽब्दे राजानः	३ । ६०
साध्यवर्गं पुरःस्थाप्य	२९ । ३१
सार्धनाडीद्वये	५ । २०
सार्पाद् भौमे	१० । ११
सार्पेन्द्रपौष्णभेशश्वन्त्य	२७ । ५८
साश्विधातृजलाधीश	२८ । ५
सिंहराशिगते जीवे	२ । ८९
सिंहभिन्ने कुतो वृष्टिः	३२ । १२
सिंहस्याधिपतिर्भानुः	२७ । ५२
सितरक्तपीतकृष्णं	३६ । ५५
सिते कृष्णेऽप्याश्वयुजि	३६ । ११९
सितेन रजसाछन्ना	३६ । ७३
सितोदितो भये पार्श्वे	३६ । १५
सिन्धु काशी	३३ । ५
सिद्धः साध्यः	७ । ३
सिद्धान्तसंहिताहोरा	१ । ४
सिद्धार्थीवत्सरे भूपा	३ । ६९
सिनीवाली सेन्दुमती	४ । २९
सीमन्तोपनयनोद्वाह	६ । ७
सुदिने चरभे	६ । ३९
सुभिक्षकृत्कुमुदाख्यः	२ । १४३
सुभिक्षकृद्विशालेन्दु	२ । ३६
सुरस्पर्द्धिजना धात्री	२ । ९५
सुवृष्टिः सर्वसस्यानि	२ । ७८
सुशीला सुतप्रजानन्या	१५ । ७
सूक्ष्माः शुक्लाः बुधसुता	२ । १३८
सूतकान्ते नामकर्म	२० । १
सूनोर्मातरि	२२ । ३

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.
सूर्यभाद् वेद	९ । ७
सूर्यसत्यो भृशाकाशौ	२९ । ८१
सूर्यस्योदयसंध्यायी	११ । १७
सूर्याङ्गारकवारांशा	२९ । ४२
सूर्यास्तमनपर्यन्तं	४ । ३७
सूर्यास्तमनवेलायां	११ । १८
सूर्येण संयुते	२७ । ६५
सैन्यक्षोभस्त्रयोदश्यां	३६ । ४२
सोऽश्वाभिवृद्धिं लभते	३५ । ७०
सौभाग्यमतिदौर्भाग्यं	२९ । १६
सौम्योग्रं तेषां राशीनां	१४ । १५
सौम्यफाल्गुनवैशाख	२९ । २४
सौम्यभागे चरन् भानां	२ । ७९
सौम्यमध्ययाम्येषु	२ । ९७
सौम्य मार्गगतः शुक्रो	३२ । ७
सौम्यमार्गेषु तिसृषु	२ । ९९
सौम्यर्क्षगोधिमित्रेण	२८ । ९
सौम्य याम्यायने नूनं	११ । १५
सौम्यायनं मासषट्कं	३ । ७८
सौम्यायने नास्तगयो	२२ । ४
सौम्याश्रितत्वात्क्रूरो वा	१४ । १६
सौम्येक्षितो नेष्टफलः	१२ । १०
सौम्ये विप्रादि चैशान्यां	३६ । ७२
सौराष्ट्रशाल्वदेशेषु	२७ । ९५
स्तोकवृष्टिरनर्घः स्यात्	३२ । ९
स्थानादि बलसम्पूर्णः	२७ । १३३
स्थापयेत्तु व्याहृतिभिः	३५ । ६१
स्थायिनां मध्यमानेष्टा	३६ । ४४
स्थितोध्वजे	२५ । १३

	अ. श्लो.
स्थिरं रोहिण्युत्तराभं	६ । ३४
स्थिरकर्माखिलं कार्यं	१४ । ८
स्थिरधिष्ण्येषु पतिता	३६ । १८
स्थिरभेष्वर्कसंक्रान्ति	११ । १४
स्थिराणि मध्यमान्येषां	८ । ७
स्थिरेष्वदितिसर्पान्त्य	६ । ४७
स्नानागारं दिशि प्राच्यां	२९ । ६२
स्फूर्जितं केन्द्रगे भानौ	२४ । ३२
स्युर्भूर्भुजो प्रभाभाजः	३ । २४
स्वकुलाचारधर्मज्ञो	२४ । ६
स्वक्षेत्रगे शुभे चन्द्रे	३० । ५२
स्वत्रिकेन्द्रत्रिकोणस्थैः	२९ । ५५
स्वनीचगे तदंशे वा	२४ । १५
स्वर्गाच्युतानां रूपाणि	३६ । १
स्वर्णमासेन वै कृत्वा	२७ । १०६
स्वर्णेन मृत्युप्रतिमां	३५ । ३९
स्वर्णशृङ्गीं रौप्यखुरीं	३५ । ८
स्ववर्गं द्विगुणं कृत्वा	२९ । ३०
स्वस्थानान्निर्गमस्थानं	३० । ८०
स्वस्थे नरे सुखासीने	२७ । १७५
स्वाधिशत्रुगृहस्थे वा	२४ । १६
स्वामिपक्षार्चिता सौख्य	१५ । २०
स्वोच्चगो वा	२७ । ६९
स्वोच्चसंस्थे तदंशे वा	२४ । १७
स्वोच्चसंस्थोऽपि	२४ । ३१
स्वोच्चस्थे लग्नगे जीवे	३० । ४७
हन्ति ताँल्लग्नगो जीवो	२७ । १२५
हन्ति द्वित्रि चतुर्भिर्वा	१ । १४
हन्त्यर्थहीना कर्त्तारं	२८ । १९

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

	अ. श्लो.		अ. श्लो.
हन्त्यर्द्धखत्रे तुरगां	३६ । ६६	हस्तोच्छ्रितां चतुर्हस्तै	२७ । ११२
हन्त्येकश्च महादोषो	२७ । १६७	हायनं द्वितयं	२७ । १८२
हरिशार्दूलवाराह	११ । ६	हित्वा न्यदिषसे	२६ । ४
हलप्रवाहगमनं	६ । ३०	हिमाद्रिगङ्गयोर्मध्ये	३६ । ९१
हलादौ वृषनाशाय	६ । ४२	हुताशनं तिलैर्हुत्वा	३० । ६९
हविष्यं कृशरान्नं च	३० । ६७	हेमलम्बे नृपास्सर्वे	३ । ४७
हस्तद्वयप्रमाणा सा	३६ । ७	हेमलम्बो विलम्बश्च	३ । ११
हस्तादि रसतारासु	२ । ५२	हृदये सस्यनिधनं	२ । ८४
हस्तर्क्षे रविवारे	१० । १४	ह्रस्वः स्निग्धः सुप्रसन्नः	२ । १३०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ज्योतिष एवं वास्तुशास्त्र की महत्त्वपूर्ण पुस्तकें

भाषा टीका सहित

- **ग्रहलाघव।** ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **लघुजातक।** कमलकान्त पाण्डेय
- **फलित विकास।** रामचन्द्र पाठक
- **सूर्यसिद्धान्त।** रामचन्द्र पाण्डेय
- **जातकालङ्कार।** सत्येन्द्र मिश्र
- **जातकपारिजात।** हरिशंकर पाठक
- **मुहूर्त्तपारिजात।** सीताराम झा
- **भावप्रकाश।** सत्येन्द्र मिश्र
- **भुवनदीपक।** सत्येन्द्र मिश्र
- **षट्पञ्चाशिका।** गुरुप्रसाद गौड़
- **पञ्चस्वरा।** सत्येन्द्र मिश्र
- **लघुपाराशरी-मध्यापाराशरी।** सुरकान्त झा
- **बृहत्पाराशरहोराशास्त्र।** पद्मनाभ शर्मा
- **(केशवीय) जातकपद्धति।** सुरकान्त झा
- **भावकुतूहल।** हरिशंकर पाठक
- **सर्वार्थचिन्तामणि।** गुरुप्रसाद गौड़
- **नक्षत्रचिकित्सा-ज्योतिष।** अभयकात्यायन
- **समरसार।** अभय कात्यायन
- **प्रश्नमार्ग।** (1-2 भाग)। गुरुप्रसाद गौड़
- **दशाफलदर्पण।** हरिशंकर पाठक
- **सिद्धान्तशिरोमणि।** सत्यदेव शर्मा
- **मयमत।** (1-2 भाग)। शैलजा पाण्डेय
- **वास्तुमण्डन।** श्रीकृष्ण 'जुगनू'
- **आर्यभटीय।** सत्यदेव शर्मा
- **मुहूर्त्तकल्पद्रुम।** श्रीकृष्ण 'जुगनू'
- **सुगम फलित ज्योतिष।** विष्णु शर्मा
- **लीलावती।** सीताराम झा
- **लीलावती।** लखणलाल झा
- **मकरन्दप्रकाश।** लषणलाल झा
- **सर्वतोभद्रचक्र ।** ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **फलचिन्तामणि।** कुलानन्द झा
- **राजवल्लभमण्डन।** शैलजा पाण्डेय
- **फलितसंग्रह।** सत्येन्द्र मिश्र
- **मुहूर्तदीपक।** गुरुप्रसाद गौड़
- **प्रश्नवैष्णव।** गुरुप्रसाद गौड़
- **केरलप्रश्नशास्त्रसंग्रह।** गुरुप्रसाद गौड़
- **प्रश्नभूषण।** गुरुप्रसाद गौड़
- **गृहवास्तुप्रदीप।** शैलजा पाण्डेय
- **पंचसिद्धान्तिका।** सत्यदेव शर्मा
- **ताजिक पद्मकोष।** अभय कात्यायन
- **पूर्वकालामृत।** रामचन्द्र पाण्डेय
- **अद्भुतसागर।** शिवकान्त झा
- **प्रश्नचण्डेश्वर।** अभय कात्यायन
- **सामुद्रिकशास्त्र।** अभय कात्यायन
- **वास्तुशास्त्रसार।** प्रखर प्रज्ञानन्द
- **रमलनवरत्न।** अभय कात्यायन
- **बृहत्संहिता।** अच्युतानन्द झा
- **बृहद्वास्तुमाला।** रामनिहोर द्विवेदी
- **बृहत्जातक (होराशास्त्र)।** सत्येन्द्र मिश्र
- **दैवज्ञवल्लभा ।** गुरुप्रसाद गौड़
- **अथर्ववेदीय ज्योतिष।** अभय कात्यायन
- **खेटकौतुक।** नारायणदास
- **जातकतत्त्व।** हरिशंकर पाठक
- **ताजिकनीलकण्ठी।** सीताराम झा
- **दीर्घवृतलक्षण।** सत्यदेव शर्मा
- **फलदीपिका।** हरिशंकर पाठक
- **भार्गव नाडिका।** अभय कात्यायन
- **मानसागरी।** मधुकान्त झा
- **मुहूर्तचिन्तामणि।** विन्धेश्वरीप्रसाद द्विवेदी
- **वेदाङ्गज्योतिष।** शिवराज कौण्डिन्यायन
- **शीघ्रबोध।** ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **हस्तसञ्जीवन।** सुरकान्त झा
- **स्त्रीजातक एवं नारीजातक।** कात्यायन
- **त्रिफलारमल ज्योतिष।** अभय कात्यायन
- **रयणपरिक्खा (रत्न-ज्योतिष परीक्षा)।** अभय कात्यायन

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन-वाराणसी

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ज्योतिष एवं वास्तुशास्त्र की महत्त्वपूर्ण पुस्तकें

- **ग्रहलाघव।** ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **लघुजातक।** कमलकान्त पाण्डेय
- **फलित विकास।** रामचन्द्र पाठक
- **सूर्यसिद्धान्त।** रामचन्द्र पाण्डेय
- **जातकालङ्कार।** सत्येन्द्र मिश्र
- **जातकपारिजात।** हरिशंकर पाठक
- **अर्थववेदीय ज्यौतिष।** अभय कात्यायन
- **भावप्रकाश।** सत्येन्द्र मिश्र
- **भुवनदीपक।** सत्येन्द्र मिश्र
- **षट्पञ्चाशिका।** गुरुप्रसाद गौड़
- **पञ्चस्वरा।** सत्येन्द्र मिश्र
- **लघुपाराशरी-मध्यापाराशरी।** सुरकान्त झा
- **बृहत्पाराशरहोराशास्त्र।** पद्मनाभ शर्मा
- **(केशवीय) जातकपद्धति।** सुरकान्त झा
- **भावकुतूहल।** हरिशंकर पाठक
- **सर्वार्थचिन्तामणि।** गुरुप्रसाद गौड़
- **नक्षत्रचिकित्सा-ज्योतिष।** अभयकात्यायन
- **नरपतिजयचर्यास्वरोदय।** सत्येन्द्र मिश्र
- **प्रश्नमार्ग।** (1-2 भाग)। गुरुप्रसाद गौड़
- **दशाफलदर्पण।** हरिशंकर पाठक
- **सिद्धान्तशिरोमणि।** सत्यदेव शर्मा
- **मयमत।** (1-2 भाग)। शैलजा पाण्डेय
- **वास्तुमण्डन।** श्रीकृष्ण 'जुगनू'
- **आर्यभटीय।** सत्यदेव शर्मा
- **मुहूर्त्तकल्पद्रुम।** श्रीकृष्ण 'जुगनू'
- **केरलीयप्रश्नरत्नम्।** श्री अभय कात्यायन
- **लीलावती।** सीताराम झा
- **पुरुज्ञान।** डॉ. दिवाकर शास्त्री
- **मकरन्दप्रकाश।** लषणलाल झा
- **सर्वतोभद्रचक्र।** ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **जातकादेशमार्ग।** श्री अभय कात्यायन
- **राजवल्लभमण्डन।** शैलजा पाण्डेय
- **फलितसंग्रह।** सत्येन्द्र मिश्र
- **मुहूर्तदीपक।** गुरुप्रसाद गौड़
- **प्रश्नवैष्णव।** गुरुप्रसाद गौड़
- **केरलप्रश्नशास्त्रसंग्रह।** गुरुप्रसाद गौड़
- **प्रश्नभूषण।** गुरुप्रसाद गौड़
- **गृहवास्तुप्रदीप।** शैलजा पाण्डेय
- **पंचसिद्धान्तिका।** सत्यदेव शर्मा
- **ताजिक पद्मकोष।** श्री अभय कात्यायन
- **पूर्वकालामृत।** रामचन्द्र पाण्डेय
- **अद्भुतसागर।** शिवकान्त झा
- **लघुपाराशरी-मध्यपाराशरी।** हेमन्त कुमार
- **सिद्धान्तशिरोमणिः।** (स्पष्टाधिकारान्त)। शत्रुघ्न त्रिपाठी
- **वास्तुशास्त्रसार।** प्रखर प्रज्ञानन्द
- **जन्मकुण्डली हो न हो।** दिवाकर शास्त्री
- **विश्वकर्मप्रकाशः।** श्री अभय कात्यायन
- **बृहद्वास्तुमाला।** रामनिहोर द्विवेदी
- **बृहत्जातक (होराशास्त्र)।** सत्येन्द्र मिश्र
- **दैवज्ञवल्लभा।** गुरुप्रसाद गौड़
- **नारदसंहिता (श्रीनारदीयज्योतिष)।** श्री अभय कात्यायन
- **जातकतत्त्व।** हरिशंकर पाठक
- **नारदीयजातकम्।** श्री अभय कात्यायन
- **पञ्चसिद्धान्तिका।** सत्यदेव शर्मा
- **फलदीपिका।** हरिशंकर पाठक
- **प्रश्नचण्डेश्वरः** श्री अभय कात्यायन
- **मुहूर्तचिन्तामणि।** विन्ध्येश्वरीप्रसाद द्विवेदी
- **प्रश्नज्ञानप्रदीपः (प्रश्नादर्शः)।** श्री अभय कात्यायन
- **शीघ्रबोध।** ब्रह्मानन्द त्रिपाठी
- **हस्तसञ्जीवन।** सुरकान्त झा
- **गूढ़ार्थहोरा-सिद्धान्त।** (जन्मकुण्डली द्वार फलादेश-कथन)। सत्यदेव शर्मा
- **सिद्धान्ततत्त्वविवेकः।** पं. सत्यदेश शर्मा

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी-221001
chaukhambasurbharatiprakashan@gmail.com
www.chaukhamba.co.in
@chaukhambabooks @chaukhambabooks
CHAUKHAMBA
Whatsapp scan
ISBN : 978-93-81484-78-4
9 789381 484784

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh